BO-05

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पादप आकारिकी एवं आन्तरिकी

BO - 05

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पादप आकारिकी एवं आन्तरिकी

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,

कोटा

समन्वयक / सदस्य

विषय समन्वयक

प्रो.(डॉ.) पी.सी. त्रिवेदी

वनस्पति शास्त्र विभाग

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

सदस्य सचिव / समन्वयक

डॉ. अशोक शर्मा

सह- आचार्य, राजनीति विज्ञान

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

1. **प्रो. एस.वी.एस. चौहान**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   बी.आर.अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
2. **प्रो. एन. सी. ऐरी**
   विभागाध्यक्ष, वनस्पति शास्त्र विभाग
   एम.एल.सुखड़िया विश्वविद्यालय,उदयपुर
3. **प्रो. एस.के. माहना**
   विभागाध्यक्ष, वनस्पति शास्त्र विभाग
   महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय,अजमेर
4. **प्रो. त्रिभुवन सिंह**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
5. **डॉ. डी. के. अरोड़ा**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
6. **डॉ. श्रीमती प्रमिला शर्मा**
   जैव प्रौद्योगिकी विभाग
   महर्षि अरविन्द कॉलेज,मानसरोवर, जयपुर
7. **डॉ. आर. एस. धनखड़**
   विभागाध्यक्ष, वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजकीय महाविद्यालय, सीकर

सम्पादन एवं पाठ लेखन

सम्पादक

प्रो.(डॉ.) पी.सी. त्रिवेदी

वनस्पति शास्त्र विभाग

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

लेखक

1. डॉ. निरंजन कुमार शर्मा
   प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय,
   भवानीमण्डी
2. प्रो. पी.एस. जैन
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
3. डॉ. एम.के. शर्मा
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
4. डॉ. अनुजा त्यागी
   विभागाध्यक्ष, वनस्पति शास्त्र विभाग
   कनोडिया महिला महाविद्यालय,
   जयपुर
5. डॉ. आर. एस. धनखड़
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजकीय महाविद्यालय, सीकर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. नरेश दाधीच	प्रो. अनाम जेटली	प्रो. पी.के.शर्मा
कुलपति	निदेशक	निदेशक
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन- जनवरी 2009

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस सामग्री के किसी भी अंश की वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमियाग्राफी'(चक्रमुद्रण) के द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

निदेशक(अकादमिक) द्वारा वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के लिए मुद्रित एवं प्रकाशित।

BO-05

वनस्पति-शास्त्र

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

पादप आकारिकी एवं आन्तरिकी

इकाई संख्या		पृष्ठ संख्या
1.	आवृतबीजी पादपों की मूलभूत संरचना, वृद्धि, विविधता, शाखन एवं वितान संरचना (Basic Body Plan Growth,Diversity,Branching Pattern & Canopy Structure in Angiosperms)	9–55
2.	स्थायी उत्तक (Permanent Tissues)	56–84
3.	उत्तक तंत्र (Tissue System)	85–101
4.	प्ररोह : शीर्ष विभज्योतकी संगठन एवं विभेदन; तने की प्राथमिक संरचना(एक बीजपत्री एवं द्विबीजपत्री) प्राथमिक प्ररोह में संवहनीकरण [Shoot : Apical meristem, organization and classification of meristems;Primary structure of stem(Monocotyledon and Dicotyledon) Vascularization in primary shoot]	102–128
5.	कैम्बियम : संरचना एवं कार्य, द्वितीयक जाइलम का निर्माण एवं संरचना, वार्षिकवलय, रसकाष्ठ एवं अंतकाष्ठ, छिद्रित व अछिद्रित काष्ठ (Cambium: Structure and Function Development and Structure of Secondary Xylem,Annual rings, Sap wood and Heart wood, Porous and Non-porous wood)	129–151
6.	द्वितीयक फ्लोयम की संरचना एवं कार्य (Structure and Function of Secondary Pholem)	152–162
7.	तनो की असंगत द्वितीयक वृद्धि (Abnormal secondary growth in stem)	163–195
8.	पत्ती : आकारिकी, उत्पत्ति एवं विकास (Leaf : Morphology, Origin and Evolution)	196–215
9.	पत्ती : आन्तरिक संरचना (Leaf : Internal Structure)	216–228
10.	पर्णजीर्णता एवं पर्णविलगन	229–235

	(Leaf Sensescence and abscission)	
11.	मूल : शीर्षस्थ विभाज्योतक, संरचना एवं द्वितीयक वृद्धि (Root : Apical meristem, structure and secondary growth)	236–255
12.	मूल : पार्श्व मूल; मूल के रूपान्तरण (Root : Lateral root; Modification of root)	256–274
13.	बीज का विकास, संरचना तथा निलम्बित संजीवन (Development, Structure and Suspended Animation in Seed)	275–290
14.	बीजों में पारिस्थितिकी अनुकूलन एवं प्रकीर्णन (Ecological Adaptations and Dispersal)	291–307
15.	कायिक प्रवर्धन (Vegetative Propgation)	308–327

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तिका “**पादप आकारिकी एवं आन्तरिक**” वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा द्वारा प्रस्तावित पाठ्यक्रमानुसार बी.एस.सी भाग द्वितीय के वनस्पतिशास्त्र प्रथम प्रश्न -पत्र के अध्याय अध्यापन हेतु सृजित के गई है ।पुस्तक के भाषा शैली को सरल, रोचक एवं सुग्राह्य बनाने का अथवा प्रयास किया गया है आवश्यकतानुसार समनार्थी अँग्रेजी शब्द फ्लोचार्ट नामांकित चित्र एवं सारणी भी दी गई है । पुस्तक की विभिन्न ईकिइयों को विद्वान लेखकों द्वारा लिखा गया है लेखकों ने पुस्तक को तथ्यपरक बनाने के लिए प्रमाणिक ग्रंथों को सहायता प्राप्ति को है इन रचयिताओं के लिए कृतज्ञतापन इन पंक्तियों के माध्यम से प्रस्तुत है । यह पुस्तक विद्यार्थी के लिए प्रतियोगी परीक्षाओ हेतु भी सही मार्गदर्शन प्रदान करने मे सहायक होगी ।

प्रस्तुत को अधिक उपयोगी एवं प्रामाणिक बनाने हेतु प्रबुद्ध पाठकों एवं जागरूक विद्यार्थियों के रचनात्मक सुझाव सादर आमंत्रित है ।

इकाई 1 : आवृतबीजी पादपों की मूलभूत संरचना, वृद्धि, विविधता, शाखन एवं वितान संरचना (Basic Body plan growth, Diversity, Branching Pateern & Canopy Structure in Angiosperms)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 आवृतबीजी पादप की मूलभूत संरचना एवं प्रारूपिक वृद्धि

1.2.1 मूलभूत संरचना

1.2.2 प्रारूपिक वृद्धि

1.3 पादप स्वरूपों की विविधता.

1.3.1 परिमाप

1.3.2 दीर्घ कालिता

1.3.3 आवास

1.3.4 स्वभाव

1.4 वृक्ष स्वभाव का विकास एवं सम्मिलन

1.5 वृक्ष : सर्वाधिक वृहतकाय एवं दीर्घजीवी पादप

1.6 तने में शाखन एवं वितान संरचना

1.7 सारांश

1.8 शब्दावली

1.9 संदर्भ ग्रंथ

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.11 अभ्यास प्रश्न

1.0 उद्देश्य (Objective)

आवृत्तबीजी पादपों के निम्न बिन्दुओं से अवगत कराना है :

1. मूलभूत संरचना एवं प्रारूपिक वृद्धि
2. पादप स्वरूपों की विविधता
3. आवृतबीजी एवं अनावृतबीजियों में वृक्ष स्वभाव का सम्मिलन एवं विकास
4. तने में शाखन स्प वितान संरचना

1.1 प्रस्तावना

वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार पुष्पधारी अथवा आवृतबीजी पौधों को पृथ्वी पर उपस्थित सर्वाधिक प्रगत एवं विकसित पादप समूह माना गया है । इस समूह के सदस्यों में प्रजनन हेतु प्ररोह

रूपान्तरित होकर पुष्प का निर्माण करते हैं तथा इनके फल व बीज एक आवरण क्रमशः फलभित्ति (Pericarp) एवं बीज चोल (Seed Coat) से ढके रहते हैं । विभिन्न आवृतबीजी प्रजातियों की पुष्पीय संरचनाओं, फलों एवं बीजों में पर्याप्त भिन्नताएँ (Variations) पाई जाती हैं । आवृतबीजी पौधों को बीजपत्रों की संख्या के आधार पर इनको दो प्रमुख समूहों में बाँटा गया है : (1) द्विबीजपत्री (Dicots)एवं (2) एक बीज पत्री ।

इसके विपरीत अनावृत बीजी पौधों (Gymnosperms) में क्योंकि अण्डाशय अनुपस्थित होता है, अत : इनमें फल (Fruit) का निर्माण भी नहीं होता । अत: फलभित्ति की उपस्थिति का सवाल ही नहीं उठता एवं इनके बीज भी आवरण रहित (Without seedcoat) होते हैं । अत: इनको नग्नबीजी या अनावृत बीजी कहा जाता है ।

1.2 आवृत बीजी पादप की मूलभूत संरचना एवं माड्यूली वृद्धि (Basic Structure & Modular Growth in Angiosperms)

1.2.1 मूलभूत संरचना (Basic body plan)

आवृतबीजी पौधों की आकारिकी एवं आंतरिक संरचना अत्यन्त अतिटल होती हैं तथा इनमें विभिन्न पादप अंगों का स्पष्ट विभेदन भी पाया जाता है । मूलभूत रूप से सभी संहवनी पौधों विशेषकर पुष्पीय पौधों को दो विस्तृत भागों में विभेदित किया जा सकता है । ये हैं:

(1) **मूलतन्त्र** (Root System): संवहनी पौधों का धनात्मक गुरुत्वानुवर्ती (Positively) geotropic भूमिगत अंग (Underground part), जो प्रकाश से दूर अंधकार की ओर वृद्धि करता है, मूलतन्त्र का निर्माण करता है । मूलतन्त्र का विकास बीज में मौजूद मूलांकुर (Radicle) द्वारा होता है । आवृतबीजी पौधों में सामान्यतया दो प्रकार के मूलतन्त्र पाये जाते हैं

(A) **मूसला मूल तन्त्र** (Tap root system): इस तन्त्र में **प्राथमिक जड़** (Primary root) जो कि मूलांकुर से सर्वप्रथम विकसित होती है, वह ही मुख्य जड़ के रूप में पाई जाती है । इससे आगे चलकर अनेक शाखाएँ उत्पन्न होती हैं । प्राथमिक जड़ के शाखाओं को द्वितीयक मूल (Secondary root) कहते हैं त था द्वितीयक मूल से उत्पन्न शाखाएँ तृतीय मूल (Tertiary root) कहलाती हैं । आगे चलकर इनसे भी अनेक शाखाएँ उत्पन्न होती हैं । यह समूची संरचना मिलकर समग्र रूप से मूसला मूल तन्त्र (Tap root system) कहलाती है।

(B) **रेशेदार मूल तन्त्र** (Fibrous) अनेक पौधों, विशेषकर एक बीजपत्री पी धो में मूलांकुर से उत्पन्न मूल अल्पजीवी (Short lived) होती है त था शीघ्र ही समाप्त हो जाती है ।

इसके स्थान पर प्ररोह के आधारीय भाग से अनेक रेशेदार या धागे या जड़ें एक गुच्छे के रूप में विकसित होती हैं, जो रेशेदार मूल तन्त्र (Fibrous root system) का निर्माण करती हैं ।

(2) **प्ररोह तन्त्र** (Shoot root): संवहनी पादप के वायवीय भाग को प्ररोह तन्त्र कहते हैं । प्ररोह की उत्पत्ति एवं विकास बीज में उपस्थित प्रांकुर से होता है । पूर्णतया परिपक्व पौधों में प्ररोह तन्त्र तने एवं उस पर उत्पन्न विभिन्न उपांगों जैसे पत्ती व पुष्प इत्यादि में विभेदित होता है । पादप की प्रजनन अवस्था में ही पुष्प एवं फल विकसित होते हैं । प्ररोह तन्त्र के विभिन्न घटकों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है :

(A) **स्तम्भ या तना** (Stem): यह पौधे का प्रमुख वायवीय भाग है, जिस पर अन्य उपांग (Appendages) विकसित होते हैं । इनमें पर्ण विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जो केवल तने पर ही उत्पन्न होती हैं तथा विशिष्ट व्यवस्था क्रम या पर्ण विन्यास (Phyllotaxy) में पायी जाती हैं । पत्तियों के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार के उपांग भी कुछ पौधों में तने की सबसे बाहरी परतों जैसे बाह्यत्वचा (Epidermis) या वल्कुट (cortex) से उत्पन्न होते हुए देखे जा सकते हैं, इनको बहिर्उपांग (Emergences) कहते हैं, जैसे गुलाब में तने से उत्पन्न कंटिकायें (Prickles) इसके अतिरिक्त तने व पत्तियों की अधिचर्म पर पाये जाने वाले बहुकोशीय रोम (Trichomes) भी उपांगों को ही निरूपित करते है ।

विभिन्न पौधों में तना सामान्यतया उर्ध्व (Erect) पाया जाता है तथा पौधे की प्रकृति (Habit) के अनुसार या शाकीय (Harbaceous) या काष्ठीय (Woody) एवं शाखित (Branched) या अशाखित (Unbranched) हो सकता है । कुछ पौधों में तना दुर्बल एवं आरोही होता है, जो किसी वृक्ष या अन्य सहारे को प्रयुक्त कर ऊपर की ओर वृद्धि करता है । प्रायः सभी पौधों में तना पर्व (Internode) एवं पर्वसंधि (Node) में विभेदित रहता है । पौधों में पत्तियाँ एवं अन्य उपांग तने की पर्वसधियों से ही विकसित होते हैं । पत्ती के कक्ष में कक्षस्थ कलिका (Axillary bud) विकसित होती है, जो आगे चलकर तने की शाखा का निर्माण करती है । स्तम्भ का प्रमुख कार्य पौधे को यांत्रिक आधार प्रदान करना एवं जड़ों द्वारा अवशोषित जल तथा खनिज पदार्थों को पौधे के ऊपरी भागों तक पहुँचाने का होता है ।

(B) **पर्ण** (Leaf) : पौधे में पायी जाने वाली पर्ण या पत्ती प्रायः एक चपटी व फैली हुई संरचना होती है, जो तने की पर्वसंधियों पर उत्पन्न होती हैं । पत्तियाँ पौधे का प्रमुख प्रकाश संश्लेषी भाग है, जो CO_2 प्रकाश एवं जल का उपयोग कर पौधे के लिये भोजन निर्माण का कार्य करती हैं । तने पर पत्तियों के विशिष्ट व्यवस्था क्रम को पर्ण विन्यास (Phyllataxis) कहा जाता है । पर्ण विन्यास का निर्धारण पौधे को प्रकाश की उपलब्धता के आधार पर अलग-अलग प्रकार का हो सकता है । पौधे के आवास एवं वातावरण के अनुरूप पत्तियों में अनेक प्रकार की विविधताएँ (Variations) पाई जाती हैं जैसे कुछ मरुद्भिदीय पौधों नागफनी (Opunntia) व कैपेरिस (Capparis) में तो पत्तियों शूलों में रूपान्तरित हो जाती हैं । विभिन्न पौधों में पत्तियाँ सवृन्त अथवा अवृन्त होती हैं । द्विबीजपत्री पौधों की पत्तियों में जालिकावत् शिराविन्यास (Reticulate venation) पाया जाता है, जबकि स्माइलेक्स (Smilax) जैसे कुछ अपवादों को छोड़कर एकबीजपत्री पौधों में समानान्तर शिराविन्यास (Parallel venation) होते हैं । पोधों में पत्तियों का प्रमुख संश्लेषण का होता हैं ।

संवहनी पौधों की सभी पादप भाग एक प्रकार की मृदूतकी विभाज्योतिकी (Parenchymatous meristematic)। से विकसित होते हैं। विभाज्योतिकी कोशिकाओं के बारम्बार विभाजन के परिणामस्वरूप पहले स्थायी ऊतक का विभेदन होता है, परन्तु विभेदन के बाद भी जड़ों से तने की ओर एवं तने से पत्तियों की ओर के ऊतकों में अचानक परिवर्तन नहीं आता, अपितु इन पादप भागों के ऊतकों में क्रमिक वि भेदन दृष्टिगोचर होता है । प्रायः सभी पादप भागों में एक ही प्रकार का ऊतक तन्त्र पाया जाता है, लेकिन पादप भागों की कार्य प्रणाली में बदलाव के कारण इनकी कोशिकाओं में संरचनात्मक परिवर्तन आ जाते हैं, जैसे त्वचीय ऊतक तन्त्र (Dermal tissue system) एवं संवहन ऊतक तन्त्र (Vascular tissue system) इत्यादि जड़, तना एवं पत्तियों, तीनों पादप भागों में पाये जाते हैं, लेकिन तीनों की बाह्यत्वचा में पर्याप्त अन्तर दिखाई देता है । जड़ में बाह्यत्वचा पर मूल रोम पाये जाते हैं, जबकि कोमल तने एवं पत्तियों की बाह्यत्वचा पर पर्णरन्ध्र (Stomata) उपस्थित होते हैं । मूल रोम (Root hairs) जल के अवशोषण में तथा पर्णरन्ध्र बाह्य वातावरण से गैसीय विनियम में सहायक होते हैं ।

(C) **पुष्प** (Flower) यह आवृतबीजी या पुष्पधारी पोधों (Flowering plants) में पायी जाने वाली जनन संरचना (Reproductive structure) है, जो कि प्ररोह का रूपान्तरित घटक है । इसीलिये इसकी आधार भूत आकारिकी एवं आंतरिक संरचना प्ररोह से काफी समानता परिलक्षित करती है ।

पुष्प के विकास के समय तना संघनित (Condesed) होकर एक उत्तल या चपटी चक्रिका (Disc) में परिवर्तित हो जाता है, जिसे पुष्पासन (Thalamus) कहते हैं । पुष्पासन या टोरस (Torus) पर विभिन्न पुष्पीय संरचनाएँ या उपांग जैसे बाह्यदल पुंज (Calyx), दलपुंज (Corolla), पुमंग (Androecium) एवं जायांग (Gynoecium) ठीक उसी प्रकार से व्यवस्थित होते हैं, जैसे तने पर पत्तियाँ सर्पिलाकार (Spiral) या चक्रिक (Whorled) क्रम में विन्यासित होती हैं ।

बाह्यदल पुंज (Calyx) के चक्र में बाह्यदल (sepals) एवं दलपुंज (Corolla) में दल पत्र (Petals) पाये जाते हैं । उपर्युक्त दोनों चक्रों को सहायक चक्र (accessory whorls) कहते हैं, क्योंकि ये प्रायः पुष्प के आवश्यक भागों की सुरक्षा या परागण में सहायता (आकर्षक दल पुंज के कारण) का कार्य करते हैं ।

पुष्प के आंतरिक चक्र अर्थात् पुमंग (Androecium), आवश्यक चक्र (Essential whorls) कहलाते हैं, क्योंकि पुमंग में उपस्थित पुंकेसर (Stamens) एवं जायांग में उपस्थित अंडप (Carpels) क्रमशः नर एवं मादा जनन संरचनाओं को निरूपित करते हैं । पुंकेसर में परागकणों (Pollen grains) एवं अंडप (Carpel) में बीजाण्ड का विकास होता है, जिनसे आगे चलकर क्रमशः नर एवं मादा युग्मकोद्भिद बनते हैं ।

(D) **फल** (Fruit): परागण (Pollination) एवं निषेचन (Fertilization) के उपरान्त अण्डाशय से फल (Fruit) एवं बीजाण्ड से बीज (Seed) का निर्माण होता है । विभिन्न आवृतबीजी पौधों में अनेक प्रकार के फल जैसे सरस (Fleshy) या शुष्क (Dry) फल पाये जाते हैं ।

(E) **बीज** (Seed): आवृतबीजी पौधों में बीज फलभित्ति (pericarp) द्वारा ढके रहते हैं तथा इनमें एक अथवा दो बीजपत्र (Cotyedons) पाये जाते हैं । बीजपत्रों की संख्या के आधार पर आवृतबीजी पौधों को दो बड़े समूहों क्रमशः एकबीजपत्री (Monocots) एवं द्विबीजपत्रियों (Dicots) में बाँटा गया है । आवृतबीजी पौधों के बीजों में प्रायः त्रिगुणित (3n)भ्रूणपोष (Endosperm) उपस्थित होता है । कुछ पोधों, जैसे अरंड (Castor) व नारियल (Coconut) में भ्रूणपोष अत्यधिक विकसित होता है । ऐसे बीजों को भ्रूणपोषी बीज (Endosperm) कहते हैं, जबकि कुछ अन्य पोधों जैसे चना मटर के बीजों में भ्रूणपोष अल्पविकसित होता है, ऐसे बीजों को अभ्रूणपोषी (Non endospermic) बीज कहते हैं ।

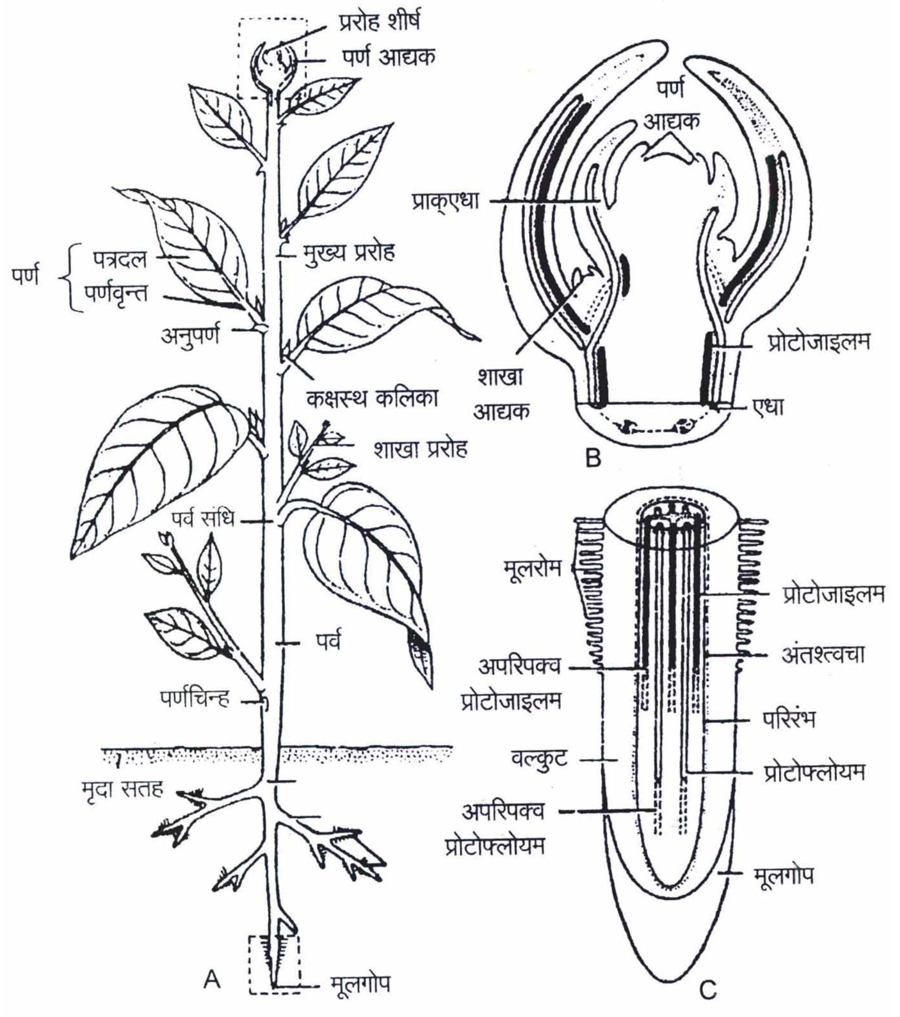

चित्र 1.1 : पुष्पीय पादप की आधारभूत संरचना :
A.पादप की आकारिकी, B.प्ररोह शीर्ष, C.मूल शीर्ष

बीज में संचित खाद्य पदार्थ भ्रूणपोष या बीजपत्रों में संग्रहित होता है तथा भ्रूण सुरक्षित रहता है। उपयुक्त परिस्थितियों में बीज के अंकुरण द्वारा भ्रूण ही नये पौधे का निर्माण करते हैं ।

एक प्रारूपिक द्विबीजपत्री पादप की आधारभूत शारीरिक संरचना

(Basic body plan of a typical dicot plant)

प्रारूपिक द्विबीजपत्री पुष्पधारी पौधे के अध्ययन के लिये हम सरसों के पौधे को प्रारूपिक उदाहरण के तौर पर ले सकते हैं । सरसों (Mustard) ब्रेसीकेसी कुल (Brassicaceae) कुल का पौधा है, जो हमारे आसपास के परिवेश में आसानी से मिल जाता है । उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में आजकल यह शीत ऋतु में प्रमुख तिलहनी नगदी फसल के रूप में उगाई जाती है । इस प्रारूपिक द्विबीजपत्री पौधे की आधारभूत शारीरिक संरचना (Basic body plan) की जानकारी हेतु इसके विभिन्न भागों का आकारिकी विवरण (Morphological descripition) निम्न प्रकार से है:

सामान्य नाम (Common Name): सरसों (Mustard)

वानस्पतिक नाम (Botanical Name) : ब्रेसीका केम्पेस्ट्रिस (Brassica campestris)

आवास एवं स्वभाव (Habit and Habitat): यह एक वर्षीय पौधा सामान्य रूप से किसी भी स्थान में आसानी से मिल जाता है । प्रायः यह बगीचों व खेतों में खरपतवार के रूप में या उपेक्षित स्थानों पर भी मिल जाता है । लेकिन आजकल यह उत्तरप्रदेश, पंजाब व राजस्थान में शीत ऋतु में उगाई जाने वाली प्रमुख तिलहनी फसल (Oil yielding crop plant) के पौधे के रूप में दृष्टिगोचर होता है (चित्र 1.2) ।

मूल (Root): सरसों के पौधों में मूसला जड़ (Tap root) पाई जाती है, यह पौधे के मुख्य अक्ष से नीचे गहराई की ओर वृद्धि करती है । मूलांकुर (Radicle) से उत्पन्न होने वाली प्राथमिक जड़ (Primary root) भूमि में नीचे की ओर बढ़ती है, **इससे द्वितीयक मूल** (Secondary root) **तृतीयक मूल** (Tertiary root) एवं अन्य शाखायें उत्पन्न होती हैं **प्राथमिक मूल** (Primary root) अपनी सभी शाखाओं के साथ मिलकर संयुक्त रूप से मूसला जड़ तन्त्र (Tap root system) का निर्माण करती है । वैसे मूसला जड़ों से नयी-नयी शाखाएँ निकलकर जमीन में फैलती जाती हैं, परन्तु प्राथमिक मूल की प्रमुखता (Dominance) सदैव ही निर्विवाद के रूप में स्थापित रहती है ।

तना (Stem): क्योंकि सरसों का पौधा एक वर्षीय (Annual herb) शाक होता है । अत: तना हरा कोमल एवं शाकीय होता है । तने की उत्पत्ति एवं विकास बीज के अंकुरण के समय प्रांकुर (Plumule) के निरन्तर ऊपर की ओर वृद्धि के द्वारा होती है । प्रांकुर की वृद्धि के द्वारा समग्र रूप से प्ररोह (Shoot) का निर्माण होता है । **प्ररोह** (Shoot) के ऊपरी सिरे पर कलिका (Bud) पाई जाती है, इसे अग्रस्थ कलिका (Apical bud) कहते हैं, यही आगे चलकर विस्तृत रूप से तने में विकसित होती है । स्तम्भ या तना पौधे का एक आवश्यक अग है जिससे, शाखायें,

पत्तियाँ एवं पुष्प (Flowers) उत्पन्न होते हैं । स्तम्भ पौधे की अत्यन्त महत्वपूर्ण गतिविधियों जैसे, जल एवं खाद्य पदार्थों का संवहन एवं पत्तियों तथा पुष्पों के विकास द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से पौधे के पोषण एवं प्रजनन को संचालित करता है । दूसरे शब्दों में यदि हम जड़ की तुलना पौधे के पैरों से करे तो स्तम्भ को पौधे का शरीर कहा जा सकता है । सरसों का परिपक्व तना उर्ध्व (Erect), शाखित (Branched), अरोमिल (Glabrous), ठोस (Solid) एवं बेलनाकार (Cylindrical) होता है । इस तथ्य से हम भलीभाँति परिचित हैं कि सरसों, ब्रेसीकेसी अथवा क्रूसीफेरी (Cruciferae) कुल का सदस्य है । अतः इसके पादप शरीर मुख्यतया तने एवं पत्तियों में, एक तीखी गंधक (Sulphur) का जल समान रस (Watery) पाया जाता है । इस रस में गंधक (Sulphur) युक्त यौगिकों का बाहुल्य होता है, जिसकी वजह से यह तीखी गंध उपस्थित होती है । पादप शरीर में तीखी गंध इस पौधे एवं कुल का विशेष लक्षण हैं ।

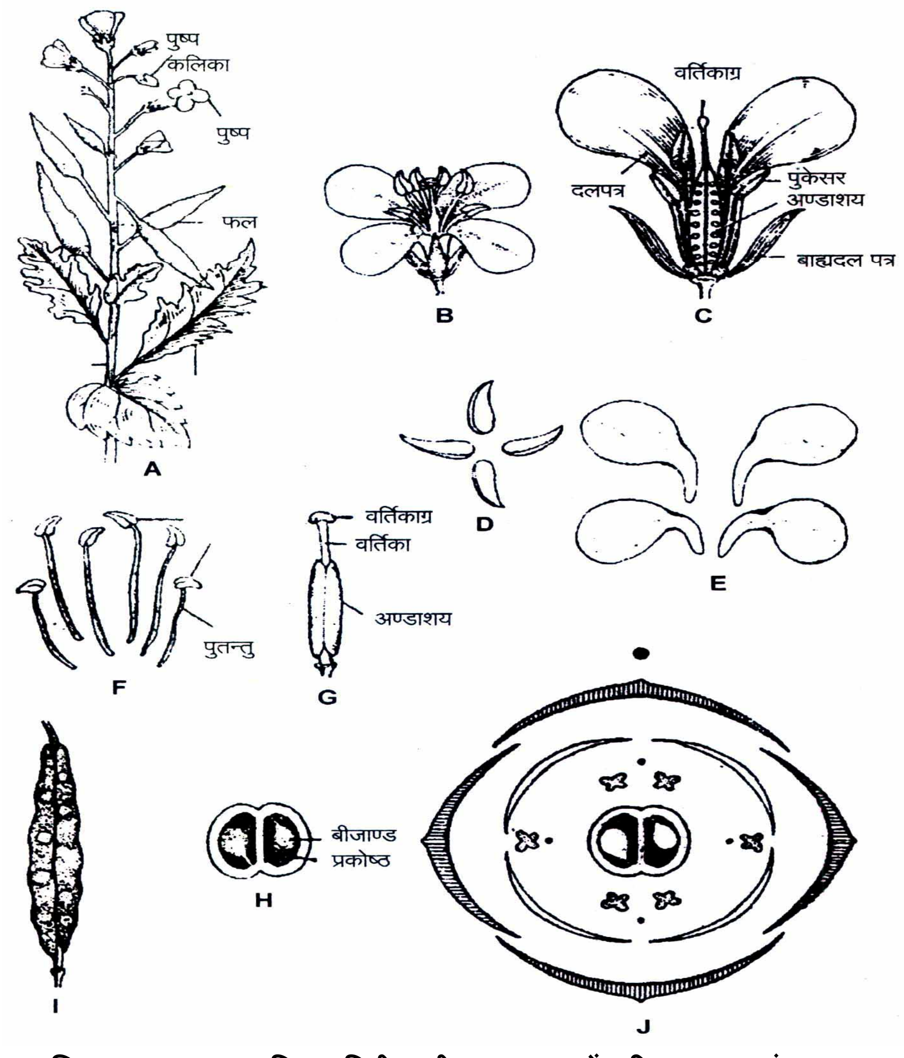

चित्र 1.2 : एक प्रारूपिक द्विबीजपत्री पादप (सरसों) की सामान्य संरचना : पुष्पीय टहनी, B. पुष्प C. पुष्प का V.S D. बाहय दल पुंज, E. दल पुंज, F. पुंकेसर, G. जायांग, H. अण्डाशय T.S., फल J. पुष्प आरेख

पर्ण (Leaf): पर्ण अथवा पत्तियाँ, पौधे का बहुत ही आवश्यक अंग है । ये तने या स्तम्भ के उपांग (Appendage) होती हैं जिनकी संरचना चपटी (Flattened) हो जाती है । सरसों की सामान्य पर्ण या पत्तियाँ (leaves) पौधे का महत्वपूर्ण प्रकाश संश्लेषी अंग (Photosynthetic organ) होते हैं, इनको फलिये पर्ण (Foliage leaves) कहा जाता है । ये एकान्तर (alternate), सवृन्त (Petiolate) या लगभग अवृन्त (Sessile), सरल (Simple) एवं वीणाकार (Lyrate) होती है । इनका पर्ण फलक (Lamina) बड़ा विस्तृत एवं फैला होता है, परन्तु फलक के किनारे (Leaf margins) पालिवत् (Lobed) होते हैं । पत्ती में एक शिरीय, जालिकावत् शिराविन्यास (Unicostate, reticulate venation) पाया जाता है । क्योंकि सरसों की पत्तियों में अनुपर्ण (Stipules) अनुपस्थित होते हैं । अतः इनको अननुपर्णी (Exstipulate) कहते हैं । प्रकाश संश्लेषण एवं वाष्पोत्सर्जन (Transpiration) जैसी महत्वपूर्ण गतिविधियाँ पत्तियों के द्वारा ही संचालित होती हैं । पत्तियाँ तने पर अग्राभिसारी क्रम (Acropetal succession) में व्यवस्थित पाई जाती है, अर्थात् छोटी एवं अपरिपक्व पर्ण ऊपर की ओर तथा बड़ी एवं परिपक्व पर्ण नीचे की ओर होती है । पत्ती की सतह लगभग अरोमिल (glabrous) या मृदुरोमिल (Pubescent) होती है । सबसे नीचे की पत्ती की पालि (lobe) सबसे बड़ी एवं ऊपर की पत्ती की पालियाँ क्रमशः छोटी - छोटी होती जाती हैं । सरसों में पत्ती का कर्णधार (Leaf base) कुछ चपटा होता है ।

पुष्पक्रम (Inflorescence) : सरसों में पुष्प समूह के रूप में, पुष्पीय अक्ष पर उत्पन्न होते हैं अत : यहाँ एक सुनिश्चित पुष्प क्रम पाया जाता है । पुष्पीय अक्ष पर सरसों के पौधे में पुष्पों के विशेष व्यवस्था क्रम को देखते हुए इसके पुष्प क्रम (Inflorescence) को असीमाक्षी असीम (Racemoseraceme) कहा गया है । इसमें मुख्य पुष्पीय अक्ष की असीमित वृद्धि (Indeterminate growth) होती है एवं इसमें पुष्प सवृन्त तथा अग्राभिसारी अनुक्रम (Acropetal succession) में लगे होते हैं । दूसरे शब्दों में सबसे बड़ा व परिपक्व (Oldest and mature) पुष्प सबसे नीचे एवं वर्धी अक्ष (Growing point या ऊपरी सिरे) से दूर होता है, जबकि सबसे छोटा एवं अपरिपक्व पुष्प सबसे ऊपर, अर्थात् वर्धी अक्ष के समीप होता है ।

पुष्प (Flower): पुष्प को रूपान्तरित एवं संघनित प्ररोह (Modified and condensed shoot) माना गया है; क्योंकि पुष्प पर उत्पन्न चक्रों (Whorls) का व्यवस्था क्रम, प्ररोह पर पर्ण विन्यास के समकक्ष ही होता है । सरसों के पौधे का पुष्प अत्यन्त आकर्षक, पीले रंग का किन्तु छोटा सवृन्त (Pedicellate) एवं चतुष्पयी (Teramerous) होता है अर्थात् इस पर कोई दो चक्रों, जैसे दलपत्र एवं बाह्यदलपत्र 4-4 की संख्या में पाये जाते हैं, क्योंकि पुष्प में पुभांग (Androecium नर जनन संरचना) एवं जायांग (Gynoecium, मादा जनन संरचना) दोनों ही पाई जाती हैं, अत : इस पुष्प को द्विलिंगी या उभयलिंगी (Bisexual or Hermaphrodite) कहा जाता है । यह एक पूर्ण पुष्प है । जिसमें सभी चक्र (Whorls) या संरचनायें उपस्थित होते हैं । अत: इस प्रकार के पुष्प को असहपत्री (Ebracteate) कहते हैं । पुष्प के विभिन्न भाग जैसे

बाह्यदलपुंज (Calyx), दलपुंज (Corolla), पुमंग (Androecium) एवं जायांग (Gynoecium) एक अक्ष (Axis) पर व्यवस्थित होते हैं, जिसे पुष्पासन (Thalamus) कहते हैं ।

पुष्प के विभिन्न भागों का विवरण निम्न प्रकार से हैं :

(a) **पुष्पवृंत** (Pedicel): यह एक डंठलनुमा, बेलनाकार, छोटी एवं हरे रंग की संरचना होती है । परन्तु कुछ पुष्पों में वृन्त का अभाव होता है, ऐसे पुष्पों को अवृन्त (sessile) कहते हैं ।

(b) **बाह्यदल पुंज** (Calyx): यह पुष्प का पहला या सबसे बाहरी चक्र है, जो सरसों में चार बाह्यदलपत्रों (Sepals) के द्वारा निर्मित होता है । ये बाह्यदल हरे रंग के (Green) एवं पृथक बाह्यदली अवस्था (Polysepalous condition) कहते हैं । बाह्यदल पुंज का सरसों के पुष्प में प्रमुख कार्य सुरक्षा प्रदान करना एवं इनके हरे रंग के कारण, पौधे की प्रकाश संश्लेषण क्रिया में योगदान का होता है ।

(c) **दलपुंज** (Corolla) पुष्प की सुन्दरता अतः इसके दलपुंज के आकर्षक रंग तथा इसमें उपस्थित दल पत्रों के विन्यास पर काफी कुछ निर्भर करती है । दलपुंज पुष्प का दूसरा चक्र है, जो बाह्यदल पुंज के ठीक नीचे व्यवस्थित होता है । दलपत्रों की सुन्दरता एवं सुगन्ध के आकर्षण के द्वारा ही कटि पतंगे पुष्प की ओर आते हैं एवं इस प्रकार कीट, परागण सम्पन्न होता है, कुछ पुष्पों में तो दलपुंज से मकरंद भी बनता है, यह भी कटि परागण हेतु एक अतिरिक्त, आकर्षण होता है । सरसों के पुष्प में विशेष प्रकार का क्रासरूपी दल पुंज (Cruciform corolla) पाया जाता है, जिसमें पीले रंग के चार सुन्दर दलपत्र क्रास (x) या स्वास्तिकाकार विन्यास में व्यवस्थित होते हैं । यहाँ दल पत्र पृथक रूप में पाये जाते हैं, इस प्रकार का दलपुंज, पृथकदलीय (Polypetalous) कहलाता है । सरसों के पीले दलपत्र के नीचे से पतले एवं ऊपर से बहुत चौड़े हो जाते हैं । दलपत्र के नीचे वाले भाग को नखर (Claw), एवं ऊपर वाले हिस्से को फलक (Limb) कहते हैं । वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार इस प्रकार दलों को नखराकृत (Clawed) कहते हैं । इस प्रकार के नखराकृत एवं स्वास्तिकाकार दलपुंज की उपस्थिति कुल ब्रेसीकेसी का विशिष्ट लक्षण कहा जा सकता है ।

पुमंग (Androecium): यह सरसों के पुष्प में उपस्थित नर (Male) जनन संरचना है एवं यह पुष्प का तीसरा चक्र तथा आवश्यक भाग (Essential organ) है । इसमें छ : पुंकेसर पाये जाते हैं । प्रत्येक पुंकेसर (Stamen) के दो भाग होते हैं, लम्बी, पतली एवं नलिकाकार संरचना पुंतन्तु (Filament) कहलाती है, यह स्व यांत्रिक (Mechanical) संरचना है, जिसका प्रमुख कार्य अपने शीर्ष सिरे पर उपस्थित परागकोष (Anther) पुमंग की सर्वाधिक महत्वपूर्ण संरचना होती है । सरसों के परागकोष में दो पालियाँ (Lobes) होती हैं, ये एक योजी (Connective) से जुड़ी होती हैं । प्रत्येक परागपालि (Anther lobe) पुनः दो प्रकोष्ठों में विभाजित हो जाती हैं, इस प्रकार सरसों के एक परागकोष (Anther) में चार पराग पुट (Pollen sacs) पाये जाते हैं । प्रत्येक पराग पुट (Pollen sac) एक लघुबीजाणुधानी (Microsporangium) को निरूपित करता है । क्योंकि सरसों के परागकोष में दो पालियों होती हैं, अत: इसे द्विपालित (Dithecous) कहते हैं । सरसों में पराग कोषों का स्फुटन (Dehiscence) अन्तर्मुखी (Introse) प्रकार का होता है ।

इसके अतिरिक्त इस पुष्प में उपस्थित छः पुंकेसरों में से चार पुंकेसर (भीतरी क्रम के) बड़े एवं दो पुंकेसर (बाह्यचक्र के) छोटे होते हैं, इस अवस्था के चतुर्दीर्घी अवस्था (Tetradynamous condition) कहते हैं ।

जायांग (Gynoecium): यह सरसों के पुष्प की मादा जनन संरचना है, जिसमें दो अण्डप (Carpels) उपस्थित होते हैं एवं संयुक्त अवस्था में पाये जाते हैं । इस अवस्था को द्विअण्डपी एवं युक्तांडपी (Bicarpellary and syncarpous) अवस्था कहते हैं । सरसों के पुष्प में जायांग के दोनों अण्डप मिलकर एक संयुक्त संरचना बना लेते हैं, जो एक अण्डाशय (ovary), वर्तिका (Style) एवं वर्तिकाग्र (Stigma) में विभेदित होती है । यहाँ अण्डपों की संख्या का अनुमान केवल अण्डाशय की अनुप्रस्थ काट एवं वर्तिकाग्र में उपस्थित विभाजन रेखा के द्वारा लगाया जा सकता है । वैसे सरसों एवं ब्रेसिकेसी कुल के अन्य सदस्यों का अण्डाशय प्रारम्भ में एक कोष्ठी (Unilocular) होता है, जिसमें बाद में एक कूट भित्ति (False septum of replum) के बन जाने से बाद मेन यह द्विकोष्ठीय (Bilocular) दिखाई देने लगता है । अत: ऐसे अण्डाशय में बीजाण्डों का व्यवस्थाक्रम भी भित्तीय (Parietal) प्रकार का होता है, क्योंकि दोनों अण्डपों के किनारे बाहर की ओर मुड़े होते हैं व किनारों पर (भित्तियों पर) बीजाण्डासन (Placenta) उपस्थित होते हैं, जिनसे बीजाण्ड (Ovules) जुड़े हुए पाये जाते हैं । सरसों के पुष्प में अण्डाशय या सम्पूर्ण जायांग ही, पुष्पासन पर पुष्प के अन्य चक्रों की तुलना में अपेक्षाकृत उच्चतर स्थिति में पाया जाता है । अत: इस प्रकार के अण्डाशय को उच्चवर्ती अण्डाशय (Superior ovary) कहते हैं । इसके साथ ही क्योंकि पुष्प के अन्य चक्र अण्डाशय की तुलना में निम्नतर स्थिति (Lower position) में पाये जाते हैं । अत: ऐसे पुष्प को अधोजायांगी (Hypogynous) पुष्प कहते हैं । सरसों के पुष्प में जायांग की वर्तिका (Style) छोटी एवं वर्तिकाग्र (Stigma) द्विपालित (Bilobed) होती है ।

फल (Fruit): सरसों के पोधें में विशेष प्रकार का सम्पुटिका (Capsule) फल पाया जाता है, जिसे कूटपटी (Siliqua) कहते हैं,यह एक कोष्ठकी एवं कूट पटयुक्त (Replum) अण्डाशय से बनता है, इस कूटभित्ति या आभासी पट (False septum) के ऊपर बीज लगे रहते हैं । इस प्रकार सर्वसुलभ, आसानी से शरीरीय संरचना (Basic body plan) के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ।

प्रारूपिक एक बीजपत्री पादप का संक्षिप्त विवरण

(Brief account of typical monocot plant)

वानस्पतिक नाम	एस्फोडीलस टेन्यूईफोलियस केव.
(Botanical name)	(Asphodelus tenuifolius cav.)
कुल (Family)	लिलियेसी (Liliaceae)
सामान्य नाम (Local Name)	प्याजी या परजुरी

- **आवास एवं स्वभाव** (Habit and Habitat) यह एकवर्षीय शाकीय खरपतवार पादप है, जो शरद ऋतु में खेतों में बहुतायत से पाया जाता है ।

- **जड़** (Root) अवस्थानिक रेशेदार मूल तन्त्र (Adventitious fibrous root system) ।
- **स्तम्भ** (Stem): प्याजी का तना संघनित अत्यन्त अपह्यसित (Reduced) एवं भूमिगत होता हैं ।
- **पर्ण** (Leaf): सरल, अवृन्त, मूलज (Radical), रोजेट क्रम से व्यवस्थित लम्बी एवं बेलनाकार होती हैं, जिनका ऊपरी सिरा निशिताग्र (Acute) होता है । पर्ण खोखली (Hollow) म्यूसीलेज युक्त होती है । इसमें बहुशिरीय समानान्तर शिराविन्यास (Multicostate parllel) पाया जाता है ।
- **पुष्पक्रम** (Inflorescence): स्केप के समान (Scapigereous) अर्थात् एकदम अचानक आधारीय भाग से विकसित होता है एवं शाखित होता है (शाखित असीमाक्षी असीम (branched racemose raceme) । स्केप उर्ध्व, वायवीय, शाखित ठोस एवं हरा होता है।
- **पुष्प** (Flower): प्याजी के पुष्प सफेद, छोटे, किन्तु आकर्षक होते हैं, ये सहपत्रयुक्त होते हैं एवं सहपत्र नाव के आकार का होता है । इसके पुष्प उभयलिंगी (Bisexual), त्रितयी (Trimerous), पूर्ण चक्रिक, अधोजायांगी (Hypogynous) एवं त्रिज्यासम्मित (Actinomophic) होते हैं ।

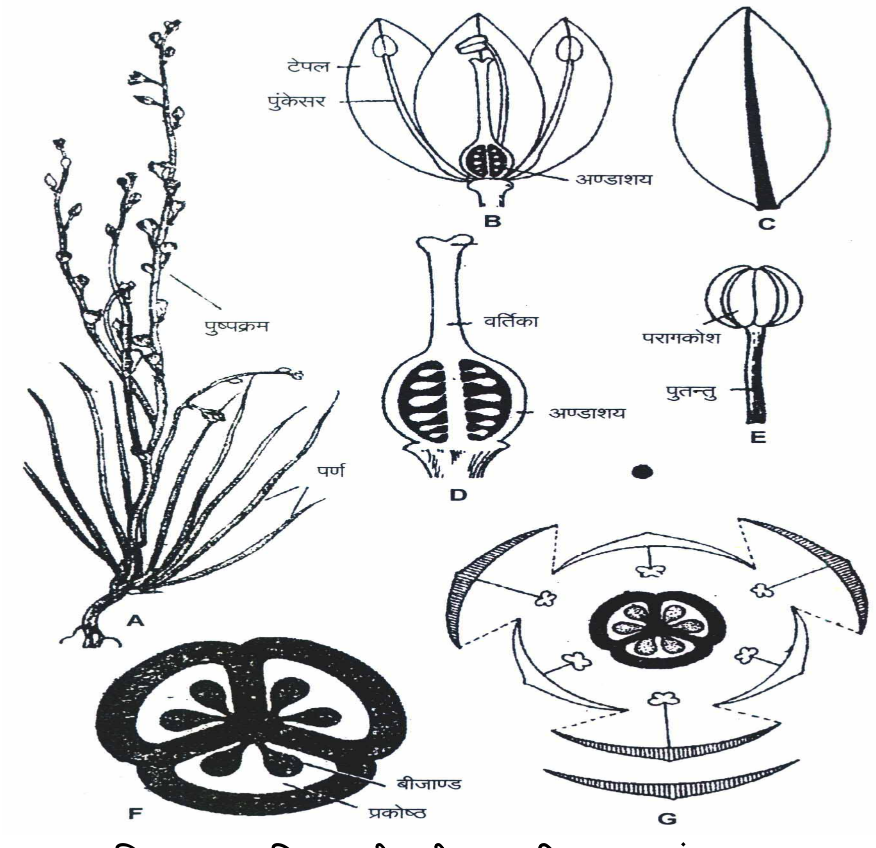

चित्र 1.3: प्रारूपिक एकबीजपत्री पादप की सामान्य संरचना :
A. पाप शरीर, B. पुष्प का V.S., C. एक परिदल पत्र या टेपल, D. जायांग,
E. पुंकेसर, F. अण्डाशय का T.S., G. पुष्पीय आरेख

- **परिदल पुंज** (Perianth): अधिकांश एकबीजपत्री पौधों के समान ही प्याजी में भी बाह्यदल एवं दल पुंज का विभेदन नहीं पाया जाता है, अपितु सफेद रंग का परिदल पुंज (Perianth) पाया जाता है । इसके परिदल पत्र (Perianth leaves of tepals) दलाभ (Petaloid) होते हैं तथा एक या दो (प्रायः दो) चक्रों में व्यवस्थित होते हैं । यह पुष्प का सहायक चक्र (Accessory whorl) है ।

  परिदल पुंज में 6 दलाभ (Petaloid) परिदल पत्र (perianth leaves) पाई जाती हैं, इनको टेपल्स भी कहते हैं । ये टेपल्स (3+3) के दो चक्रों में व्यवस्थित पाये जाते हैं एवं पृथक परिदली (Polyphyllous) होते हैं । परिदल पुंज विन्यास कोरस्पर्शी (Valvate) होता है । प्रत्येक परिदल पत्र के मध्य भाग में आधारीय भाग से लेकर ऊपरी सिरे तक एक स्पष्ट भूरी रेखा पाई जाती है ।
- **पुमंग** (Androecium): प्याजी के पुष्प में 6 स्वतन्त्र पुंकेसर 3+3 के दो चक्रों में व्यवस्थित पाये जाते हैं (Polyandrous) । इसके पुंकेसर परिदल पत्रों के सम्मुख व्यवस्थित (Oppositiphyllous) होते हैं । परागकोश (Anther), द्विकोष्ठी (BIthecous), मुक्त दोली (Versatile) एवं अंतर्मुखी (Introrse) होते हैं । पुंकेसर प्रायः परिदल लग्न (Epiphyllous) होते हैं । इनके पुंतन्तु आधार पर पतले एवं चपटे होते हैं ।
- **जायांग** (Gynoecium): पुष्प का जायांग त्रिअण्डपी (Tricarpellary) एवं युक्तांडपी (Syncarpous) होता है । यह अण्डाशय (Ovary) वर्तिका (Style) एवं वर्तिकाग्र (Stigma) में विभेदित होता है । इसकी वर्तिका लम्बी एवं वर्तिकाग्र पालिवत (Lobed) होता है । अण्डाशय उच्चवर्ती (Superior) एवं इसमें स्तम्भीय बीजाण्ड विन्यास (Axile placentation) मिलता है ।
- **परागण** (Pollination): क्योंकि प्याजी के पुष्प सफेद रंग के एवं आकर्षक होते हैं । अत: यहाँ कीटों द्वारा पर परागण (Entomophily) पाया जाता है ।
- **फल** (Fruit): कोष्ठ विदारक सम्मुट (Loculicidal capsule) प्रकार का शुष्क फल पाया जाता है ।
- **बीज** (Seed): पादप के बीज भ्रूणपोषी (Endospermic) प्रकार के होते हैं एवं भ्रूण छोटा होता है ।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्याजी का पौधा अनेक प्रारूपिक एकबीजपत्री लक्षण (जैसे त्रियती पुष्प, परिदल पुंज बाह्यदल व दलपुंज में विभेदित नहीं, पर्ण में समानान्तर शिराविन्यास आदि) प्रदर्शित करता है ।

1.2.2 प्रारूपिक वृद्धि (Modular type of growth)

न केवल आवृतबीजी या पुष्पधारी पौधों, अपितु सभी संवहनी पादपों का विकास एवं वृद्धि एक द्विगुणित युग्मनज (Diploid zygote) से प्रारम्भ होती है । यहाँ युग्मनज के विभाजन एवं पर्याप्त विभेदन के परिणामस्वरूप भ्रूण (Embryo) बनता है, इसके साथ ही बीजाण्ड विकास करके बीज का निर्माण करता है । इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि बीज में अल्पविकसित

शिशु पादप भ्रूण के रूप में सुरक्षित रहता है ।**भ्रूण** (Embryo) की मुख्य संरचना में एक मुख्य अक्ष उपस्थित होता है, जिसके ऊपरी सिरे पर या एक दो पर्ण समान उपांग पाये जाते हैं । जिनको **बीजपत्र** (cotyledons) कहते हैं । यह हम जानते हैं कि एकबीजपत्री पौधों में एक बीजपत्र एवं द्विबीजपत्री पौधों में दो बीजपत्र पाये जाते हैं । पौधे का भ्रूणीय अक्ष (Embryonal axis) बीजपत्र के आधार पर अवस्थित होता है तथा इसे बीजपत्राधार (Hypocotyl) कहते हैं । इस बीजपत्राधार के निचले सिरे पर प्रारम्भीय मूल (Incipient) उपस्थित होती है तथा इसके ऊपरी सिरे प्ररोह आद्यक (Primordial shoot) पाया जाता है । भ्रूण में मूल आद्यक (Root primordium) मूलांकुर (Radicle) के रूप में पाया जाता है । जिसमें मूल शीर्ष (Root apex), मूल गोप Root cap) एवं मूल विभाज्योतक इत्यादि उपस्थित होते हैं, वहीं दूसरे और पौधे के प्ररोह का विकास प्रांकुर (Plumule) से होता है । बीज में उपस्थित सभी संरचनाएँ एक सुरक्षात्मक (Protective layer) पर्त बीज चोल (Seed coat) द्वारा सुरक्षित एवं ढकी हुई होती हैं ।

जब बीज को उपयुक्त वातावरण अर्थात् ताप, वायु एवं नमी की उपयुक्त परिस्थितियां उपलब्ध होती हैं, तो भ्रूण सूक्ष्म पादप का विकास प्रारम्भ होता है तथा यह भ्रूण बीज चोल को भेदकर बाहर निकल आता है, इस प्रकार भ्रूण से पादप विकास की यह प्रक्रिया **बीज का अंकुरण** (Seed germination) कहलाती है । इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप भ्रूण बीज चोल को भेदकर बाहरी वातावरण में एक शिशु पादप या नवोद्भिद (Seeding) के रूप में स्थापित हो जाता है । बीज के अंकुरण के दौरान पहले मूलांकुर बाहर निकलता है एवं नीचे की ओर वृद्धि करने लगता है, इससे पौधे की प्राथमिक मूल (primary root) का निर्माण होता है । इससे अनेक शाखायें उत्पन्न होती हैं एवं मृदा में भीतर तक फैल जाती है । इस प्रकार पौधे के मूल तन्त्र (Root system) का विकास होता है । यह मल तन्त्र पौधे को भूमि में स्थापित करने का कार्य करता है, जो पौधे के लिये जल एवं खनिज पदार्थों के अवशोषण का कार्य करते हैं । जैसा कि हम जानते हैं, द्वितीयक पौधों की प्राथमिक मूल अनेक बार शाखित होकर क्रमशः द्वितीयक एवं तृतीयक जड़ों का निर्माण करती हैं, लेकिन इसके विपरीत एकबीजपत्री पौधे की प्राथमिक जड़ अल्पजीवी होती है । इसके स्थान पर तने के आधारीय भाग की पर्वसंधियों (Nodes) से अनेक रेशेदार अपस्थानिक जड़ें परिपक्व पौधे में उत्पन्न होती हैं । इस प्रकार की अपस्थानिक जड़ें (Adventitious roots) अनेक एक बीजपत्री पौधों में पाई जाती है । रेशेदार अपस्थानिक जड़ें लगभग समान लम्बाई, मोटाई एवं आयु की होती हैं, उनकी संरचना एक ब्रश के समान दिखाई पड़ती है ।

बीजपत्रधार का ऊपरी सिरा इपीकोटाइल (Epicotyl) नवोद्भिद पौधे के प्ररोह शीर्ष के रूप में विकसित होता है । प्ररोह शीर्ष की कोशिकाओं के विभाजन एवं विभेदन के परिणामस्वरूप पौधे का प्रथम या प्राथमिक तना निर्मित होता है । कुछ समय बाद तने से शाखाएँ उत्पन्न होना (Branching) प्रारम्भ होती है । इसके साथ ही शाखाओं की पर्व सन्धियों पर पत्तियाँ उत्पन्न होती हैं । तने में शाखा (Branching) का क्रम मुख्य तने पर उत्पन्न पत्तियों के कक्ष में विकसित कक्षस्थ कलिकाओं (Axillary buds) से होता है । इस प्रकार तने का वह क्षेत्र जिस

पर पत्तियाँ उत्पन्न होती हैं पर्व संधि (Node) कहलाता है तथा दो पर्व सन्धियों के बीच वाला हिस्सा पर्व कहलाता है । प्रत्येक पर्व संधि पर विभिन्न पौधों में विविध प्रकार के पर्ण विन्यासों (Phyllotaxis) में पत्तियाँ व्यवस्थित पाई जाती हैं। अंकुरण के पश्चात् एक निश्चित समय तक पौधे की कायिक संरचनाओं का विकास (Development) जारी रहता है । इस अवस्था को पौधे की कायिक अवस्था (Vegetative phase) कहते हैं, लेकिन कुछ समय बाद प्रकाश की मात्रा एवं अन्तराल, हार्मोन्स की मात्रा में बदलाव एवं उपयुक्त तापमान के कारण अवस्था का रूपान्तरण पौधे की जनन अवस्था (Reproductive phase) में हो जाता है । इसके साथ ही पौधे में उपस्थित कायिक शीर्षस्थ विभाज्योतक (Vegetative apical meristems) भी, पुष्पीय शीर्ष विभाज्योतक (floral meristems) में रूपान्तरित हो जाते हैं । इसके परिणामस्वरूप पुष्पक्रम एवं पुष्पों का परिवर्धन होता है । पुष्प के विभिन्न भाग जैसे बाह्यदल पुंज, दल, पुमंग एवं जायांग चपटे या उत्तल पुष्पासन अथवा टोरस (Thalamus or torus) पर चक्रिक या सर्पिलाकार क्रम में उत्पन्न होते हैं । बाह्यदलपुंज एवं दलपुंज पुष्प के सहायक अंग होते हैं, जो पुष्प के आवश्यक भागों की सुरक्षा एवं परागण में सहायता प्रदान करने का कार्य करते हैं । इसके विपरीत पुमंग एवं जायांग पुष्प के आवश्यक अंग (Essential organs) होते हैं, जो पौधे के लैंगिक जनन को संपादित करते हैं । इनमें क्रमशः परागकणों (Pollen grains) एवं बीजाण्ड (Ovules) का निर्माण होता है । विभिन्न प्रकार की परागण क्रियाओं (जल, वायु, कटि, पक्षी एवं प्राणी परागण) के परिणामस्वरूप पौधे के पीले रंग के चूर्ण समान परागकण, जायांग के वर्तिकाग्र (Stigma) पर पहुँच जाते हैं । अनुकूल परिस्थितियों में परागकण अंकुरित होकर एक पराग नलिका (Pollen tube) उत्पन्न करते हैं, जिसमें उपस्थित जनन केन्द्रक (Generative nuclei या नर युग्मक) परागनलिका के साथ ही वर्तिका में होते हुए बीजाण्ड के भ्रूणकोष तक पहुँच जाते हैं बीजाण्ड में अर्धसूत्री विभाजन के परिणामस्वरूप उत्पन्न भ्रूण कोष की अण्ड कोशिका (Egg युग्मनज मादा युग्मक) से एक नरयुग्मक सायुग्जित होकर निषेचन क्रिया सम्पन्न करता है एवं द्विगुणित युग्मनज (2n Secondary nucleus) के विभाजन के परिणामस्वरूप भ्रूण (Embryo) बनता है । आगे चलकर बीजाण्ड बीज में तथा अण्डाशय फल में विकसित हो जाता है । इसके अतिरिक्त भ्रूणकोष में उपस्थित द्विगुणित द्वितीयक केन्द्रक (2n Secondary nucleus) दूसरे नर युग्मक या जनन केन्द्रक से सायुज्यित (fuse) होकर एक त्रिगुणित प्राथमिक भ्रूणपोष केन्द्रक (Tripoid endosperm nucleus) का निर्माण करता है । यह आगे चलकर एक प्रारूपिक त्रिगुणित भ्रूणपोष (Triploid endosperm) के रूप में विकसित होता है एवं अंकुरण से पूर्व या अंकुरण के समय विकासशील भ्रूण को पोषण प्रदान करता है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रारूपिक त्रिगुणित भ्रूणपोष (Endosperm) की उपस्थिति आवृत बीजी पौधों का एक विशिष्ट लक्षण है, जो अन्य संवहनी पौधों जैसे टेरिडोफाइटा व अनावृतबीजियों में नहीं पाया जाता है ।

इस प्रकार प्ररोह शीर्ष से तने शाखाओं, पत्तियों एवं पुष्पों का निर्माण एवं मूल शीर्ष से प्राथमिक जड़ की वृद्धि एवं इसकी विभिन्न शाखाओं का निर्माण एवं पुष्पों का निर्माण प्राथमिक वृद्धि के

अन्तर्गत ही आता है । इन भागों के सभी ऊतक तन्त्र जैसे बाह्यत्वचा भरण ऊतक तन्त्र एवं संवहन ऊतक तन्त्र इत्यादि, प्ररोह एवं मूल शीर्ष पर उपस्थित प्राथमिक विभाज्योतकी कोशिकाओं से ही बनते हैं । यही नहीं कुछ अपवादों को छोड़कर एकबीजपत्री पौधों एवं कुछ एक वर्षीय शाकीय द्विबीजपत्री पौधों में केवल प्राथमिक वृद्धि ही होती है, द्वितीयक वृद्धि नहीं पाई जाती । इसके विपरीत अधिकांश द्विबीजपत्री पौधों में द्वितीयक वृद्धि होती है । यहाँ विशेष तथ्य यह है कि प्राथमिक वृद्धि के परिणामस्वरूप पौधे की लम्बाई में वृद्धि होती है, जबकि द्वितीयक वृद्धि के परिणाम स्वरूप तने या अन्य पादप भागों (जिनमें द्वितीयक वृद्धि होती है जैसे चुकन्दर) जैसे जड़ों की मोटाई में वृद्धि होती है । इसका प्रमुख कारण यह है कि द्वितीयक वृद्धि का संचालन संवहन केम्बीयम की सक्रियता के कारण होता है, परिणामस्वरूप संवहन ऊतकों की मात्रा बढ़ जाती है और तने की मोटाई में बढ़ोत्तरी होती है । जड़ की द्वितीयक वृद्धि कुछ एकबीजपत्री एवं द्विबीजपत्री पौधों में दृष्टिगोचर होती है । द्वितीयक वृद्धि प्रदर्शित करने वाले अनेक पौधों, विशेषकर झाड़ियों एवं वृक्षों में संवहन केम्बियम के अतिरिक्त कार्क केम्बियम का निर्माण भी होता है । यह कार्क केम्बियम संवहन ऊतकों के बाहर बाह्यत्वचा से लेकर परिरम्भ तक की किसी भी पर्त से बन सकता है । कार्क केम्बियम द्वारा पौधे के कोमल ऊतकों की सुरक्षा के लिए कार्क या परित्वक का निर्माण किया जाता है ।

एक परिपक्व आवृतबीजी पादप जिनमें विभिन्न प्रकार जटिल ऊतक पाये जाते हैं, उनमें प्राथमिक व द्वितीयक विभाज्योतकी कोशिकाओं के कारण लगातार नये ऊतकों को जोड़ने की क्षमता यथावत् बनी रहती है । इसकी वजह से परिपक्व पौधे में भी संतुलित प्रकार से वृद्धि होती रहती है । द्विबीजपत्री व अन्य पौधों, जिनमें द्वितीयक वृद्धि पाई जाती है । उनमें अनेक प्रकार के मृत ऊतक पाये जाते हैं, जैसे तने में जाइलम का भीतरी हिस्सा, जबकि इनकी विभाज्योतकी कोशिकायें अत्यन्त सक्रिय होती हैं । वातावरण के अनुसार इनकी वृद्धि में भी कमी या बढ़ोत्तरी हो सकती है । इसके साथ ही विशेष उपाचयिक क्रियाओं के लिये विभिन्न पादप ऊतकों व अंगों में विशेष आवश्यक कार्बनिक पदार्थों का निर्माण होता है, जिनका पादप द्वारा आवश्यकतानुसार उपयोग किया जाता है ।

1.3 आवृतबीजीयों में आकारिकीय विविधता (Morphological Diversity in Angiosperms)

कायिक अंगों (Vegetative Organs) जैसे जड़, तना एवं पत्तियों का प्रमुख कार्य पौधे के लिए पोषण की व्यवस्था तथा इसे भूमि में या मिट्टी में स्थिर करना होता है, वहीं दूसरी ओर जनन संरचनायें (Reproductive organs) पौधे की वंशवृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, इनमें पुष्प, फल एवं बीज (जिनका विकास फल के भीतर ही होता है) उल्लेखनीय है ।

विभिन्न आवृतबीजी पौधों में कार्य एवं आवश्यकतानुसार उपर्युक्त संरचनाओं की आकृति, स्थिति एवं कार्यशैली में पर्याप्त विविधता (Diversity) पाई जाती हैं अनेक उदाहरणों में तो कुछ कायिक संरचनायें अत्यन्त अल्प विकसित या अनुपस्थित भी होती हैं । विभिन्न आवृतबीजियों के जीवन

चक्र स्वभाव, आवास एवं प्रारूपों (Forms) की विविधताओं का समग्र अध्ययन निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

1.3.1 परिमाप (Size)

अभी तक प्राप्त जानकारी के अनुसार सबसे छोटा आवृतबीजी पादप (Smallest Angiosperm) वोल्फिया (Wolffia) हे । यह एक जलीय पौधा (Hydrophyte) है, जो मुक्त प्लावी अवस्था (Free floating condition) में पाया जाता है । वोल्फिया (Wolffia) के पादप शरीर में पर्णाभस्तम्भ (Phylloclade) के रूप में एक छोटी, अण्डाकार, चपटी एवं पर्ण जैसी हरे रंग की संरचना पाई जाती है । इस जलोद्भिद पादप में जड़ें अनुपस्थित होती हैं (Root less) तथा सम्पूर्ण पादप शरीर का व्यास लगभग 0.1mm तक होता है ।

सबसे बड़ा अथवा ऊँचा आवृतबीजी वृक्ष कुल मिर्टेसी (Myrtaceae) का सदस्य **यूकेलिप्टस रेगेन्स** (Eucalyptus regans) है, जिसकी ऊँचाई लगभग 375 फीट (144mts) तक होती है । बीजधारी पादपों में इसके बाद एक अनावृतबीजी (Gymnosperms) वृक्ष सिकोईया सेम्परवाइरेन्स (Sequoia sempervirens) का उल्लेख किया जा सकता है, जिसकी ऊँचाई भी लगभग 112 मीटर तक पाई गई है । वैसे भी आवृतबीजियों (Angiosperms) की तुलना में अधिक ऊँचे वृक्ष, अनावृतबीजी (Gymnosperms) पादप समूह में पाये जाते हैं ।

यदि सघनता एवं क्षेत्रफल के सन्दर्भ में आकलन किया जावे तो **बरगद** (Ficus benghalensis) का वृक्ष आवृतबीजियों में सर्वाधिक सघन एवं घेरदार होता है, जो लम्बे चौड़े क्षेत्र में फैलाव लिये हुए पाया जाता है । इसकी तिरछी, ऊपर की ओर उठी हुई वायवीय शाखायें चहुँ ओर फैलती हैं । इसमें उत्पन्न वायवीय **स्तम्भ मूल** (Prop roots or pillar roots) फैलाव में विशेष रूप से सहायक होती हैं । ये **अपस्थानिक जड़ें** (Adventitious roots) वायवीय तनों अथवा शाखाओं (Aerial branches) से उत्पन्न होती हैं तथा लटकती हुई नीचे की ओर वृद्धि करती हैं एवं अन्त में जमीन में घुसकर एक मजबूत खम्भे (Pillar) के समान रचना निरूपित करती हैं, जो बरगद की फैली हुई शाखाओं को दृढ़ता और मजबूती प्रदान करती हैं । अनेक उदाहरणों में इन स्तम्भीय जड़ों का बाहरी व्यास (Diameter) मुख्य तने के बराबर ही देखा गया है । इस तथ्य की आकलन कोलकाता एवं चेन्नई के प्रसिद्ध वानस्पतिक उद्यानों (Botanical gardens) में पाये जाने वाले बरगद के वृक्षों को देखकर किया जा सकता है ।

1.3.2 दीर्घकालिता (Longevity)

निरन्तर वृद्धिशील **अग्रस्थ कलिकाओं** (Apical buds) की सक्रियता के कारण वृक्ष अनिश्चित काल तक या लम्बे समय तक अपनी लम्बाई या ऊँचाई तथा क्षेत्रफल में वृद्धि कर सकते हैं । इसके विपरीत प्राणियों (Animals) में वृद्धि काल सीमित होता है सामान्यत : प्राणियों के परिमाप (Size) में वृद्धि इनके **लैंगिक परिपक्वता** (Sexual maturity) प्राप्त कर लेने के बाद रुक जाती है । इसके विपरीत पौधों, विशेषकर वृक्षों में ऐसा नहीं होता है । इसीलिए प्राणियों के विपरीत अधिकांश आवृतबीजी वृक्षों का जीवनकाल असीमित होता है । प्रतिवर्ष इनमें नई जड़ों, शाखाओं,

पत्तियों, पुष्प एवं फलों की उत्पत्ति होती है । वृक्षों की लम्बाई एवं तने के घेरे में लगातार बढ़ोत्तरी होती रहती है । **द्विबीजपत्री वृक्षों** (Dicot-trees) के तने का घेरा जैसे -जैसे बढ़ता है, तो इसके साथ ही इनकी पुरानी छाल (परित्वक Bark) भी उतर जाती है, व इस तने पर नई छाल आ जाती है । लेकिन **एकबीजपत्री वृक्षों** (Monocot tree), जैसे **नारियल** (Cocos nucifera) में क्योंकि तने की **द्वितीयक वृद्धि** (Secondary growth) नहीं पाई जाती अत: इनकी ऊँचाई या लम्बाई तो बहुत अधिक बढ़ जाती है, लेकिन तने की मोटाई (Thickness) नहीं बढ़ती, साथ ही ऐसे वृक्ष शाखाविहीन (Umbranched) होते हैं । द्विबीजपत्री वृक्षों के दीर्घ जीवनकाल की तुलना में इनका जीवनकाल सीमित होता है । 200 या 300 वर्षों से अधिक नहीं होता ।

जीवनकाल की विविधता के आधार पर न केवल आवृतबीजियों, अपितु अन्य संवहनी पौधों को भी विभित्र वर्गों में बाँटा जा सकता है, जो निम्न प्रकार से हैं:

(a) **अल्पजीवी पादप** (Ephemerals) इस श्रेणी में सम्मिलित पौधों का जीवनकाल अत्यल्प या बहुत छोटा, केवल कुछ सप्ताह से लेकर 1-2 माह का होता है । क्योंकि इनका वृद्धि काल (Growing season) बहुत थोड़ी अवधि के लिए होता है । अत: जीवन काल भी छोटा हो जाता है । इस प्रकार के **अल्पजीवी पौधे** (Ephemerals) प्रायः मरुभूमि (Deserts) अतिशुष्क क्षेत्रों (Arid zones) अथवा अत्यन्त शीत प्रदेशों, (Alpine regions) में पाये जाते हैं, जहाँ सामान्य जीवनयापन के लिए अत्यन्त प्रतिकूल या विषम परिस्थितियाँ (Adverse conditions) मौजूद रहती हैं । इस श्रेणी के उदाहरणों में **मोल्यूगो सरवियाना** (Mollugo cerviana जीवनकाल 10 से 15 दिन) एवं **ऐरेबिडोप्सिस** (Arabidopsis जीवनकाल 20 से 28 दिन) इत्यादि पौधों के नाम उल्लेखनीय हैं ।

(b) **एकवर्षीय पादप** (Annuals): वैसे तो अल्पजीवी (Ephemerals) पोधों को भी इसी श्रेणी में रखा जा सकता है, परन्तु इस श्रेणी अर्थात् एक वर्षीय पोधों में प्रायः उन पादप प्रजातियों को सम्मिलित किया गया है, जिनका जीवन काल (Life span) अल्पजीवी पोधों की तुलना में तो निश्चित रूप से बहुत अधिक होता है, परन्तु यह जीवन अवधि एक वर्ष तक ही सीमित होती है, या इससे कुछ कम होती है । इस एक वर्ष की अवधि के दौरान ही इन पोधों, के जीवन चक्र की सभी गतिविधियाँ या अपस्थायें सम्पन्न होती हैं, इनकी लम्बाई व क्षेत्र में वृद्धि होना एवं अन्य कार्य सम्पन्न होते हैं । जैसे पुष्पन (Flowering) होता है, बीज बनने हैं एवं इनका प्रकीर्णन हो जाता है । ये सारे कार्य पूरा हो जाने पर इनके पादप शरीर की मृत्यु हो जाती है । उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इनके बीज (Seeds) ही, इन पौधों, की **चिरकालिता संरचनायें** (Perennating structures) हैं, जिनके द्वारा ये विषम परिस्थितियों में अपना अस्तित्व बनाये रखते हैं । उदाहरण: गेहूँ मक्का व चावल आदि ।

(c) **द्विवर्षीय पादप** (Biennials): इस श्रेणी के पोधों को अपना जीवन चक्र सम्पूर्ण करने के लिए दो अनुकूल ऋतुओं (Two favourable seasons) अर्थात् दो वर्षों की आवश्यकता

होती है । प्रथम वर्ष मैं इनकी कायिक वृद्धि (Vegetative growth) होती है, जबकि दूसरे वर्ष में इनका पुष्पन (Flowering) एवं बीज निर्माण (Seed formation) होता है । प्रायः इनमें खाद्य पदार्थो के संचय हेतु विशेष रूपान्तरित संरचनायें जैसे कंदिल जड़ (Modified tuberous roots), या घनकंद (Modified stem corm) एवं इसी प्रकार की संग्राहक संरचनायें (Food storage structures) विकसित होती हैं । इनमें प्रतिकूल परिस्थितियों में पोधे के सफलतापूर्वक जीवनयापन या चिरकालिता (Perennation) हेतु खाद्य पदार्थ संग्रहीत होते हैं । उदाहरण: गाजर (Carrot, Daucus, carota), मूली (Raddish, Raphanus sativus), एवं चुकन्दर (Sugar beet, Beta vulgaris).

(d) **बहुवर्षीय पादप** (perennials) इस श्रेणी के पोधों का जीवनकाल निश्चित ही दो वर्षों से अधिक होता है । प्रायः ये अनेक वर्षों तक जीवित रहते हैं तथा विशेष मौसम या ऋतु में इनका पुष्पन (Flowering) एवं बीज निर्माण होता है । अनेक उदाहरणों में इनका जीवनकाल सैकड़ों या हजारों वर्ष का माना गया है, जैसे बिहार में गया के पास अवस्थित **बोधिवृक्ष** (बरगद) की आयु लगभग 2000 वर्ष की आंकी गई है । वैसे वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार बरगद के वृक्ष को लगभग अमर माना गया है । आम, बरगद व पीपल इत्यादि वृक्ष, कैर (Capparis decidua), करौंदा (Carissa) व आँकड़ा (Calotropis) इत्यादि क्षुप एवं सरपुंखा (Tephrosia hamiltonil) इत्यादि शाक बहुवर्षी पोधों के महत्वपूर्ण उदाहरण हैं ।
बहुवर्षीय पोधों में पुष्पन (Flowering) एवं फल निर्माण (Fruit formation) की आवृति के आधार पर इनको दो उप श्रेणियों में विभेदित किया गया है :

(I) **सकृत्फली** (Monocarpic): इन बहुवर्षीय पोधों के सम्पूर्ण जीवनकाल में पुष्पन, फल निर्माण एवं बीजों का विकास केवल एक ही बार होता है । बीज निर्माण के बाद इनकी मृत्यु हो जाती है । उदाहरण: अगेव (Agave) व केला (Musa paradisiacal; Banana) इत्यादि ।

(II) **बहुकृत्फली** (Polycarpic): परिपक्व हो जाने के पश्चात् इन बहुवर्षीय पादपों में प्रतिवर्ष पुष्पन (Flowering) व फल निर्माण (Fruit formation) होता है, जैसे आम (Mango) व नींबू (Cirus) आदि ।

1.3.3 आवास (Habitat)

अन्य पहलु ओं की भाँति आवृतबीजी पौधे अपनी आवासीय प्रवृत्ति में भी पर्याप्त विविधता परिलक्षित करते हैं । विभिन्न जीवधारियों का अध्ययन करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि किसी सजीव इकाई के प्राकृतिक परिवेश या घर को आवास (Habitat) कहते हैं । विभिन्न पौधों के आवासीय स्थानों को मुख्यतया दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है - 1. जलीय आवास (Aquatic habitat) 2. स्थलीय आवास (Terrestrial habitat) ।
समुद्र एवं महासागर, तालाब खारे पानी की झीलें, मीठे पानी की झीलें, पोखर, कुण्ड, नाले नहरें एवं नदियाँ विभिन्न प्रकार के जलीय आवासों (Aquatic habitats) के उदाहरण हैं । इनमें से समुद्र एवं महासागरों (Marine habitat) में केवल एक आवृतबीजी पादप जोस्टेरा (Zostera) ही

पाया जाता है । विभिन्न प्रकार के लवण रहित जलीय आवासों (Fresh water habitats) में पाये जाने वाले प्रमुख आवृतबीजी सदस्यों में **हाइड्रिला** (Hydrilla), **पोटामोजीटोन** (Potamogeton), **निम्फिया** (Nymphaea), **ट्रापा** (Trapa) एवं **नीलम्बो** (Nelumbo) के नाम उल्लेखनीय हैं । अनेक जलीय पौधों (Hydrophytes) जैसे **वोल्फिया** (Wolffia) व **सिरेटोफिल्लम** (Ceratophyllum), में जड़ें अनुपस्थित होती हैं । समुद्र तटीय दलदलों में **मेनग्रोव वनस्पति** (Mangrove plants) जैसे राइजोफोरा (Rhizophora), साल्सोला ।(Salsola) एवं **एवीसीनिया** (Avicennia) इत्यादि लवणोद्भिद प्रजातियाँ (Halophytes) सम्मिलित की जा सकती हैं । इस प्रकार जलीय आवासों में विभिन्न प्रकार के जलीय आवृतबीजी पौधे (Hydrophytic angiosperms) पाये जाते हैं ।

स्थलीय आवासों (Terrestrial habitats) में पाये जाने वारने आवृतबीजियों को हम दो उप श्रेणियों में बाँट सकते हैं. (a) मध्योद्भिद या समोद्भिद (Mesophytes) जो अपेक्षाकृत जल की सामान्य उपलब्धता वाले स्थानों में पाये जाते हैं, जैसे आम (Mango) तथा (b) मरुद्भिद (Xerophytes) जो शुष्क आवासों (Dry habitats) एवं मरुभूमि (Deserts) में पाये जाते हैं । कुछ मरुद्भिदीय पौधों का पादप शरीर जल एवं म्यूसीलेज संग्रहण करने में सक्षम होता है, ऐसे **पौधों को मांसल मरुद्भिदीय पादप** (Succulents) कहते हैं, उदाहरण: **नागफनी** (Opuntia), एवं **घोटा थोर** (Euphorbia) कुछ अन्य मरुद्भिदीय पौधों में विशेष प्रकार के रूपान्तरण पाये जाते हैं, जिनकी वजह इनको जानवरों द्वारा चराई से सुरक्षा प्राप्त होती है एवं इनके द्वारा वाष्पोसर्जन की दर में भी गिरावट आ जाती है, जैसे **ऑस्ट्रेलियन बबूल** (Acacia melanoxylon) में **पर्णाभ स्तम्भ** (Phyllode) स्व रूपान्तरण, **जवासा** (Alhagi) में **शूलों** (Thorns) की, **बेर** (Zizyphus) एवं **बबूल** (Acacia) में कंटको (Spines) की एवं **बड़बीना** (Lantana) में कंटिकाओं (prickles) की उपस्थिति. इसी प्रकार के रूपान्तरण के उपर्युक्त उदाहरण हैं ।

समोद्भिद या मध्योद्भिद (Mesophytes) पादप क्योंकि जल की पर्याप्त उपलब्धता वाले आवासों में रहते हैं । अत: इनमें सघन वृद्धि (Dense growth) होती हैं । प्रायः मध्योद्भिद पादप वनों (Forests) या घास के मैदानों (Grasslands) में पाये जाते हैं । ये सघन वन भी कई प्रकार के होते हैं जैसे **सदाबहार** वन (Evergreen forests), जहाँ विभिन्न पौधों में पतझड़ का कोई निश्चित समय नहीं होता या पर्णपाती वन (Deciduous forests), जहाँ उगने वाले वृक्षों में पतझड़ का कोई निश्चिंत मौसम होता है । क्षेत्रीय भौगोलिक स्थिति के अनुसार भी जंगलों को अलग-अलग वर्गों में रखा जा सकता है, जैसे **उष्णकटिबंधीय वन** (Tropical forests), **उपोष्ण वन** (Subtropical forests) या **शीतोष्ण वन** (Temperate forests) इत्यादि ऊँची-ऊँची पर्वत श्रृंखलाओं में पाई जाने वाली आवृतबीजी वनस्पति को **एल्पाइन वनस्पति** (Alpine vegetation) कहते हैं । अधिक ऊँचाई वाले इन स्थानों या पर्वतीय श्रृंखलाओं पर जहाँ सामान्यतया वृक्ष नहीं जाते हैं, उसे काष्ठ रेखा (Timber line) कहते हैं । उष्ण कटिबंधीय वन प्रायः भूमध्य रेखीय क्षेत्रों (Equatorial regions) एवं इसके आसपास बहुतायत से पाये जाते हैं । इन क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा का औसत बहुत अधिक होता है, इसीलिए ऐसे वनों के उष्ण

कटिबंधीय वर्षा वन (Tropical rain forests) या सदाहरित वन (Evergreen forests) भी कहते हैं । इन वन्य क्षेत्रों में अधिपादपीय प्रजातियाँ (Epiphytes) एवं कठलतायें (Lianas) बहु तायत से पाये जाते हैं ।

मृदा की विशेषता एवं जल की उपलब्धता के आधार पर विभिन्न प्रकार के पौधों को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है:

(1) **अम्लोद्भिद** (Oxylophytes): ये पौधे अम्लीय मृदा में पाये जाते हैं, जिसकी pH7 से कम प्रायः या 4 या 5 होती है । इस प्रकार की मृदा में कैल्सियम (Ca) का अभाव पाया जाता है जैसे, रोडोडेन्ड्रोन (Rhododendron),बिच्छुबूटी (Urtica) एवं रुमेक्स (Rumex) इत्यादि ।

(2) **बालुकोद्भिद** (Psammophytes): इस प्रकार के पौधे प्रायः मरुस्थलीय बालुई मिट्टी में पाये जाते हैं, जैसे केलीगोनम (Calligonum), लेप्टाडीनिया (Leptadenia) एवं मोल्यूगो (Mollugo) ।

(3) **लवणोद्भिद** (Halophytes): वे पादप, जो खारे पानी की झीलों समुद्री जल या लवणयुक्त मृदा में पाये जाते हैं, लवणोद्भिद (Halophyte) कहलाते हैं, जैसे साल्सोला (Salsola), स्यूडा (Psueda) एवं टेमेरिक्स (Tamarix) इत्यादि इसके अतिरिक्त कुछ लवणोद्भिद पादप समुद्री किनारों के पास दलदली स्थानों (Marshes) में पाये जाते हैं, ऐसे पोधों को **मेन्ग्रोव पादप** Mangrove plants) कहते हैं, जैसे राइजोफोरा ।

(4) **शैलोद्भिद** (Lithophytes: इस श्रेणी के पौधे, अनावृत चट्टानों शिलाखण्डों या पथरीली भूमि पर पाये जाते हैं, जैसे बारलेरिया (Barleria), लेपिडागेथिस (Lepidagathis) एवं थोर (euphorbia nerifolia) इत्यादि ।

(5) **शीतोद्भिद** (Psycjrophytes): ये पादप निम्न तापक्रम वाले स्थानों, जैसे पहाड़ों की बर्फीली चोटियों एवं अलापाइन प्रदेशों में पाये जाते हैं, जैसे थेलिक्ट्रम ।

(6) **चट्टानों की दरारों में पाये जाने वाले पादप** (Chasmophytes) : इन पौधों की उपयुक्त वृद्धि के लिए चट्टानों की दरारों में मौजूद अल्प मात्रा में मृदा ही पर्याप्त रहती है । जैसे एवं एकाइरेन्थस ।

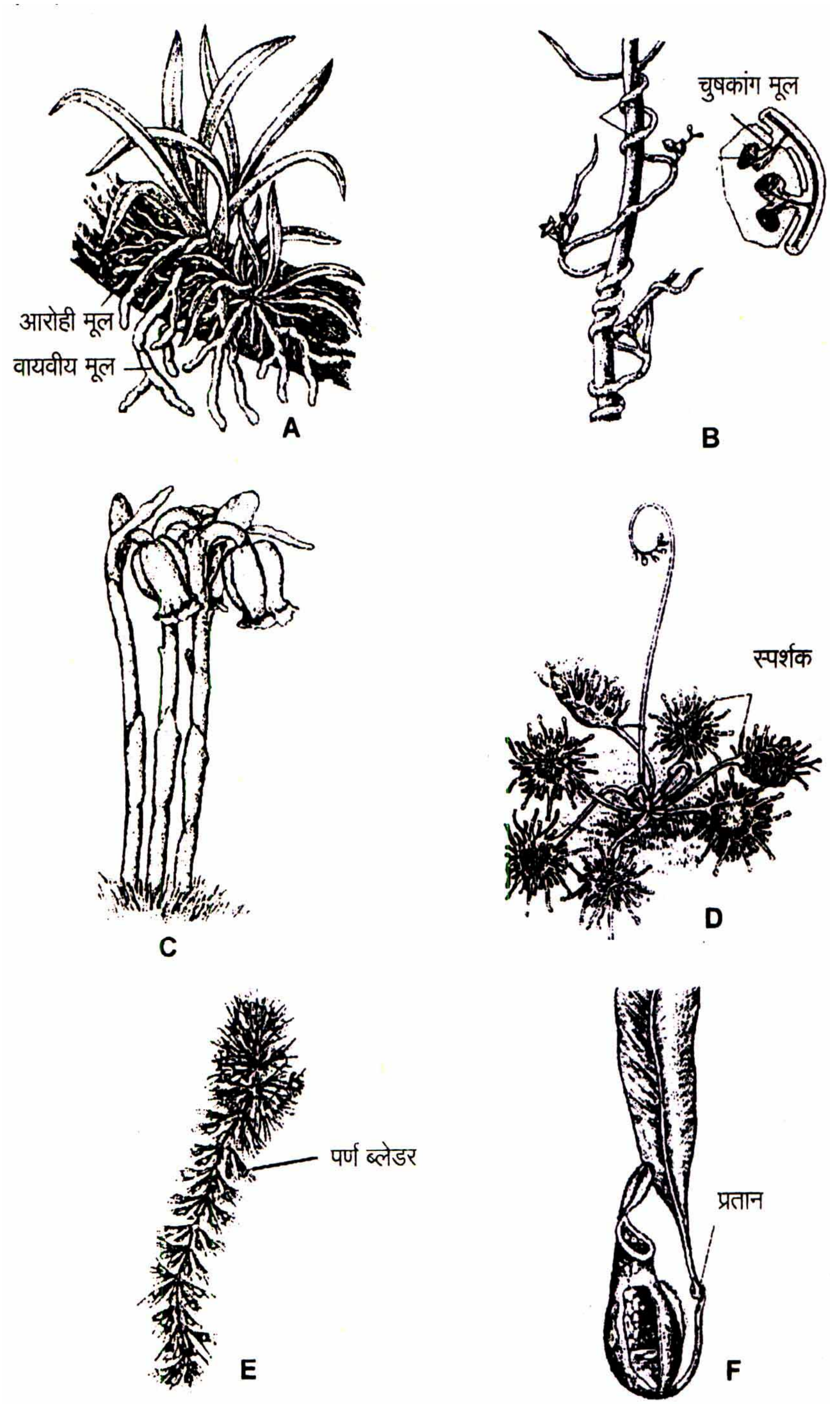

चित्र 1.4 : पादपों की आवास एवं पोषण विविधता : A. आर्किड्स B. अमरबेल C. मोनोट्रोपा D. ड्रोसेरा E. यूट्रीक्यूलेरिया F. नेफेन्थीज

(7) **अधिपादप** (Epiphytes): इस प्रकार के पौधे दूसरे पादप शरीरों पर अपना जीवनयापन करते हैं, लेकिन ये स्वपोषी (Autophytic) होते हैं । उन पौधों से जल, खनिज या भोज्य पदार्थों का अवशोषण नहीं करते हैं । इसी कारण इनको स्थल परजीवी कहा जाता है, जैसे **आर्किड्स**

(Orchids) ।अधिपादपीय आर्किड्स में आर्द्रताग्राही जड़ें (Hygroscopic roots) पाई जाती हैं, जिनके बाह्यवल्कुटीय क्षेत्रों में एक विशेष प्रकार की ऊतक पर्त वेलामन (Velaman) मौजूद होती है । इसके द्वारा जड़ें वातावरण से नमी का अवशोषण कर अपनी जल सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति करती है ।

(8) **मृतोपजीवी पादप** (Saprophytes) कुछ पौधे जैसे मोनेट्रोपा (Monotropa) अपना भोजन मृत कार्बनिक पदार्थों से प्राप्त करते हैं ।

(9) **परजीवी पादप** (Parasites): ये आवृतबीजी पौधे अपने पोषण के लिये दूसरे पोधों पर आश्रित होते हैं, जैसे अमरबेल (Cuscuta) व आरोबेन्की (Orobanche) इत्यादि ।

(10) **कीटभक्षी पौधे** (Insectivorous plants): वैसे तो इस श्रेणी के पौधे स्वपोषी होते हैं! लेकिन ये नाइट्रोजन की कमी वाली मृदा में पाये जाते हैं । अत: अपने पोषण हेतु आवश्यक नाइट्रोजन की आपूर्ति के लिये ये कीटभक्षी पादप अपनी विशेष रूपान्तरित पादप संरचनाओं की सहायता से सूक्ष्म कीड़ों को पकड़ कर इनका पाचन कर लेते हैं । उदाहरण घटपर्णी या नेपेन्थीज (Nepenthes) ड्रोसेरा (Drosera) एवं ब्लैडरवर्ट या यूट्रीक्यूलेरिया (Utricularia) इत्यादि ।

1.3.4 स्वभाव (Habit)

आवृतबीजी पौधों की बाहय आकारिकी एवं प्रारूप (Form), बहुत कुछ उनके तने या शाखायुक्त होना पौधे की प्रकृति (Habit) को निर्धारित करता है । इनकी प्रकृति अथवा स्वभाव के आधार पर आवृतबीजी पौधों को विभिन्न प्रकार से विभेदित किया जा सकता है ।

आज से हजारों वर्ष पूर्व एक ग्रीक दार्शनिक **थियोफ्रेस्टस** (Theophrastus) ने विभिन्न पौधों का वर्गीकरण तने के आधार पर निम्न प्रकार से किया था:

(I) **शाक** (Herb): ये छोटे, कोमल एवं अकाष्ठीय पौधे होते हैं, भूमि की सतह के ऊपर. इनके कोई स्थायी भाग (Persistant parts) नहीं पाये जाते । इस श्रेणी के पोधों की अधिकतम ऊँचाई 1 मीटर (3.25 फीट) तक हो सकती है, ऐसे शाकीय पादप (Herbaceous plants) एक वर्षीय (Annual) जैसे सरसों (Brassica campestris), द्विवर्षीय (Biennials) जैसे चुकन्दर जैसे (Beta vulgaris) या बहुवर्षीय (Perennials) जैसे देवकेल (Canna indica) हो सकते हैं ।

बहुवर्षीय शाकीय पौधों में प्रायः रूपान्तरित तने (Modified stem) के रूप में भूमिगत प्रकन्द (Rhizome) पाया जाता है, जिसके द्वारा प्रतिवर्ष नयी वायवीय प्ररोह शाखायें (Aerial shoots) उत्पन्न होती हैं । अनेक वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार केले (Banana) के पोधों को भी बहुवर्षीय शाक (Perennial herb) के तौर पर निरूपित किया गया है ।

(II) **क्षुप या झाड़ियाँ** (Shrubs): ये अपेक्षाकृत कम ऊँचाई के (1 से 4 मीटर) काष्ठीय पोधे (Woody plants) होते हैं एवं इनका शाखन (Branching) आधारित भाग (Base) या इसके पास से होता है । इनमें कोई निश्चित मुख्य तन्त्र (Main trunk) नहीं पाया जाता तथा ये बहुवर्षीय (Perennial) पादप होते हैं, जैसे झाड़ी बोर (Zizyphus nummularia)।

(III) **वृक्ष** (Tree) ऐसे काष्ठीय बहुवर्षीय पौधे (Woody perennial plants), जिनकी ऊँचाई अपेक्षाकृत अधिक हो (4 मीटर से अधिक) तथा जिनमें एक मुख्य तना (Main trunk) उपस्थित हो उनको इस श्रेणी में रखा जा सकता है । उदाहरण नीम (Melia azadirachta) एवं **पीपल** (Ficus religiosa) इत्यादि ।

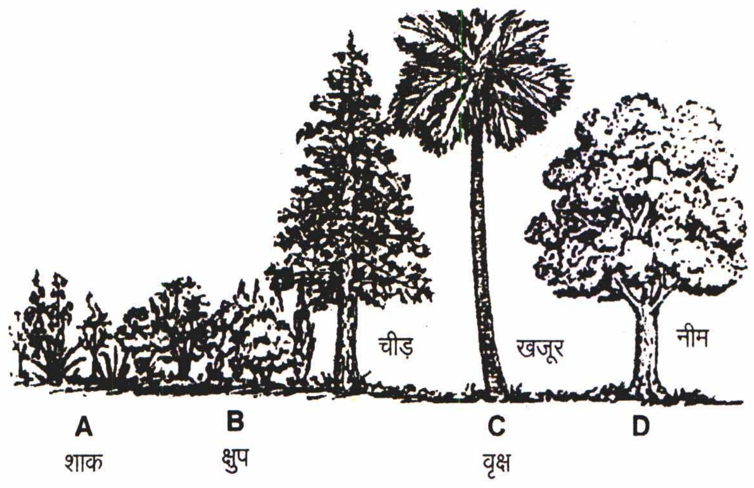

चित्र 1.5: विभिन्न प्रकार के पादप स्वभाव : A.शाक, B.क्षुप, C-D. वृक्ष

वृक्ष निम्न प्रकार के होते हैं :

(a) **एकलशाखी या बहिवर्धी** (Excurrent or Monopodial) जब वृक्ष के तने की वृद्धि सीधी होती है एवं इसकी शाखाएँ अग्राभिसारी (Acropetal) या असीमाक्षी (Racemose) क्रम में व्यवस्थित होती है, तो ऐसा वृक्ष सममित विन्यास (Symmerical manner) में बढ़ता है एवं इसका बाह्य प्रारूप शंकु रूपी (Conical) हो जाता है, जैसे अशोक (Polyalthea longifolia) ।

(b) **युग्मशाखी या बहुशाखी** (Deliquescent or Sympodial): ऐसे वृक्ष का तना कुछ समय तक तो सीधा बढ़ता है, फिर इसके बाद मुख्य तने से शाखायें उत्पन्न होती हैं और इन मुख्य शाखाओं से भी छोटी-छोटी शाखाएँ पैदा हो जाती हैं । अत: इस प्रक्रिया में वृक्ष का बाह्य प्रारूप गुम्बद (Dome) के समान हो जाता है जैसे, बरगद (Ficus benghalensis) ।

(c) **अशाखित या शाखाविहीन** (Caudex): इस प्रकार के वृक्षों में तना खम्भे (Pillar) के समान सीधा बढ़ता है तथा इससे कोई शाखा उत्पन्न नहीं होती, तो इस प्रकार के तने को पुच्छकी (Caudex) या अशाखित कहते हैं । इस प्रकार के वृक्षों में अशाखित खम्भे जैसे तने के शीर्ष पर पत्तियों का एक सघन समूह या किरीट (Crown of leaves) पाया जाता है, इसमें प्रतिवर्ष निश्चित समय पर पत्तियों का एक चक्र विकसित (Whorl of leaves) होता है । जीर्ण पत्तियों के गिर जाने पर स्थायी पर्णाधार (Permanant leaf bases) स्पष्टतया दिखाई देते हैं, उदाहरण खजूर (Phoenix sylvestries plam) ताड़ (Borassus flabifer) व नारियल (Coccos nucifera) इत्यादि ।

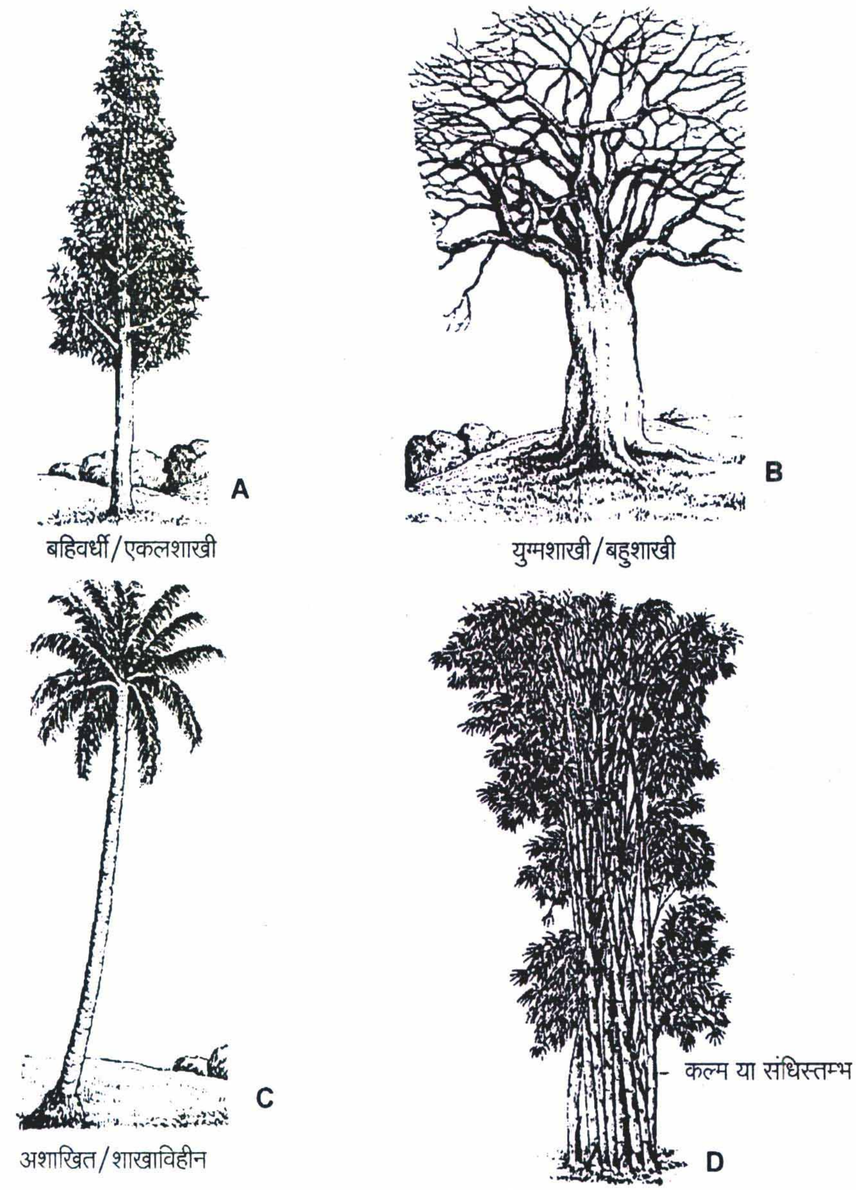

चित्र 1.6: विभिन्न प्रकार के शाखित वृक्ष: A. बहिवर्धी एकल शाखीय, B. युग्मशाखी / बहु शाखीय, C. अशाखित / शाखाविहीन, D. संघित स्तम्भ / कल्म

(d) **संधि स्तम्भ** (Culm): इस प्रकार के वृक्षों का तना भी प्रायः अशाखित (Unbranched) होता है तथा सीधा ऊपर की ओर वृद्धि करता है । परन्तु इनके तने में विभिन्न स्थानों पर गाँठें पाई जाती हैं । उदाहरण, बाँस (Dendrocalamus strictus) ।

उपर्युक्त आवृतबीजी पादप प्रारूपों के अतिरिक्त अनेक आवृतबीजी पौधे ऐसे भी पाये जाते हैं, जिनके तने दुर्बल या कमजोर (Weak) होते हैं । अत: उर्ध्व दिशा में वृद्धि नहीं कर सकते या सीधे (Erect) नहीं होते अथवा ये किसी के सहारे अथवा आधार के द्वारा ऊपर की ओर वृद्धि करते हैं । इन प्रारूपों के कुछ प्रमुख उदाहरण निम्न प्रकार से हैं:

(I) **प्रसारी पादप** (Trailers): इस प्रकार के पौधों के तने अत्यन्त दुर्बल एवं जमीन पर चारों तरफ फैले हुए होते हैं तथा इनके तने से विभिन्न स्थानों पर जड़ें उत्पन्न नहीं होतीं । उदाहरण, गोखरू (Tribulus terrestris) ।

(II) **विसर्पी पादप** (Creepers): इनके तने भी प्रसारी पौधों के समान अत्यन्त दुर्बल एवं जमीन पर फैले हुए, क्षैतिज (Horizontal) अवस्था में धरती की सतह के समानान्तर (Parallel) पाये जाते हैं । लेकिन इनके तनों से निश्चित स्थानों पर जड़ें उत्पत्र होकर भूमि में प्रविष्ट हो जाती हैं, जैसे स्ट्रॉबेरी (Strawberry) ।

(III) **वल्लरी** (Twinner): ये पौधे अपने तने एवं शाखाओं द्वारा दूसरे वृक्षों पर अन्य किसी आधार पर लिपटने के लिए इनमें कोई विशेष संरचनाएँ, जैसे **प्रतान** (Tendrils) इत्यादि नहीं होती । ऐसे पौधे जब किसी आधार या सहारे (Support) के सम्पर्क में आते हैं, तो इनका वृद्धि शीर्ष (Growing point) चक्कर लगाता हुआ या सहारे पर सर्पिलाकार कुण्डलित (Spirally coiled) क्रम में ऊपर की ओर बढ़ता है । वृद्धि शीर्ष के पास की पत्तियाँ बहुत छोटी होती हैं । उदाहरण: सेम (Vigna) ।

(IV) **आरोही** (Climbers) इस प्रकार के पौधों का तना भी दुर्बल होता है । परन्तु इनमें ऊपर की ओर वृद्धि करने के लिए एवं आधार पर पकड़ मजबूत करने के लिए विशेष प्रकार की संरचनाएँ (special structure) पाई जाती हैं, जिनका उपयोग करके ये ऊपर की ओर वृद्धि करते हैं । उपर्युक्त विशिष्ट संरचनाओं के आधार पर निम्न प्रकार के आरोही पौधे पाये जाते हैं:

(a) **प्रतान आरोही** (Tendril climbers): ये प्रतानों की (Tendrils) की सहायता से सहारे (Support) पर वृद्धि करते हैं, जैसे **पर्णाग्र प्रतान आरोही** (Leaf tip tendril climber), उदाहरण ग्लोरिओसा सुपरबा (Gloriosa superba: glory lily) **पर्ण प्रतान आरोही** (Leaf tendril) उदाहरण: मटर (Pisum sativum) **अनुपर्ण प्रतान आरोही** (Stipule tendril) उदाहरण स्माइलेक्स (Smilax) व **पर्णवृन्त प्रतान आरोही** (Petiole tendril) उदाहरण क्लिमेटिस (Clematis) ।

(b) **मूल आरोही** (Root Climbers): इस प्रकार के आरोही पौधे अपस्थानिक जड़ों (Adventitious root) की सहायता करते हैं । ये आरोही जड़ें (Climbing roots) पर्वसंधियों पर उत्पन्न होती हैं । उदाहरण, पान (Piper betle), **पोथोस** (Pothos money plant;) एवं **आइवी** (Ivy) तथा **फिलेडेन्ड्रोन** (Philadendron) ।

(c) **अंकुश आरोही** (Hook Climbers): इस प्रकार के आरोही पौधों के तनों पर कंटक (Spines) या कंटिकायें (Prickles) पाये जाते हैं । ये नुकीली संरचनायें आधार को जकड़कर पौधे को आगे बढ़ने में मदद करती हैं । उदाहरण: **बोगेनविलिया** (Bougainvillea) ।

(v) **कठलताएँ या काष्ठीय आरोही पादप** (Lianas or woody climbers): इस प्रकार के आरोही पौधों के तने दुर्बल, परन्तु काष्ठीय होते हैं । इस प्रकार के तनों में क्योंकि मृदुतकी

कोशिकाओं की मात्रा अधिक एवं काष्ठीय तत्त्वों (Wood elements) की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती है, इसीलिए ये कोमल या दुर्बल होते हैं । उष्णकटिबंधीय वर्षा वनों (Tropical rain forests) में इस प्रकार के पौधे बहुलता से पाये जाते हैं, उदाहरण : **गिलोय या टिनोस्पोरा** (Tinospora Cordifolia) एवं जल जमनी (Cocculus hirsutus) इत्यादि ।

(vi) **अधिपादप या उपरिरोही पौधे** (Epiphytes): ऐसे पौधों का आवास स्थल अन्य पादप प्रजातियों के शरीर पर होता है । ये केवल अपने रहने की जगह के कारण ही अन्य पोधों के पादप शरीर को प्रयुक्त करता हैं अन्यथा ये स्वपोषी पौधे होते हैं । इसीलिए इनको स्थल परजीवी (Space parasites) भी कहा जाता है । अत: वे पौधे, जो दूसरे पौधे के शरीर पर अपना जीवनयापन करते हैं, अधिपादप (Epiphytes) कहलाते हैं । इन पौधों में वातावरण की नमी को अवशोषित करने के लिए आर्द्रता ग्राही जड़ें (Hygroscopic roots) पाई जाती हैं । इन जड़ों की आन्तरिक संरचना में विशेष प्रकार का ऊतक वेलामन (Velaman) उपस्थित होता है । इस ऊतक की कोशिकायें पतली भित्ति वाली एवं सुदीर्घित होती हैं उदा. वांडा (Vanda),डेन्ड्रोबियम (Dendrobium) आदि ।

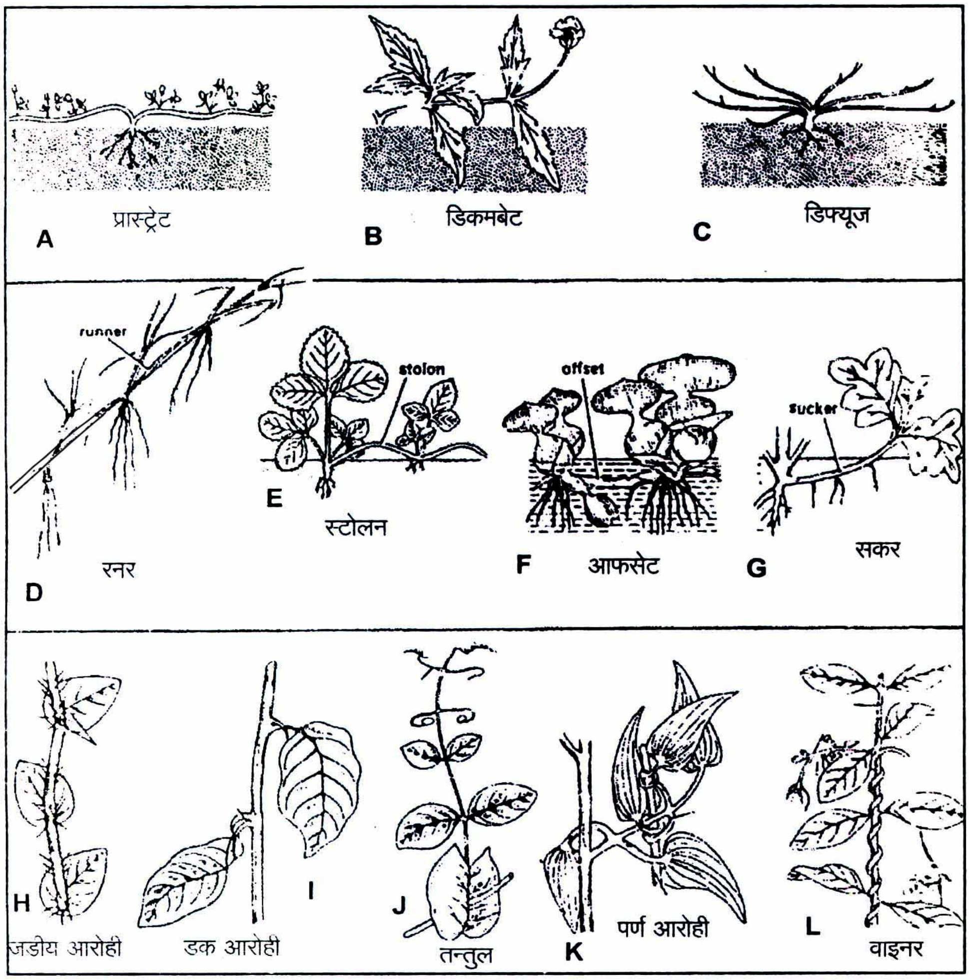

चित्र 1.7 : विभिन्न प्रकार के प्रसारी (A - C), विसर्पी (D-G) एवं आरोही तने (H-L)

1.4 अनावृतबीजियों, एवं अनावृतबीजियों में वृक्ष स्वभाव का विकास एवं सम्मिलन (Convergence and Evolution of Tree habit in Gymnosperms and Angiosperms)

प्रारम्भिक काल में विकसित स्थलीय पादप अर्थात् माँस इत्यादि भूमि की सतह से काफी नजदीक होते है तथा अधिकांश इनका आकार बहुत छोटा होता था, ये जमीन की सतह पर तेजी से फैल जाते थे (Gregarious habit), इनके पादप शरीर की ऊँचाई केवल कुछ सेंटीमीटर तक होती थी। अत: स्वाभाविक तौर पर इनके पादप शरीर में संवहन ऊतक (Vascular tissue) नहीं पाये जाते थे । यहाँ उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि माँस एवं अन्य ब्रायोफाइटा सदस्य प्रायः नम व छायादार स्थानों में व गीली मिट्टी में उगते हैं, जहाँ उनके मूलाभासों द्वारा अवशोषण के लिए जल की प्रचुर मात्रा सदैव उपलब्ध रहती है एवं इनके पादप शरीर का आकार छोटा होने के कारण अवशोषण एवं संवहन के लिए ये संवहन ऊतकों की अनुपस्थिति से अप्रभावित होते हैं ।

परन्तु स्थलीय पौधों में विकास का क्रम आगे बढ़ने के साथ-साथ ही, इनमें जलाशयों से दूर अपेक्षाकृत शुष्क स्थलीय आवासों में जीवनयापन की प्रवृत्ति भी विकसित हुई होगी । परिणामस्वरूप पादप जगत के संवहनी पौधों (Vascular plants or Tracheophyta) का उद्भव (Origin) हुआ । इन पौधों में जल एवं अन्य भोज्य पदार्थों के संवहन तथा अवशोषण के लिए आवश्यक एवं पर्याप्त रूप से विकसित संवहन ऊतक पाये जाते थे । संवहनी, पौधों या ट्रेकियोफाइटा (Tracheophyta Gr.trachea= wind pipe; or phyton- plant) में लगभग 2,75,000 जीवित पादप वंश सम्मिलित किये गये हैं । इनमें से अधिकांश सदस्य पुष्पधारी पौधों (Flowering plants) की प्रजातियाँ हैं । **स्थलीय परिस्थितियों** (Terrestrial conditions) में सर्वप्रथम अपनी उपस्थिति प्रदर्शित करने वाले संवहनी पौधों (Vascular plants) के रूप में टेरिडोफाइटा समूह के सदस्यों अर्थात् फर्न्स एवं अन्य संवहनी अपुष्पी क्रिप्टोगेप्स (Vascular cryptogames) का उल्लेख किया जाता है । लेकिन फर्न एवं अन्य टेरिडोफाइट सदस्य कभी भी अपने आप को सफलतम स्थलीय पौधों के तौर पर स्थापित नहीं कर पाये, क्योंकि इनके पादप शरीरों में बीज परिवर्धन की प्रवृत्ति (Seed habit) नहीं पाई जाती । इसके विपरीत अन्य बीजधारी संवहनी पादप (Seed bearing vascular plants) विशेष रूप से पुष्पधारी पादप या आवृतबीजी पौधों एवं कुछ अंशों जिम्नोस्पर्म्स भी स्थलीय परिस्थितियों में अपने आपको समायोजित करने की क्षमता रखते हैं, अत: ये इन स्थलीय परिस्थितियों के प्रति पर्याप्त अनुकूलन क्षमता (Adaptations) प्रदर्शित करते हैं । ये न केवल बीज उत्पन्न करने की प्रवृत्ति परिलक्षित करते हैं, अपितु इनमें स्थलीय परिस्थितियों के अनुरूप कुछ विशेष अनुकूलन लक्षण पाये जाते हैं, जो निम्न प्रकार हैं:

1. सुविकसित एवं भली भाँति फैला हुआ भूमिगत मूलतन्त्र (Underground or subterranean root system) पाया जाता है ।
2. जल एवं खनिज पदार्थों के संवहन के लिए संवहन ऊतक तन्त्र की उपस्थिति ।

3. वृहत्काय विशाल वृक्षों को सहारा या आधार (Support) प्रदान करने के लिए इनमें सुविकसित यांत्रिक ऊतक तन्त्र (Mechanical tissue system) उपस्थित होता है ।
4. आवृतबीजी पौधों में वृक्ष के तने मोटाई में बढ़ोत्तरी के लिये, एधा या केम्बियम के द्वारा द्वितीयक वृद्धि (Secondary growth) सम्पादित होती है तथा कोमल ऊतकों की रक्षार्थ इनमें कॉर्क केम्बियम की सक्रियता से कार्क एवं परित्वक (Periderm) विकसित होता है ।
5. पुष्पीय पौधों में लघुबीजाणुओं (Microspores) अथवा पराग कणों का निर्माण बहुत अधिक संख्या में होता है, ये परागकण (Pollen grains) एक विशिष्ट प्रक्रिया, जिसे परागण (Pollination) कहते हैं । उसके द्वारा गुरुबीजाणुपर्ण (Megasporophylls) अर्थात् पुष्पों की मादा जनन संरचना तक पहुँचते हैं ।
6. पुष्पधारी पौधों में गुरुबीजाणुधानी (Megasporangium) का रूपान्तरण बीजाण्ड (Ovule) में हो जाता है तथा मादा युग्मकोद्भिद (Female gametophyte) का विकास भी बीजाण्ड में ही होता है ।
7. मोसेज (Mosses) एवं फर्न्स (Ferns) के विपरीत पुष्पधारी पौधों अर्थात् आवृतबीजियों एवं जिम्नोस्पर्म्स में निषेचन क्रिया (Fertilization) को सम्पन्न करने के लिए बाह्य जलीय माध्यम की आवश्यकता नहीं होती । अपितु इन पोधों, में परागकण (Pollen grains) आगे चलकर नर युग्मकोद्भिद (Male gametophyte) के रूप में विकसित होते हैं, जिनमें पराग नलिका (Pollen tube) का निर्माण होता है । यह परागनलिका नालयुग्मनी (Siphonogamy) प्रक्रिया के अन्तर्गत नर युग्मकों को मादा युग्मक अथवा अण्डकोशिका तक पहुँचाने का कार्य करती है ।
8. युग्मनज (Ovule) का अंकुरण बीजाण्ड (Embryo) में ही हो जाता है तथा यह आगे चलकर भ्रूण (Embryo) के रूप में विकसित हो जाता है । इसके बाद भ्रूण की वृद्धि कुछ समय के लिये रुक जाती है तथा बीजाण्ड, बीज के रूप में परिवर्तित हो जाता है ।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि स्थलीय पोधों में संवहन ऊतक की उपस्थिति के परिणामस्वरूप वृक्षीय स्वभाव (Tree habit) का विकास हुआ होगा । इसीलिये स्थलीय पोधों में संवहन ऊतक की उपस्थिति को विशेष रूप से महत्वपूर्ण माना गया है । बीज प्रवृति (Seed habit) एवं संवहन ऊतकों की उपस्थिति ये दो लक्षण पुष्पधारी पौधों के लिये विशेष रूप से महत्वपूर्ण माने गये हैं । इन दो लक्षणों की उपस्थिति के आधार पर पुष्पधारी पौधे इस पृथ्वी की प्रभावी वनस्पति (Dominant vefetation) के तौर पर स्थापित हो चुके हैं एवं संवहन ऊतकों तथा इनमें द्वितीयक वृद्धि (Secondary growth) के कारण इन पौधों में वृक्ष प्रवृत्ति (Tree habit) का विकास हुआ तथा इनकी ऊँचाई एवं आकृति दीर्घकाय एवं इनका जीवनकाल भी अधिक होता है अर्थात् ये दीर्घायु (Higher longevity) वाले होते हैं । कुछ बृहत्काय वृक्षों, जैसे यूकेलिप्टस (Eucalyptus regans, height 114 mts.) एवं सिकोइया सेम्परवाइरेन्स (Sequoia sempervirens, height 112 mts.) की ऊँचाई 100 मीटर से भी अधिक होती है तथा कुछ पुष्पधारी पौधों की आयु 6000 वर्षों से भी अधिक की अंकित की गई

है । उदाहरण के तौर पर मेक्रोजेमिया (Macrozamia) नामक अनावृतबीजी पौधे की आयु 1000 से 12000 वर्ष की अंकित की गई है, जबकि ड्रेसीना ड्रेको (Dracaena draco or Dragon tree) नामक एक अन्य पुष्पधारी एकबीजपत्री पौधे (Monocot; flowering plants) की आयु 8000 से 10000 वर्ष तक की मानी गई है ।

इसके अतिरिक्त पुष्पधारी पौधे विशेषकर वृक्षों का अभिनिर्धारण, हमारे इस ग्रह (Planet) पृथ्वी की प्रभावी वनस्पतिजात (Dominant flora) के रूप में किया जाता है । विभिन्न परपोषी कवक प्रजातियाँ एवं असंख्य स्थलीय प्राणी (land animals) अपने जीवनयापन के लिये प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पुष्पधारी वृक्षों पर ही निर्भर करते हैं ।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर आसानी से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि संवहनी पौधों (Vascular plants) में संवहनी ऊतकों की उपस्थिति के कारण वृक्ष स्वभाव (Tree habit) का विकास हुआ होगा तथा वृक्ष ही इस पृथ्वी पर पाये जाने वाले सर्वाधिक विशालकाय एवं दीर्घायु जीवित पादप हैं ।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि संवहनी ऊतकों (Vascular tissues) की उपस्थिति के आधार पर वृक्ष स्वभाव विकास हुआ एवं यह एक दीर्घायु जीवित पादप होता है, तो संवहनी क्रिप्टोगेप्स अथवा टेरिडोफाइटा पादप समूह में वृक्ष क्यों नहीं अधिक संख्या में पाये जाते, जबकि इनमें संवहनी ऊतक भी पर्याप्त मात्रा में मौजूद होते हैं । यहाँ केवल कुछ फर्न प्रजातियों, जैसे साइथिया एवं एल्सोफिला (Tree ferns, Cyathea and Alsophilla) ही ऐसे जीवित सदस्य हैं, जो वृक्ष स्वभाव प्रदर्शित करते हैं, शेष जीवित टेरिडोफाइट्स या संवहनी क्रिप्टोगेप्स, शाकीय या क्षुप प्रवृत्ति (Herbaceous) प्रदर्शित करते हैं । अत: टेरिडोफाइट्स में वृक्ष प्रजातियों की विरलता का क्या कारण हो सकता है? इसका सर्वाधिक उपयुक्त सम्भावित समाधान यही हो सकता है कि (1) टेरिडोफाइट्स में बीजों का विकसित न होना या बीज प्रवृत्ति अभाव एवं (2) वातावरणीय परिस्थितियों में आये अचानक बदलाव के कारण, वृक्ष रूपी टेरिडोफाइट्स समाप्त हो गये होंगे तथा इनको जिम्नोस्पर्म एवं आवृतबीजी प्रजातियों के द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया होगा ।

जीवाश्मीय प्रमाणों से ज्ञात होता है कि पेलियाजोइक महाकल्प के मध्य एवं उत्तर डिवोनियन काल में अर्थात् आज से लगभग 40 करोड़ वर्ष पूर्व तक हमारी धरती पर वृक्ष रूपी फर्न्स एवं टेरिडोफाइट्स (केलेमाइटीस इत्यादि) बहुतायत में पाये जाते थे, इसी प्रकार कार्बोनीफेरस युग में लेपीडोडेन्ड्रोन (Lepidodendron) नामक वृक्षाकार टेरिडोफाइट पाया जाता था, परन्तु वातावरण में बदलाव एवं बीज प्रवृत्ति के अल्पविकसित होने के कारण ये नष्ट हो गये होंगे तथा आज हम केवल पादप जीवाश्मों (Fossil plant) के रूप में ही इनका अध्ययन कर सकते हैं ।

इसी प्रकार जीवित टेरिडोफाइट्स एवं कुछ वंशों जैसे युक्का (Yucca) एवं ड्रेसीना (Dracaena) को छोड़कर शेष एक बीजपत्री पौधों में द्वितीयक वृद्धि (Secondary growth) अनुपस्थित होती है, इसी लिये इन समूहों के सदस्य अधिकांशतया वृक्ष स्वभाव परिलक्षित नहीं करते । लेकिन एकबीजपत्री पौधों में बीजधारी प्रवृत्ति (Seed habit) मौजूद होती है, यही कारण है कि इनके पौधों में द्वितीयक वृद्धि नहीं होने के बावजूद भी इनके कुछ सदस्यों विशेषकर ताड़ कुल

(Palmae) के सदस्यों में वृक्ष स्वभाव (Tree habit) पाया जाता है, (कुल पामी के लगभग सभी सदस्यों में यह स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है) । इसके अतिरिक्त ग्रेमिनी कुल में बेम्बूसा (Bambusa) एवं ड्रेन्ड्र ओकेलमस में भी वृक्ष स्वभाव पाया जाता है, परन्तु द्वितीयक वृद्धि की अनुपस्थिति में इनमें संवहन ऊतकों विशेषकर काष्ठीय ऊतकों की मात्रा अधिक नहीं होती ।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि जिम्नास्पर्म्स, एक बीजपत्री एवं द्विबीजपत्री पादप समूहों में वृक्ष इन स्वभाव का विकास एवं सम्मिलन (Evolution and convergence of tree habit) का एकमात्र प्रमुख कारण इन पौधों की बीजधारी प्रवृत्ति एवं इनकी आन्तरिक संरचना में संवहनी ऊतकों (Vascular tissues) का पाया जाना है ।

इसी प्रकार द्विबीजपत्री पोधों एवं जिम्नोर्स्पम्स में शाखित एवं घेरेदार वृक्षों की उपस्थिति इनकी स्वभावगत विशेषताओं का कारण कही जा सकती है । इन वृक्षों के बाह्यप्रारूप अथवा आकारिकी बहुत कुछ इनके परिवेश पर निर्भर करते हैं ।

समानान्तरण एवं सम्मिलन (Parallelism & Convergenee)

विभिन्न पादप समूहों के विकासीय क्रम के दौरान इनके अनेक परिवर्तन सामान्य क्रम में उत्पन्न होते हैं एवं ये एक समान आकारिकीय संगठन (Morphological Organisation) की चरम सीमा तक पहुँच जाते हैं । हालांकि इस प्रकार का एक समान्न विकासीय क्रम अपनाने वाले पौधे आपस में आनुवांशिक रूप से बहुत कम सम्बन्ध परिलक्षित करते हैं । इस प्रकार का समानान्तर विकासीय क्रम (Parallelism) विभिन्न पादप समूहों के विकासीय परिवर्तनों (Evalutionary changes) मैं स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है एवं यह **प्रगामी** (Progressive) एवं **पश्चगामी** (REtrogressive) दोनों प्रकार के रूपान्तरण (ट्रांसफोरमतिओन) के रूप में हो सकता है । विभिन्न पादप वर्गों की अनेक संरचनाओं में इस प्रकार का समानान्तर विकास क्रम निरूपित हो सकता है, जैसे **युग्मकोद्भिद** (Gametophyte) एवं **नवबीजाणुद्भिद** (Neosporophyte), जो बीजाणुधानी भित्ति में उत्पन्न होते हैं, के अवधारण (Retention) की प्रक्रिया आधुनिक बीजधारी पौधों (Modern seed) बीजीय फर्न्स (Seed ferns) एवं क्लब माँस (Club mosses) एवं इसी प्रकार के अन्य पौधों में पाई जाती है । यह अनूठी **विकासीय उपलब्धि** (Evolutionary acheivement) पादप जगत के विकासीय क्रम के दौरान विभिन्न पादप समूहों में निरूपित हुई है एवं **समानान्तर विकास क्रम** (Parallel evolution) कहलाती है ।

विभिन्न पौधों में **आकारिकीय न्यूनता** (Morphological reduction) का पाया जाना भी समानान्तर विकास का एक प्रमुख उदाहरण कहा जा सकता है । इस प्रक्रिया को पौधों के **स्वपोषी** (Autotrophic), स्वभाव से **परजीवी** (Parasitic) या **मृतोपजीवी** (Saprophytic), स्वभाव में **संक्रमण** (Transition) के दौरान देखा जा सकता है । उदाहरण के तौर पर अमरबेल (Cuscuta), **बीच ड्राप्स** (Beech drops), **मिसलटो** (Miseltoes) एवं **चीड़ या पाइन ड्राप्स** (Pine drops) इत्यादि परपोषी (Heterotrophic) आवृतबीजी पौधे हैं । ये पादप एक दूसरे से अत्यल्प या नहीं के बराबर बंधुता (Affinity) निरूपित करते हैं, लेकिन इन सभी के विकासीय क्रम के दौरान अपने स्वपोषी पूर्वज पोधों से समान रूपान्तरण या परिवर्तनों (Modifications)

को महसूस किया जा सकता है, जैसे वर्तमान पौधों में पूर्वजों की तुलना में जड़ों का कम हो जाना एवं इनके भूमिगत भागों का अंत: भूस्तारी (Suckers) में रूपान्तरित हो जाना, जो पोषक (Host) पौधे के ऊतक में प्रवेश करके इनसे भोजन प्राप्त करते हैं । इनके साथ ही पत्तियों की आकृति व परिमाप (Size) का घट जाना इनकी संख्या में कमी आना व पत्तियों से पर्णहरित (Chlorophyll) का विलुप्त हो जाना या बहुत कम मात्रा में रह जाना, ये कुछ ऐसे संक्रमणकारी बदलाव हैं जो उपर्युक्त परपोषी (Hetertrophic) पौधों में समान रूप से परिलक्षित होते हैं । विभिन्न प्रकार के दूरस्थ (Distantly) सम्बन्धित पौधों का संवहन ऊतकों में **जाइलम वाहिकाओं** (Xylem vessels) की उत्पत्ति भी समानान्तर विकास का एक प्रमुख उदाहरण है । आवृतबीजी पौधों में जाइलम वाहिकायें सामान्य रूप से उपस्थित पाई जाती हैं, जबकि अनावृतबीजी पोधों में एक छोटे समूह (वर्ग **नीटोप्सिडा** (Genetopsida के सदस्यों में) एवं कुछ टेरिडोफाइट सदस्यों में ही जाइलम वाहिकाएँ पाई जाती हैं ।

इस प्रकार "सम्बन्धित सजीव समूहों में समान वातावरणीय अवस्थाओं के परिणामस्वरूप समान अनुकूलन लक्षणों (Adaptations) का विकास **समानान्तरण** (Parallelism) अथवा **समानान्तर विकास क्रम** (Parallel evolution) कहलाता है ।

अभिसारिता या सम्मिलन (Convergence) की प्रक्रिया प्रायः असम्बद्ध (Unrelated) सजीव समूहों के सदस्यों में दृष्टिगोचर होती हैं । किसी स्थान पर निरूपित अनेक प्रकार की चरम (Climax) वातावरणीय परिस्थितियाँ उस स्थान पर उगने वाले पौधों की संरचना को अत्यधिक प्रभावित करती है । वातावरण के अनुरूप विकसित इस प्रकार के **संरचनात्मक परिवर्तनों** (Structural modifications) को अनुकूलन लक्षण (Adaptations) कहा जा सकता है, क्योंकि ये परिवर्तन इन पौधों को स्थान विशेष में जीवनयापन करने हेतु सक्षम अथवा योग्य बनाते हैं । इसके अतिरिक्त अनेक उदाहरण। मैं यह भी देखा गया है कि अनेक असम्बद्ध कुलों (Unrelated families) के पादप व सदस्य जब समान वातावरणीय परिस्थितियों में उग रहे होते हैं, तो इन सभी में समान **संरचनात्मक अनुकूलन लक्षण** (Structural adaptations) निरूपित होते हैं । ऐसी अवस्था में किसी क्षेत्र विशेष में उगने वाले पादप यद्यपि देखने में पूर्णतया एक जैसे लगते हैं, लेकिन वस्तुतः ये आवास में सम्बन्धी (relative) नहीं होते । इस प्रकार की परिघटना (Phenomenon) जिसके अन्तर्गत एक समान संरचनात्मक लक्षण विभिन्न पादप समूहों द्वारा स्वतंत्र रूप से (Independently) अधिग्रहित किये जाते हैं, उसे **अभिसारी विकासीय क्रम** (Convergent evolution) कहते हैं ।

इस प्रकार के विकासीय क्रम के दौरान ये असम्बद्ध पौधे कभी - कभी आपस में इतनी अधिक समानता (Resemblence) प्रदर्शित करते हैं किए अधिकांशतया इन पौधों के कुछ विशिष्ट लक्षणों का सावधानीपूर्वक अध्ययन किये बगैर इनके कुलों की पहचान करना बड़ा मुश्किल हो जाता है । दूसरे शब्दों में जब समानान्तर विकास क्रम विभिन्न पादप समूहों में समान रूप से अग्रसर होता है एवं वातावरणीय परिस्थितियाँ लगभग समान होती हैं, तो इनके परिणामस्वरूप विकसित अंतिम आकारिकीय लक्षण इतनी अधिक समानता प्रदर्शित करते हैं कि इनको अलग - अलग पहचानने में मुश्किलों का सामना करना पड़ता है । समानान्तर विकास क्रम की इस अनूठी

अवस्था को अभिसारिता या **सम्मिलन** (Convergence) कहा जाता है । आवृतबीजी पौधे के **दूरस्थ सम्बन्धी कुलों** (Distantly related families) में प्रायः एक समान **मरुद्भिदीय अनुकूलन लक्षणों** (Xerophytic adapations) का विकास होना अभिसारिता या सम्मिलन का एक प्रमुख एवं स्पष्ट उदाहरण है ।

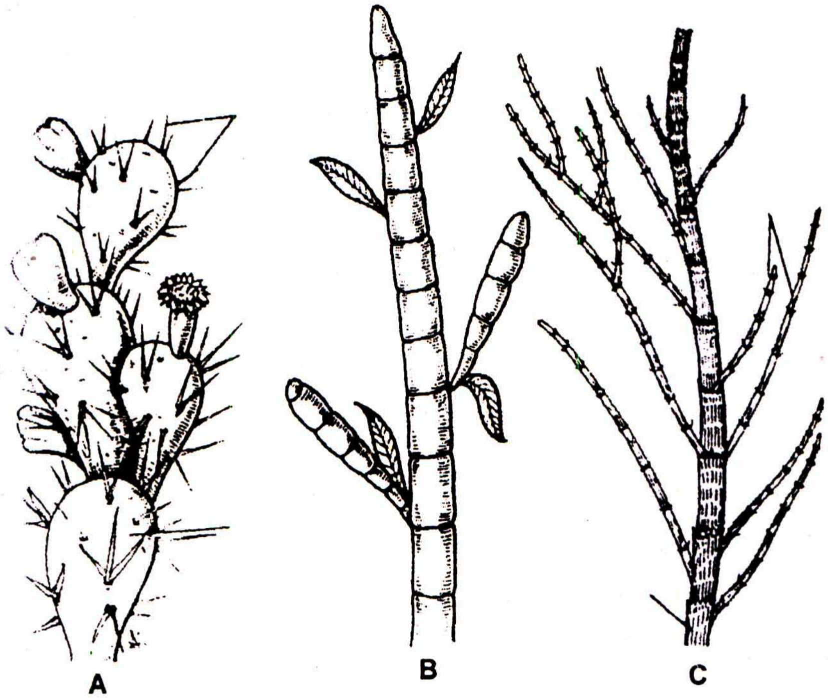

चित्र 1.8 : मरुद्भिद् अनुकूलन दर्शाने वाले विभिन्न पादप A. नागफनी का पर्णाभ स्तम्भ, म्यूहेलनबेकिया का पर्णाभ सतम्भ, C. लालझाऊ (केजुएराइना)

पादप जगत (Plant kingdom) के विभिन्न पादप कुलों, जैसे **केक्टेसी** (Cactaceae) **यूफोरबियेसी** (Euphorbiaceae), **लिलियेसी** (Liliaceae), एवं **एस्क्लेपियेडेसी** (Asclepiadaceae or milkweed family), एवं **एमेरिलिडेसी** (Amaryllidaceae) के सदस्य अभिसारिता या सम्मिलन की प्रवृत्ति को सबसे अधिक निरूपित करते हैं । ये पादप प्रायः: **मरुद्भिदीय** (Xerophyte) होते हैं एवं शुष्क परिस्थितियों में पाये जाते हैं । इन सभी पौधों में एक समान रूप से विभिन्न **मरुद्भिदीय अनुकूलन लक्षण** (Xerophytic adaptations) जैसे **क्यूटीकल** (Cuticle) की मोटी पर्त का बनना, **जल संचयी ऊतक** (Water storage tissue) की अत्याधिक मात्रा में वृद्धि, पत्तियों की आकृति एवं संख्या में कमी या पत्तियों का पूर्णतया अनुपस्थित होना, पादप शरीर की बाहरी सतह पर सघन रोम (Densely clothed hairs) या कंटकों (Spines) का पाया जाना इन पौधों की संरचना को लगभग समान बना देते हैं । ऐसी अवस्था में केवल कायिक लक्षणों (Vegetative characters) के आधार पर इन विभिन्न पौधों के पादप कुलों की पहचान कर पाना लगभग सम्भव हो जाता है ।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह तथ्य उभर कर सामने आता है कि विभिन्न पादप समूहों, जैसे अनावृतबीजी, द्विबीजी या एकबीजपत्री के सभी वृक्षों में कुछ लक्षण पूर्णतया एक समान

पाये जाते हैं, अर्थात् ये सभी वृक्ष, उर्ध्व, लम्बे, काष्ठीय (Woody) एवं बहुवर्षीय (Perennial) होते हैं । इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि **वृक्षीय स्वभाव** (Tree habit) का विकास पादप जगत के विभिन्न समूहों में हुआ है, जो अभिसारिता या सम्मिलिन (Convergence) एक रोचक एवं अनूठा उदाहरण है ।

1.5 वृक्ष: सर्वाधिक वृहत्काय एवं दीर्घजीवी पादप (Tree: Largest and Longest lived plants)

1.5.1 वृक्ष सर्वाधिक बृहत्काय सजीव रूप में (Tree as the largest living organisms)

अनेक विशालकाय वृक्ष रूपी पादप हमारी धरती पर पाये जाने वाले सर्वाधिक वृहत् (Largest) सजीव कहे जा सकते हैं । संयुक्त राज्य अमेरिका (U.S.A.) के केलीफोर्निया प्रान्त में उग रहा सिकोइयाडेन्ड्रोन जाइजेन्टिम (Sequoiadendron goganteum) पृथ्वी का सबसे बड़ा वृक्ष (Largest tree) है I इसका उपनाम (Nickname) **जनरल शेरमान** (General Sherman) दिया गया है । इस शंकुधारी दैत्याकार वृक्ष (Giant sized conifer tree) की ऊँचाई लगभग 272 फीट (83मीटर) तक एवं इसका व्यास (Diameter) आधारीय भाग में 5 फीट की ऊँचाई पर 79.2 फीट अंकित किया गया है । एक अनुमानित अध्ययन के अनुसार इसमें 6000120 बोर्ड फीट काष्ठ (Timber) उपस्थित है, जिसके उपयोग से 5 कमरों के 40 मकान बन सकते हैं । सन् 1968 में प्रकाशित एक सरकारी लेख के अनुसार इसके अनुमानित भार 2145 टन अंकित किया गया है । सन् 1978 में इस वृक्ष की शाखा टूट कर गिर गई थी । इस शाखा की लम्बाई 150 फीट (45 मीटर) एवं व्यास लगभग 7 फीट (2 मीटर) था । उपर्युक्त दृष्टान्त इसकी विशालता सम्बन्धी तथ्य को परिलक्षित करने के लिए पर्याप्त है । यही नही वृक्ष से टूट कर गिरी हुई इस शाखा की लम्बाई 150 फीट अमरीका में मिसिसिपी(Missipi) नदी के पूर्व किनारे पर पाये जाने वाले किसी भी वृक्ष की ऊँचाई से अधिक थी । प्राणियों में विश्व के सबसे बड़े जन्तु नीली हेल (Blue whale) का वजन लगभग 100 टन माना जाता है, जो कि इस विशालकाय सिकोइया के वजन से काफी कम है । अमरीका के केलीफोर्निया प्रान्त में अवस्थित सिकोइया राष्ट्रीय उद्यान (Sequoia nationl park) में यह वृक्ष आज भी देखा जा सकता है ।

विश्व के सर्वाधिक परिधि (Greatest girth) वाले वृक्षों में **स्पेनिश** या **स्वीट चेस्टनट** (Sweet chestnut; Castanea stiva) सर्वोपरि है । यह वृक्ष **इटली** के **सिसली** (Sicily) प्रदेश के **एटना** (Etna) पर्वत की तराई में अवस्थित है । इस वृक्ष की आयु 3600 से लेकर 4000 वर्ष के बीच की अंकित की गई है । प्राप्त विवरण के अनुसार सन् 1770 में इसकी परिधि 204 फीट अंकित की गई थी, जो कि सितम्बर 1845 में बढ़कर लगभग 211 फीट तक पहुँच गई थी । लेकिन समय के थपेड़ों के साथ इसकी बढ़ती हुई आयु आँधी तूफान एवं बिजली गिरने के कारण इसकी वृद्धि पर अंकुश लग गया । इसके अतिरिक्त वृक्ष के काष्ठ के सड़ने एवं गलने की प्राकृतिक प्रक्रियाओं ने भी इसकी वृद्धि को प्रभावित किया । इसकी वजह से आज यह वृक्ष 5

खण्डों (Sections) में विभाजित हो गया है एवं सन् 1972 में इसकी परिधि (Grith) घटकर केवल लगभग 168 फीट ही रह गई थी । परन्तु यह प्रसन्नता का विषय है कि इस वृक्ष का एक हिस्सा आज भी भलीभाँति वृद्धि कर रहा है एवं फल फूल (Flourish) रहा है ।

एक प्रसिद्ध स्थानीय किवदंती (Legend) के अनुसार एक बार एरागन (Aragen) की **महारानी जान** (Queen john) जब अपने 100 घुड़सवारों (Cavaliers) के साथ किसी अभियान पर यात्रा कर रही थी, तो भयंकर आँधी तूफान में घिर जाने के बाद महारानी ने अपने स भी घुड़सवारों के साथ इस अकेले वृक्ष के नीचे शरण ली एवं इस एक वृक्ष की छाँव ही इन सभी की सुरक्षा हेतु पर्याप्त साबित हुई । इस घटना के बाद से इस वृक्ष को स्थानीय निवासियों द्वारा "सौ घुड़सवारों का चेस्टनट वृक्ष" (Chestnut tree of hundred horses) भी कहा जाता है ।

इसके बाद द्वितीय सर्वाधिक परिधि वाले वृक्ष के रूप में **अमेरिकन बाल्ड की मेक्सिकन किस्म** (Maxican variety of American bald) टैक्सोडियम डिस्टीचम (Taxodium distichum or mucronatum) उल्लेख किया जा सकता है । यह वृक्ष ओक्साका (Oxaca) प्रान्त में **सान्ता मारिया** (Santa maria) ग्राम में उगा हुआ है । लगभग 129 वर्ष के अन्तराल में वृक्ष के आधारीय भाग से 3 फीट ऊँचाई पर 4 बार इसकी परिधि का नाप लिया गया है । सन् 1820 में इ सके तने का घेरा 93.5 फीट, जो 1849 में बढ़कर 106.5 व 1921 में 109.8 फीट तथा 1949 में बढ़कर 112.5 फीट हो गया था । इस प्रकार इसके तने के घेरे की कुल वृद्धि लगभग 19 फीट की नापी गई, अर्थात् प्रति दस वर्ष में परिधि के बढ़ने का औसत लगभग 45 से.मी. रहा होगा ।

अनेक वनस्पति शास्त्रियों द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार आस्ट्रेलिया (Australia) के विक्टोरिया प्रदेश में (Victoria) विश्व के सर्वाधिक लम्बे वृक्ष यूकेलिप्टस रेग्नेन्स (Eucalyptus regnans) पाये जाते थे । इस वृक्ष की सन् 1872 की गणना के अनुसार लम्बाई लगभग 436 फीट (137 मीटर) अंकित की गई थी । यह माना गया कि वे शिखर पर लगभग 500 फीट (150 मीटर) से भी अधिक लम्बाई के रहे होंगे । लेकिन निर्विवाद रूप से सबसे लम्बे काष्ठीय पादप के रूप में राटन (Rattan) का उल्लेख किया जा सकता है । यह एक आरोही ताड़ वृक्ष (Climbing palm) है । एक बार उसकी ऊँचाई लगभग 560 फीट (171 मीटर) तक अंकित की गई थी । लेकिन चूकि यह पादप स्वयं के सहारे वृद्धि नहीं करता, अपितु आरोही काष्ठीय पादप है । अतः इसे वृक्ष के रूप में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है ।

वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार विश्व का दूसरा सबसे अधिक ऊँचाई वाला वृक्ष **नोबल कर** या ऐबीज नोबीलीस (Noble fir; Abies nobiles) माना गया है, जिसकी ऊँचाई लगभग 278 फीट (84.8 मीटर) अंकित की गई है । यह वृक्ष अमरीका के **वाशिंगटन** स्थित **गिफोर्ड पिन्काट राष्ट्रीय उद्यान** (Gifford Pinchot national forest Washington U.S.A.) में उगा हुआ है ।

इसी क्रम में विश्व के तीसरे लम्बे वृक्ष के रूप में **दैत्याकार सिकाइया** (Giant sized Sequoia) अर्थात् जनरल शेरमन (General Sherman) या सिकोइयोडेन्ड्रोन जाइगेन्टियम (Sequoia Dendron giganteum) का उल्लेख किया जा सकता है, जिसकी ऊँचाई लगभग

272 फीट (83 मीटर) है एवं यह विश्व का **सर्वाधिक विशालकाय सजीव** (Largest living object) भी है ।

अमेरिका के केलिफोर्निया प्रान्त में उगने वाले इन उपर्युक्त वर्णित वृक्षों के अलावा अन्य महाद्वीपों, जैसे यूरोप के आवृतबीजी वृक्षों का अध्ययन किया जावे, तो ज्ञात होता है कि ये वृक्ष सामान्यतया 30 मीटर ऊँचाई तक के होते हैं एवं अनुकूल परिस्थितियों में इनकी ऊँचाई 45 मीटर या इससे भी अधिक पहुँच जाती है ।

ग्रेट ब्रिटेन के द्वीपों (British isles) में पाया जाने वाला सबसे अधिक ऊँचा वृक्ष "डगलस कर" (Douglas fir)है । यह स्कॉटलैण्ड में है तथा इसकी ऊँचाई लगभग 141 फीट (43 मीटर) तक की है । यहाँ उगने वाले कुछ वृक्ष जनरल शेरमन से भी अधिक तने की परिधि वाले हैं । इनमें सबसे अधिक तने की परिधि वाला वृक्ष **"ब्रिटिश ओक"** या **फ्रेड्सविले ओक** (Ferdsvile oak) हे, जो **केन्ट** (Kent) नामक काउंटी में पाया गया है । इस वृक्ष की लम्बाई तो केवल 24 मीटर है, लेकिन इसके तने की परिधि 3.6 मीटर नापी गई है । इससे भी बड़ा वृक्ष **स्कॉटलैण्ड** में उगने वाला वृक्ष **"फोर्टिनोल यू"** (Fortingall yew) है । यह वृहतकाय वृक्ष आज केवल दो जीवित खण्डों में निरूपित किया जाता है । आधारीय सतह के नजदीक इसका वास्तविक व्यास 54 मीटर (18 फीट) पाया गया है । इस वृक्ष की आकृति **कल्पवृक्ष** या **अफ्रिकन बाओबाब** (African baobab; Adansonia digitata) से भी बड़ी है, जिसकी तने की सामान्य परिधि 10 मीटर तक होती है ।

यही नहीं विभिन्न उष्ण कटिबंधीय एवं उपोष्ण प्रदेशों (Subtropical regions) में पाये जाने वाले **बरगद** (Ficus benghalensis) के वृक्ष भी वृहतकाय (Giant sized) होते हैं तथा इनकी परिधि एवं फैलाव क्षेत्र भी अधिक होता है । उसी प्रकार न्यू गायना (New guinea) में उगने वाला सबसे बड़ा उष्णकटिबन्धीय वृक्ष आरोकेरिया हेंसटेनि (Araucaria hanstonii) का निकट सम्बन्धी प्रतीत होता है । इस वृक्ष की ऊँचाई लगभग 89 मीटर (लगभग 282 फीट) है । उष्णकटिबंधीय वृक्षों की सामान्य ऊँचाई 46 से 55 मीटर के देखते हुए यह एक हैरत - अंगेज तथ्य कहा जाता है । वर्षा वनों (Rain forests) में उगने वाले वृक्ष भी तटीय वनों के समान ही प्रायः ऊँचे एवं पतले हैं, लेकिन इनमें भी सबसे अधिक तने की परिधि वाला वृक्ष **फोर्टिनोल यू** (Fortingall yew) के समान ऊँचा हो सकता है । फिर भी इनमें तने की परिधि 1 फीट (0.3मीटर) से अधिक नहीं होती ।

विश्व के कुछ अन्य वृहतकाय (Giant sized, massive) वृक्षों में ग्रेट ब्रिटेन के वृक्ष **"दि बोथोरपे ओक"** (The Bowthorpe Oak) जो सर्वाधिक स्तम्भ परिधि वाला ओक वृक्ष है तथा न्यूज़ीलैण्ड (Newzealand) में उगने वाले सबसे बड़े एवं सदाहरित (Largest and evergreen) वृक्ष **मोरेटेन बे फिग** (Moretonbay;fig;Ficus macrophylla) इत्यादि का भी उल्लेख किया जा सकता है ।

1.5.2 वृक्ष दीर्घजीवी सजीव के रूप में (Trees as longest lived organisms)

अनेक आंतरिक एवं बाह्य कारकों के इनकी लम्बी उम्र के लिए प्रतिकूल होने के बावजूद भी अन्य पादप एवं प्राणियों की तुलना में वृक्षों की आयु अधिक होती है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आज विश्व में यदि सबसे प्राचीन ज्ञात सजीव यदि कोई है तो वे वृक्ष ही हो सकते हैं । अनेक वृक्षों की आयु अथवा जीवनकाल की गणना अनेक सदियों या सहस्त्राब्दियों (1000 वर्ष या उससे अधिक) में की जा सकती है । हालांकि अनेक दीर्घजीवी वृक्षों को केवल शताब्दियों में अर्थात् 500 या इससे भी कम वर्षों की हो सकती है (सारणी के अनुसार) ।

विभिन्न दीर्घजीवी वृक्षों की सम्भावित आयु

	सामान्य नाम (Common Name)	**वानस्पतिक नाम (Botanical Name)**	**(Approx age) अनुमानित आयु**
1	बर्च (Birch)	(Betula spp.)	80-200वर्ष
2	रेड मेपल (Red maple)	एसर रुब्रम(Acer rubrum)	110 वर्ष
3	बीच (Beach)	फैगस सिल्वेटिका (fagus sylvatica)	200-400 वर्ष
4	ऐस (Ash)	फ्रक्सीनस एक्सेल्सिओर (Fraxinus excelsior)	200-300 वर्ष
5	स्काट्स पाइन (Scots pine)	पाइनस स्लिवेस्ट्रिस (Pinus sylvestris)	500 वर्ष
6	डगलस फर (Douglas Oak)	सूडोत्सू मेन्जीसी (Pseudotsuga menzeisii)	750 वर्ष
7	ओक (Oak)	क्यूरकस (Quercus spp.)	750-1000 वर्ष
8	पोन्डेरोसा पाइन (Ponderosa pine)	पाइनस पोन्डेरोसा (Pinus pondarosa)	1000 वर्ष से अधिक
9	लिम्बर पाइन (Limber pine)	पाइनस फ्लेक्सीलिस (Pinus flexilis)	2000 वर्ष
10	कोस्टल रेडवुड Coastal Redwood)	सिकोइया सेम्पेरवाइरेन्स (Sequoia sempervitens)	2000 वर्ष से अधिक
11	जायन्ट सिकोइया (Giant sequoia)	सिकोइयोडेंड्रान जाइजेन्टियम (Sequoia dendromgiganteum)	3000 वर्ष के अधिक
12	ब्रिसल कोन पाइन (Bristle cone Pine)	पाइनस ऐरिस्टाटा(Pinus aristata)	4900 वर्ष से अधिक
13	यू (Yew)	टैक्सस बेक्केटा(Taxus baccata)	संभवतः 5000

इसलिए उष्णकटिबंधीय वर्षा वनों (Tropical rain forests) में उगने वाले वृक्ष भी इस तथ्य की अनुपालना करते हैं । हालांकि वार्षिक वलयों (Annual rings) के अभाव में (क्योंकि इन वृक्षों में

वार्षिक या वृद्धि वलयों का निर्माण नहीं होता) इसलिए इन वृक्षों की आयु का अनुमान लगाना असम्भव है । **रिचर्ड्स** (Richards) द्वारा अपनी पुस्तक **ट्रापिकल रेन फोरेस्ट्स** (Tropical rain forests) में दिये गये विवरण से स्पष्ट होता है कि इन जंगलों में उगने वाली केवल दो वृक्ष प्रजातियों, क्रमशः शोरिया लेप्रोसूला (Shorea leprosula;250वर्ष) एवं पेराशोरिया मेलोनन (Parashorea melanin;200 वर्ष) का ही जीवन काल या अनुमानित आयु की जानकारी अभी तक प्राप्त हो सकी है । इसमें पेराशोरिया की अधिकतम अनुमानित आयु 300 से 350 वर्ष हो सकती है । हालांकि **क्रेक्टा** (krakata) गये अध्ययन के अनुसार यह बताया गया है कि सामान्य प्रारूपिक उष्ण कटिबंधीय वृक्ष का औसत जीवनकाल 80 से 100 वर्ष तक का होता है । वैसे संसार में अनेक वृक्ष ऐसे हैं, जो काफी लम्बे समय तक जीवित रह सकते हैं, जैसे अमेरिका के समुद्र तटीय **रेडवुड्स** (Sequoia sempervirens) एवं दैत्याकार वृहतकाय सिकोइयोडेन्ड्रान जाइजेन्ट्म (Sequoidendron giganteum) 2 से 3 हजार वर्ष तक जीवित रहते हैं । प्राचीनतम वृक्ष स्तम्भ क्रिस्टलकोन पाइन (Crystal cone pine aristata) के पाये गये हैं । यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि सर्वाधिक प्राचीन जीवित वृक्ष प्रतिरूप (Specimen) की आयु की गणना इनमें उपस्थित वृद्धि वलयों (Annual rings) को गिनकर की गई है । इस आधार पर इनकी आयु लगभग 4500 वर्ष या इससे भी अधिक अंकित की गई । इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि जिस समय मिश्र (Egypt) के विश्व प्रसिद्ध पिरामिडों (Pyramids) का निर्माण नील नदी के किनारों पर हो रहा होगा, तो आज के कुछ प्राचीन एवं दीर्घजीवी वृक्ष उस समय भी अस्तित्व में रहे होंगे । कुछ अन्य प्रकार के वृक्ष इससे भी प्राचीन हो सकते हैं, जैसे सुगात्रा (इंडोनेशिया) में पाये जाने वाला एक वृक्ष ड्रेसीना ड्रेको (Dracaena draco) लगभग 10000 वर्ष प्राचीन समझा जाता है । इसे **ड्रेगन** (Dragon) नामक लोकप्रिय नाम से भी पुकारा जाता है । इसके अलावा कुछ **साइकेड्स** (Cycads) वृक्षों को तो 14000 वर्षों से भी अधिक आयु का माना गया है, लेकिन उपर्युक्त वर्णित दोनों वृक्षों में न वार्षिक वलयों (Annual rings) का निर्माण होता है और न ही इनके स्तम्भ केन्द्र ठोस (Solid) हैं, जिनका कार्बन तिथीकरण (Carbon dating) कर वृक्ष की आयु का लगभग सटीक अनुमान लगाया जा सके । इस प्रकार उपर्युक्त प्रमाणों के अभाव में इन वृक्षों की आयु के अनुमान को केवल कपोल कल्पित किंवदंतियों (Hypothetical legends) की संज्ञा दी जा सकती है ।

इसी क्रम में विश्व के विभिन्न भागों में कुछ अन्य प्राचीन वृक्षों की जानकारी प्राप्त हुई है, जैसे **केलीफोर्निया** (Califorinia) में उगने वाला लारिया ट्राइडेन्टाटा (Larrea tridentata) 11700 वर्ष पुराना बताया जाता है, इसी प्रकार तस्मानिया (Tasmania) मे उगने वाला वृक्ष लेगेरोस्ट्रोबस फ्रैन्कलीनाई (Logarostrobus franklinii)10000 वर्ष से भी अधिक आयु का बताया गया है । यही नहीं **दक्षिणी पश्चिमी तस्मानिया** में उग रही एक झाड़ी (Shurb) **लोमेशिया तस्मानिया** (Lomatia tasmania) की आयु का अनुमान 40000 वर्ष से अधिक का लगाया गया है । इसी क्रम में **क्रीसोट** (Cresote: Larria tridentata) नामक क्षुप (Shurb) की आयु का अन्दाजा इसमें पाये जाने वाले **परी-वलय समान घेरों** (Fairy- ring like circles) की

आकृति एवं परिमाप (Size) को ध्यान में रखकर लगाया जा सकता है । यह घेरे बाहर की ओर एक निश्चित क्रम में अग्रसर होते हैं ।

ब्रिटेन में उगने वाले **यू** (Yew: Taxus baccata) के बारे में यह अवधारणा स्थापित है कि उस वृक्ष में सैकड़ों वर्षों तक जीवित रहने की क्षमता होती है, लेकिन अनेक वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार यह वृक्ष इससे भी अधिक अर्थात् हजारों वर्षों तक जीवित रह सकते हैं । **स्कॉटलैण्ड** (Scotland) में उग रहे वृक्ष **फोटिंगेल यू** (Fortingall yew) ने की परिधि 17 मीटर है तथा इसकी अनुमानित आयु 5000 वर्ष बताई जाती है । वृक्ष की अनुमानित आयु ज्ञात करने के लिए मिचेल (Mitchell) के नियम अनुसार किसी भी वृक्ष की परिधि में प्रतिवर्ष 1/2 से 1 इंच (2.5 सेमी.) की वृद्धि सम्भवत: होती है । अत: ऐसी अवस्था में उस वृक्ष विशेष की आयु का अनुमान इसे बगैर क्षतिग्रस्त किये लगाया जा सकता है । इस प्रकार परिधि के ऑकड़ों के द्वारा (Data about girth) वृक्ष की ओर अधिक सटीक आयु ज्ञात की जा सकती है ।

1.6 तने में शाखन एवं वितान संरचना (Branching & Canopy Structure)

1.6.1 तने में शाखन (Branching in stem)

विभिन्न पौधों की बाह्य संरचना मुख्यतया तने पर निर्भर करती है । इसीलिए पौधों के स्वभाव एवं इनमें शाखन (Branching) के आधार पर विभिन्न पादपों को शाक (Herbs), झाड़ियों (Shurbs) एवं वृक्षों (Trees) में विभेदित किया गया है । शाकीय पौधों का तना काष्ठीय (Woody) नहीं होता एवं पौधे की ऊँचाई भी अधिक नहीं होती । प्रायः अधिकांश शाकीय पौधे एक वर्षीय (Annuals) द्विवर्षीय (Biennials) होते हैं । झाड़ियाँ रख वृक्ष बहुवर्षीय पादप होते हैं तथा इनका तना काष्ठीय (Woody) होता है । इसके अतिरिक्त झाड़ियों की ऊँचाई वृक्ष से कम होती है तथा इनमें एक से अधिक मुख्य अक्ष या तने होते हैं, जबकि वृक्षों में मुख्य तना केवल एक ही होता है ।

A. **शाखाओं की उत्पत्ति** (Origin of branches): सामान्यत: अधिकांश पौधों में शाखाओं की उत्पत्ति दूसरी, तीसरी या इनके बाद की पत्तियों के कक्ष (Axil) में होती है । शाखाओं की उत्पत्ति के समय पत्तियों की कक्ष में मौजूद ऊतक विभाज्योतिकी (Meristematic) हो जाता है एवं शीर्षस्थ विभाज्योतक (Apical meristem) से इसकी निरन्तरता (Continuity) स्थापित होकर कलिका (Bud) विकसित हो जाती है । कुछ समय के बाद यह अग्रस्थ विभाज्योतक से पृथक हो स्वतंत्र रूप से अक्षस्थ कलिका के रूप में वृद्धि करती है ।

कलिका के निर्माण के पश्चात् इसके ऊतकों में परिनतिक एवं अपनतिक विभाजन होते हैं, जिससे इसकी आकृति में वृद्धि होती है । कलिकाओं की उत्पत्ति एवं परिवर्धन (Development) को अनेक कारक जैसे भोज्य पदार्थों की मात्रा तथा वृद्धि हार्मोन्स की उपस्थिति एवं वातावरण इत्यादि प्रभावित करते हैं ।

B. **शाखन की प्रकार** (Types of branching) : उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आवृतबीजी पौधों में शाखन पार्श्वीय कलिकाओं की सक्रियता के कारण होता है, क्योंकि ये कलिकायें अक्षस्थ कलिकायें होती हैं, इसलिए इसे अक्षीय शाखन (Axillary branching) भी कह सकते हैं । पार्श्वीय कलिकाओं की सक्रियता में अधिकता या कमी के आधार पर तने का शाखन दो प्रकार का होता है : (1) एकलाक्षी शाखन (Monopodial) या असीमाक्षी (Racemose शाखन एवं (2) संधिताक्षी (Sympodial) शाखन या समीमाक्षी (Cymose) ।

(1) **एकलाक्षी शाखन** (Monopodial) **या असीमाक्षी** (Racemose): अनेक पोधों की शीर्षस्थ कलिका अनिश्चित काल के लिए सक्रिय रहती हैं, इससे तने की निरन्तर वृद्धि होती रहती है एवं एक सीधा अक्ष या **पोडियम** (Podium) निर्मित हो जाता है । इस अक्ष से उत्पन्न पार्श्वीय कलिकायें (Acropetal sucession) अग्राभिसारी क्रम (Single axis) में विकसित होती है । इस प्रकार प्ररोह का एकमात्र मुख्य अक्ष होने (Single axis) के क इसे एकलाक्षी (Monopodial) शाखन कहा जाता है । क्योंकि इन पादपों में शीर्षस्थ कलिका अनिश्चित काल तक सक्रिय रहती है, इसीलिए यह असीमाक्षी शाखन (Racemose branching) भी कहलाता है । जैसे - जैसे पी थे की आयु बढ़ती जाती है, तो उसके साथ ही शीर्षस्थ कलिका की सक्रियता भी धीरे - धीरे कम होती जाती है । इस अवस्था में कुछ शाखायें अधिक मोटी हो जाती हैं । प्रायः अचूड़ाक्ष या बहिवर्धी (Excurrent trees) में एकलाक्षी शाखन पाया जाता है, जैसे पाइनस (Pinus) एवं अन्य शंकुरूपी वृक्ष अशोक (Polyalthea) एवं केस्यूराइना (Casuarina) इत्यादि । इसी श्रेणी के एक अन्य उदाहरण छटिन या ऐल्सटोनिया (Alstonia) में तने की पर्व सन्धि (Node) पर पत्तियाँ चक्र में उत्पत्र होती हैं एवं इसी के साथ शाखायें भी चक्र में ही विकसित होती हैं, मुख्य अक्ष की वृद्धि भी असीमित होती है (चित्र 1.9) ।

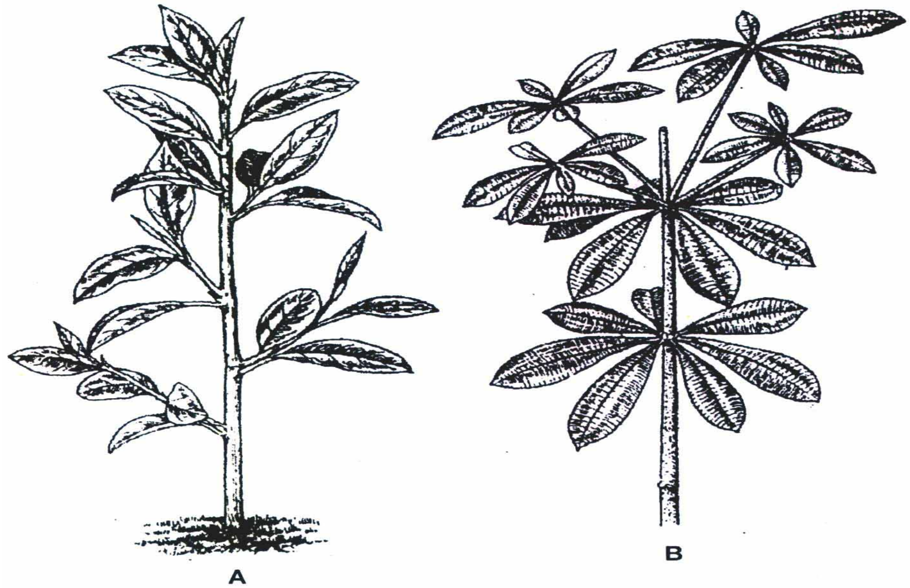

चित्र 1.9 : विभिन्न प्रकार के एकलाक्षी शाखन: A. अशोक, B एल्सटोनिया

(2) **संधिताक्षी या ससीमाक्षी शाखन** (Sympodial or Cymose branching): अधिकांश ऊष्ण कटिबन्धीय पौधों में यह देखा गया है कि इनमें जैसे -जैसे पादप की वृद्धि होती है, तो इसके साथ ही शीर्षस्थ कलिका की सक्रियता में कमी आती है एवं पार्श्व कलिकायें परिवर्धित हो जाती हैं । इस प्रकार की प्रक्रिया से वृक्ष की आकृति गोलाकार या गुम्बदाकार (Dome shaped) या लीनाक्ष हो जाती है । यहाँ हम यह कह सकते हैं कि शीर्षस्थ कलिका एक प्रकार से विलीन हो जाती है । हमारे देश के इलाकों में बहुधा इस प्रकार के वृक्ष पाये जाते हैं । वनों में पाये जाने वाले वृक्षों की निचली शाखाओं को क्योंकि समुचित मात्रा में प्रकाश नहीं मिल पाता है, अत: वनों में वृक्षों की ऊँचाई हमेशा अधिक होती है (चित्र 1.10) ।

कुछ पौधों में तो शीर्षस्थ कलिका विकसित नहीं होती । इसीलिए पादपों में शाखन का क्रम शीर्ष ही के ठीक नीचे उपस्थित पार्श्व कलिकाओं की सक्रियता पर निर्भर करता है । इस प्रकार शाखन को ससीमाक्षी (Sympodial or Cymose) शाखन कहते हैं । इन पादपों की ऊँचाई अधिक नहीं होती, क्योंकि इनमें शीर्षस्थ कलिका निष्क्रिय होती है एवं ऊँचाई में वृद्धि (Vertical growth) भी सीमित होती है । इन पौधों में मजबूत (strong), विकसित एवं मोटी शाखाओं की संख्या के आधार पर ससीमाक्षी शाखन को भी निम्न श्रेणियों में बाँटा जा सकता है ।

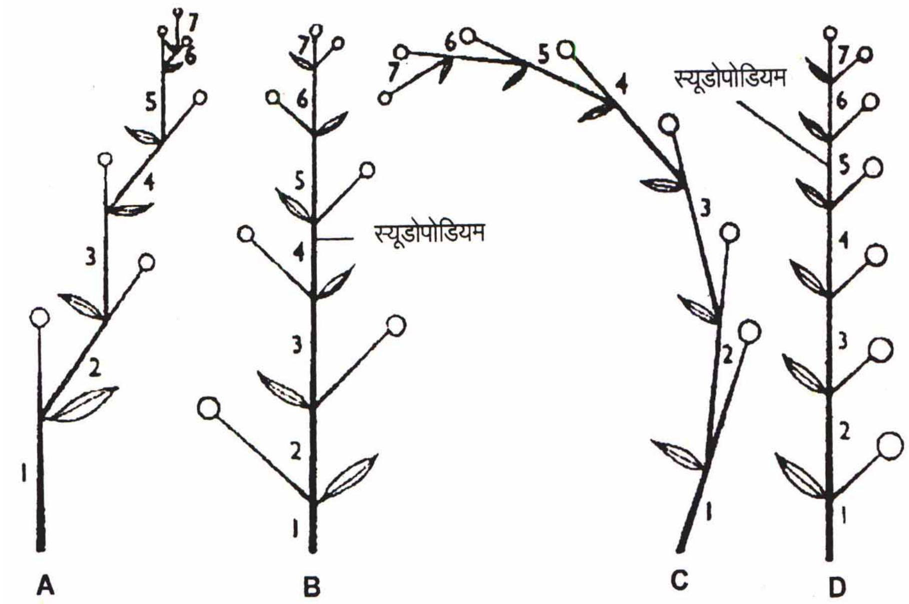

चित्र 1.10 : एकलशाखी समीमाक्षी A. कुटिल समीसाक्षी,
B. कुण्डलिनी समीमाक्षी

(1) **एकलशाखी ससीमाक्षी** (Uniparous cymose braching): इन पोधों में शीर्षस्थ सिरे के ठीक नीचे मात्र एक ही शाखा विकसित हो पाती है । तनों व शाखाओं पर पत्तियाँ सर्पिलाकार क्रम में व्यवस्थित होती हैं तथा एक शीर्षस्थ सिरे के नीचे केवल एक ही अक्ष (Axil) होता है । इस श्रेणी के पौधों में भी दो प्रकार का शाखन हो सकता है :

(a) **कुटिल ससीमाक्षी शाखन** (Scorpioid cymose branching): इन पौधों में प्रत्येक पर्व सन्धि से उत्पन्न होने वाली शाखायें दायीं ओर एकान्तर क्रम में विकसित होती हैं । इसके परिणाम स्वरूप तने की आकृति टेढ़ी - मेढ़ी (Zig-Zag) हो जाती है, लेकिन सामान्य तौर पर देखने में यह तना टेढ़ा - मेढ़ा नहीं लगता, अपितु सीधा दिखाई देता है । यहाँ तने का अक्ष उत्तरोत्तर शाखाओं से जुड़कर निर्मित होता है । अतः इसे संधिताक्षी अक्ष (Sympodial axis) एवं शाखन को संधिताक्षी शाखन (Sympodial branching) कहते हैं, जैसे अंगूर (Tendril) में शीर्षस्थ कलिका प्रतान (Vitis) में रूपान्तरित हो जाती है, जो संधिताक्षी अक्ष के कारण पार्श्व में धकेल दी जाती है (चित्र 1.10B) ।

(b) **कुण्डलिनी ससीमाक्ष शाखन** (Helicoid cymose branching): इन पौधों के अक्ष में शाखायें केवल एक ओर ही उत्पन्न होती हैं तथा एक कुण्डल जैसी संरचना बनाती हैं, लेकिन प्राकृतिक अवस्था में अक्ष सीधा दिखाई पड़ता है । इसे **स्यूडोपोडियम** (Pseudopodium) कहते हैं । इस प्रकार मुख्य अक्ष पर शाखायें एक ही तरफ निकलती हुई नजर आती हैं । यहाँ भी स्यूडोपोडियम एक प्रकार का संधिताक्षी अक्ष (Sympodial axis) है, जिसमें प्रत्येक पर्ण के सम्मुख शाखा उत्पन्न होती है, जैसे **सराका इंडिका** (Saraca indica) (चित्र 1.10 B) ।

(II) **द्विशाखी ससीमाक्ष शाखन** (Biparous cymose branching): इस प्रकार के शाखन में पौधे की प्रत्येक शाखा उत्पन्न करने वाली पर्व सन्धि से सामान्यतः दो शाखायें निकलती हैं । अनेक पौधों की शीर्षस्थ कलिका अल्प जीवी होती है तथा शीघ्र ही नष्ट हो जाती है । इसके कारण ऐसा प्रतीत होता है, जैसे मुख्य अक्ष दो शाखाओं में विभाजित हो गया हो । इस प्रकार का शाखन कूट द्विशाखन (False dichotomus branching) कहलाता है । देशी चम्पा या प्लूमेरिया रूबरा (Plumeria rubra) एवं गुलब्बास या मिराबिलिसि जलापा (Mirabilis jalapa) इत्यादि पौधों में कूट द्विशाखन (False dichotomy) पाया जाता है (चित्र1.11) ।

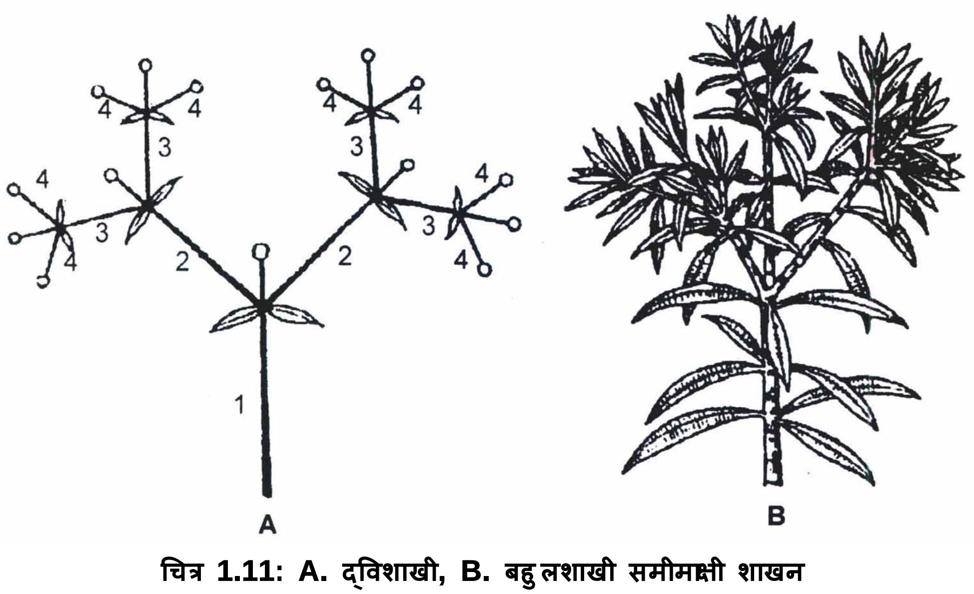

चित्र 1.11: A. द्विशाखी, B. बहुलशाखी समीमक्षी शाखन

(III) **बहुशलाखी ससीमाक्ष शाखन** (Multiparous cymose branching): इस प्रकार का शाखन कुछ पोधों जैसे कनेर (Nerium) में पाया जाता है, यहाँ प्रत्येक पर्व सन्धि पर दो से अधिक पत्तियाँ उत्पन्न होती हैं तथा इन पत्तियों के अक्ष से इसी अनुरूप दो से अधिक शाखायें उत्पन्न होती हैं । इस प्रकार की अवस्था को **बहुलशाखी ससीमाक्षी शाखन** (Multiparous cymose branching) कहते हैं, जैसे कोटन (Croton) एवं कनेर (Nerium) में त्रिशाखी शाखन पाया जाता) है) (चित्र 1.11.B) ।

1.5.2 वृक्षों की शिखर संरचना (Canopy structure of trees)

हमारी धरती पर विविध आकृति एवं ऊँचाई के अनेक वृक्ष पाये जाते हैं । इनके अतिरिक्त अनेक पौधे शाक (Herbs),झाड़ियाँ (Shrubs), उपक्षुप (Undershrubs) छोटे वृक्ष या झाड़ियों, जैसे वृक्षों (Trees) के रूप में पाये जाते हैं । इस प्रकार के क्षुप, वृक्ष या क्षुपिल वृक्षों की विशिष्टता एवं सुन्दरता इनकी शिखर संरचना (Canopy architecture) कारण होती है ।

A वितान को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting Canopy Structure)

किसी भी वृक्ष के शिखर या वितान का निर्माण इसके तने, शाखाओं एवं पत्तियों द्वारा संयुक्त रूप से मिलकर होता है । प्रत्येक वृक्ष की वितान संरचना मूल रूप से पादप वृद्धि को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों को नियंत्रित करती है । इस प्रकार के कारक आन्तरिक एवं बाहरी दोनों प्रकार के हो सकते हैं । वृक्ष के जीन प्रारूप (Gynotype) संकर ओज (Hybrid vigour) इत्यादि कुछ आनुवंशिक कारक (Genetic factors) है, जो कि वृक्ष या वितान या शिखर संरचना को प्रभावित करते हैं । इसी प्रकार पौधे की आयु मृदा मे जल एवं पोषक खनिज तत्वों की उपस्थिति, प्रकाश की अवधि एवं तीव्रता, वातावरण में Co_2, की मात्रा में भी कुछ ऐसे महत्वपूर्ण बाहरी कारक हैं, जो पादप की शिखर संरचना या वितान के गठन को प्रभावित करते हैं । यह एक सामान्य तथ्य है कि कुछ प्रतिकूल परिस्थितियों, जैसे जल की कमी, पोषक तत्वों की अल्पता निम्न तापमान में विभिन्न पौधों की पत्तियों की आकृति छोटी हो जाती है तथा अत्यन्त विषम परिस्थितियों में पौधों की पत्तियाँ गिर जाती हैं ।

पादप जगत में वृक्षों का आकार काफी बड़ा होता है, जिनका मुख्य तना काफी मोटा, मजबूत एवं काष्ठीय होता है । ये झाड़ियों की तुलना में काफी बड़े होते हैं । झाड़ियों में शाखन पौधे के निचले सिरे से ही प्रारम्भ हो जाता है एवं इसके परिणामस्वरूप अनेक समान मोटाई की बहुसंख्य शाखायें विकसित होती हैं । कभी -कभी कुछ पौधे झाड़ियों एवं वृक्षों के बीच भी पाये जाते हैं, जिनमें वृक्ष एवं झाड़ी दोनों से समानतायें दृष्टिगोचर होती हैं । वातावरण एवं आवासीय परिस्थितियों में परिवर्तन भी अनेक वृक्षों की आकृति एवं शिखर संरचना को प्रभावित करता है । कुछ वृक्ष जो सघन रूप से पास -पास उगते हैं, उनमें कक्षस्थ कलिकाएँ प्रायः संदमित (Suppress) रहती हैं एवं वृक्ष का मुख्य तना पतला एवं ऊँचा होता है, वहीं दूसरी ओर अपेक्षाकृत निश्चित या पर्याप्त दूरी पर उगने वाले वृक्षों में खुले वातावरण के कारण व प्रकाश की पर्याप्त उपलब्धता के कारण कक्षस्थ कलिकायें पूर्णतया सक्रिय हो जाती हैं, तो झाड़ी जैसी सघन संरचना बन जाती है या एक ही मुख्य तने से अनेकों शाखायें विकसित हो जाती हैं । इसके परिणामस्वरूप वृक्ष की शिखर

संरचना भी सघन एवं भरी - भरी दिखाई देती हैं । बहुधा यह भी देखने में आया है कि यदि वृक्ष, ऐसी मृदा में उगते हैं, जहाँ पोषण की कमी हो तो इनकी वृद्धि धीमी हो जाती है एवं इनकी आकृति झाड़ियों के समान हो जाती है ।

किसी भी वृक्ष की शिखर संरचना को प्रभावित करने वाले अन्य कारक निम्न प्रकार है:

1. मुख्य अक्ष की वृद्धि
2. मुख्य अक्ष का शाखन प्रकार
3. विभिन्न शाखाओं की दिशा एवं अक्ष पर विन्यास
4. शाखाओं पर पर्ण विन्यास
5. पत्तियों की संख्या एवं आकृति

B शिखर या वितान संरचना के प्रकार (Type of canopy architecture):

विभिन्न वृक्षों में पर्ण आकृति विन्यास एवं शाखन के अनुरूप वृक्ष की आकृति या शिखर संरचना भी अलग - अलग प्रकार की होती है तथा इनको निम्न प्रकार से विभेदित किया जा सकता है:

(1) ताड़ या खजूर वृक्ष (Palm trees)

(2) शंकुधारी वृक्ष (Conical trees)

(3) दीर्घवृत्तीय या बेलनाकार वृक्ष (Cylindrical or obling trees)

(4) झाड़ीनुमा गोलाकार वृक्ष (Round & bushy trees)

(5) छत्राकार वृक्ष ।(Umbrella shaped trees)

(6) कल्प वृक्ष (Pagoda trees)

(7) वलन्तित या निलम्बी वृक्ष (Drooping trees) ।

(1) **ताड़ या खजूर वृक्ष** (Palm trees): इन वृक्षों में मुकुट के आकार का (Crown) या पुच्छी (Caudex) तना पाया जाता है । मुख्य स्तम्भ अशाखित होता है, इसके शीर्ष पर पत्तियों का समूह या गुच्छा (Crown) पाया जाता है । इन वृक्षों की पत्तियाँ मुख्यतः पिच्छाकार (Pinnately) या हस्ताकार (Palmately) रूप से संयुक्त होती हैं । स्तम्भ पर प्रायः स्थायी पर्णक्षत (Permanent leaf scars) चिह्न पाये जाते हैं, इनका तना सामान्यत: बेलनाकार होता है, जैसे खजूर (Phoenix) नारियल (Cocos) एवं मारिपाम (Caryota urens) में ।

(2) **शंकुधारी वृक्ष** (Cylindrical & oblong trees): इस श्रेणी के वृक्षों में प्रायः एक मुख्य अक्ष पाया जाता है एवं एकलाक्षी (Monopodial) शाखन उपस्थित होता है । वृक्ष की शाखाओं का व्यवस्थाक्रम चक्रिक या एकान्तर या सम्मुख प्रकार का होता है तथा ये समकोण अथवा न्यून कोण पर विन्यासित होती है । इनकी शाखाएँ अग्राभिसारी क्रम (Acropetal succession) (अर्थात बड़ी शाखाएँ नीचे एवं छोटी ऊपर) में विकसित होती हैं । यहाँ शाखायें क्योंकि ऊपर की ओर छोटी होती हैं, इसलिए वृक्ष की आकृति शंक्वाकार हो जाती है, उदाहरण **क्रिसमस ट्री** (Araucaria) वृक्ष की शाखायें क्षैतिज एवं थुजा (Thuja; शाखायें न्यून कोण पर होती है ।

(3) **दीर्घवृत्तीय या बेलनाकार वृक्ष** (Cylindrical & oblong trees): इस श्रेणी के वृक्षों की ऊँचाई, इनकी चौड़ाई की तुलना में बहुत अधिक होती है तथा इनका शाखन एकलाक्षी अथवा बहुलक्षी प्रकार का हो सकता है । प्रायः इनकी पार्श्व शाखायें, उर्ध्व शाखाओं एवं मुख्य अक्ष

की तुलना में छोटी होती हैं । इसके अतिरिक्त यदा - कदा ये शाखायें तिरछी होकर ऊपर की ओर वृद्धि करती हैं । चौड़ाई की तुलना में लम्बाई अधिक होने से वृक्षों का फैलाव अधिक नहीं होता एवं ये बेलनाकार आकृति ग्रहण कर लेते हैं, जैसे नीमचमेली (Millingtonia) एवं कटहल (Artocarpus)।

(4) **झाड़ीनुमा गोलाकार वृक्ष** (Round & Bushy trees) इस प्रकार के वृक्षों में बहुलाक्षी (Sympodial) शाखन होता है एवं इनकी शाखायें एकान्तर या सर्पिल या चक्रिकाकार क्रम आवृतबीजी पादपों की मूलभूत संरचना, वृद्धि विविधता, शाखन एवं वितान संरचना में व्यवस्थित होती हैं । निचली शाखायें ऊपरी शाखाओं की तुलना में अधिक फैली हुई होती हैं, जैसे आम (Mangifera) एवं बरगद (Ficus) में ।

(5) **छत्रिकाकार वृक्ष** (Umbrella shaped trees): इस श्रेणी के वृक्षों में शिखर संरचना का लगभग चपटा एवं अधिक चौड़ा होना इनकी प्रमुख विशेषता है । यहाँ बहुलाक्षी प्रकार का शाखन पाया जाता है । जब मुख्य अक्ष या वृक्ष की किसी शाखा की वृद्धि रुक जाती है तो इसकी ऊपरी या शीर्षस्थ पर्व सन्धि के पास से दूसरी शाखायें उत्पन्न हो जाती हैं, जो तिरछी एवं ऊपर की ओर वृद्धि करती हैं । प्रायः इनका शाखन अपेक्षाकृत बाहरी दिशा में होता है, जिससे नीचे की पत्तियों पर शाखाओं व दूसरी पत्तियों की छाया कम मात्रा में पड़ती है, प्रकाश अधिक मात्रा में पत्तियों को उपलब्ध रहता है, जैसे पारस पीपल (Thespasia) एवं गुलमोहर (Delonix regia) में ।

(6) **कल्पवृक्ष** (Pagoda trees): इस प्रकार के वृक्षों में शाखायें मुख्य अक्ष से चक्रिकाकार क्रम में उत्पन्न होती हैं एवं इसके साथ ही छज्जों की भाँति एक -दूसरे के ऊपर व्यवस्थित होती हैं । यहाँ शाखायें चक्रिक समान सर्पिल क्रम में विकसित हो सकती हैं । इस प्रकार इनकी शाखायें एक के ऊपर एक के क्रम में व्यवस्थित हो जाती हैं । जब इन शाखाओं की वृद्धि धीमी हो जाती है, तो इनके सिरे ऊपर की ओर मुड़ जाते हैं । इन शाखाओं के मुड़ने वाले स्थान से ही नई शाखा उत्पन्न होती है एवं यह प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है । वृक्ष के ऊपरी सिरे की ओर इन शाखाओं की लम्बाई कम हो जाती है, क्योंकि इनके पर्व छोटे हो जाते हैं । इस प्रकार वृक्ष की आकृति पैगोडा अर्थात् बौद्ध मन्दिरों के समान हो जाती है, लेकिन बड़े वृक्षों की आकृति छत्राकार होती है, जैसे छटिन (Alstonia) व सेमल (Bombax) में ।

(7) **क्लान्तित या निलम्बी वृक्ष** (Dropping trees): इस श्रेणी के वृक्षों को **रुदन वृक्ष** (Weeping trees) भी कहा जाता है, क्योंकि इन वृक्षों की शाखायें निलम्बी या लटकी हुई (Dropping) होती हैं । स्तम्भ का शाखन एकलाक्षी या बहुलाक्षी प्रकार का हो सकता है । इस प्रकार के वृक्षों की शाखायें पतली एवं कोमल होती हैं, जो या तो नीचे की ओर लटकती हुई होती हैं या फिर आड़ी या बाहर की ओर वृद्धि करती हैं । इनकी शाखायें क्रमिक रूप से पतली होती जाती हैं और बहुत पतली हो जाने पर नीचे की ओर झुकी हुई या लटकती हुई दिखाई देती हैं, जैसे **बाटल ब्रश** (Callistemon) एवं सेलिक्स (Salix) में ।

बोध प्रश्न

1. अल्पजीवी पौधे का उदाहरण है:
   (अ) मोल्यूगो
   (ब) दूब
   (स) गोखरू
   (द) टेफ़्रोसिया

2. सबसे ऊँचा आवृतबीजी वृक्ष है:
   (अ) बरगद
   (ब) यूकेलिप्टस रेग्नेंस
   (स) पीपल
   (द) आम

(3) तलसर्पी पादप का उदाहरण है:
   (अ) दूब
   (ब) इंडियोफेरा
   (स) गोखरू
   (द) टेफ्रोसिया

(4) पौधों में दीर्घकालिता होती है:
   (अ) द्वितीयक वृद्धि के कारण
   (ब) बीज प्रवृत्ति के कारण
   (स) जडों के कारण
   (द) अग्रस्थ कलिकाओं के कारण

(5) समुद्री आवृतबीजी पादप का उदाहरण है:
   (अ) जोस्टेरा
   (ब) फ्यूकस
   (स) लेमीनेरिया
   (द) जेलीडियम

1.6 सारांश (Summary)

एक आवृतबीजी पौधे की मूलभूत संरचना में प्रमुखत: मूलतंत्र एवं प्ररोह तंत्र में विभेदित होती है । मूल तंत्र में विभिन्न प्रकार की जडें एवं प्ररोह तंत्र में स्तम्भ (तना) पर्ण तथा पुष्प प्रमुख घटक होते हैं । एक पुष्पधारी पौधे का पादपकाय परिवर्धन अथवा माड्यूली वृद्धि द्विगुणित युग्मनज (Dipliod zygote) से प्रारम्भ होती है । युग्मनज से भ्रूण बनता है, जिससे आगे चल कर सम्पूर्ण पादप का निर्माण होता है । द्विबीजपत्री एवं एकबीजपत्री पौधों की आधारभूत संरचना,

मोटे तौर पर तो समान प्रमुख घटकों में विभेदित रहती है, परन्तु इनके विभिन्न घटकों की संरचनाओं में कतिपय विविधतायें पाई जाती हैं, जैसा सरसों एवं प्याजी के उदाहरणों से स्पष्ट है। आवृतबीजी पौधों में आवास एवं स्वभाव के आधार पर पर्याप्त विविधता ये देखी जा सकती हैं । इसके साथ ही आवृतबीजी व अनावृतबीजी पौधों में वृक्ष स्वभाव का विकास एवं सम्मिलन भी एक रोचक किन्तु जटिल प्रक्रिया के रूप में अध्ययन किया जा सकता है, जिसके आधार पर वृक्ष इस पृथ्वी के सर्वाधिक वृहत्काय एवं दीर्घजीवी पौधों के रूप में उभरकर सामने आते हैं ।

आवृतबीजी पौधों के पादपकाय में विशेषकर प्ररोह या तने में शाखाओं की उत्पत्ति पत्तियों के कक्ष में होती है । तने में प्रमुखतः तथा एकलाक्षी एवं संधिताक्षी प्रकार का शाखन होता है । संधिताक्षी प्रकार के शाखन में भी अनेक विविधतायें देखी जा सकती हैं, इसे ससीमाक्षी प्रकार का शाखन भी कहते हैं ।

हमारी धरती पर विभिन्न प्रकार के वृक्ष पाये जाते हैं । विभिन्न प्रकार के वृक्षों में वितान संरचना (Conopy structure) उनकी विविधता, पहचान एवं सुन्दरता को निरूपित करता है ।

1.7 शब्दावली (Terminology)

(1) **अल्पजीवी पादप**: ऐसे पौधे जिनका जीवनकाल बहुत छोटा केवल कुछ सप्ताह से लेकर 1-2 माह तक का होता है ।

(2) **सकृत्फली**: ऐसे बहुवर्षी पौधे जिनके सम्पूर्ण जीवनकाल में पुष्पन, फल निर्माण एवं बीजों का विकास केवल एक ही बार होता है, जैसे अगेव व केला ।

(3) **कीटभक्षी पौधे**: वे पादप जो अपने पोषण हेतु आवश्यक नाइट्रोजन की आपूर्ति के लिये अपनी विशेष रूपान्तरित पादप संरचनाओं की सहायता से सूक्ष्म कीटों को पकड़कर इनका पाचन कर लेते हैं, जैसे नेपेन्थीज या घटपर्णी ।

(4) **उभयचारी पौधे**: ऐसे पौधे मूलभूत रूप से स्थलीय आवासों में होते हैं, लेकिन उनको नमी व जल की अधिक आवश्यकता होती है, अतः ये जल स्रोतों के किनारे पर पाये जाते हैं, जैसे मारसीलिया एवं ब्रायोफाइटा समूह के अधिकांश सदस्य ।

1.8 संदर्भ ग्रंथ (References)

(1) पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन: प्रो.पी.सी. त्रिवेदी, डा. निरंजन शर्मा एवं जमनालाल शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर ।

(2) बोटेनी: डा.एच.एन. श्रीवास्तव; प्रदीप पब्लिकेशन्स जालान्धर ।

(3) कॉलेज बॉटनी, भाग प्रथम (अंग्रेजी संस्करण): गांगुली, दास व दत्ता; न्यू सेन्ट्रल बुक ऐजेन्सी, कोलकाता।

(4) ए टेक्स्ट बुक ऑफ बोटनी: सिंह, पाण्डे व जैन; रस्तोगी, पब्लिकेशन्स, मेरठ ।

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर (Answers)

1. (अ) 2. (ब) 3. (स) 4. (द) 5. (अ)

1.10 अभ्यास प्रश्न (Questions)

1. दुर्बल स्तम्भ के बारे में समझाइये एवं इनके विभिन्न प्रकार बताइये ।
2. आवृतबीजी पौधों की आकारिकीय विविधताओं का वर्णन कीजिये ।
3. तने के आधार पर पौधों का वर्गीकरण कीजिये । '
4. पौधों में वृक्ष स्वभाव की उत्पत्ति एवं विकास की व्याख्या कीजिये ।
5. वृक्ष स्वभाव के विकास एवं सम्मिलन को निरूपित कीजिये ।

इकाई 2 : स्थायी ऊतक (Permanent Tissues)

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 सरल ऊतक

  2.2.1 मृदूतक

  2.2.2 स्थूलकोणोतक

  2.2.3 दृढ़ोतक

2.3 जटिल ऊतक

  2.3.1 जाइलम

  2.3.2 फ्लोयम

2.4 स्रावी ऊतक

  2.4.1 बाह्य स्रावी ऊतक

  2.4.2 आंतरिक स्रावी ऊतक

2.5 सारांश

2.6 शब्दावली

2.7 संदर्भ ग्रंथ

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य :

(1) ऊतक के बारे में समझाना ।

(2) ऊतकों के वर्गीकरण की संक्षिप्त जानकारी देना ।

(3) विभिन्न प्रकार के ऊतकों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करना ।

(4) विभिन्न प्रकार के ऊतकों के कार्य के बारे में जानकारी प्राप्त करना ।

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

ऊतक एक रोचक एवं विशिष्ठ प्रकार के कोशिका समूह को कहते हैं । इस कोशिका समूह में एक अथवा एक से अधिक प्रकार की कोशिकायें पास - पास व्यवस्थित होकर एवं संयुक्त रूप से मिलकर किसी एक कार्य को सम्पादित करती है ।

वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार किसी विशेष ऊतक में उपस्थित कोशिकाओं की प्रकृति के आधार पर इनको दो वर्गों में विभेदित किया जा सकता है । यह हैं:

(1) **विभाज्योतक** (Meristematic: वह ऊतक जिसकी कोशिकायें निरंतर विभाजित होती रहती हैं।

(2) **स्थायी ऊतक** (Permanent tissue): इसमें सम्मिलित कोशिकायें स्थायी प्रकृति की होती हैं तथा किसी कार्य विशेष को सम्पादित करती हैं । इनमें कोशिका विभाजन की क्षमता नहीं होती । स्थायी ऊतकों में क्योंकि एक या एक से अधिक प्रकार की कोशिकायें संयुक्त रूप से मिलकर किसी विशेष कार्य को सम्पादित करती हैं, अत: कोशिकाओं की समानता अथवा असमानता के आधार पर भी इनको हम निम्न श्रेणियों में विभेदित कर सकते हैं । यह हैं:

(क) सरल ऊतक (Simple tissue): इसमें सम्मिलित कोशिकायें एक ही प्रकार की होती हैं।

(ख) जटिल ऊतक (Complex tissue): इसमें सम्मिलित कोशिकायें एक से अधिक प्रकार की होती हैं जैसे जाइलम व फ्लोयम ।

इसके अतिरिक्त वैज्ञानिकों के अनुसार ऊतकों का एक और वर्ग विभेदित किया जा सकता है, जिसकी कोशिकायें भले ही एक या एक से अधिक प्रकार की हों, परन्तु इनकी संरचना एवं कार्य निष्पादन अत्यन्त विशिष्ट प्रकार का पाया गया है । **स्रावी ऊतक** (Secretory tissue) वर्ग का महत्वपूर्ण उदाहरण है, जो विभिन्न पादप अंगों में विशेष रासायनिक पदार्थों के निर्माण का कार्य करता है । इस प्रकार के ऊतकों को एक अलग ही श्रेणी में रखा जा सकता है । इसे **विशिष्ट ऊतक** (Special tissue) कहते हैं ।

2.2 सरल ऊतक (Simple Tissue)

जैसा कि हम जानते हैं, सरल ऊतक की कोशिकायें **समांगी** (Homogenous)या एक ही प्रकार की होती है । संरचना के आधार पर विभिन्न पोधों में तीन प्रकार के सरल ऊतक पाये जाते हैं । यह हैं:

(i) मृदूतक (parenchyma)

(ii) स्थूलकोणोतक (Collenchyma)

(iii) दृढ़ोतक (Sclerenchyma)

2.2.1 मृदूतक (Parenchyma)

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है । इस ऊतक में सम्मिलित कोशिकायें पतली भित्ति वाली या कोमल होती हैं । इस ऊतक के प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार से हैं :

(1) कोशिकायें जीवित तथा स्पष्ट केन्द्रक युक्त होती हैं । कोशिका भित्ति सेल्यूलोज तथा उसके साथ बहुधा कैल्सियम पेक्टेट द्वारा निर्मित होती हैं ।

(2) कोशिकाओं के बीच प्रायः अन्तरकोशिकीय स्थान (inter cellular spaces) पाये जाते है ।

(3) कोशिका द्रव्य में स्पष्ट रिक्तिकायें पायी जाती हैं ।

(4) कोशिकाओं की आकृति विभिन्न प्रकार की जैसे अण्डाकार, गोलाकार, बहुभुजीय, बेलनाकार या ताराकार हो सकती हैं ।

वितरण (Distribution)

पादप शरीर में मृदूतक कोशिकायें इनके सभी कोमल, गूदेदार व मांसल भागों जैसे जड़, तना, पत्तियों, बीजपत्र, फल का गूदा, वल्कुट तथा मज्जा में पाई जाती हैं । वैसे अनेक उदाहरणों में यह जटिल ऊतकों में जैसे जाइलम में जाइलम मृदूतक तथा फ्लोयम में फ्लोयम मृदूतक के रूप में मिलती हैं ।

पादप शरीर का अधिकांश भाग इन सरल प्राथमिक प्रकार की कोशिकाओं का बना होता है । इन कोशिकाओं के समूह को कई बार भरण ऊतक भी कहते हैं । यही नही अन्य ऊतकों की कोशिकाओं का विकास वस्तुतः मृदूतक कोशिकाओं से ही होता है ।

उत्पत्ति (Origin): मृदूतक कोशिकायें मूल रूप से प्राथमिक विभाज्योतकी कोशिकाओं द्वारा निर्मित होती हैं तथा पौधे के विभिन्न हिस्सों का ढाँचा बनाती हैं । पौधे के विभिन्न ऊतक क्षेत्र जैसे वल्कुट मज्जा, पर्णमध्योत्तक, भरण विभाज्योतक से तथा प्राथमिक संवहन ऊतकों में पाये जाने वाले जाइलम व फ्लोयम मृदूतक प्रोकेम्बियम से बनते हैं । द्वितीयक वृद्धि के दौरान बनने वाली मृदूतक कोशिकाओं की उत्पत्ति केम्बियम एवं कार्क केम्बियम से होती हैं ।

मृदूतक कोशिकाओं की संरचना (Structure)

मृदूतक कोशिकाओं की आकृति प्रायः समव्यासी (Isodiametric) प्रकार की होती है, परन्तु अनेक पौधों में यह लम्बवत् या अन्य आकृतियों की भी हो सकती है । मृदूतक कोशिकायें प्रायः बहुकोणीय दिखाई देती हैं । इनका विन्यास सामान्यत: सरल या जटिल प्रकार का हो सकता है । परिपक्व मृदूतक कोशिकायें एक दूसरे के पास - पास व्यवस्थित पाई जाती हैं तथा इनके बीच उपस्थित अंतरकोशिकीय स्थान (Intercellular spaces) अत्यंत छोटे होते हैं । भ्रूणपोष (Endosperm) की मृदूतक कोशिकाओं के बीच अंतरकोशिकीय स्थान नहीं पाये जाते, परन्तु विभिन्न फलों के गुदों में उपस्थित मृदूतक कोशिकाओं के बीच पर्याप्त अन्तरकोशिकीय स्थान पाये जाते हैं एवं ये कोशिकायें शिथिलता पूर्वक व्यवस्थित होती हैं ।

कोशिका भित्ति (Cell wall): यह अत्यन्त पतली तथा सेल्यूलोज व पेक्टिन या हेमीसेज्यूलोज की बनी होती है । इस भित्ति में जीव द्रव्य तन्तु (Plasmodesmata) भी सामान्यत: पाये जाते हैं । परन्तु द्वितीयक जाइलम (Secondary xylem) में उपस्थित जाइलम मृदूतक की कोशिका भित्ति मोटी तथा लिग्निन युक्त होती है ।

पादप शरीर में इनकी स्थिति एवं कार्य के अनुसार मृदूतक कोशिकाओं में उपस्थित अंर्तवस्तुएँ (Cell inclusions) अलग - अलग प्रकार की हो सकती है, जैसे प्रकाश संश्लेषी मृदूतक में हरित लवक व मंडकण, तेल गोलिकाओं एवं शर्कराओं की प्रचुर मात्रा पाई जाती है । कुछ मृदूतक कोशिकाओं में टेनिन रख अल्कलाइड (Alkaloids) भी पाये जाते हैं ।

प्रकार (Type): उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि अंतर्वस्तुओं (Inclusions) की दृष्टि से मृदूतक कोशिकाओं में काफी विविधता पाई जाती है, परन्तु इन सभी में केन्द्रक आवश्यक रूप से उपस्थित होता है ।

पादप शरीर में इनकी स्थिति, कार्य एवं संरचना के आधार पर मृदूतक कोशिकायें विभिन्न प्रकार से रूपान्तरित हो सकती हैं (चित्र 2.1), जिसके प्रमुख उदाहरण निम्न प्रकार से हैं

(क) **हरितमृदूतक** (Chlorenchyma): वे मृदूतक कोशिकायें, जिनमें पर्याप्त मात्रा में हरित लवक पाये जाते हैं, उनको हरित मृदूतक (Chlorenchyma) कहते हैं । इन कोशिकाओं का प्रमुख कार्य स्वपोषी पौधों में प्रकाश संश्लेषण का होता है । पत्तियों में पर्णमध्योतक का कार्य प्रकाश संश्लेषण का होता है । पत्तियों की पर्णमध्योतक (Mesophyll), विशेषकर द्विबीजपत्री पर्ण में खम्भ मृदूतक (Palisade parenchyma) हरित मृदूतक के प्रमुख उदाहरण हैं ।

(ख) **वायुतक** (Aerenchyma): मृदूतक कोशिकाओं के बीच जब अपेक्षाकृत बड़े आकार के अन्तरकोशिकीय स्थान बन जाते हैं और उन स्थानों में वायु भरी रहती है, तो वायु युक्त के आसपास उपस्थित इन ऊतकों को वायुतक (Aerenchyma) कहते हैं । इनका प्रमुख कार्य गैसीय विनिमय के साथ -साथ जिस पादप अग में यह उपस्थित हो, उसे प्लावी अवस्था (Buoyancy or floating condition) रखने का होता है । इससे पादप शरीर या पादप अग पानी की सतह पर तैरते रहते हैं ।

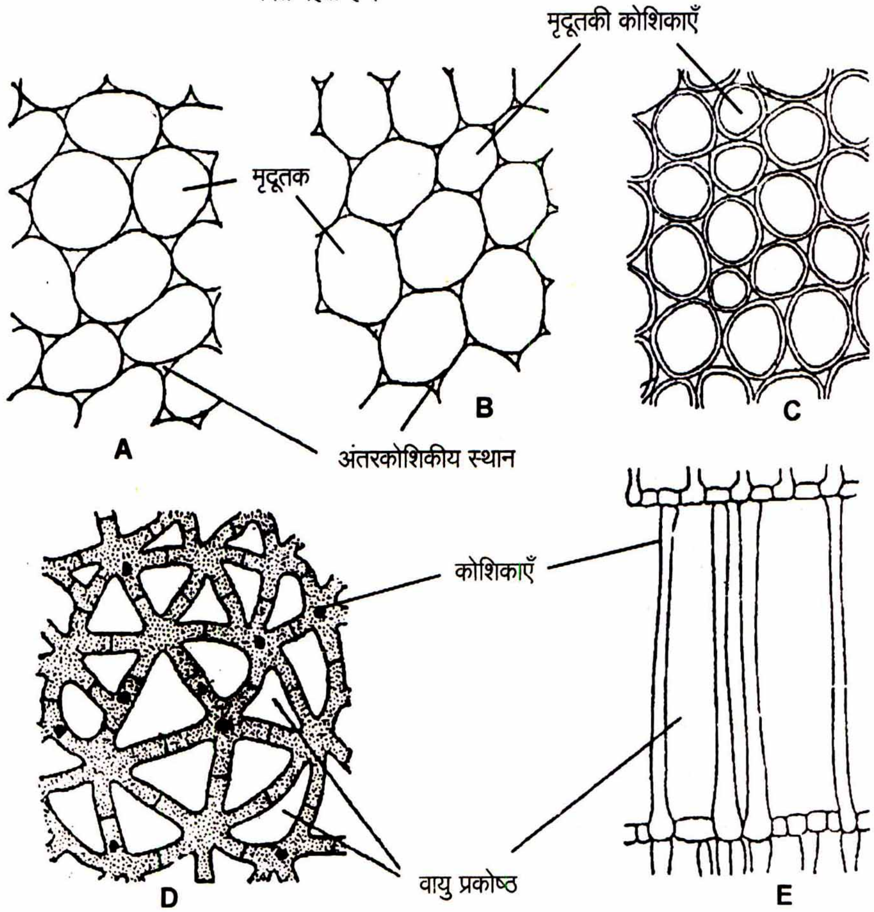

चित्र 2.1: विभिन्न प्रकार के ऊतक : A. मृदूतक, B. स्थूल कोणोतक, C. दृढोतक, D. वायुतक T.S. में E. वायुतक L.S में ।

(ग) **इडियोब्लास्ट** (Idioblast): यह विशेष प्रकार की मृदूतक कोशिकायें होती हैं, जिनमें विभिन्न रासायनिक पदार्थ, जैसे टेनिन, तेल या वसीय पदार्थ तथा कैल्सियम आक्जेलेट के क्रिस्टल व रेफिड्स इत्यादि संचित रहते हैं ।

(घ) **दीर्घमृदूतक** (Prosenchyma): यह मृदूतक कोशिकायें समव्यासी नहीं होतीं, अपितु यह सुदीर्घित एवं दोनों सिरों पर नुकीली या सकड़ी होती हैं । कुछ द्विबीजपत्री पौधों के परिरम्भ (Pericycle) में इस प्रकार की कोशिकायें पाई जाती हैं ।

(ङ) **ताराकृत मृदूतक** (Stellate Parenchyma): इनकी आकृति तारे के समान होती है तथा कोशिकायें केले के पर्णवृन्त एवं अन्य कई जलीय पौधों में पाई जाती हैं ।

विभिन्न फलों में अलग - अलग रंग इनकी मृदूतक कोशिकाओं में उपस्थित वर्णकों के कारण होते हैं । इसी प्रकार से वृक्षों, शिशु व तरुण पत्तियों का चमकीला तांबई रंग इनमें से क्लोरोफिल के साथ पर्याप्त मात्रा में उपस्थित केरोटिनाइड वर्णकों के कारण होता है ।

मृदूतक के कार्य (Functions of parenchyma):

1. हरित मृदूतक (Chlorenchyma) कोशिकायें प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती हैं ।
2. सामान्य मृदूतक कोशिकायें विभिन्न खाद्य पदार्थों के संचय का कार्य भी करती हैं, जैसे आलू व अरबी में स्टार्च का संचय, मूँगफली के बीजों में तेल कणों का संचय इत्यादि ।
3. वायुतक (Aerenchyma) जो प्रायः जलीय पौधों में पाई जाती हैं, वे गैसीय विनिमय के साथ -साथ पादप अंग को प्लावी अवस्था में रखने का कार्य करती है ।
4. विभिन्न मरुद्भिद मांसल पौधों (Succulents) जैसे केक्टस में उपस्थित मृदूतक कोशिकायें जल संचय (Water storage) का कार्य करती हैं ।
5. स्फीत अवस्था में मृदूतक कोशिकायें पादप अंग को यांत्रिक दृढ़ता प्रदान करती हैं ।
6. पादप शरीर के कट -फट जाने या क्षतिग्रस्त हो जाने की अवस्था में घाव भरने का कार्य मृदूतक कोशिकाओं द्वारा ही सम्पादित होता है ।
7. आवश्यकता पड़ने पर मृदूतक कोशिकायें द्वितीयक विभाज्योतक रूप में कार्य करने लगती हैं तथा इस प्रकार ये पौधे की वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान करती हैं ।

2.2.2 स्थूलकोणोतक (Collenchyma)

वस्तुतः यह विशेष प्रकार की मृदूतक कोशिकायें होती हैं, जिनकी कोशिका भित्ति के कोनों पर स्थूलन पदार्थ का निक्षेप (Deposition) पाया जाता है । मृदूतक से विकसित इन कोशिकाओं के कोणों पर स्थूलन पाया जाता है, जिनकी वजह से इन कोशिका ओं की भित्तियाँ लचीली (Elastic) हो जाती है ।

स्थूल कोणोतक कोशिकायें मृदूतक की तुलना में अधिक मोटी हो ती हैं । कोशिका भित्ति में सेल्यूलोज, हेमीसेज्यूलोज व पेक्टिन होता है, लेकिन लिग्निन नहीं पाया जाता । पेक्टिन के जलरागी (Hydrophilic) गुण के कारण कोशिका भित्ति की मोटाई असमान होती है । यह मोटाई कोणों पर विशेषकर उन कोणों पर जहाँ कि 3, 4 कोंण मिलते हैं, वहाँ अधिक होती हैं ।

इस ऊतक का एक और महत्वपूर्ण लक्षण यह भी है कि यहाँ कोशिका भित्ति की मोटाई में वृद्धि या इनका स्थूलन कोशिका की लम्बाई बढ़ने के साथ - साथ ही होता जाता है । इसी कारण स्थूल कोणोतक पौधे के युवा अथवा तरुण हिस्सों को जैसे टहनी, पर्ण, पर्णवृन्त तथा पुष्पवृन्त को बिना इनकी वृद्धि में बाधा डालते हुए एक लचकमयी दृढ़ता प्रदान करता है । यही कारण है कि पौधे के यह भाग हवा के प्रबल झोंको को आसानी से सहन कर लेते हैं, उनकी दिशा में मुड़ जाते हैं, पर टूटते नहीं है ।

पादप शरीर में वितरण (Distribution)

यह ऊतक पौधे के केवल प्राथमिक भागों में ही, जैसे वल्कुट या अधोत्वचा के रूप में बाह्य त्वचा के नीचे 3 - 4 परतों में पाये जाते हैं, जैसे सूरजमुखी एवं कुकुरबिटा के तने में ।

एकबीजपत्री पौधों में प्रायः स्थूलकोणोतक नहीं पाये जाते । इसी प्रकार भूमिगत तनों एवं जड़ों में भी स्थूलकोणोतक (Collenchyma) अनुपस्थित होते हैं ।

स्थूलकोणोतक के प्रकार (Types of Collenchyma)

पेक्टिन तथा हेमीसेज्यूलोज के विभिन्न प्रकार के स्थूलन के अनुसार स्थूलकोणोतक तीन प्रकार के होते हैं :

1. **कोणीय स्थूलकोणोतक** (Angular collenchyma): स्थूल कोणोतक कोशिकाओं में जब स्थूलन पदार्थ का जमाव कोशिकाओं के कोणों पर पाया जाता है, तब उनको कोणीय स्थूलकोणोतक (Angular collenchyma) कहते हैं, उदाहरण टमाटर व धतूरा (चित्र 2.2 A,B)

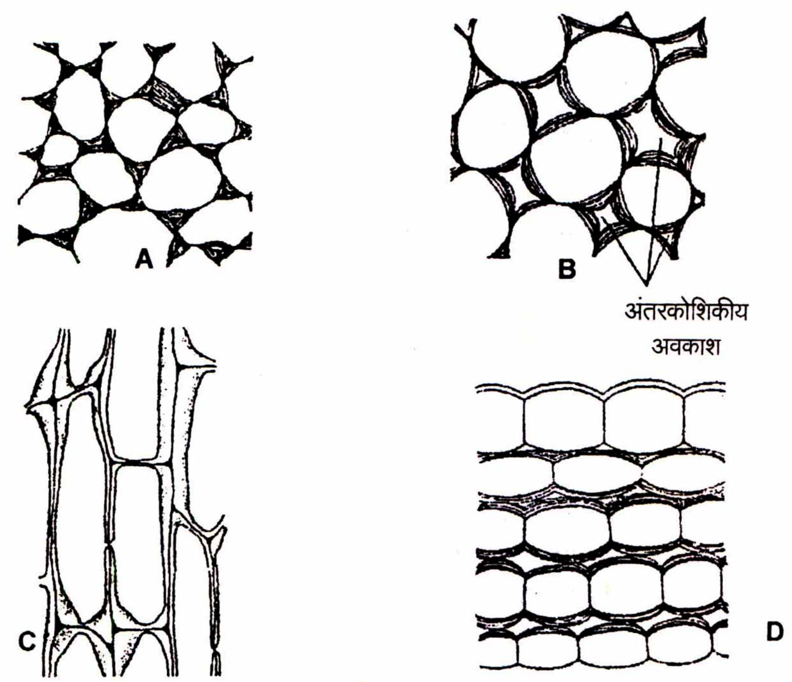

चित्र 2.2: विभिन्न स्थूलकोणोतक A- B स्थूलकणोतक - T.S. में, C. रिक्तिकायुक्त L.S, D. परतीय T.S में

2. **रिक्तिकामय या नलिकावत् स्थूल कोणोतक** (Lancunar or tubular collenchyma) : इस प्रकार की स्थूल कोणोतक कोशिकाओं में सुस्पष्ट अंतरकोशिकीय स्थान पाये जाते हैं तथा स्थूलन पदार्थ का जमाव कोशिका भित्ति के उन भागों पर होता है, जो कोशिका भित्ति के सम्मुख अंतरकोशिकीय स्थानों के सामने होते हैं, उदाहरण सेल्विया (Salvia), तथा मालवा (Malva) इत्यादि (चित्र 2.2 C) ।
3. **स्तरित स्थूल कोणोतक** (Plate or lamellar Collenchyma): यहाँ स्थूलन पदार्थ का जमाव स्पर्श रेखीय कोशिका भित्तियों पर होता है तथा ये पट्टियों के समान व्यवस्थित दिखाई देती हैं, उदाहरण मूली (चित्र 2.2 D) ।

स्थूल कोणोतक के कार्य (Functions of collenchyma) :

(1) स्कूल कोणोतक पौधे के युवा भागों को लचीलापन या तनदृढ़ता (Tensile sterngth) प्रदान करते हैं। इस प्रकार ये पौधे की शाखाओं को हवा के झोंकों से टूटने से बचाते हैं ।

(2) चूकि कोशिका की लम्बाई बढ़ने के साथ -साथ इनमें भी स्थूलन होता है, अत : इस कारण कोशिका का लचीलापन यथावत् बना रहता है । वृद्धि में भी किसी प्रकार की बाधा इनके स्थूलन से उत्पन्न नहीं होती ।

(3) चूंकि ये जीवित कोशिकायें होती हैं, अत : कुछ स्थूलकोणोतक कोशिकाओं में हरितलवक भी उत्पन्न हो जाते हैं, जिससे यह प्रकाश संश्लेषण के द्वारा भोजन निर्माण में भी सहायक होती हैं ।

(4) सजीव कोशिकायें होने के कारण ये आवश्यकतानुसार विभाज्योतकी प्रवृत्ति ग्रहण कर सकती है तथा इनके द्वारा मुख्य रूप से केम्बियम का निर्माण होता है । इसके साथ ही ये पादप शरीर के घाव भरने की प्रक्रिया में भी सहायक होती हैं ।

मृदूतक एवं स्थूलकोणोतक में अंतर

(Difference between Parenchyma and Collenchyma)

क्र.सं.	मृदूतक (Parenchyma)	स्थूलकोणोतक (Collenchyma)
1.	ये कोशिकायें समव्यासी एवं पतली भित्ति होती है		ये कोशिकायें अपेक्षाकृत लम्बी, सजीव किन्तु मोटी भित्ति युक्त होती हैं ।
2.	इनकी कोशिका भित्ति में स्थूलन नहीं पाया जाता		इनकी कोशिका भित्ति में अनियमित रूप से स्थूलन पाया जाता है ।
3.	कोशिकाओं के बीच प्रायः अंतरकोशिकीय स्थान पाये जाते हैं ।	इनके बीच प्रायः अंतरकोशिकीय स्थान नहीं अंतरकोशिकीय स्थान पाये जाते । यदि उपस्थित हों तो इनके कोणों पर स्थूलन पाया जाता है ।
4.	इन कोशिकाओं की आकृति अण्डाकार गोलाकार या बहुभुजाकार होती हैं ।	यह प्रायः गोलाकार या बहुभुजाकार या दिर्घित होती है	

5.	यह भोजन निर्माण, खाद्य पदार्थों का संचय तथा श्वसन का कार्य करती हैं । कभी -कभी विभाज्योतकी भी हो जाती है	यह पौधे के कोमल अंगों को लचीलेपन के साथ -साथ दृढ़ता भी प्रदान करती हैं । विशेष परिस्थितियों में यह प्रकाश संश्लेषण भी कर सकती है ।

2.2.3 दृढ़ोतक (Sclerenchyma)

इस शब्द (Sclerenchyma) की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के एक शब्द स्कलेरोस (Scleros) से हुई है, जिसका अर्थ होता है, दृढ़ या मजबूत । जैसा कि नाम से ही स्पष्ट होता है, दृढ़ोतक कोशिकाओं की कोशिकाभित्ति अत्यन्त सख्त, मोटी एवं मजबूत होती है । कोशिका भित्ति की मोटाई इतनी अधिक होती है तथा इस पर लिग्निन (Lignin) जैसे स्थूलन पदार्थों का जमाव इतना अधिक होता है कि ये पदार्थ कोशिका गुहा को पूर्णतया अवरुद्ध कर लेते हैं । इस वजह से कोशिका गुहा अत्यन्त संकरी हो जाती है व जीवद्रव्य पूरी तरह समाप्त हो जाता है, परिणामस्वरूप ये कोशिकायें मृत हो जाती हैं ।

दृढ़ोतक कोशिकायें प्रायः बहुत लम्बी, सकड़ी व दोनों सिरों पर नुकीली होती है । इनकी कोशिका भित्ति मोटी तथा लिग्निन युक्त होती है । इसके साथ ही ये परिपक्व होने पर मृत हो जाती हैं । मोटी कोशिका भित्ति में अनेक सरल गर्त (Pits) पाये जाते हैं । यहाँ ध्यान रखने योग्य बात यह है कि भित्ति स्थूलन में लिग्निन का जमाव केवल दृढ़ोतकी ऊतकों में ही होता है ।

दृढ़ोतक कोशिकायें मोटी भित्ति युक्त एवं कठोर होती हैं । कोशिका के पूरी तरह वृद्धि करने के बाद परिपक्व कोशिका अपना एक निश्चित आकार ग्रहण कर लेती है । तत्पश्चात् प्राथमिक भित्ति पर लिग्निन का द्वितीयक निक्षेपण प्रारम्भ होता है तथा यह पर्तों के रूप में स्तरित होता जाता है । यह निक्षेपण समान मोटाई का होता है । परिणाम स्वरूप कोशिका भित्ति घटती जाती है । लिग्निन जल के प्रति अपारगम्य होता है । निक्षेपण के कारण बढ़ते हुए जलाभाव के द्वारा कोशिकाद्रव्य मृत हो जाता है । अत : दृढ़ोतक की कोशिकायें पूर्णत : परिपक्व अवस्था में मृत व निर्जीव होती हैं ।

दृढ़ोतक के प्रकार (Types)

दृढ़ोतकों के अंतर्गत मुख्यतः दो प्रकार की कोशिकायें सम्मिलित की गई हैं:

(1) दृढ़ोतक तन्तु (Sclerenchyma fibers)

(2) अष्ठिल/दृढ कोशिकायें (Stone cells or Sclerids)

1. **दृढोतक तंतु (Sclerenchyma fibers)**

ये कोशिकायें लम्बी, पतली तथा दोनों सिरों पर क्रमशः नुकीली होती हैं । कभी-कभी कोशिका भित्ति इतनी अधिक मोटी हो जाती हैं कि कोशिका गुहा बहुत छोटी हो जाती है या समाप्त हो जाती है । कोशिका भित्ति में छोटे -छोटे गोल तथा सरल गर्त पाये जाते हैं । दृढ़ोतक तंतुओं की लम्बाई सामान्यत : 1.3 मि.मी. तक की होती है, परन्तु जूट (Corchorus capsularis) तथा बोहमेरिया (Boehmeria) में तन्तुओं की लम्बाई 20-550 मि.मी. तक हो सकती है (चित्र 23 A व B) ।

वितरण (Distribution) : दृढ़ोतक तन्तु अधिकतर पौधों के वल्कुट, परिरम्भ, जाइलम व फ्लोयम में पाये जाते हैं । एक बीजपत्री पौधों में दृढ़ोतक तन्तु, संवहन बण्डल के चारों ओर एक आच्छद (Sheath) के रूप में पाये जाते हैं या संवहन बण्डल के ऊपर या नीचे समूह में पाये जाते हैं । पादप अक्ष में तन्तुओं की उपस्थिति के अनुसार इनको दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है

(क) काष्ठीय तन्तु (Wood Fibres) : ऐसे दृढ़ोतक तन्तु, विशेषकर द्वितीयक जाइलम(Secondary xylem) की वाहिनियों के साथ पाये जाते हैं । इनकी द्वितीयक भित्ति लिग्नीकृत होती है। यह पर्याप्त लम्बे व संकरे होते है ।इनके सिर छेनी (Chisel) के समान व नुकीले होते है ।

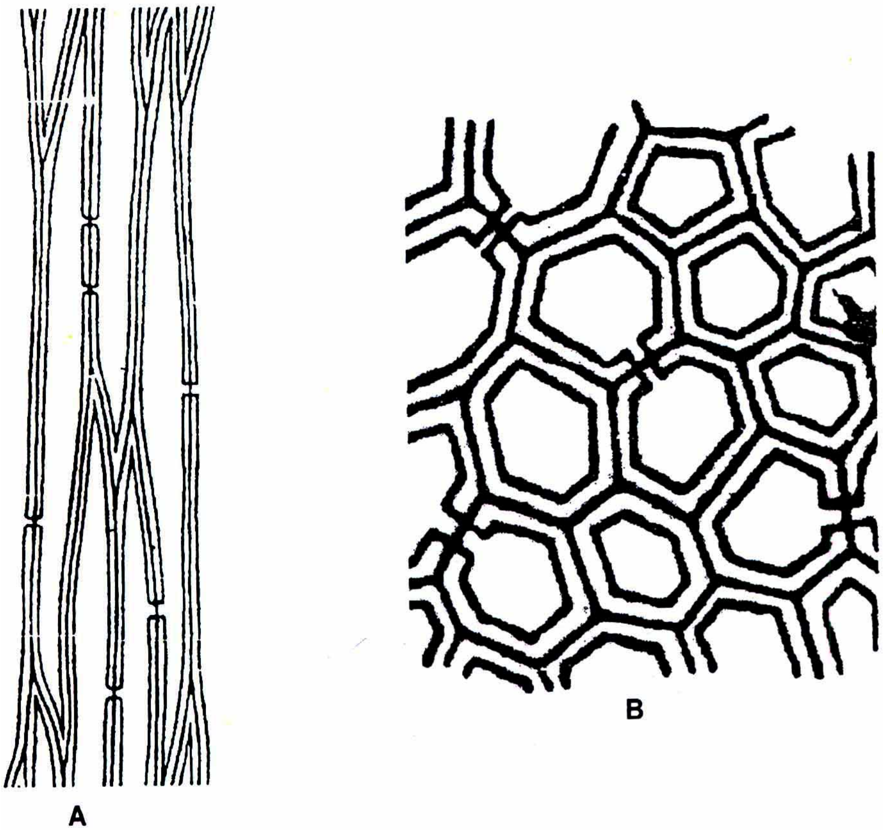

चित्र 2.3 : दृढ़ोतक तन्तु : A.L.S. में B.T.S. में

(ख) फ्लोयम रेशे (Phloem or bast fibres) : यह अनेक पौधों, जैसे सन व जूट में पाये जाते हैं । संवहनी ऊतकों के बाहर यह वृत्ताकार पट्टिकाओं में या फिर समूह में व्यवस्थित होते हैं । इनकी उत्पत्ति प्राथमिक फ्लोयम कोशिकाओं से होती है । इनको परिरम्भ तंतु (Pericyclic) भी कहते हैं । यह तंतु लम्बे अपेक्षाकृत कोमल और अधिक नुकीले सिरों के होने के कारण अपने नुकीले सिरों से संलग्न तंतुओं के बीच मजबूती से फँसे रहते हैं । इनको पृथक् करना अत्यन्त कठिन होता है तथा पूरी पट्टिका के तंतु केवल एक साथ समूह में पृथक

किये जा सकते हैं । इन तंतुओं का उपयोग रस्सी, बोरे, चटाइयाँ, सूतली आदि अनेक मानवोपयोगी एवं आर्थिक महत्व की वस्तुओं के बनाने में किया जाता है ।

कार्य (Functions) : दृढ़ोतकी तंतुओं का प्रमुख कार्य पौधों के विभिन्न अंगों को यांत्रिक दृढ़ता (Mechanical strength)प्रदान करने का होता है, जिससे पौधे दबाव व खिंचाव आदि को सहन कर सकते हैं ।

एकबीजपत्री पौधों में उपयोगी दृढ़ोतक तंतुओं को इन पौधों की पत्तियों से प्राप्त किया जाता है । इनकी लिग्नीकृत भित्ति अपेक्षाकृत अधिक मोटी होने से यह बास्ट तन्तुओं की तुलना में छोटे अधिक खुरदरे व कड़े होते हैं । इनको कठोर तंतु कहते हैं । इसके प्रमुख उदाहरणों में **मनीला हेम्प** (Musa textilis) तथा अगेव के नाम उल्लेखनीय हैं । इनका उपयोग मोटे रस्से चटाई व कागज के बनाने तथा वस्त्रोद्योग में किया जाता है ।

2. दृढ़ कोशिकायें (Sclerids)

इनको अष्ठिल कोशिकायें (Stone cells) या दृढ़क भी कहते हैं । ये कोशिकायें पौधों में सामान्य एवं व्यापक रूप से पाई जाती हैं । इनकी द्वितीयक भित्ति अत्यधिक मोटी एवं कोशिका गुहा संकरी व आयतन में बहु त कम होती है । नाशपाती के गूद्दे की समव्यासी अष्ठिल कोशिकाओं को समव्यासी दृढ़क (Brachysclerids), नारियल की कठोर अंत : फलभित्ति (Endocarp) की छड़ाकार या स्तम्भाकार कोशिकाओं को गुरुदृढ़क (Macrosclerids) कहते हैं । जबकि मटर की बाहय चोल में मिलने वाली दृढ़ कोशिकाओं को अस्थिदृढ़क (Osteosclerids) कहते हैं त था चाय की पत्तियों में उपस्थित ताराकार अष्ठिल कोशिकाओं ताराकृत दृढ़क (Asterosclerids) कहते हैं, वहीं दूसरी ओर जैतून (Oline) के पर्ण में मिलने वाली शाखित रोम के समान आकृति की दृढ़क कोशिका ओं को तन्तुमय दृढ़क (Filiform sclerids or Trichosclerids) कहते हैं (चित्र2.4 A-G)।

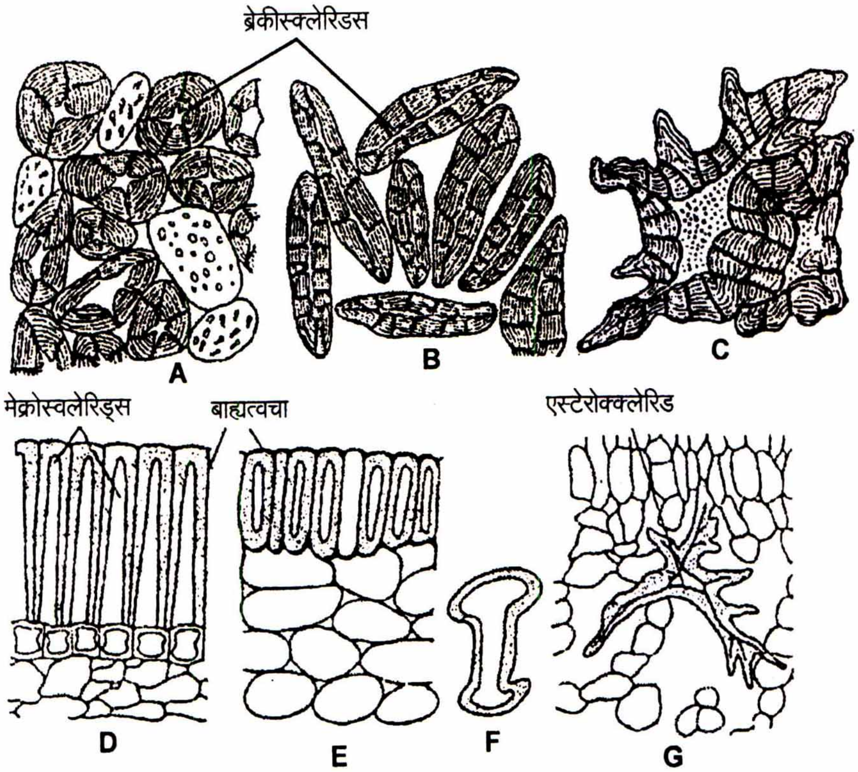

चित्र 2.4 : दृढ़कोशिकायें A. ब्रेकीस्क्लेरिडस - नाशपाती में B.ब्रेकीस्कलेरिड - नारियल में C.अनियमित स्कलेरिड्दस - स्यूगा में D.दीर्घ दृढ़ कोशिकायें - दाल के बीजावरण में E. दीर्घ दृढकोशिकायें - प्याज में F.आस्टियोस्थ्येरिदस - मटर के बीजावरण में G.तारक दृढ़ कोशिकायें - पर्ण में

पादप शरीर में वितरण (Distribution) : स्कलेरिड्स विभिन्न पौधों के शरीर में अलग - अलग हिस्सों में पाये जाते हैं । प्रायः सभी पादप भागों में, परन्तु विशेषकर पत्तियों में यह एकल या समूह के रूप में पाये जाते हैं । एकल स्कलेरिड को इडियोब्लास्ट (Idioblast) कहते हे । यह प्याज (Allium) की बाह्य त्वचा व होया (Hoya) के भरण ऊतक तथा मध्योतक में इधर-उधर बिखरे हुए या शिराओं के अंतिम सिरों पर पाये जाते हैं । अनेक अष्ठिल फलों की कठोर फल भित्ति तथा कठोर बीजों का बाह्य चोल स्कलेरिड कोशिकाओं की अनेक पर्तों का बना होता है । फलों के गूदे में उपस्थित एकल स्कलेरिड को ग्रिट कोशिकायें (Grit cells) भी कहते हैं, जैसे नाशपाती में ।

कार्य (Functions) : स्कलेरिड कोशिकायें पौधों को यांत्रिक दृढ़ता प्रदान करने वाले प्रमुख ऊतक हैं । यह वायु वेग त था गुरुत्वाकर्षण इत्यादि के बल के विरुद्ध प्रतिरोध उत्पन्न करते हैं । समव्यासीय स्कलेरिड कोशिकायें जो कि छाल में उपस्थित होती हैं, यह इसकी कठोरता में वृद्धि करती हैं । बीज एवं फलों के आवरणों में दृढ़ कोशिकायें (Sclerid cells) बहुतायत से पाई जाती हैं एवं आंतरिक संरचनाओं की रक्षा करती हैं ।

स्थूल कोणोतक व दृढ़ोतक में अन्तर

(Difference between Collenchyma and Sclerenchyam)

क्र.स.	स्थूल कोणोतक (Collenchyma)	दृढ़ोतक (Sclerenchyam)
1.	यह जीवित कोशिकायें होती हैं ।	यह मृत कोशिकायें होती हैं ।
2.	कोशिकाभित्ति पेक्टिन के द्वारा अनियमित रूप से स्थूलित होती है ।	कोशिका भित्ति लिग्निन द्वारा नियमित रूप से स्थूलित होती है ।
3.	कोशिका भित्ति में गर्त नहीं पाये जाते ।	सरल गर्त पाये जाते हैं ।
4.	कोशिकाओं की आकृति बहुभुजीय या अण्डाकार होती है ।	कोशिकाओं की आकृति गोल, अण्डाकार, लम्बवत् या तंतुरूपी हो सकती है ।
5.	अधिकांशतः यह द्विबीजपत्री पौधों के तने की अधोत्वचा (Hypodermis) में पाई जाती है ।	यह प्रायः' सभी प्रकार के पौधों के कठोर भागों में पाई जाती हैं ।
6.	कोशिकाओं के कोणों पर भित्ति स्थूलन के कारण यह पादप अंग की यांत्रिक दृढ़ता के साथ -साथ लचीलापन भी प्रदान करती हैं ।	चूँकि कोशिका भित्तियाँ समान रूप से चारों ओर लिग्निन द्वारा स्थूलित होती हैं, अत: ये पौधे को केवल यांत्रिक दृढ़ता एवं शक्ति प्रदान करती हैं । लचीलापन नहीं देती है ।

2.3 जटिल ऊतक (Complex Tissue)

इस तरह के ऊतक एक से अधिक प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बनते हैं, अतः विषमांगी (Heterogenous) प्रकृति के होते हैं, अर्थात् इनका संगठन संरचनात्मक व कार्यात्मक रूप से विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं के द्वारा स्थापित होता है । इस आधार पर कहा जा सकता है कि यह सरल ऊतकों से पूर्णतया भिन्न होते हैं, क्योंकि सरल ऊतक समांगी (Homogenous) या एक ही प्रकार की कोशिकाओं से बनते हैं, जबकि जटिल ऊतक विषमांगी (Heterogenous) प्रकृति के होते हैं, फिर भी इनकी घटक कोशिकाओं की उत्पत्ति एक समान होती है ।

संवहनी पौधों में दो प्रकार के जटिल ऊतक जाइलम व फ्लोयम पाये जाते हैं । इन दोनों को सम्मिलित रूप से संवहन ऊतक (Vascular tissue) भी कहते हैं, क्योंकि पौधों में जल एवं भोज्य पदार्थों का संवहन (Conduction) करते हैं तथा संवहन बण्डलों का निर्माण प्रायः संयुक्त रूप से मिलकर करते |

2.3.1 काष्ठ ऊतक या दारु ऊतक या जाइलम (Xylem or Hadrome)

जालइम शब्द का गठन सर्वप्रथम **नजेली** (Nageli 1858) द्वारा किया गया था । इस की उत्पत्ति शब्द **जाइलोस** (Xylose) से हुई है, जिसका अर्थ है Wood या काष्ठ । जाइलम एक स्थायी जटिल ऊतक है । इसकी कोशिकायें हालांकि उत्पत्ति में एक समान होती है, परन्तु ये

आकृति, परिमाप तथा अपने विशिष्ठ कार्यों में भिन्नता प्रदर्शित करती हैं । इसलिये इन अलग - अलग प्रकार की कोशिकाओं के समूह के जटिल ऊतक कहा गया है ।

संवहनी पौधों में जल एवं खनिज पदार्थों का जड़ में ऊपर संवहन की ओर संचालित (Upward movemt) करने के लिये जाइलम स्व विशिष्ट ऊतक है । इसके साथ ही यह पादप शरीर को यांत्रिक दृढ़ता एवं कठोरता भी प्रदान करता है ।

प्राथमिक व द्वितीयक जाइलम (Primary and secondary xylem)

प्राथमिक जाइलम पौधे के प्राथमिक शरीर के अक्ष अर्थात् जड़ व तने में उपस्थित प्रोकेम्बियम (Procambium) या प्राकरधा से विकसित होता है, जबकि द्वितीयक जाइलम (Secondary xylem) प्राथमिक पादप शरीर की वृद्धि हो जाने के बाद द्वितीयक वृद्धि के समय संवहन केम्बियम (Vascular Cambium) के सक्रिय हो जाने से निर्मित होता है तथा इसका प्रमुख कार्य अक्ष के आयतन या मोटाई में वृद्धि करने का होता है, अर्थात् यह मुख्यतः पार्श्व विभाज्योतकों (Lateral meristem) से विकसित होता है ।

प्राथमिक जाइलम व द्वितीयक जाइलम की तुलना

(Comparision between primary xylem and secondary xylem)

क्र. सं.	प्राथमिक जाइलम	द्वितीयक जाइलम
1.	इन कोशिकाओं की उत्पत्ति प्राक्एधा (Procambium) से होती है, जो कि शीर्षस्थ विभाज्योतक में अवस्थित होते हैं।	इनका निर्माण पार्श्व विभाज्योतक (Lateral meristem) से होती है,जिसकी उत्पत्ति द्वितीयक प्रकार की होती है ।
2.	इनमें प्रोटोजाइलम व मेटाजाइलम सुस्पष्ट होते हैं।	द्वितीयक जाइलम तत्वों में ऐसी सुस्पष्टता नहीं होती ।
3.	इनकी वाहिकायें एवं वाहिनिकायें (Tracheids) अपेक्षाकृत लम्बी व संकरी होती है ।	इनकी वाहिकायें एवं वाहिनिकायें दोनों ही परिमाप में छोटी व चौड़ी होती हैं ।
4.	इनकी वाहिकाओं में टाइलोसस (Tyloses) नहीं पाये जाते ।	यहाँ टाइलोसस पाये जाते हैं ।
5.	इनमें अन्त: काष्ठ व रस काष्ठ का (Heart wood and Sapwood) विभेदन नहीं होता ।	अन्त: काष्ठ व रसकाष्ठ का विभेदन होता है।
6.	वार्षिक वलय (Annul rings) नहीं बनती।	वार्षिक वलय बनती हैं ।
7.	जाइलम रेशे प्रचुर मात्रा में नहीं पाये जाते।	जाइलम रेशे (Xylem fiber) प्रचुर मात्रा में पाये जाते है।

पादप शरीर की प्रारम्भिक अवस्थाओं में संवहन बण्डलों में प्राथमिक जाइलम पाया जाता है । यह प्रोटोजाइलम व मेटाजाइलम में विभेदित दिखाई पड़ता है । प्रारम्भिक अवस्थाओं में इसमें अनेक संवहनी कोशिकायें एवं जाइलम मृदूतक (Xylem parenchyma) पाये जाते हैं, परन्तु जब द्वितीयक वृद्धि प्रारम्भ होती है तो प्राथमिक जाइलम धीरे-धीरे विघटित हो जाता है । प्रोटोजाइलम के बाद विकसित होने वाले मेटाजाइलम ऊतक में मृदूतक अपेक्षाकृत कम मात्रा में पाये जाते हैं तथा संवहनी कोशिकायें एवं जाइलम रेशे अधिक मात्रा में होते हैं । जब पौधे की द्वितीयक वृद्धि पूर्णतया सम्पन्न हो जाती है तो मेटाजाइलम भी निष्क्रिय हो जाता है । यहाँ ध्यान रखने योग्य तथ्य यह है कि मेटाजाइलम का अनुपात सदैव प्रोटाजाइलम की तुलना में बहुत अधिक होता है, परन्तु जिन पादप अंगों में (जैसे एकबीजपत्री तनों में) द्वितीयक वृद्धि नहीं होती, वहाँ मेटाजाइलम जीवन पर्यन्त सक्रिय रहता है । इसी प्रकार से सभी वर्गों के संवहनी पौधों की पत्तियों में भी मेटाजाइलम जीवन पर्यन्त सक्रिय रहता है ।

जाइलम की घटक कोशिकायें (Element of xylem)

मोटे तौर पर जाइलम में चार निम्न प्रकार की कोशिकायें पाई जाती हैं

1. **वाहिनिकायें** (Tracheids)
2. **वाहिकायें** (Vessels)
3. **जाइलम रेशे या जाइलम दृढ़ोतक** (Xylem fibers)
4. **जाइलम मृदूतक** (Xylem parenchyma)

जाइलम की घटक कोशिकाओं की संरचना एवं कार्यों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैं :

1. **वाहिनिकायें** (Tracheids) :

इनका निर्माण ऐधा कोशिकाओं (Cambium cells) के केन्द्रीय भाग में या अन्दर की ओर सक्रियता के कारण होता है । प्राथमिक जाइलम में इनकी उत्पत्ति प्राक्एधा (Procambium) से होती है, जबकि द्वितीयक जाइलम (Secondary xylem) में यह संवहन केम्बियम से बनती हैं, परन्तु प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के जाइलम में वाहिनिकाओं की संरचना एवं इनकी कार्य प्रणाली एक जैसी होती है (चित्र 2.5 A-E) ।

संरचना (Structure) : यह लम्बी सुदीर्घित संकरी तथा दोनों ओर से नुकीली कोशिकायें होती हैं तथा पूर्णत: मृत होती हैं, क्योंकि इनका जीवद्रव्य समाप्त हो जाता है । इन कोशिकाओं की कोशिका गुहा अपेक्षाकृत चौड़ी होती है तथा इनकी कोशिका भित्तियों पर लिग्निन का स्थूलन पाया जाता है । लिग्निन के स्थूलन के कारण इनकी कोशिका भित्तियों पर अनेक प्रकार की शिल्पाकृति (Sculptures) बन जाती हैं । अत: यहाँ लिग्निन का स्थूलन सर्पिलाकार, वलयाकार, कुण्डलिताकार जालिकावत् एवं गर्तीय (Spiral, Annular, Helical, Reticulate and Pitted) होता है । यह पौधे के लम्बवत् अक्ष के समानान्तर लम्बाई में व्यवस्थित होती है तथा इनकी भित्ति में उपस्थित गर्तों से होकर जल एवं खनिज पदार्थ पास वाली वाहिनिका में अभिगमन करते हैं । एक वाहिनिका का सिरा दूसरी वाहिनिका के सिरे को ढके हुए पाया जाता है।

वितरण (Distribution) : यह संवहनी क्रिप्टोगेम्स (Pteridophytes) एवं जिम्नोस्पर्म्स (Gymnosperms) के जाइलम ऊतक में प्रमुख रूप से पाई जाती हैं एवं यहाँ जल एवं खनिज पदार्थों के ऊपर की ओर अभिगमन का कार्य केवल वाहिनिकाओं के द्‌वारा ही सम्पन्न होता है । इसके विपरीत आवृतबीजी पौधों में वाहिनिकाओं के साथ वाहिकायें भी पाई जाती हैं ।

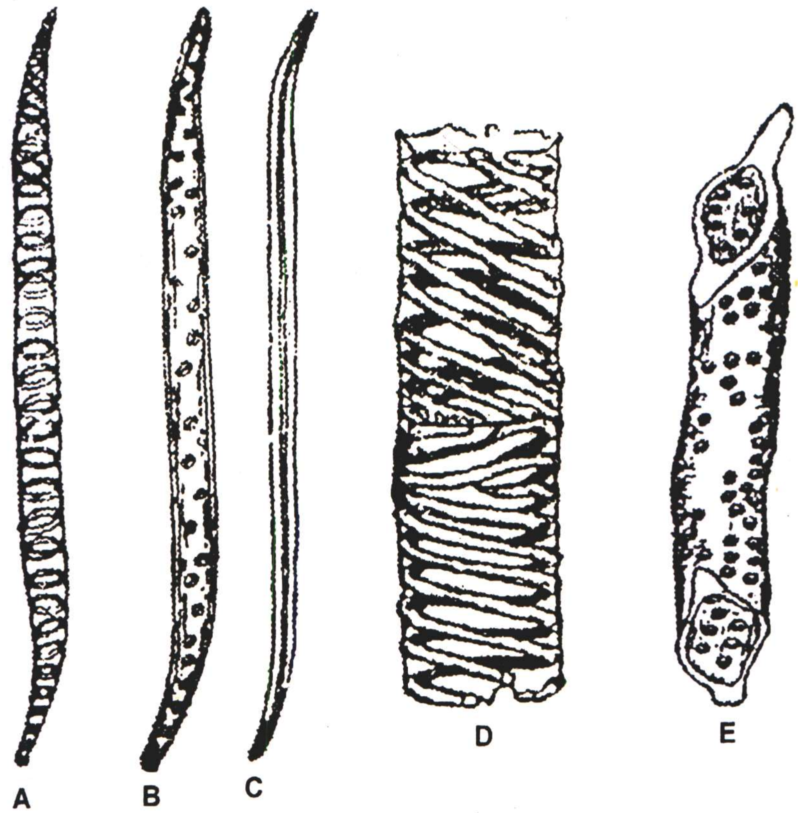

चित्र 2.5 : विभिन्न प्रकार की वाहिनिका : A.वलयाकार वाहिनिका B-C.वाहिनिका तन्तु D.सर्पिलाकार वाहिनिका E.गर्तमय वाहिनिका

कार्य (Function) : इनका प्रमुख कार्य जल एवं खनिज पदार्थों का संवहन, विलयन का संचालन (Translocation) तथा पौधों को यांत्रिक क्षमता प्रदान करना है ।

(2) वाहिकायें (Vessels or trachea)

यह लम्बी बेलनाकार तथा नलिका के समान संरचनायें होती हैं । इनकी उपस्थिति आवृतबीजी पौधों का एक प्रमुख लक्षण है । एक लम्बी नलिका या पाइप के समान वाहिका वस्तुतः अनेक वाहिनिकाओं से मिलकर जुड़ती है, क्योंकि एकल वाहिका, तुलनात्मक रूप से अपेक्षाकृत लम्बाई में कम व चौड़ाई में अधिक होती है । पौधों में वाहिनिकाओं की कोशिकायें एक के ऊपर एक पंक्तिबद्ध रूप से या रेखिय (Linear) क्रम में व्यवस्थित होती हैं तथा इनकी अनुप्रस्थ विभाजन भित्तियों के गल जाने से बेलनाकार संरचना, वाहिका (Vessel) बनती है (चित्र 2.6) ।

परिपक्व वाहिकायें, वाहिनिकाओं (Tracheids) के समान ही मृत होती हैं तथा भित्तियों पर लिग्निन का स्थूलन पाया जाता है । लिग्निन युक्त कोशिका -भित्तियों की भीतरी सतह पर

द्वितीयक स्थूलन की विभिन्न शिल्पाकृतियों(Sculptures) जैसे वलयाकार, सर्पिलाकार सोपानवत्, जालिकावत् एवं गर्तीय रूप में स्थूलन पदार्थों का जमाव होता है । सामान्यत: प्रत्येक वाहिका की लम्बाई कुछ सेंटीमीटर तक की हो सकती है, परन्तु विभिन्न प्रकार के आरोही पौधों में इनकी लम्बाई कुछ मीटर तक की पाई जाती है, अर्थात् आरोही पौधों के जाइलम में उपस्थित वाहिकायें बहुत लम्बी होती हैं ।

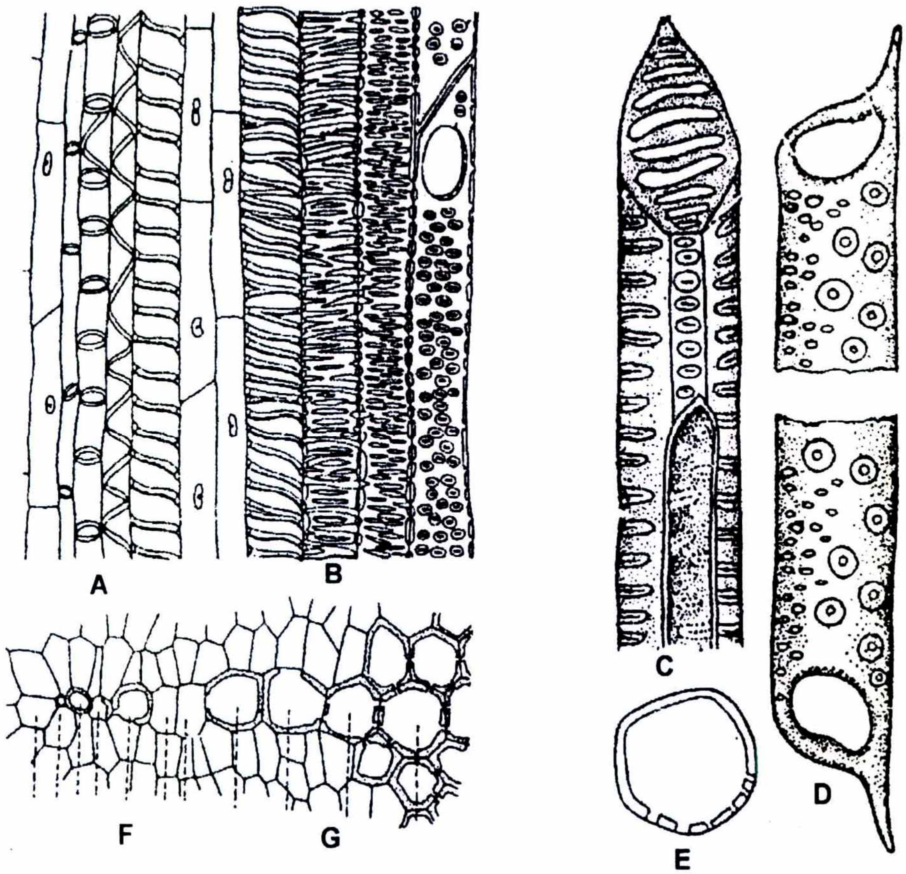

चित्र 2.6 : वाहिकाएँ : A.वलयाकार B.सीटीनुमा C-Fगर्तमय

F-G. प्रोटोजाइलम से मोटाजाइलम तक का अनुप्रस्थ काट

वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार विकास क्रम में वाहिकाओं का परिवर्धन वाहिनिकाओं से हुआ होगा। विकास की प्रक्रिया में वाहिनिकाओं (Tracheids) की लम्बाई तो घटती गई परन्तु इनका व्यास (Diameter) चौड़ा होता गया । अत : विकासीय दृष्टिकोण से लम्बी व संकरी वाहिका पुरातन अथवा आदिम (Primitive) होती है, जबकि छोटी लेकिन चौड़ी वाहिका प्रगत या आधुनिक (Advanced) मानी जाती है ।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वाहिनिकाओं अथवा वाहिकाओं की पहचान इनकी लम्बाई, इनके व्यास एवं अनुप्रस्थ भित्ति में छिद्रों के आधार पर होती है । आधारीय भाग पर बड़े छिद्रों के बन जाने से जल एवं घुलनशील खनिज पदार्थों का संवहन अपेक्षाकृत सुचारु रूप से होता है । वाहिकाओं (Vessel) के बीच गली हुई अनुप्रस्थ भित्ति

जिसमें एक या अधिक छिद्र होते हैं । उसको छिद्रित पट्टिका (Perforation plate) कहते हैं । यदि अनुप्रस्थ भित्ति में इसके व्यास के लगभग बराबर एक ही बड़ा छेद हो तो इसे **सरल छिद्रण पट्टिका** (Simple perforation plate) कहते हैं । लेकिन यदि अनुप्रस्थ भित्ति में एक से अधिक छिद्र हों तो इसे बहु छिद्रित पट्टिका (multiple perforation) कहते हैं ।

वाहिकाओं की उत्पत्ति (Origin) : वाहिनिकाओं के समान ही इनका निर्माण केम्बियम या एधा से होता है ।

कार्य (Function) : वाहिकायें जल एवं खनिज पदार्थों का ऊपर की ओर संचरण तथा पौधे को यांत्रिक दृढ़ता प्रदान करने का कार्य करती हैं । इन दोनों कार्यों के सम्पादन हेतु ये तुलनात्मक रूप से अधिक कार्यकुशलता दर्शाती हैं ।

वितरण (Distribution) : ये संवहनी पौधों में केवल आवृतबीजियों में ही पाई जाती हैं, लेकिन कुछ पुरातन (Primitive) आवृतबीजी पौधों, जैसे ड्रीमिस, टेट्रासेन्ड्रान एवं ट्रोकोडेन्ड्रान में वाहिकायें नहीं पाई जाती । इसके अतिरिक्त टेरिडोफाइट्स व जिम्नोस्पर्म्स में भी कुछ अपवादों को छोडकर वाहिकायें अनुपस्थित

वाहिनिकाओं एवं वाहिकाओं की तुलना

(Comparision between tracheids and vessels)

क्र.सं.	वाहिनिकायें (Tracheids)	वाहिकायें(Vessels)
1.	ये लम्बी संकरी एवं दोनों सिरों पर नुकीली होती हैं ।	ये अपेक्षाकृत छोटी, अधिक चौड़ी एवं दोनों सिरों पर छिद्र वाली होती हैं ।
2.	वाहिनिकायें पाइप के समान जुड़ी हुई नहीं होतीं ।	इसके विपरीत अधिकांश वाहिकायें अनुप्रस्थ छिद्रों के द्वारा जुड़कर एक लम्बे बेलनाकार पाइप के समान संरचना बनाती हैं ।
3.	इसमें केवल एक कोशिका निरूपित होती है ।	इसके विपरीत लम्बे बेलनाकार पाइप में अनेक वाहिकाओं (Vessel cells) की एक लम्बी श्रंखला प्रदर्शित होती है ।
4.	इनकी अनुप्रस्थ पटभित्ति (Septa) पूर्ण होती है, छिद्र अनुपस्थित होते हैं।	वाहिकाओं की अनुप्रस्थ भित्ति या झिल्ली छिद्रित (Perforated) रहती है ।
5.	वाहिनिकायें एक दूसरे की पार्श्व झिल्लियों पर उपस्थित गर्तों के द्वारा एक दूसरे के सम्पर्क में रहती हैं ।	ये अनुप्रस्थ छिद्रों के द्वारा एक दूसरे के सम्पर्क में रहती है ।

(3) जाइलम मृदूतक (Xylem parenchyma)

ये कोशिकायें जाइलम ऊतक में पाई जाती हैं तथा सामान्य मृदूतक की तुलना में अधिक भी हो सकती हैं, अर्थात् जाइलम ऊतक में इन जाइलम ऊतक कोशिकाओं का अनुपात होता है । ये प्रायः: जीवित कोशिकायें होती हैं तथा इनका प्रमुख कार्य खाद्य पदार्थों के संचय का होता है (चित्र 2.7) ।

वैसे जाइलम मृदूतक कोशिकाओं द्वारा जल के संवहन कार्य में भी सहायक भूमिका निभाती हैं । जाइलम में उपस्थित कोशिकाओं में केवल मृदूतक कोशिकायें (Xylem parenchyma) ही जीवित अवस्था में पाई जाती हैं । शेष तीनों प्रकार की कोशिकायें अर्थात् वाहिनिकायें, वाहिकायें एवं जाइलम स्क्लेरेनकाइमा मृत होती हैं । इन मृत कोशिकाओं में सुगंधित तेल तथा अन्य प्रकार के पदार्थ भी संचित रहते हैं ।

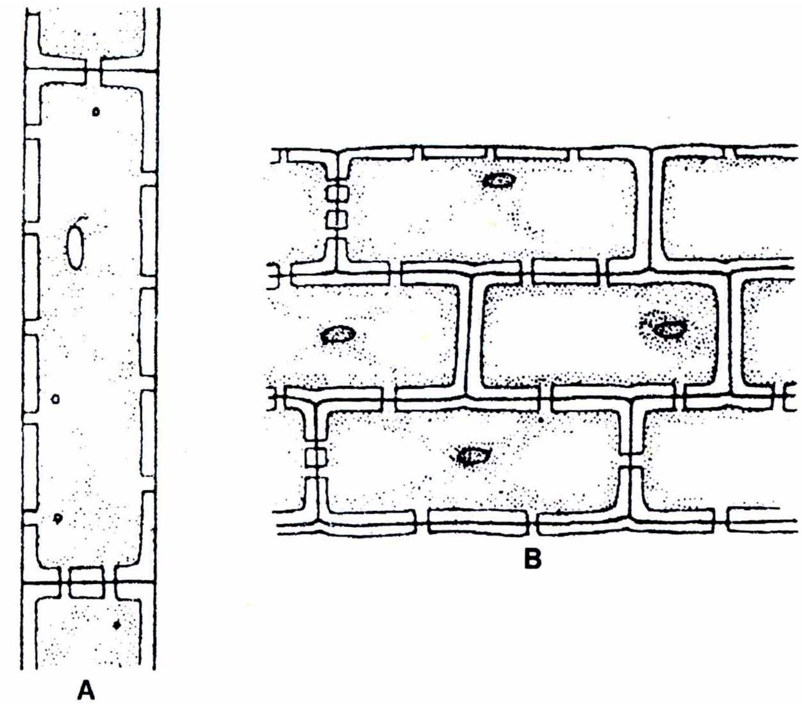

चित्र 2.7 : जाइलम मृदूतक A.अक्षीय मृदूतकीय कोशिकायें B.रश्मि मृदूतक कोशिकायें

(4) जाइलम रेशे (Xylem fibres)

जाइलम में पाई जाने वाली रेशे के समान दृढ़ोतकी कोशिकाओं को जाइलम रेशे कहा जाता है । ये लम्बी, पतली एवं निर्जीव संरचनाओं के रूप में पाई जाती हैं । इनके अंतिम सिरे नुकीले होते हैं । इनकी कोशिका भित्ति अत्यंत मोटी एवं लिग्निन युक्त होती है तथा इनमें कोशिका गुहा (Lumen) बहुत संकरी या लगभग समाप्त प्रायः होती है । कोशिका भित्ति में अनेक छोटे व सरल गर्त भी पाये जाते हैं । वनस्पतिशास्त्रियों के अनुसार जाइलम रेशों (Xylem fibres) की उत्पत्ति वाहिनिकाओं से भी हो सकती है । ऐसे तन्तुओं को फाइबर ट्रेकीड (Fibre tracheid) या वाहिनिका तंतु कहते हैं । काष्ठ तन्तुओं का प्रमुख कार्य पौधे को यांत्रिक दृढ़ता एवं बल प्रदान करने का होता है ।

2.3.2 पोषवाह या फ्लोयम (Phloem/Bast/Leptome)

फ्लोयम भी जाइलम के समान ही एक जटिल प्रकार का स्थायी ऊतक है । इसका प्रमुख कार्य ऊपर की ओर या उपरिमुखी (Upwards) एवं नीचे की ओर या अधोमुखी (downwards) कार्बनिक खाद्य पदार्थों के संवहन करने का होता है । जाइलम के समान ही फ्लोयम भी विभिन्न

प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बनता है तथा इन सभी कोशिकाओं की उत्पत्ति एक समान होती है, लेकिन इनकी संरचना एवं कार्य में पर्याप्त भिन्नता पाई जाती है । अत : यह कहा जा सकता है कि फ्लोयम भी एक विषमांगी (Heterogenous) ऊतक है ।

फ्लोयम की स्थिति (Position of Phloem)

यह पौधों में ठीक उन स्थानों पर उपलब्ध होता है, जहाँ जाइलम भी पाया जाता है, परन्तु जाइलम भीतर मज्जा (Pith) की ओर पाया जाता है, जबकि फ्लोयम बाहर परिरम्भ (Pericycle) की ओर पाया जाता है, परन्तु कुछ पौधों, जैसे कुकुरबिटेसी, एक्लेपियेडेसी एवं सोलेनेसी कुल के सदस्यों में जाइलम के अंदर व बाहर दोनों ओर ही फ्लोयम ऊतक पाया जाता है । इस प्रकार के संवहनी बण्डलों को जहाँ जाइलम के दोनों ओर फ्लोयम ऊतक उपस्थित हो उभयपोषवाही संवहन बंडल (Bicollateral vascular bundle) कहते हैं ।

फ्लोयम ऊतक की कोशिकायें पादप अंगों के लम्बवत् व समानांतर विन्यासित होती हैं ।

जाइलम के समान ही पौधों में प्राथमिक व द्वितीयक फ्लोयम भी पाया जाता है । प्राथमिक फ्लोयम प्राक्एधा (Pro-cambium) से बनता है, जबकि द्वितीयक फ्लोयम की उत्पत्ति द्वितीयक वृद्धि के दौरान संवहन एधा (Vascular cambium) से होती है ।

द्वितीयक वृद्धि से पूर्व जो प्राक्एधा से सबसे पहले बनता है, उसे प्रोटोफ्लोयम (Protophloem) कहते हैं, जबकि एधा की सक्रियता के बाद में बनने वाले फ्लोयम ऊतक को मेटाफ्लोयम (Metaphloem) कहते हैं ।

प्राथमिक फ्लोयम व द्वितीयक फ्लोयम की तुलना

(Comparision between primary phloem and secondary phloem)

क्र.सं.	**प्राथमिक फ्लोयम (Primary Phloem)**	**द्वितीयक फ्लोयम (Secondary Phloem)**
1.	इसकी उत्पत्ति प्राक्एधा (Procambium) से होती है ।	इसकी उत्पत्ति संवहन एधा (Vascular cambium) से होती है ।
2.	इसमें प्रोटोफ्लोयम व मेटाफ्लोयम का विभेदन पाया जाता है		इसमें ऐसा कोई विभेदन नहीं पाया जाता ।
3.	फ्लोयम रेशे बाहरी भाग में उपस्थित होते है		फ्लोयम रेशे भीतरी भाग में फ्लोयम मृदूतक के साथ उपस्थित होते हैं ।
4.	चालनी नलिकायें प्रायः लम्बी एवं संकरी गुहा वाली होती है ।	चालनी नलिकायें छोटी एवं चौड़ी गुहा वाली होती है ।
5.	फ्लोयम मृदूतक (Phloem parenchyma) अल्पविकसित होती है		फ्लोयम मृदूतक सुविकसित होता है ।
6.	चालनी छिद्रों के चारों ओर कैलोस (Callose) का प्रायः अभाव होता है		यहाँ प्रायः: चालनी छिद्रों के चारों ओर एक प्रकार का कार्बोहाइड्रेट कैलोस पाया जाता है|

फ्लोयम के तत्त्व (Elements of phloem)

फ्लोयम, जो कि जाइलम के समान ही जटिल ऊतक है, उसमें चार प्रकार के तत्व या कोशिकायें पाई जाती हैं:

(1) **चालनी कोशिकायें** (Sieve tubes)

(2) **सह कोशिकायें** (Companion cells)

(3) **फ्लोयम मृदूतक** (Phloem parenchyma)

(4) **फ्लोयम रेशे** (Bast fiber/Phloem fiber)

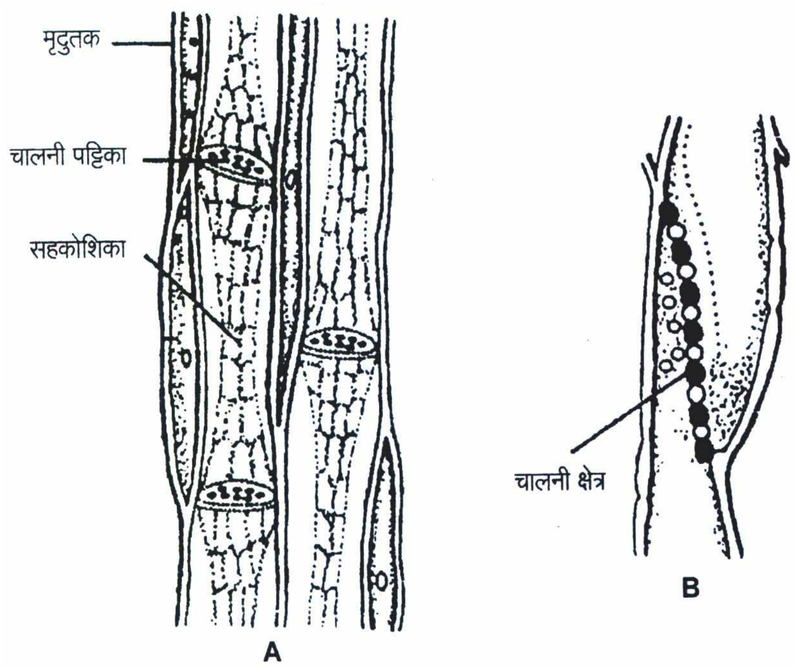

चित्र 2.8 : फ्लोयम के विभिन्न तत्व :

A. मृदूतक चालनी पट्टिका, सहकोशिका, B. चालनी पट्टिका,

1. चालनी नलिकायें (Sieve tubes)

ये पादप शरीर में घुलनशील खाद्य पदार्थो के ऊपर व नीचे की ओर संवहन के लिये उत्तरदायी, सर्वाधिक महत्वपूर्ण कोशिकायें हैं । प्रत्येक चालनी नलिका एक के ऊपर एक रैखिक क्रम में व्यवस्थित कोशिकाओं से बनती हैं । ये कोशिकायें लम्बी, अधिक व्यास वाली पतली भित्ति युक्त सजीव व कोमल होती हैं । इनकी अनुप्रस्थ भित्ति में अनेक छोटे छिद्र होते हैं, जिनकी वजह से ये भित्तियाँ चालनी के समान दिखाई पड़ती हैं तथा इसी कारण इन अनुप्रस्थ भित्तियों को चालनी पट्टिकायें (Sieve plates) कहते हैं । **परिपक्व चालनी नलिका की कोशिका में केन्द्रक नहीं पाया जाता** । इनके मध्य भाग में एक बड़ी रिक्तिका तथा रिक्तिका के चारों ओर से घेरे हुए परिधीय कोशिका द्रव्य होता है । एक कोशिका में उपस्थित कोशिका द्रव्य, दूसरी कोशिका से कोशिका द्रव्यीय सूत्रों के द्वारा जुड़ा होता है । यह कोशिकाद्रव्यी सूत्र (Plasmodesmata) चालनी पट्टिका के छिद्रों से दूसरी कोशिका में पहुँचते हैं तथा उसके कोशिका द्रव्य से संबंध

स्थापित कर लेते हैं । घुलनशील खाद्य पदार्थों का संवहन इन प्लाज्मोडेस्मेटा (Plasmodesmata) या कोशिका द्रव्यी सूत्रों के द्वारा ही सम्भव होता है |

चालनी पट्टिका से सम्बन्धित एक कार्बोहाइड्रेट यौगिक **कैलोस** (Callose) भी चालनी कोशिकाओं में पाया जाता है । कैलोस को संश्लेषित एवं विघटित करने वाले एन्जाइम इन कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य में ही उपस्थित होते हैं त था यह प्लाज्मोडेस्मेटा के माध्यम से क्रियाशील होते हैं । कैलोस यौगिक प्लाज्मोडेस्मेटा के चारों ओर एक आवरण या आच्छद (Sheeth) बनाता है ।

वृद्ध एवं जीर्ण होती हुई चालनी नलिका में कैलोस आच्छद क्रमशः मोटा होता जाता है और अन्त में चालनी छिद्रों को अवरुद्ध कर देता है, जिससे चालनी नलिका निष्क्रिय हो जाती है । सर्दियों में कैलोस की पर्त मोटी हो जाती है, परन्तु बसंत एवं ग्रीष्म ऋतु में विघटनकारी एन्जाइम की सक्रियता के कारण यह पतली या विलुप्त हो जाती है, जिससे चालनी नलिका वापस सक्रिय हो जाती है ।

अनावृतबीजियों (Gymnosperms) में चालनी नलिकाओं के स्थान पर चालनी कोशिकायें (Sieve cells) होती हैं, जो अपेक्षाकृत लम्बी व तिरछी अनुप्रस्थ भित्तियों वाली होती हैं । भित्ति पर अनेक छिद्र समूह होते हैं, जिनको चालनी क्षेत्र (Sieve areas) कहते हैं, ऐसे क्षेत्र पार्श्वीय भित्तियों पर भी पाये जाते हैं ।

2. सह कोशिकायें (Companion cells)

यह विशेष प्रकार की मृदूतक कोशिकायें होती हैं, जो कि चालनी नलिका कोशिकाओं से संलग्न रहती हैं । चालनी नलिका एवं सहकोशिकाओ के बीच उपस्थिति भित्ति में अनेक छोटे -छोटे छिद्र होते हैं, जिनमें से होकर गुजरने वाले कोशिका द्रव्यीय तंतु (Plasmodesmata) इन दोनों कोशिकाओं के बीच आपसी संबंध स्थापित करने का कार्य करते हैं । सहकोशिकाओं में कोशिकाद्रव्य अपेक्षाकृत गाढ़ा एवं छोटी -छोटी रिक्तिकाओं से युक्त होता है । इनका केन्द्रक सुस्पष्ट होता है । एक चालनी नलिका से संलग्न एक लम्बी या एक से अधिक सहकोशिकायें नलिका की पार्श्वीय भित्ति से सटी हुई होती हैं । चालनी तत्वों तथा सहकोशिकाओं की उत्पत्ति एक ही प्रकार की विभाज्योतकी कोशिकाओं से होती है ।

जिम्नोस्पर्म्स एवं टेरिडोफाइटा के सदस्यों के संवहन ऊतक में सहकोशिकायें अनुपस्थित होती हैं । ये केवल आवृतबीजी पौधों में ही पाई जाती हैं ।

कार्य (Function) : सहकोशिकाओं का प्रमुख कार्य घुलनशील कार्बनिक पदार्थों के संवहन में सहायता करना तथा चालनी नलिका में दाब प्रवणता को बनाये रखने का होता हैं अप्रत्यक्ष रूप से इनका कार्य चालनी तत्वों की उपापचयिक गतिविधियों को सही दिशा प्रदान करने का भी होता है।

3. फ्लोयम मृदूतक (Phloem parenchyma)

फ्लोयम ऊतक में इधर उधर बिखरी हुई या सुव्यवस्थित रूप से उपस्थित मृदूतक कोशिकाओं को फ्लोयम मृदूतक कहा जाता है । यह पतली भित्ति वाली, सजीव, लम्बवत् या गोलाकार कोशिकायें होती हैं । प्रायः: यह सामान्य मृदूतक कोशिकाओं के समान ही होती हैं, अधिकतर यह चालनी तत्वों के बीच-बीच में पाई जाती हैं ।

कार्य (Function) : फ्लोयम मृदूतक कोशिकाओं का प्रमुख कार्य विभिन्न प्रकार के क्रिस्टलों, म्यूसिलेज पदार्थों एवं टेनिन पदार्थों के संचय का होता है । यही नहीं विपरीत परिस्थितियों में या पादप अंग की प्रसुप्ति अवस्था में इन मृदूतक कोशिकाओं में स्टार्च एवं वसा जैसे खाद्य पदार्थों का संचय भी किया जाता है । यह खाद्य संवहन में भी सहायक होता है ।

4. फ्लोयम रेशे (Bast fibres/Phloem fibres)

यह फ्लोयम में पाई जाने वाली लम्बी दृढ़ोतक कोशिकायें (Sclerenchymatous cells) होती हैं । इनकी कोशिका भित्ति लिग्निन युक्त होती हैं । इनकी भित्तियों में अनेक सरल गर्त पाये जाते हैं । तन्तु या रेशे जैसी ये निर्जीव कोशिकायें मुक्त सिरों वाली या विभाजन भित्ति रहित होती हैं ।

कार्य (Functions) : इनका प्रमुख कार्य पौधों अथवा पादप अग को यांत्रिक शक्ति प्रदान करने का होता है । विभिन्न पौधों में पाये जाने वाले फ्लोयम रेशे आर्थिक रूप से अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं । इनसे विभिन्न प्रकार के सामान चटाई, रस्सियाँ रख मोटे वस्त्र बनाये जाते हैं । जूट, अलसी, सन् इत्यादि पौधों के काम में आने वाले रेशे वस्तुतः फ्लोयम से ही प्राप्त होते हैं ।

वाहिका व चालनी नलिका में अंतर (Difference between vessels & seive tubes)

वाहिका (Vessels)	चालनी नलिका (Seive tubes)
1. इनके सिरे खुले हुए होते हैं ।	चालनी नलिकाओं के अंतिम सिरों पर चालनी पीट्टकायें पाई जाती हैं ।
2. यह चौड़ी होती हैं ।	यह सकड़ी होती हैं ।
3. इनकी भित्ति मोटी, दृढ़ एवं लिग्निन युक्त होती है ।	इनकी भित्ति पतली, लचीली एवं सेल्यूलोज की बनी होती है ।
4. वाहिकाओं की भित्ति पर विभिन्न प्रकार की स्थूलन आकृतियाँ पाई जाती हैं ।	इनकी भित्तियों पर विशिष्ट स्थूलन आकृतियों का अभाव होता है ।
5. परिपक्व होने पर यह मृत किन्तु कार्यशील होती है ।	परिपक्व अवस्था में यह जीवित एवं निरन्तर कार्यशील होती हैं ।
6. इनके कोशिकाद्रव्य की परासरण सान्द्रता अपेक्षाकृत कम होती है ।	इनके कोशिकाद्रव्य में अधिक सान्द्रता पाई जाती हैं।
7. इनमें स्फीतदाब (Turgor pressure) नहीं पाया जाता ।	इनमें उच्च स्फीति दाब पाया जाता है ।
8. कटने पर यह मुक्त सिरे से जल अथवा वायु का अवशोषण करती है ।	यह कटने पर कोशिका रस का स्राव करती है ।
9. यह विलेय तथा विलायक दोनों का ही संवहन करती है ।	यह केवल विलेय पदार्थों का संवहन करती हैं ।
10. यह विलेय एवं विलायक दोनों के प्रति पारगम्य होती हैं ।	यह अर्द्धपारगम्य (Semi permeable) होती हैं ।

स्थानान्तरण कोशिकायें (Transfer cells) :

कुछ समय पूर्व तक यह समझा जाता था कि पौधों में थोड़ी दूरी के लिये जल एवं खनिज पदार्थों का संवहन भी जाइलम व फ्लोयम ऊतक के द्वारा ही सम्पन्न होता है । पूर्व अवधारणा के अनुसार विशेष प्रकार की सहकोशिकायें थोड़ी दूर के लिए खाद्य पदार्थों के संवहन हेतु उत्तरदायी होती थी । **गार्निग एवं पेट** ने अपने अध्ययन द्वारा यह सिद्ध किया कि उच्चवर्गीय पौधों में विशेष रूप से एवं सभी संवहनी पौधों को सामान्य रूप से खाद्य पदार्थों के थोड़ी दूरी पर संवहन के कार्य को कुछ विशिष्ट खाद्य कोशिकाओं के द्वारा संचालित किया जाता है, जिनको स्थानान्तरण कोशिकायें (Transfer cells) कहते हैं ।

इन कोशिकाओं की भित्ति अन्दर की ओर वलयित होती हैं तथा प्रत्येक पादप प्रजाति में यह अलग-अलग आकृति की होती हैं । यह भी देखने में आया है कि एक ही पादप प्रजाति में अलग-अलग स्थानों पर इनकी आकृति में भिन्नता पाई जाती है, लेकिन स भी स्थानान्तरण कोशिकाओं (Transfer cells) में दो प्रमुख गुण समान होते हैं । एक तो इनकी कोशिका भित्ति अन्तर्वलित होती हैं तथा दूसरा इनमें अलिग्निनीकृत द्वितीयक भित्ति का स्थूलन पाया जाता है । प्लाज्मा झिल्ली भी अन्तर्वलित होती है जिसकी वजह से इन कोशिकाओं की अवशोषण क्षमता बढ़ जाती है । स्थानान्तरण कोशिकाओं (Transfer cells) का जीवद्रव्य सघन होता है, इसमें विभिन्न कोशिका उपांग जैसे माइट्रोकोन्ड्रिया, राइबोसोम, डिक्टियोसोम तथा अंत:प्रद्रव्यी जालिका आदि बहुलता से पाए जाते हैं । यह स्थानान्तरण कोशिकायें पौधों के लगभग सभी भागों में जैसे जाइलम, फ्लोयम पत्तियों की शिराओं के अंतिम छोर पर, भ्रूण में, जल रन्ध्रों में (Hydathod) कीटभक्षी पौधों के स्रावी रोम में तथा कस्क्युटा (Cuscuta) के चूषकांगों में पाई जाती हैं । जड़ों में इनकी संख्या कम होती हैं । पौधों में द्वितीयक वृद्धि (Secondary growth) के दौरान इन कोशिकाओं का विघटन प्रारम्भ हो जाता है ।

स्थानान्तरण कोशिकाओं की स्थिति के आधार पर यह माना जाता है कि यह आन्तरिक वातावरण से खनिज पदार्थों (भीतर की ओर या भीतर से) का अवशोषण करके बाहय वातावरण में देने का कार्य करती हैं, अर्थात् उनका प्रमुख कार्य खनिज पदार्थों के आदान-प्रदान का होता है ।

2.4 विशिष्ट ऊतक/स्रावी ऊतक (Special Tissue/Secretory Tissue)

वे कोशिकायें, जो मकरन्द रेजिन, गोंद, म्यूसिलेज एवं रबड़क्षीर (latex) को स्रावित करती हैं । उनको ऊतकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है । यह विशेष प्रकार के ऊतक होते हैं, जिनकी कोशिकायें पौधों में सम्पन्न होने वाली उपापचयिक गतिविधियों के परिणामस्वरूप रूपान्तरित हो जाती हैं । स्थिति के आधार पर पौधों में स्रावी ऊतक दो प्रकार के होते हैं :

1. **बाहय स्रावी ऊतक** (External secertory tissue)
2. **आन्तरिक स्रावी ऊतक** (Internal secretory tissue)

2.4.1 बाहृय स्रावी ऊतक (External secertory tissue)

इनकी उत्पत्ति बाहृयत्वचा या अधोत्वचा (Hpodernis) की सबसे ऊपरी पर्तों की कोशिकाओं द्वारा होती है। यह निम्न प्रकार के होते हैं :

(1) **स्रावी रोम (Secretory hairs) :** ये सरल प्रकार की स्रावी संरचनायें होती हैं । इनमें वृन्त तथा शीर्ष भाग होता है, जो स्राव का कार्य करता है । इन कोशिकाओं में माइट्रोकॉन्डया, अन्त: प्रद्रव्यी जालिका तथा डिक्टियोसोम बहुतायत से पाये जाते हैं तथा इनके द्वारा स्रावित पदार्थ बाहृय पर्त में क्यूटीकल के भीतर जमा हो जाता है।

पिन्गीक्यूला (Pinguicula) नामक कीटभक्षी पौधों में दो प्रकार के रोम पाये जाते हैं- सवृन्त एवं अवृन्त । अवृन्त रोमों में ऊपरी सिरा 2-8 कोशिकाओं का बना होता है, जो प्रोटियोलिटिक एन्जाइम (Proteolytic enzymes) का स्राव करता है । सवृन्त रोम तीन प्रकार की कोशिकाओं का बना होता है :

(i) आधारीय भाग संचयी कोशिका (Reservoir cell)

(ii) मध्य स्तम्भी कोशिका (Columnar cell) तथा

(iii) ऊपरी सिरा (Head), जो श्लेष्मीय पदार्थों का स्राव करता है एवं 2-8 कोशिकाओं का बना होता है |

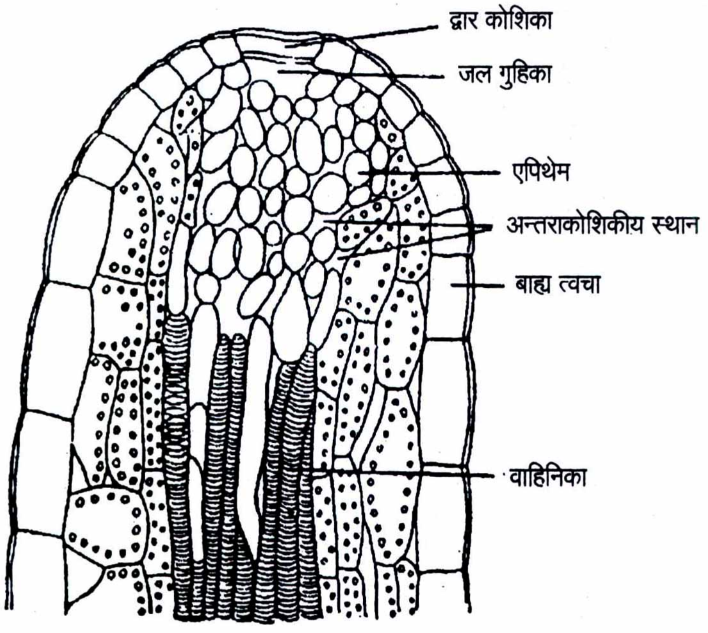

चित्र 2.9 : प्राइमूला जाति के जलरन्ध्र (L.S. में)

म्यूसीलेज (Mucilage) पदार्थ कीड़ों को पकड़ने में सहायक होते हैं । कीट के पकड़ लिये जाने के बाद अवृन्त रोम एसिड फास्फेटेस (acid phosphatase) एस्टेरेज तथा राइबोन्यूक्लिएज का उत्पादन करते हैं, जिससे कीट का पाचन होता है।

(2) **जलरन्ध (Hydathodes) :** आर्द्र क्षेत्रों में पाये जाने वाले पौधों, विशेषकर शाकीय पौधों की पत्तियों के किनारों पर विशेष प्रकार के जल स्राव करने वाले रन्ध्र पाये जाते हैं । इनको

जलरन्ध्र (Hydathodes) कहते हैं । इनके जल का स्राव बूँदों के रूप में होता है । इस प्रक्रिया को बिन्दुस्रावण (Guttation) कहते हैं । बिन्दुस्राव की प्रक्रिया के अन्तर्गत अधिक मूल दाब सक्रिय अवशोषण तथा आर्द्र स्थिति में निम्न वाष्पोत्सर्जन के कारण जल द्रव्यीय बूँद के रूप में पत्तियों के किनारों पर निकलता है तथा सवेरे के समय यह ओस की बूंदों के जैसा प्रतीत होता है।

(3) **ग्रंथियाँ (Glands)** : यह ग्रंथिल ऊतक अनेक पौधों, जैसे साइट्रस (Citrus, नींबू) की पत्तियों तथा फल की बाह्यभित्ति, यूकेलिप्टस की छाल द्वितीयक फ्लोयम व मज्जा में पाये जाते हैं तथा पौधों में कोशिकाओं के छोटे समूह के रूप में व्यवस्थित होते हैं । इनका जीवद्रव्य सघन होता है । ग्रंथिल ऊतकों की उत्पत्ति दो प्रकार की होती हैं:

(a) **वियुक्तिजनन** (Schizogenosis) : यहाँ कोशिकाओं की मध्य भित्तियों के दूर हो जाने से एक बड़ी कोशिका बन जाती है तथा इनके बाहरी क्षेत्र में सम्पूर्ण कोशिकायें पाई जाती हैं । जैसे पाइनस(Pinus) व यूकेलिप्टस(Eucalyptus) की राल ग्रंथियाँ (Resin ducts) ।

(b) **लायजात** (Lysogenosis) : यहाँ सम्पूर्ण कोशिकायें टूट जाती हैं एवं विघटित हो जाती हैं तथा एक बड़ी कोशिका बनती है । इनके बाहरी क्षेत्र में विघटित कोशिकायें दिखाई देती हैं, जैसे साइट्रस(Citrus,नीबू) ।

(c) **मकरन्द ग्रंथियाँ** (Nectariferous glands) : प्रायः यह पुष्पों पर पाई जाती हैं । इनका निर्माण विशेष प्रकार की मकरन्द कोशिकाओं से होती है । इनमें माइट्रोकॉन्ड्रिया व अन्तः प्रद्रव्यी जालिका बहुतायत से मिलते हैं । मकरन्द के मुख्य घटक फ्रक्टोस, सुक्रोस एवं अमीनो अम्ल होते हैं ।

2.4.2 आन्तरिक स्रावी ऊतक (Internal Secretory Tissues) :

यह एक अथवा बहुकोशिकीय संरचनायें होती हैं । इनका स्रावी पदार्थ कोशिका भित्ति के टूटने पर बाहर आ जाता है । यह संरचनायें मुख्यतः दो प्रकार की होती हैं -

(1) **स्रावी कोशिकायें (Secretory Cells) :** यह अपने आसपास के शेष मृदूतकी कोशिकाओं से आकार, संरचना एवं कार्य में अलग होती हैं । अत: इनको विचित्र कोशिका (Idioblast) कहते हैं । यह विभिन्न प्रकार के तेलों, गोंद, रेसिन, श्लेष्मा, क्रिस्टल एवं टेनिन आदि के स्राव में सहायक होती हैं । पादप शरीर में यह कहीं पर भी उपस्थित हो सकती हैं, जैसे फाइकस (Ficus) या बढ़ की पत्ती में उपस्थित कैल्शियम कार्बोनेट के क्रिस्टल, जिनकों सिस्टोलिथ कोशिकायें (Cystolith) भी कहते हैं तथा मूँगफली के बीजपत्रों व अरण्डी के भ्रूणपोष (Endospern) में पाई जाने वाली तेल कोशिकाएँ ।

(2) **क्षीर उत्पादक कोशिकायें या संरचनायें (Laticiferous cells) :** यह विशेष प्रकार की मृदूतकी कोशिकायें होती हैं, जिनमें श्यान (Viscous) द्रव या रबड़क्षीर स्रावित होता है । आरजीमोन (Argemone) में यह पीले रंग का तथा युफोर्बिया (euphorbia) में सफेद रंग का होता है । पपीते के लेटेक्स में पेपेन नामक एन्जाइम मौजूद होता है, जबकि फाइकस

(Fiuse) व हीविया (Hevea) में रबर पाया जाता है । रबड़क्षीरी (Laticiferous) संरचनायें दो प्रकार की ज़ो सकती हैं:

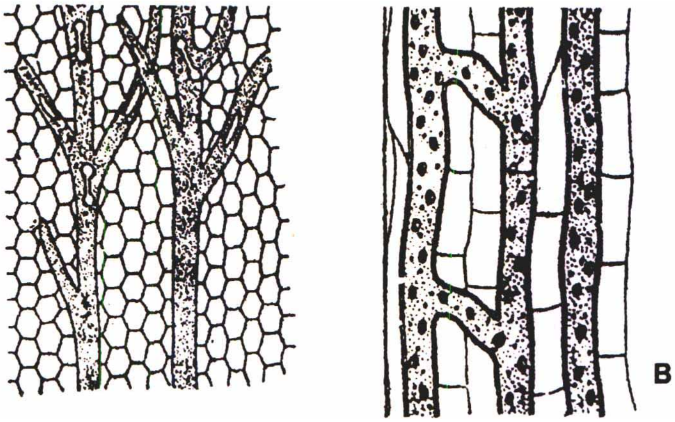

चित्र 2.10 : रबरक्षीरी कोशिकायें - (L.S. में) : A.असंधित B. संधित

(a) **संधित (Articulated laticifers) :** इनमें अनेक कोशिकायें सिरों पर जुड़कर एक लम्बी संरचना बना लेती हैं । कुल एस्टरेसी के सदस्यों में यह शाखित होती हैं, जबकि सेपोटेसी के सदस्यों में यह अशाखित होती हैं ।

(b) **असंधित (Non-articulated laticifers) :** लम्बी कोशिकायें होती हैं, जो स्वतंत्र रहती हैं व दूसरी कोशिका से नहीं जुड़ती हैं, जैसे एपोसाइनेसी कुल के सदस्यों में ।

बोध प्रश्न :

1. सरल ऊतक की कोशिकायें होती हैं :
   (अ) एक प्रकार की
   (ब) दो प्रकार की
   (स) तीन प्रकार की
   (द) बहुसंख्य प्रकार की
2. स्थूल कोणोतक है :
   (अ) जटिल ऊतक
   (ब) सरल ऊतक
   (स) स्रावी ऊतक
   (द) संवहन ऊतक
3. मृदूतक कोशिकाओं की कोशिका भित्ति होती है:
   (अ) लिग्निन की
   (ब) सुबेरिन की
   (स) सेल्यूलोज की
   (द) उपरोक्त में से कोई नहीं
4. मकरन्द ग्रंथियाँ उदाहरण हैं :
   (अ) सरल ऊतक का

(ब) जटिल ऊतक का
(स) संवहन ऊतक का
(द) स्रावी ऊतक का

5. फाइबर ट्रेकीड की उत्पत्ति होती है :
(अ) वाहिनिका से
(ब) वाहिका से
(स) मृदूतक से
(द) स्थूल कोणोतक से

2.5 सारांश (Summary)

(1) एक या एक से अधिक प्रकार की पास -पास व्यवस्थित कोशिकाओं का समूह, जो संयुक्त रूप से मिलकर किसी कार्य को सम्पन्न करता है, उसे ऊतक कहते हैं ।

(2) कोशिकाओं की प्रकृति के आधार पर इनको विभाज्योतक एवं स्थायी ऊतक में विभेदित किया जा सकता है ।

(3) कोशिकाओं की समानता या भिन्नता के आधार पर इनको सरल ऊतक एवं जटिल ऊतक दो वर्गों में बाँटा जा सकता है ।

(4) सरल ऊतक में मृदूतक, स्थूल कोणोतक एवं दृढ़ोतक आते हैं, जबकि जटिल ऊतक में जाइलम व फ्लोयम को रखा गया है ।

(5) मृदूतक कोशिकाओं की भित्ति पतली एवं मृदु होती हैं तथा ये जीवित कोशिकायें होती हैं । ये हरित मृदूतक के रूप में प्रकाश संश्लेषण का भी कार्य करती हैं ।

(6) स्थूल कोणोतक कोशिकायें भी जीवित होती तथा इनके कोनों पर स्थूलन पदार्थ का निक्षेप पाया जाता है। ये शाखाओं को लचीलापन, किन्तु मजबूती भी प्रदान करती हैं ।

(7) दृढ़ोतक मृत कोशिकायें होती हैं । इनकी कोशिका भित्ति मोटी एवं लिग्निन युक्त होती हैं, अत: ये कठोर प्रकृति की होती हैं तथा मजबूती व दृढ़ता प्रदान करने का कार्य करती हैं ।

(8) जटिल ऊतकों में जाइलम जल व खनिज पदार्थों का जड़ से ऊपर संवहन का कार्य करता है।

(9) जाइलम ऊतक, वाहिनिका, वाहिका, जाइलम मृदूतक एवं जाइलम दृढ़ोतक से मिलकर निर्मित होता है ।

(10) फ्लोयम ऊतक संगठन में, चालनी तत्व, सहकोशिकायें, फ्लोयम मृदूतक एवं फ्लोयम रेशे या दृढ़ोतक कोशिकायें पाई जाती हैं ।

(11) फ्लोयम ऊतक का प्रमुख कार्य कार्बनिक खाद्य पदार्थों का पादप शरीर में संवहन करने का होता है ।

(12) पादप शरीर में थोड़ी दूरी के लिये जल रख खनिज पदार्थों का अभिगमन विशेष प्रकार की कोशिकाओं के द्वारा होता है, जिनको स्थानांतरण कोशिका (Transfer cells) कहते हैं ।

(13) स्थायी ऊतकों के अन्तर्गत एक विशेष प्रकार के ऊतकों को और सम्मिलित किया गया है, इनको स्रावी ऊतक (Secertory tissue) कहते हैं ।

(14) इन स्रावी ऊतकों की कोशिकायें, विभिन्न पौधों के पादप भागों में, विभिन्न प्रकार पदार्थों, जैसे मकरन्द, रेजिन, गोंद, तेल, म्यूसीलोज एवं रबड़क्षीर (Latex) का जहाँ जैसी आवश्यकता हो स्राव करने का कार्य करती हैं ।

(15) स्रावी ऊतकों को दो श्रेणियों में बाँटा गया है, (1) बाह्‌य स्रावी ऊतक (2) आंतरिक स्रावी ऊतक ।

(16) बाह्‌य स्रावी ऊतकों में विभिन्न प्रकार के रोम, जलरन्ध्र एवं मकरंद ग्रंथियों इत्यादि को सम्मिलित किया गया है ।

(17) क्षीर उत्पादक कोशिकाओं या संरचनाओं को आंतरिक स्रावी संरचनाओं के अन्तर्गत रखा गया है ।

2.6 शब्दावली (Terminology)

(1) **प्राक्एधा (Procambium) :** वे विभाज्योतकी, आघ (Primordia) कोशिकायें, जो आगे चलकर एधा या केम्बियम कोशिकाओं के रूप में विभेदित होती हैं ।

(2) **कैलोस (Callose) :** यह एक विशेष प्रकार का कार्बोहाइड्रेट होता है, जो फ्लोयम के चालनी तत्वों में छिद्रों के आसपास जमाव के रूप में होता हैं ।

(3) **वाहिनिका तन्तु (Fibre tracheid) :** वे जाइलम रेशे जिनकी उत्पत्ति वाहिनिकाओं से होती है । ये तन्तुवत् होते हैं, जबकि सामान्य जाइलम रेशों का निर्माण केम्बियम रूपी विभाज्योतकी कोशिकाओं से होता है ।

2.7 सन्दर्भ ग्रंथ (References)

(1) पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन : त्रिवेदी, शर्मा एवं शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर ।

(2) Pradeep Botany Vol. IV : Dr. H.N. Srivastava; Pradeep Publication, Jalandhar.

(3) A text book of Botany : Angiosperms-Singh, Pandey and jain; Rastogi Publications, Meerut.

(4) Plant Anatomy ed. 1998 : P.C. Vashishtha; Pradeep Publications Jalandhar.

2.8 बोध प्रश्नोत्तर (Answers)

1. (अ)	2. (ब)	3. (स)	4. (द)	5. (अ)

2.9 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

लघुत्तरात्मक प्रश्न :

(1) मृदूतक का वर्णन कीजिये ।

(2) स्थूल कोणोतक का विवरण दीजिये ।

(3) बाह्‌य स्रावी संरचनाओं का विवरण दीजिये ।

(4) आंतरिक स्रावी संरचनाओं की विवेचना कीजिये ।

निबन्धात्मक प्रश्न :

(1) सरल ऊतकों का सचित्र वर्णन कीजिये ।

(2) जटिल ऊतकों का सचित्र विवरण दीजिये ।

(3) पौधों में पाये जाने वाले विशिष्ट या स्रावी ऊतकों का वर्णन कीजिये ।

इकाई 3 : ऊतक तंत्र (Tissue Systems)

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 त्वचीय ऊतक तंत्र
 3.2.1 बाह्य त्वचा की उत्पत्ति एवं संरचना
 3.2.2 बाह्य त्वचा के कार्य
3.3 भरण ऊतक तंत्र
 3.3.1 बाह्य रम्भीय भरण ऊतक तंत्र
 3.3.2 अंतरारम्भीय भरण ऊतक तंत्र
3.4 संवहन ऊतक तंत्र
 3.4.1 प्राथमिक संवहन बंडल
 3.4.2 एधा
 3.4.3 विभिन्न प्रकार के संवहन बंडल
3.5 सारांश
3.6 शब्दावली
3.7 संदर्भ ग्रंथ
3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.9 अभ्यासार्थ प्रश्नोत्तर

3.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य

1. ऊतक तंत्र का गठन, इसका अर्थ एवं इसकी संरचना की जानकारी प्राप्त करना
2. पादप शरीर में कार्य एवं इसकी स्थिति के प्रकार पर विभिन्न प्रकार के ऊतक तंत्रों की जानकारी प्राप्त करना
3. ऊतक तंत्र का पादप शरीर में महत्व
4. एधा की संरचना व कार्य की जानकारी प्राप्त करना ।

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

संवहनी पौधों में विभिन्न जैविक क्रियाओं को पूरा करने के लिये विभिन्न प्रकार के ऊतक मिलकर एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं । ऊतकों की यह इकाई ऊतक तंत्र को निरूपित करती है ।

उपरोक्त तथ्य के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि **"ऊतकों का वह समूह, जो किसी कार्य को सम्पादित करने के लिये एक साथ मिलकर एक इकाई के रूप में कार्य करता है, उसे ऊतक तंत्र (Tissue system) कहते हैं ।"**

किसी विशेष ऊतक तंत्र में उपस्थित सभी ऊतक एवं उनकी कोशिकायें आकृति एवं संरचना में अलग-अलग हो सकती हैं, परन्तु इनकी उत्पत्ति एवं कार्य प्रायः: एक जैसे ही होते हैं ।

सेक्स (Sachs,1875) ने पादप शरीर में इनकी स्थिति के आधार पर पौधों में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के ऊतक तंत्रों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है । यह है : -

(I) **त्वचीय ऊतक तंत्र** (Dermal tissue system)

(II) **भरण ऊतक तंत्र** (Ground tissue system)

(III)**संवहन ऊतक तंत्र** (Vascular tissue system)

वहीं दूसरी ओर **हैबरलेण्ड्ट (Haberlandt 1914)** ने कार्य के आधार पर ऊतक तंत्रों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया है

1. अवशोषण ऊतक तंत्र (Absorbing tissue system)
2. संचयी ऊतक तंत्र (Storage tissue system)
3. यांत्रिक ऊतक तंत्र (Mechanical tissue system)

लेकिन विषय के क्रमबद्ध एवं समग्र अध्ययन के लिये **सेक्स** द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण के आधार पर ही ऊतक तंत्र के बारे में जानकारी प्राप्त करना उचित होगा ।

3.2 त्वचीय ऊतक तंत्र (Dermal Tissue System)

यह पादप शरीर के आवरण की कोशिकाओं के द्वारा प्राथमिक अवस्था में निर्मित ऊतक तंत्र होता है । यहाँ बाहय त्वचा या अधिचर्म (Epidermis) प्रमुख ऊतक के रूप में निरूपित होती है । जड़ों की बाहयत्वचा को मूलीय त्वचा (Epiblema or Rhizodermis) कहते हैं । विभिन्न पौधों एवं इनके भागों की बाहयत्वचा में अलग-अलग आकृति एवं संरचना की कोशिकायें उपस्थित होती हैं । यह सभी कोशिकायें मिलकर एक इकाई के रूप में पौधे को सुरक्षा प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करती हैं ।

3.2.1 बाहयत्वचा की उत्पत्ति एवं संरचना (Origin and structure of epidermis)

इसकी उत्पत्ति शीर्षस्थ विभाज्योतकी कोशिकाओं की सबसे बाहरी पर्त से होती है, इस विभाज्योतक को त्वचाजन (Dermatogen) कहा जाता है ।

अधिकांश पौधों में बाहयत्वचा की मोटाई केवल एक पंक्तिक (Uniseriate) होती है तथा यह पौधे के किसी- किसी हिस्से पर स्थायी रूप से भी उपस्थित हो सकती है, परन्तु कुछ पौधों, जैसे लाल कनेर (Nerium) एवं बरगद (Ficus) में बाहय त्वचा की मोटाई एक से अधिक पंक्तियों की होती है । यहाँ तक कि कुछ पौधों, जैसे पेपरोमिया (Peperomia) में तो बाहयत्वचा की मोटाई 15 कोशिका पंक्तियों तक की पाई गई है ।

उपरोक्त प्रकार की बहुपंक्तिक (Multiseriate) बाहय त्वचा का निर्माण करने के लिये इन पौधों की पत्तियों में उपस्थित डर्मेटोजन विभाज्योतकी कोशिकायें परिनत रूप से विभाजित हो सकती हैं अथवा यह विभाज्योतकी प्रारम्भिक कोशिकायें शुरु से ही अनेक पंक्तियों में निर्मित होती हैं ।

आर्किड की अधिपादपीय जड़ों में उपस्थित बहुस्तरीय बाह्यत्क्चा में विशेष प्रकार की कोशिकायें, जिनकों **वेलामेन** (Velamen) कहते हैं, पाई जाती हैं । यह आर्द्रताग्राही कोशिकायें होती हैं, जो कि वातावरण में उपस्थित जल वाष्प (Water vapour) एवं नमी का अवशोषण पौधों की जलापूर्ति के लिये करती हैं । अधिकांश वृक्षों एवं काष्ठीय बहुवर्षीय छोटी व बड़ी झाड़ियों (Undershrubs and shrubs) में बाह्यत्वचा कोशिका का स्थान एक दूसरे प्रकार की रक्षक पर्त (Protective layer) जिसे परित्वक (Periderm) कहते हैं, द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है।

बाह्यत्वचा पर्त की कोशिकायें पौधों के कुछ हिस्सों, जैसे पत्तियाँ, दलपत्र (Petals), अण्डाशय एवं बीजाण्डों में समव्यासी (Isodiamatric) हो सकती है, जबकि तने, पर्णवृन्त व एकबीजपत्री (Monocot) पौधों की पत्तियों में यह आयताकार एवं कुछ चपटी (Flattend) होती हैं, जिनकी चौड़ाई अधिक एवं ऊँचाई कम होती हैं । बाह्यत्वचा कोशिकाओं के जीवद्रव्य में विभिन्न प्रकार के कोशिका उपांग तथा इनकी उपापचयी प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप निर्मित पदार्थ भी उपस्थित रहते हैं । यहाँ तक कि अनेक उदाहरणों में इन कोशिकाओं में क्यूसिलेज, टेनिन, रेजिन व इडियोब्लास्ट इत्यादि (Mucilage, Tannin, Resin & Idioblast etc.) भी पाए जाते हैं । कुछ पादप कुलों, जैसे ग्रेमिनी के सदस्यों की बाह्यत्वचा ऊतक में सिलिका तथा कार्क कोशिकायें (जो सुबेरिन युक्त होती हैं) भी पाई जाती हैं । इसी कुल के कुछ अन्य सदस्यों जैसे पोआ (Poa) एवं ट्रिटिकम (Triticum) की पत्तियों में उपस्थित बाह्यत्वचा पर्त में पाई जाने वाली कुछ कोशिकायें आसपास की अन्य कोशिकाओं की तुलना में बड़ी साइज की होती हैं । इन्हें प्रेरक कोशिकायें (Motor cells or Bulliform cells) कहते हैं । यह कोशिकायें अधिक तेज धूप व शुष्कता में पत्तियों के अन्तर्वलन (Rolling) में सहायक होती हैं । इससे पत्ती में नली जैसे दिखती हैं तथा तेज धूप में इस अनुकूलन के कारण अधिक मात्रा में वाष्पोत्सर्जन नहीं हो पाता । बुलीफार्म कोशिकायें (Bulliform cells) प्रायः: आर्द्रताग्राही होती हैं ।

बाह्यत्वचा की कोशिकायें मृदूतकी होती हैं । इनके बीच अन्तर्कोशिकीय स्थान नहीं पाए जाते । यही नहीं, इन कोशिकाओं में प्रायः अवर्णीलवक (Leucoplast) पाए जाते हैं । वैसे कुछ अपवादों में बाह्यत्वचा कोशिकाओं में हरितलवक एवं स्टार्चकण भी पाए जाते हैं ।

वे बाह्यत्वचा कोशिकायें, जो पुष्पों के दलपत्रों में तथा कुछ पौधों जैसे गाजर की जड़ों में मिलती हैं, उनमें कोशिका के रस में घुले हुए वर्णक जैसे एन्थोसाइनिन, केरोटिन व जैथोंफिल (Anthocyanin, Carotein & Xanthophyll) इत्यादि भी पाए जाते हैं, जिसके कारण यह संरचनाएँ रंगीन दिखाई देती हैं । ट्रेडिस्केंशिया (Tradescantia) के पुष्प दलपत्र में उपस्थित एन्थोसाइनिन (Anthocyanin) वर्णक, इसका उपयुक्त उदाहरण है ।

प्रायः: बाह्यत्वचा की कोशिकाओं की सतह में एक रूपता पाई जाती है, परन्तु पर्णरंध्रों (Stomata) की उपस्थिति के कारण तथा तने व शाखाओं में छाल व फलों में वातरन्ध्रों (Lenticels) की उपस्थिति के कारण इनमें व्यवधान आ जाता है । इसके अतिरिक्त बाह्यत्वचा के ऊपर क्यूटिकल जैसे पदार्थों का निक्षेपण भी पाया जाता है तथा रोम (Hairs) जैसे उपांग भी

उपस्थित होते हैं । उपर्युक्त विवरण से प्रतीत होता है कि बाह्यत्वचा (Epidermis) में निम्न तीन प्रकार की प्रमुख संरचनायें पाई जाती है |

1. उपचर्म (Cuticle)
2. रन्ध्र (Stomata)
3. रोम (Hairs/Trichome)

(1) **उपचर्म (Cuticle) :** सामान्य परिस्थितियों में उगने वाले संवहनी पौधों में बाह्यत्वचा के ऊपर एक सुरक्षात्मक पर्त पाई जाती है, इसे उपचर्म (Cuticle) कहते हैं । मरुद्भिदीय पौधों में उपचर्म विशेष रूप से उपस्थित होती हैं तथा यह एक मोटी पर्त के रूप में पाई जाती हैं । इसमें क्यूटिन, मोम, गोंद, रेजिन तथा सिलिका अथवा लिग्निन का निक्षेपण पाया जाता है । विभिन्न पौधों के भूमिगत भागों तथा जलीय पौधों मैं सम्पूर्ण पादप शरीर पर क्यूटिकल की पर्त या तो बहुत पतली अथवा पूर्णतः अनुपस्थित हो सकती हैं ।

(2) **रन्ध्र (Stomata) :** यह बाह्यत्वचा पर्त की विशेष इकाई होते हैं । दो विशेष प्रकार की रक्षक या द्वार कोशिकाओं (Guard cells) से घिरे हुए छिद्र को रन्ध्र (Stomata) कहते हैं । द्विबीजपत्री पौधों में रक्षक कोशिकायें वृक्काकार तथा एक बीजपत्री पौधों में यह डम्बलाकार हो सकती है । रक्षक कोशिकाओं में हरितलवक भी पाये जाते हैं तथा इनकी आंतरिक भित्ति मोटी एवं बाहरी भित्ति पतली होती है । रक्षक कोशिकायें (Guard cells) विशेष प्रकार की सहायक कोशिकाओं से घिरी होती हैं । जलीय पौधों व अन्य पौधों के भूमिगत भागों व जड़ों में रन्ध्र नहीं पाये जाते हैं ।

पौधों के वायवीय हरे एवं कोमल भागों पर रन्ध्र सामान्य रूप से मिलते हैं । परन्तु पत्तियों पर आवश्यक रूप से पाये जोत हैं । वहाँ इनकी संख्या बहुत अधिक होती हैं । इसके अतिरिक्त पुष्प के दलपत्रों (Petals) पुंकेसरों की परागकोष भित्ति एवं अण्डाशय भित्ति में भी रन्ध्र देखे गये हैं, परन्तु यह कार्यक्षम नहीं होते ।

मरुद्भिदीय पौधों में रन्ध्र धँसे हुए (Sunken) पाये जाते हैं । रन्ध्रों की उपस्थिति के आधार पर विभिन्न संवहनी पौधों की पत्तियों को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है । यह हैं :

1. **ऊपरिरन्ध्री** (Epistomal) : यहाँ पर्णरन्ध्र केवल पत्तियों की ऊपरी सतह पर पाये जाते हैं, जैसे कमल (Nymphea) में ।
2. **अधोरन्ध्री** (Hypostomal) : यहाँ पर्णरन्ध्र पत्तियों की केवल निचली सतह पर पाये जाते हैं, जैसे कनेर (Nerium) में।
3. **उभयरन्ध्री** (Amphistomal) : इन पौधों में पत्तियों की दोनों सतहों पर रन्ध्र उपस्थित होते हैं, जैसे गेहूँ एवं मक्का।
4. **अरन्ध्री** (Astomal or Astrisic) : इन पौधों में रन्ध्र नहीं पाये जाते । उदाहरण अधिकांश जलीय पौधों एवं कुछ पराश्रयी पौधे, जैसे मोनोट्रोपा (Monotropa) । इसके अतिरिक्त कुछ जलीय पौधों जैसे पोटामोजीटोन (Potamogeton) में पत्तियों की सतहों पर अवशिष्ठ (Vestigial) या अकार्यक्षम रन्ध्र उपस्थित होते हैं ।

(3) **रोम (Hairs) :** विभिन्न पौधों में त्वचा की सतह पर स भी पादप भागों में यह रोमिल उपांग (Appendages) पाये जाते हैं । वातावरण के अनुसार रोमों की आकृति एवं संरचना में बहु त विभिन्नतायें पाई जाती हैं । यह एककोशीय या बहु कोशीय, सजीव अथवा निर्जीव, अल्पजीवी या दीर्घजीवी हो सकते हैं । विभिन्न पौधों में रोम की आकृति एवं संरचना तथा इनकी अन्य विविधतायें वर्गीकरण के लिये एक आवश्यक लक्षण माना जाता है ।

अपहाफ (Uphoff 1962) के अनुसार विभिन्न संवहनी पौधों में मुख्यतः दो प्रकार के रोम पाये जाते हैं । यह हैं : -

1. अग्रन्थिल रोम (Non-glandular hairs)
2. ग्रन्थिल रोम (Glandular hairs)

1. **अग्रन्थिल रोम (Non-glandular hairs) :** इन रोमों के आधारीय भागों में स्रावी ग्रन्थियाँ अनुपस्थित होती हैं । कोशिकाओं की संख्या एवं आकृति के अनुसार इनको निम्न उप श्रेणियों में विभेदित किया जा सकता है

(अ) एक कोशीय रोम : ये रोमिल संरचनायें कुछ बाह्यत्वचा कोशिका ओं के सुदीर्घित हो जाने से विकसित होती हैं तथा केवल एक कोशिका के द्वारा बनती हैं, उदाहरण - लेटाना (lantana) ।

(ब) द्विकोशीय रोम : यहाँ रोम का निर्माण करने वाली कोशिकायें विभाजित हो जाती हैं । इस प्रकार रोम में दो कोशिकायें होती हैं । उदाहरण - चौलाई (Amaranthus) ।

शाखाओं की उत्पत्ति के कारण यह द्विकोशीय रोम भी दो प्रकार के हो सकते हैं :

(i) **अशाखित रोम :** इन रोमिल संरचनाओं में शाखायें उत्पन्न नहीं होतीं, उदाहरण टमाटर (Lycopersicon) तथा सूरजमुखी (Helianthus) ।

(ii) **शाखित रोम :** यहाँ रोम की कोशिकायें शाखित हो जाती हैं । यह रोम भी अनेक प्रकार के होते हैं, जैसे गुच्छित रोम (कपास में), वृक्षाभ रोम (प्लेन्टेनस में), ताराकृत रोम (साइडा में) इत्यादि पाये जाते हैं ।

(2) **ग्रन्थिल रोम (Glandular hairs) :** कोशिकाओं की संख्या के आधार पर इनको भी दो उपश्रेणियों में रखा जा सकता है

(अ) एककोशीय रोम : इनमें केवल एक ही कोशिका पाई जाती है, जो स्राव (Seceretion) का कार्य करती है । पुष्प में के वर्तिकाग्र पर उभार के रूप में यह रोम पाये जाते हैं ।

(ब) बहु कोशीय रोम : यह भी दो प्रकार के होते हैं :

(i) **पाचक ग्रन्थियाँ :** यह कीटभक्षी पौधों, जैसे ड्रोसेरा व नेपेन्थीस इत्यादि में पाई जाती हैं। इनका कार्य पाचक रसों के स्राव का होता है ।

(ii) **छत्रिकाकार रोम :** इनके ऊपरी सिरे पर एक छतरी जैसी फैली हु ई संरचना होती है, जो कि बाह्यत्वचा पर्त में एक पाद (Foot) के माध्यम से धँसी हु ई होती है, उदाहरण बिच्छू बूटी (Urtica) ।

3.2.2 बाहय त्वचा के कार्य (Functions of epidermis)

(1) यह सुरक्षात्मक पर्त के रूप में कार्य करते हुए पौधे के कोमल आतंरिक भागों को तेज प्रकाश, आघात, जीवाणुओं कवकों एवं कीटों के आक्रमण से बचाती है ।

(2) बाहय त्वचा पर उपस्थित मोम, तेलीय पदार्थ स्रवण एवं क्यूटीकल तथा गुच्छ रोम वाष्पोत्सर्जन की दर को नियंत्रित करने का कार्य भी करते हैं ।

(3) चूँकि बाहयत्वचा क्षेत्र में रन्ध्र भी पाये जाते हैं, अत: वाष्पोत्सर्जन एवं गैसीय विनिमय का कार्य इसी पर्त के द्वारा होता है ।

(4) कुछ पौधों की बाहय त्वचा में पाये जाने वाले दंश रोम, इन पौधों को शाकाहारी जन्तुओं से सुरक्षा प्रदान करते हैं ।

(5) एकबीजपत्री पौधों और घासों (Grasses) में उपस्थित बाहयत्वचा की बुलीफार्म कोशिकायें (Bulliform cells), जल संग्रहण के साथ-साथ परिपक्व पत्ती के जलाभाव (Water scarity) की अवस्था में भीतर की ओर मुड़ने में सहायक होती हैं ।

3.3 भरण ऊतक तंत्र (Ground Tissue System)

बाहय त्वचा के ठीक नीचे पाई जाने वाली कोशिकायें, जो वल्कुट, अन्त: त्वचा, परिरम्भ, मज्जा रश्मियों व मज्जा (Cortex, Endodermis, Pericycle, Medullary reys and Pith) का निर्माण करती हैं । उनको भरण ऊतक तंत्र में सम्मिलित किया जा सकता है । अनेक संवहनी पौधों में वल्कुट में पाई जाने वाली एक से अधिक प्रकार की कोशिकाओं के आधार पर इसे अधोत्वचा (Hypodermis) एवं सामान्य वल्कुट (Cortex) में भी विभेदित किया जा सकता है । भरण ऊतक तंत्र (Ground tissue system) में सम्मिलित विभिन्न प्रकार के ऊतकों की स्थिति के आधार पर इसे मोटे तौर पर दो वर्गों में बाँटा जा सकता है :

3.3.1 बाहय रम्भीय भरण ऊतक तंत्र (Extrastelar ground tissue system)

इसमें पाये जाने वाले प्रमुख ऊतक इस प्रकार से हैं :

(1) **वल्कुट (Cortex) :** यह ऊतक प्राय:: सभी प्रकार के संवहनी पौधों में बाहयत्वचा पर्त के ठीक नीचे पाया जाता है । द्विबीजपत्री पौधों के तनों में एक बीजपत्री एवं द्विबीजपत्री जड़ों में तथा अनेक विकसित टेरिडोफाइट्स एवं जिम्नोस्पर्म्स में यह बाहयत्वचा के नीचे से प्रारम्भ होकर परिरम्भ तक पाया जाता है, परन्तु कुछ पौधों में वल्कुट दो या तीन हिस्सों में बँटा होता है । इसमें विभिन्न प्रकार की कोशिकायें उपस्थित हो सकती हैं । परिणामस्वरूप यह अग्रलिखित भागों में विभेदित हो जाता है :

   (i) **बाहय वल्कुट/अधोत्वचा** (Hypodermis) : इस भाग की कोशिकायें बाहयत्वचा के ठीक नीचे पाई जाती हैं। प्राय:: यह स्थूल कोणोतक (Collenchyma) द्वारा निर्मित होता है। परन्तु कुछ पौधों, जैसे इक्वीसीटम (Equisetum) एवं केस्यूराइना (Casuarina) में अधोत्वचा दृढ़ोतकी (Sclerenchymatous) प्रकार की पाई जाती है । इसे बाहय वल्कुट भी कहते हैं।

इसका प्रमुख कार्य पादप अक्ष को यांत्रिक शक्ति प्रदान करने का होता है । अनेक पौधों में अधोत्वचा मृदूतकीय भी हो सकती है, जिसकी कोशिकाओं में हरित लवक प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं तथा प्रमुखतः यह प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती है । प्रायः: जिन पौधों में अधोत्वचा में हरित ऊतक (Chlorenchyma) पाया जाता है वहाँ तने की बाह्य रूपरेखा में उभार एवं गर्त उपस्थित होते हैं, जैसे कुकरबिटा (Cucurbita) सूरजमुखी एवं इक्वीसीटम (Equisetum) में ।

(ii) **आन्तरिक वल्कुट/ सामान्य वल्कुट** (Inner cortex) : यह ऊतक अधोत्वचा के ठीक नीचे पाया जाता है तथा सामान्यतः मृदूतकी कोशिकाओं के द्वारा निर्मित होता है । परन्तु विभिन्न पौधों में परिस्थिति के अनुसार यह विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं द्वारा निर्मित हो सकता है । आन्तरिक वल्कुट की मृदूतकी कोशिकाओं के बीच अन्तरकोशिकीय वायु स्थान उपस्थित अथवा अनुपस्थित होते हैं ।

(2) **अन्तः त्वचा (Endodermis)** : वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार यह पर्त वल्कुट की अंतिम सीमा का निर्धारण करती हैं । यह एक संचयी क्षेत्र है, परन्तु जब इसकी कोशिकाओं में हरितलवक उपस्थित होता है, तो यह प्रकाश संश्लेषण का कार्य भी करती है । पौधों की अन्तत्वचा में बड़े वायुस्थान (Air spaces) पाये जाते हैं, जो पौधों की उत्प्लावन क्षमता को नियमित रूप में बढ़ाने का काम करते हैं । इन्हीं कोशिका ओं के बीच सक्लेरिड्स, (Sclerids) टेनिन (Tannin), मण्ड तथा विभिन्न प्रकार के क्रिस्टल एवं तेलीय ग्रंथियाँ, जो कि लयजात (Lysogenous) एवं वियुक्तिजात (Schizogenous) दोनों प्रक्रियाओं के द्वारा निर्मित हो सकती हैं, वे पाई जाती हैं । जड़ के वलकुट में बाहरी पर्त की कुछ कोशिकायें यांत्रिक दृढ़ता प्रदान करने वाली होती हैं । इन मोटी भित्ति वाली कोशिकाओं की पर्त को बाह्यमूलत्वचा (Exodermis) कहते हैं ।

अन्तः त्वचा पर्त की कोशिकायें प्रायः: ढोलकाकार होती हैं तथा सामान्यतः एक पंक्ति में व्यवस्थित होती हैं । **केस्पेरी** (R. Caspery, 1973) ने इन कोशिकाओं में अरीय एवं अनुप्रस्थ भित्तियों पर लिग्निन व सुबेरिन (Lignin & Suberin) का स्थूलन पाया था । अतः इसकी स्थूलन युक्त कोशिका भित्तियों को कैस्पेरी पट्टिकायें (Casperian strips) भी कहते हैं ।

कुछ पौधों में अन्तः त्वचा में स्टार्च कण भी पाये जाते हैं । ऐसी अवस्था में अन्त त्वचा को मण्ड-आच्छद (Starch sheath) भी कहते हैं ।

अधिकांश संवहनी पौधों की जड़ों में अन्तः त्वचा की कुछ कोशिकाओं में विशेषकर उन कोशिकाओं में जो प्रोटोलाइम के सम्मुख होती हैं, उनमें केस्पेरिमन पट्टिकायें नहीं पाई जाती । यह पतली झिल्ली वाली होती है तथा इन्हें मार्ग कोशिकायें (Passage cells) कहते हैं । इनका प्रमुख कार्य पौधों में जल एवं खनिज पदार्थ के संवहन को संचालित करने का होता है ।

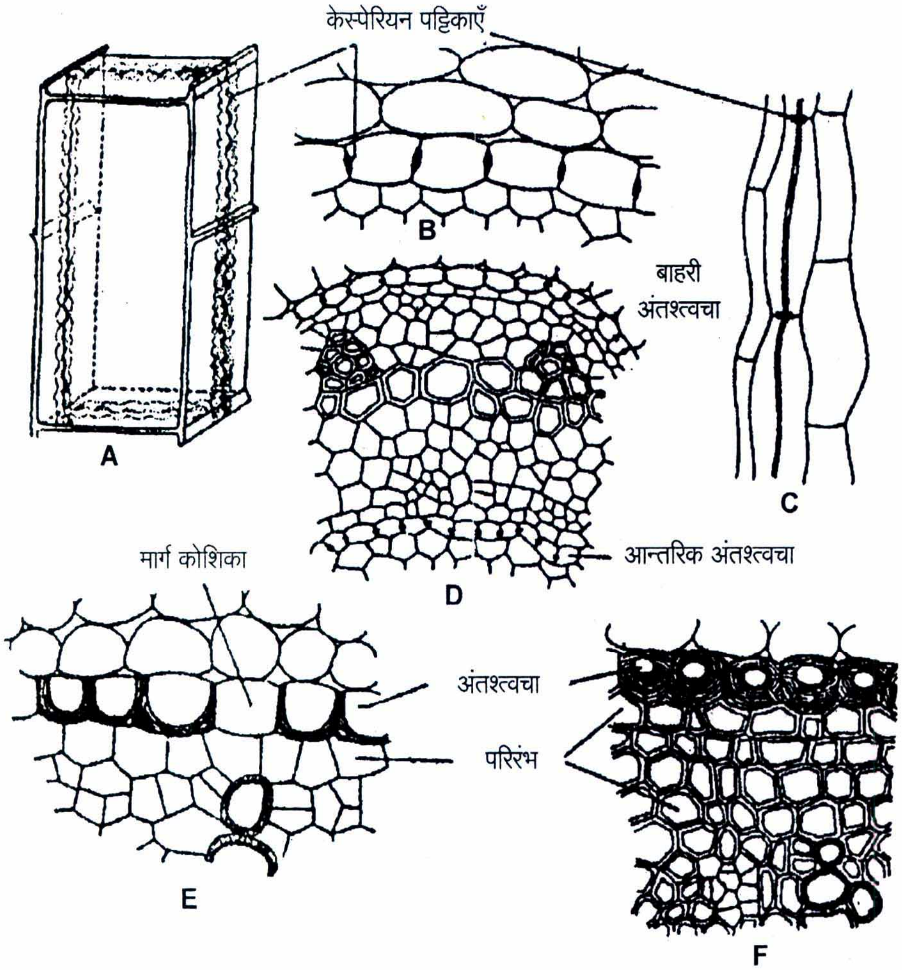

चित्र 3.1 अन्तश्चर्म में विविधता : A,B व C. केस्पेरियन पट्टिकायें, D. बाहरी अंतश्त्वचा एवं आन्तरिक अंतश्त्वचा, E. मार्ग कोशिका, F. स्टार्च युक्त अंतश्त्वचा (मंड आच्छद) व परिरम्भ

जड़ों में अन्त: त्वचा का प्रमुख कार्य मूलदाब (Root pressure) को नियंत्रित करने के साथ-साथ एक सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करने का भी होता है ।

3.2.2 अंतरारम्भीय ऊतक तंत्र (Inttrastelar tissue systems)

इसमें पाए जाने वाले ऊतक निम्न हैं :

(1) **परिरंभ (Pericycle) :** यह ऊतक पर्त पौधों में संवहन ऊतक तन्त्र या रम्भ की बाहरी सीमा का अभिनिर्धारण करती है । सामान्यत: परिरम्भ ऊतक अन्त: त्वचा के भीतर और एवं संवहन बंडल के बाहर पाया जाता है । इसकी उत्पत्ति शीर्षस्थ विभाज्योतक कोशिकाओं के द्वारा संवहन तंत्र के साथ ही होती है । कुछ पौधों में परिरम्भ की कोशिकाओं में तन्तु (Fibers) भी पाये जाते हैं । यह तन्तु ऐरिस्टोलोकिया (Aristolochia) जैसे पौधों में तो परिरम्भ की कोशिकाओं के द्वारा ही विकसित होते हैं, परन्तु कुछ अन्य पौधों, जैसे सेन्सीवीरा

(Sensievera) में उपस्थित तन्तु कोशिकाओं की उत्पत्ति क्लोएम ऊतक से हुई मानी जाती है । यह फ्लोयम रेशे परिरम्भ की सामान्य कोशिकाओं के बीच अपना स्थान बना लेते हैं ।

परिरंभ सामान्यत: मृदूतकी कोशिकाओं के द्वारा निर्मित एक पंक्तिक या बहुपंक्तिक पर्त होती है परन्तु कुछ पौधों, जैसे स्माइलेक्स (Smilax) में बहुपंक्तिक कोशिकाओं का बना होता है ।

सूरजमुखी (Helianthus) के तने में परिरंभ पर्त दो प्रकार की कोशिकाओं की बनी होती हैं । संवहन बंडलों के फ्लोयम के ऊपर परिरंभ पर्त दृढ़ोतकी होती हैं, जबकि मज्जा रश्मियों के ऊपर पाया जाने वाला परिरंभ भाग मृदूतकी होता है । पाइनस (Pinus) की नीडल में परिरम्भ पर्त बहुपंत्तीय एवं कई प्रकार की कोशिका ओं के द्वारा निर्मित होता है, जैसे मृदूतकी एलब्यूमीनस कोशिकाओं (Albuminous cells) के द्वारा तथा ट्रांसफ्यूजन वाहिनिकाओं (Transfussion tracheids) के द्वारा, हार -सिंगार (Nyctanthes) में परिरम्भ पर्त दृढ़ कोशिकाओं (Stone cells) के द्वारा निर्मित होता है । जड़ों में उपस्थित परिरम्भ पर्त के द्वारा पार्श्व जड़ों (Lateral root) की उत्पत्ति भी होती है । द्विबीजपत्री पौधों की जड़ों में फ्लोयम की मृदूतकी कोशिकायें परिरम्भ के साथ मिलकर एक वलय (Ring) का निर्माण करती हैं, जो आगे चलकर द्वितीयक वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं ।

(2) **मज्जा रश्मियाँ (Medullary rays) :** जिम्नोस्पर्म्स एवं द्विबीजपत्री पौधों में संवहन बण्डलों के बीच में मज्जा से लेकर वलकुट तक मृदूतकी कोशिकाओं द्वारा निर्मित अनेक रेखीय पंक्तियाँ पाई जाती हैं । इनको मज्जा रश्मियाँ (Medullary rays) कहते हैं । शुरु में तो प्राथमिक संरचना में उपस्थित मज्जा रश्मियाँ (Medullary rays) अग्रस्थ विभाज्योतक से निर्मित होती हैं, इनको प्राथमिक मज्जा रश्मियाँ (Primary medullary rays) कहा जाता है ।

परन्तु द्वितीयक वृद्धि के दौरान मज्जा रश्मियों का निर्माण संवहन केम्बियम से होता है । क्योंकि यह संरचनायें अरीय रूप से लम्बाई में फैली रहती हैं । अत: इनका मुख्य कार्य जल व खनिज पदार्थों के अनुप्रस्थ स्थानान्तरण में सहयोग प्रदान करने का होता है । द्वितीयक वृद्धि के दौरान मज्जा रश्मियों (Medullary rays) का निर्माण संवहन केम्बियम (Vascular cambium) के रश्मि आद्यकों (Ray initials) से होता है । यह द्वितीयक फ्लोएम से लेकर मज्जा तक फैली हुई रहती हैं तथा इनको द्वितीयक मज्जा रश्मियाँ (Secondary medullary rays) कहते हैं ।

(3) **मज्जा (Pith) :** संवहनी पौधों में संवहन बण्डलों की भीतर की ओर उपस्थित केन्द्रीय भाग के भरण ऊतक को मज्जा (Pith) कहते हैं । टेरिडोफाइटा के अधिकांश पौधों में, जैसे साइलोटम एवं सिलेजीनेला में मज्जा अनुपस्थित होती है, परन्तु जैसे -जैसे इनमें अर्थात् टेरिडोफाइटा में रम्भ का विकास होता है, तो मज्जा भी दिखाई देने लगती है, जैसे मारसीलिया में । क्योंकि एकबीजपत्रियों के तनों में संवहन बण्डल बिखरे होते हैं, अत: यहाँ मज्जा के स्थान पर पाए जाने वाले ऊतक को भरण ऊतक (Ground tissue) ही कहते हैं । सामान्यत: मज्जा मृदूतकी कोशिकाओं की बनी होती है, परन्तु कुछ पौधों, जैसे मारसीलिया (Marsilia) में यह

दृढ़ोतकी होती है । किसी कारणवश जब मज्जा की कोशिकायें नष्ट हो जाती हैं तो पौधों में खोखली मज्जा पाई जाती है । मज्जा में अनेक रासायनिक पदार्थों, जैसे रेजिन, टेनिन, गोंद एवं वसा का संचय होता है । परन्तु जब मज्जा दृढ़ोतकी होती है, तो यह पौधों को यांत्रिक शक्ति प्रदान करने का भी कार्य करती है ।

3.4 संवहन ऊतक तन्त्र (Vascular Tissue System)

संवहन ऊतक तन्त्र में प्रायः संवहन ऊतक मिलकर जल एवं खाद्य पदार्थो के संवहन का कार्य करते हैं । संवहन ऊतक अर्थात् फ्लोयम व जाइलम संयुक्त रूप से मिलकर एक विशेष संरचना का निर्माण करते हैं, जिसे संवहन बण्डल कहते हैं । संवहन बण्डलों में सामान्यत: फ्लोयम एवं जाइलम के साथ - साथ एधा (Combium) को भी सम्मिलित किया जाता है । द्विबीजपत्री पौधों के संवहन बण्डलों में केम्बियम उपस्थित तथा एकबीजपत्री पौधों में अनुपस्थित होता है । संवहन बण्डलों का निर्माण प्राथमिक पादप शरीर में प्राक्एधा (Procambium) से होता है । यह अग्रस्थ विभाज्योतक का ही एक घटक होता है ।

समूह टेरिडोफाइटा में संवहन बण्डल पुरातन प्रकार के अर्थात् मज्जा रहित रख प्राक्रम्भीय (Prostelic) प्रकार के होते हैं । इनमें जाइलम चारों ओर से फ्लोयम के द्वारा घिरा हुआ होता है, परन्तु विकास के क्रम में मज्जा के निर्मित होने पर यहाँ नालरम्भीय (Siphonostellic) संरचना दिखाई पड़ती है ।

उत्पत्ति के आधार पर प्राथमिक पादप शरीर में पहले बनने वाले संवहन बण्डलों को प्राथमिक संवहन बण्डल (Primary vascular bundle) कहते हैं । इसका विस्तृत विवरण निम्न प्रकार से है :

3.4.1 प्राथमिक संवहन बण्डल (Primary vascular bundle)

इसमें सबसे पहले बनने वाले ऊतक तत्व प्रोटोजाइलम व प्रोटोफ्लोयम कहलाते हैं तथा बाद में बनने वाले तत्वों को मेटाजाइलम व मेटाफ्लोयम कहते हैं । यहाँ विशेष बात यह है कि टेरिडोफाइट्स एवं जिम्नोस्पर्म्स के जाइलम में (एफीड्रा व गण नीटेलस के अन्य सदस्यों को छोड़कर) वाहिकाओं का अभाव होता है तथा फ्लोयम में सहकोशिकाओं का अभाव पाया जाता है । आवृतबीजियों के जाइलम में वाहिकायें, वाहिनिकायें ,जाइलम रेशे व जाइलम मृदूतक पाए जाते हैं, जबकि फ्लोयम में चालनी नलिकायें, सहकोशिकायें, फ्लोयम रेशे एवं फ्लोयम मृदूतक पाए जाते हैं।

विभिन्न संवहनी पौधों में प्रोटोजाइलम की स्थिति के आधार पर विभिन्न संवहन बण्डलों में उपस्थित प्राथमिक जाइलम निम्न प्रकार के हो सकते हैं :

(1) **बाह्यआदिदारुक (Exarch):** यहाँ प्रोटोजाइलम परिधि की ओर तथा मेटाजाइलम केन्द्र में पाया जाता है । उदाहरण : द्विबीजपत्री पौधों की जड़ों में ।

(2) **मध्यादिदारुक (Mesarch)** जब प्रोटोजाइलम मध्य भागों में विकसित हो तथा मेटाजाइलम इसके चारों ओर पाया जाए । उदाहरण; फर्न्स ।

(3) **अन्त: आदिदारुक (Endarch):** जब प्रोटोजाइलम मज्जा की ओर या अन्दर की ओर स्थित होता है । उदाहरण : आवृतबीजी पौधों के तने में ।

3.4.2 एधा (Cambium)

प्राक्एधा (Procambium) की वे कोशिकायें, जो जाइलम व फ्लोयम के बीच उपस्थित होती हैं तथा विभाज्योतकी होती है, उनको एधा (Cambium) कहते हैं । एधा की कोशिकायें पतली भित्ती वाली आयताकार अनेक रसधानियों एवं एक केन्द्रक युक्त होती है । प्रायः इनमें परिनत विभाजन होता है एवं विभाजन का क्रम इस प्रकार का होता है कि इसके परिणामस्वरूप बनने वाली दो संतति कोशिकाओं में से एक फ्लोयम या जाइलम या मज्जा रश्मि (Medullary ray cell) के रूप में तथा दूसरी कोशिका विभाज्योतकी (Cambium) के रूप के कार्य करती हैं । जिन संवहन बण्डलों में जाइलम व फ्लोयम के बीच केम्बियम ऊतक पाया जाता है, उनको वर्धी या खुले (Open) संवहन बण्डल कहते हैं, जबकि वे संवहन बण्डल जिनमें जाइलम व फ्लोयम के बीच केम्बियम नहीं होता, उनको बन्द या अवर्धी (Closed) संवहन बण्डल कहते हैं, जैसे मक्का के तने में ।

एधा (Cambium) में मुख्यतः दो प्रकार की कोशिकायें पाई जाती हैं:

(1) **तुर्कुरूप आरम्भिकायें (Fusiform initials):** यह लम्बी कोशिकायें होती हैं तथा इनके विभाजन से बाहर की ओर फ्लोयम तथा भीतर की ओर जाइलम बनता है ।

(2) **अरीय आरम्भिकायें (Ray initials) :** यह अपेक्षाकृत समव्यासी कोशिकायें होती हैं तथा इनके द्वारा मज्जा रश्मियों की मृदूतक कोशिकाओं का निर्माण होता है ।

3.4.3 विभिन्न प्रकार के संवहन बण्डल (Types of Vascular Bundles)

संवहनी पौधों में जाइलम, फ्लोयम एवं केम्बियम की स्थिति के आधार पर निम्न प्रकार के संवहन बण्डल पाये जाते हैं (चित्र 3.2) :

(i) **संयुक्त, सम्पार्श्विक एवं खुले संवहन बण्डल (Conjoint, collateral and open vascular bundles):** यह द्विबीजपत्री पौधों (Dicots) के तनों में पाये जाते हैं त था इनमें फ्लोयम एवं जाइलम के बीच केम्बियम उपस्थित होता है ।

(ii) **संयुक्त सम्पार्श्वीय एवं बन्द संवहन बण्डल (Conjoint, collateral and Closed):** इस प्रकार के संवहन बण्डल प्रायः एकबीजपत्री तनों, जैसे मक्का (Zea-mays) में पाये जाते तथा इनमें फ्लोयम व जाइलम के बीच केम्बियम नहीं पाया जाता है ।

(iii) **संयुक्त, सम्पार्श्विक एवं उभय फ्लायेमी संवहन बण्डल (Conjoint, Collateral & Amphiphloic or bicollateral):** द्विबीजपत्री पौधों में कुकुरबिटेसी कुल के तनों में इस प्रकार के संवहन बण्डल पाये जाते हैं । इनकी संरचनाओं के फ्लोयम ऊतक समूह जाइलम के दोनों ओर पाए जाते हैं तथा दोनों तरफ फ्लोयम व जाइलम के बीच केम्बियम पट्टिकायें विद्यमान होती हैं ।

(iv) **फ्लोयम केन्द्री संवहन बण्डल या संकेन्द्री (Leptocentric or Amphivasal) :** इस प्रकार के संवहन बण्डलों को संकेन्द्री (Concentric) कहा जाता है, क्योंकि इनमें एक संवहन ऊतक दूसरे संवहन ऊतक के द्वारा घिरा हुआ रहता है । फ्लोएमकेन्द्री बण्डलों में फ्लोयम ऊतक चारों ओर से जाइलम के वलय द्वारा घिरा होता है ।उदाहरण ' ड्रेसिना व मक्का ।

(v) **जाइलम केन्द्री संवहन बण्डल (Hadrocentric / Anphicribal or concentric):** इस प्रकार के संकेन्द्री संवहन बण्डल अनेक टेरिडोफाइट्स, जैसे साइलोटम में पाये जाते हैं तथा फ्लोयम इसके चारों ओर उपस्थित होता है ।

(vi) **अरीय संवहन बण्डल (Radial):** इस प्रकार के संवहन बण्डल जाइलम व फ्लोयम एकान्तर क्रम में व्यवस्थित होते हैं इस प्रकार के संवहन पूल जड़ में पाए जाते हैं ।

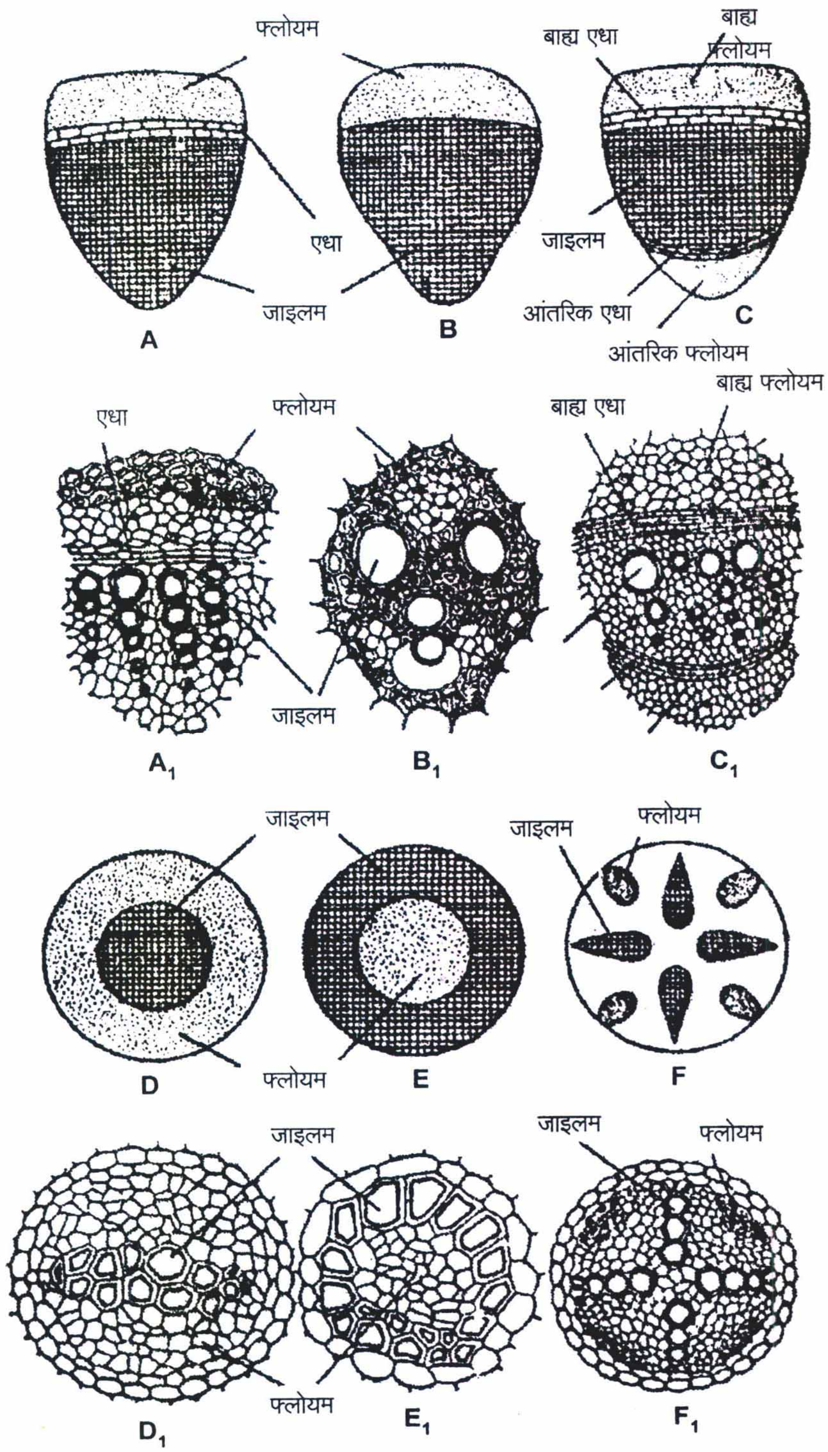

चित्र 3.2: संवहन बण्डलों के प्रकार : A-A ' संयुक्त, सम्पार्श्विक एवं खुला संवहन बण्डल B-B' संयुक्त, सम्पार्श्विक एवं बन्द संवहन बण्डल, C-C ' संयुक्त, सम्पार्श्विक एवं उभय क्लोएमी संवहन बण्डल D- D ' जाइलम केन्द्री बण्डल, E-E ' फ्लोयम केन्द्री बण्डल, F-F ' अरीय संवहन बण्डल

बोध प्रश्न

1. बुलीफार्म कोशिकायें पाई जाती हैं :
   (अ) घास की पत्ती में
   (ब) ड्रेसीना पर्ण में
   (स) बरगद की पर्ण में
   (द) मारसीलिया में
2. बाह्यत्वचा में एक कोशीय रोम पाये जाते हैं :
   (अ) इक्वीसीटम में
   (ब) लेन्टाना में
   (स) टमाटर में
   (द) सूरजमुखी में
3. छत्रिकाकार रोम पाये जाते हैं:
   (अ) ड्रोसेरा में
   (ब) नेपेन्थीस में
   (स) बिच्छू बूटी में
   (द) कपास में
4. पौधों में वाष्पोत्सर्जन एवं गैसीय विनिमय का कार्य होता है :
   (अ) वल्कुट द्वारा
   (ब) अन्त: त्वचा द्वारा
   (स) परिरम्भ द्वारा
   (द) बाह्यत्वचा द्वारा
5. मार्ग कोशिकायें पाई जाती हैं :
   (अ) अंत: त्वचा में
   (ब) वल्कुट में
   (स) केम्बियम में
   (द) फ्लोयम में

3.5 सारांश (Summary)

(1) ऊतकों का वह विशेष समूह, जो किसी किसी विशिष्ट कार्य को सम्पन्न करता है, ऊतक तंत्र कहलाता है ।

(2) **सेक्स** के अनुसार पादप भागों में स्थिति के आधार पर तीन प्रकार के ऊतक तंत्र बताये गये हैं । ये हैं, त्वचीय ऊतक तंत्र, भरण ऊतक तंत्र एवं संवहन ऊतक तंत्र ।

(3) त्वचीय ऊतक तंत्र में बाह्य त्वचा आती है, जिसमें तीन प्रकार की संरचनायें क्रमशः क्यूटीकल, रन्ध्र एवं रोम प्रमुख हैं ।

(4) उपचर्म या क्यूटीकल मरुद्भिदीय पौधों में विशेष रूप से उपस्थित होती है तथा इसमें मोम, क्यूटिन, गोंद, रेजिन, सिलिका व लिग्निन नामक पदार्थ पाये जाते हैं । जलीय पौधों में उपचर्म अनुपस्थित या पतली होती है ।

(5) पौधे के वायवीय भागों में विशेषकर पत्तियों में रन्ध्र (Stomata) पाये जाते हैं, जो वृक्काकार कोशिकाओं से घिरे होते हैं । इन कोशिकाओं को रक्षक कोशिकायें (Guard cells) कहते हैं ।

(6) विभिन्न पौधों में त्वचा की सतह पर पाई जाने वाली रोमिल संरचनायें रोम (Hairs) कहलाती हैं ।

(7) **अपहाफ** के अनुसार रोम दो प्रकार के होते हैं, अग्रन्थिल रोम (Non-glandular) एवं ग्रंथिल रोम (Glandular)।

(8) बाह्यत्वचा के ठीक नीचे एवं पादप के आतंरिक भागों में पाई जाने वाली वे सभी प्रकार की कोशिकायें, जो जल एवं खाद्य पदार्थों के संवहन का -कार्य नहीं करतीं, भरण ऊतक तंत्र में सम्मिलित की जा सकती हैं ।

(9) भरण ऊतक तंत्र में सम्मिलित विभिन्न प्रकार के ऊतकों की स्थिति के आधार पर इसे क्रमशः बाह्य रम्भीय एवं अंतरारम्भीय ऊतक तंत्र नामक दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है ।

(10) बाह्य रम्भीय ऊतक तंत्र में मुख्यतः वल्कुट होता है, जो कि अनेक पौधों में अधोत्वचा एवं सामान्य वल्कुट के रूप में विभेदित रहता है । इसके बाद अंत :त्वचा भी आती है ।

(11) अंतरारम्भीय ऊतक तंत्र में परिरम्भ, मज्जा रश्मियाँ एवं मज्जा को सम्मिलित किया गया है ।

(12) संवहन ऊतक तंत्र, विकसित व संवहनी पौधों की आंतरिक संरचना का एक महत्वपूर्ण भाग है, जिसमें संवहन ऊतक जाइलम एवं फ्लोयम समग्र रूप से मिलकर एक अनूठी संरचना संवहन बण्डल बनाते हैं ।

(13) प्राथमिक पादप शरीर में बनने वाले सर्वप्रथम संवहन बण्डलों को प्राथमिक संवहन बण्डल कहा जाता है ।

(14) संवहन ऊतक तंत्र में एधा या केम्बियम नामक एक महत्वपूर्ण विभाज्योतक भी पाया जाता है, जिसकी कोशिकायें विभाजित होकर संवहन ऊतकों की मात्रा में वृद्धि करती हैं ।

(15) संवहनी पौधों में जाइलम, फ्लोयम एवं केम्बियम की स्थिति के आधार पर अनेक प्रकार के संवहन बण्डल पाये जाते हैं ।

3.6 शब्दावली (Terminology)

(1) **बुलीफार्म कोशिकायें :** कुछ पादप कुलों, जैसे घास कुल के सदस्यों की पत्तियों में उपस्थित बाह्यत्वचा पर्त में पाई जाने वाली कुछ कोशिकायें, आसपास की कोशिकाओं की तुलना में

बड़ी साइज की होती हैं । इनको प्रेरक कोशिकायें, बुलीफार्म कोशिकायें या मोटर सेल्स कहा जाता

(2) **उपरिरंधी पर्ण:** वे पत्तियाँ, जिनमें रंध्र बाह्य त्वचा की केवल ऊपूरी पर्त पर पाये जाते हैं ।

(3) **अधोरंध्री पर्ण:** यह रन्ध्र पत्ती की केवल निचली सतह पर पाये जाते हैं

(4) **उभयरन्ध्री पर्ण:** वह पत्ती, जिसमें रन्ध पत्ती की दोनों पर्तों अर्थात् ऊपरी व निचली पर्तों पर पाये जाते हैं ।

(5) **मार्ग कोशिकायें या पेसेज सेल्स :** अंत :त्वचा की वे कोशिकायें, जो पतली भित्ति वाली होती हैं त था जिनमें केस्पेरियन पट्टिकायें नहीं पाई जातीं । इनका प्रमुख कार्य पौधों में जल व खनिज पदार्थों को जड़ के भरण ऊतक से प्रोटोजाइलम तक पहुँचाना है ।

(6) **बाह्यादिदारुक संवहन बण्डल :** वह संवहन बण्डल, जिसमें प्रोटोजाइलम परिधि की ओर तथा मेटाजाइलम केन्द्र में पाया जाता है ।

(7) **मध्यादिदारुक बण्डल :** जब प्रोटोजाइलम मध्य भाग में विकसित हो त था मेटाजाइलम इसके चारों ओर पाया जाता है ।

(8) **अंत : आदिदारुक बण्डल :** जिसमें प्रोटोजाइलम मज्जा की ओर या अंदर की ओर अवस्थित होता है ।

3.7 संदर्भ ग्रन्थ (References)

(1) पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन : त्रिवेदी, शर्मा एवं शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर।

(2) Pradeep's Botany Vol.(IV): Dr. H.N. Srivastave; Pradeep Publications Jalandhar.

(3) Plant anatomy : P.C Vashishtha; Pradeep Publications Jalandhar.

(4) Plant anatomy : M.S Tayal; Rastogi Publications, Meerut.

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर (Answers)

1. (अ) 2. (ब) 3. (स) 4. (द) 5. (अ)

3.9 अभ्यासार्थ प्रशन (Questions)

लघुत्तरात्मक प्रश्न :

(1) ऊतक तंत्र से आप क्या समझते हैं?

(2) ऊतक तंत्र कितने प्रकार के होते हैं?

(3) क्यूटीकल के बारे में बताइये ।

(4) बहुपंक्तिक परिरम्भ को परिभाषित कीजिये ।

(5) अरीय संवहन बण्डलों के बारे में बताइये ।

निबंधात्मक प्रश्न :

(1) ऊतक तंत्र का वर्गीकरण कीजिये । त्वचीय ऊतक तंत्र का विस्तृत विवरण लिखिये ।

(2) भरण ऊतक तंत्र का विस्तृत वर्णन कीजिये ।

(3) संवहन ऊतक तंत्र के बारे में विस्तार से वर्णन कीजिये ।

इकाई 4: प्ररोह : शीर्ष विभज्योतक, विभज्योतकी संगठन एवं विभेदन; तने की प्राथमिक विभेदन (एक बीजपत्री एवं द्विबीजपत्री) प्राथमिक प्ररोह में संवहनीकरण [Shoot : Apical meristem, organization and classification of maeristems; Primary structure of stem (Monocotyledon and Dicotyledon Vascularization in primary shoot]

इकाई संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 प्ररोह: शीर्ष विभज्योतक

- 4.2.1 विभज्योतक की विशेषताएँ
- 4.2.2 विभज्योतक का वर्गीकरण
- 4.2.3 विभज्योतकी संगठन: विभिन्न सिद्धान्त

4.3 तने की प्राथमिक संरचना

- 4.3.1 एक बीजपत्री तने की प्राथमिक संरचना
- 4.3.2 द्विबीजपत्री तने की प्राथमिक संरचना

4.4 प्राथमिक प्ररोह में संवहनीकरण

4.5 सारांश

4.6 शब्दावली

4.7 संदर्भ ग्रन्थ

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.0 उद्देश्य

पादप जब भ्रूणावस्था में बीज मे निहित होता है, तब **पादप अक्ष** तथा **मुलांकुर** का बना होता है । बीजपत्राधार के सिरे पर बीजपत्र प्रांकुर (plumule) के रूप में प्ररोह कलिका (shoot bud) होती है । प्ररोह कलिका अथवा प्रांकुर में एक अक्ष बीजपत्रोपरिक (epicoty1) होता है, जिस पर कुछ **पर्ण आज्ञक** (leaf primordia) लगे होते हैं ।

बीजांकुरण (germination of seeds) के समय प्ररोह अ क्ष (shoot axis) के साथ पर्त की लम्बाई बढ़ने लगती है तथा नए पर्ण आद्यक इसमें जुड़ने लगते हैं । पर्ण क क्ष (leaf axil) में

उपस्थित कलिकाएँ विकसित होकर शाखाएँ बनाती है । परिपक्व अथवा बड़े पादपों में प्ररोह शीर्ष पर पर्ण आद्यक तथा पर्व उसी प्रकार विकसित होते हैं, जिस प्रकार बीजांकुरण के समय विकसित होते हैं । पादप के विभिन्न अंगों में वृद्धि मुख्यतः विभज्योतक (meristem) के कारण होती है ।

4.1 प्रस्तावना

विभज्योतक (meristem) की उत्पत्ति ग्रीक शब्द मेरीस्टोस (meristos = divide) से हुई जिसका अर्थ है, विभाजन होना । पादप की भ्रूणावस्था में लगभग सभी कोशिकाएँ विभाजन की क्षमता से युक्त होती है, परन्तु पादप वृद्धि के साथ विभाजन क्षमता मात्र कुछ हिस्सों में सीमित हो जाती है । पौधों में कोशिका विभाजन एवं ऊतक समारमन (initiation) क्षमता से युक्त भ्रूणीय ऊतक (embryonic tissue) वाले क्षेत्र **विभज्योतक** (meristem) कहलाते हैं । कुछ स्थायी ऊतकों की कोशिकाएँ बहुत सीमित हद तक विभाजन कर सकती है, परन्तु विभज्योतक कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि कर पादप वृद्धि करने में सहायक होते हैं । विभिन्न विभज्योतकी ऊतकों द्वारा काटी गई कोशिकाएँ परिवर्धन (development) एवं विभेदन (differentiation) के बाद स्थायी ऊतक(permanents tissues) बनाती है ।

4.2 प्ररोह शीर्ष विभज्योतक (Shoot Apical Meristem)

संवहनी पादपों में उपस्थित भ्रूणीय प्ररोह (embryonic shoot) के शीर्ष पर प्ररोह शीर्ष विभज्योतक (shoot apical meristem) बनाता है तथा पादप में प्ररोह के सभी प्राथमिक ऊतकों के परिवर्धन (development) के लिए उत्तरदायी होता है ।

प्ररोह (shoot) का अंतस्थ (terminal) गुम्बदाकार (dome shaped) हिस्सा तथा पर्ण आद्यक (leaf primordium) मिलकर **प्ररोह शीर्ष** (shoot apex) बनाते हैं । पत्तियों के समारमन के बनने से पहले शीर्ष काफी चौड़ा हो जाता है तथा पत्तियों के निकलने के बाद वापस संकरा हो जाता हैं ।

प्ररोह शीर्ष पर सबसे छोटे एवं सबसे ऊपर वाले पर्ण आद्यक से ऊपर स्थित क्षेत्र शीर्षस्थ विभज्योतक होता है । इसके आकार एवं आमाप में काफी विविधिता होती है । अनेक पादपों में पादप की विभिन्न अवस्थाओं में भी शीर्ष विभज्योतक का संगठन भिन्न पाया जाता है । सामान्यतया आवृत्तबीजी में प्ररोह शीर्ष अपेक्षाकृत छोटा होता है । साइकस में प्ररोह शीर्ष काफी चौड़ा होता है ।

सामान्यतया प्ररोह शीर्ष की ऊत्तल (convex) सतह होती है अथवा गुम्बदाकार दिखाई देता है । **एनाकेरिस** तथा घास कुल के पौधे में शीर्ष पतले कोन के आकार का होता है, जिसका शीर्ष गोलाकार होता है । (चित्र 4.1,2) कुछ पादपों जैसे **ड्राइमिस हिबिसकस** में शीर्ष अवतल (concave) होता है ।

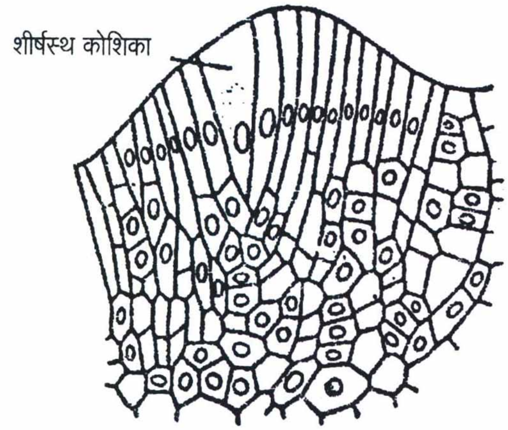

चित्र 4.1 : टेरीडिक्यम (pteridium) के प्रंकंद में उपस्थित शीर्षस्थ कोशिका

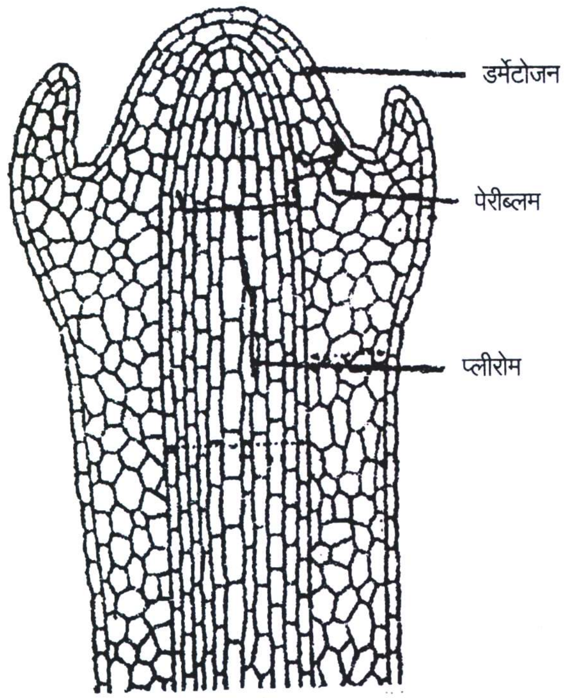

चित्र 4.2 : प्ररोह शीर्ष में विभिन्न ऊतक जन

4.2.1 विभज्योतक की विशेषताएँ (Characteristic Features of Meristem)

1. अधिकांश विभज्योतकी कोशिकाएँ समव्यासी (isodiametric) तथा अपेक्षाकृत पतली भित्ति युक्त होती है।
2. ये सघनता से (compactly) व्यवस्थित होती है, तथा इनमें अन्तरकोशिकी अवकाश (intercellular spaces) नहीं होते हैं ।
3. अधिकांश विभज्योतकी कोशिका ओं में सघन जीवद्रव्य (dense cytoplasm) होता है ।

4. सामान्यतया इनमें संचित पदार्थों एवं क्रिस्टल लवको (plastids), **माइटोकोन्ड्रिया** (mitochondria). अन्तप्रदव्यी जालिका (endoplasmic reticulum) इत्यादि का अभाव होता है ।
5. अधिकांश विभज्योतकी कोशिकाओं में रसधानियाँ (vacuoles) अनुपस्थित अथवा सूक्ष्म आकार की होती है, हालांकि संवहनी एधा (vascular cambium) में विभज्योतकी कोशिकाएँ रसधानियों से युक्त होती है ।संवहन की अधिकांश कोशिकाएँ तुर्करूपी होती है ।

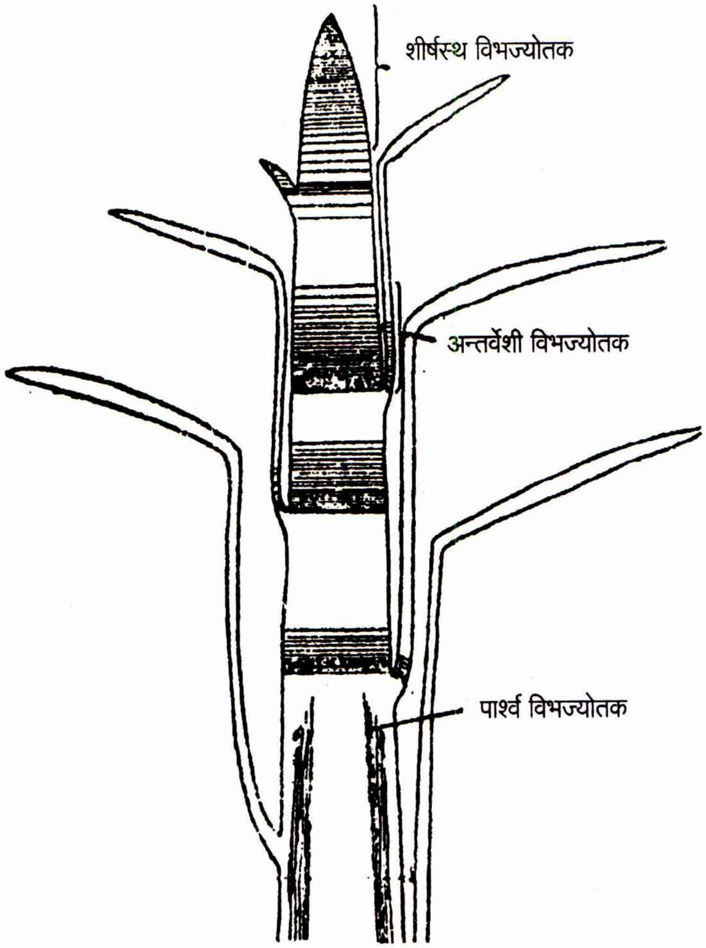

चित्र 4.3 : विभज्योतक : प्ररोह (स्तम्भ) की अनुदैर्श्य काट में स्थिति के आधार पर विभिन्न विभज्योतक दर्शाते हुए

4.2.2 विभज्योतकी का वर्गीकरण (Classification of Meristems)

विभज्योतकों का वर्गीकरण विभिन्न निष्कर्षों (criteria) के आधार पर अनेक प्रकार से किया जा सकता है ।

1. आरंभिक कोशिकाओं की उत्पत्ति एवं विकास के आधार पर विभज्योतक
2. कार्य के आधार पर विभज्योतक
3. विभाजन तल के आधारित विभज्योतक

4. पादपकाय में स्थिति पर आधारित विभज्योतक

1. **आरंभिक कोशिकाओं की उत्पत्ति एवं विकास के आ धारित विभज्योतक** (Meristems on the Basis of Origin and Development of Initials): कोशिकाओं की उत्पत्ति एवं विकास के आ धार पर मुख्यतः तीन वर्गों में बांटा गया है ।

(i) **प्राक्विभज्योतक** (Promeristem) पादप कार्य में नए ऊतकों एवं अंगों का निर्माण जहां प्रारम्भ होता है वह क्षेत्र प्राक्विभज्योतक कहलाता है । इसमें आरंभिक कोशिकाएँ तथा उनसेव्युत्पन्न कोशिकाएँ जो स्थायी कोशिकाओं में परिवर्धित नहीं होती है। सामान्यतया इनकी कोशिकाएँ पतली भित्तियुक्त तथा समव्यवस्थित होती है । इसे भ्रूणीय विभज्योतक(primordium meristem) भी कहते हैं इनसे उत्पन्न सामान्यतया प्राथमिक विभज्योतक (primary meristem)में विभेदित होती है (चित्र 4.4)

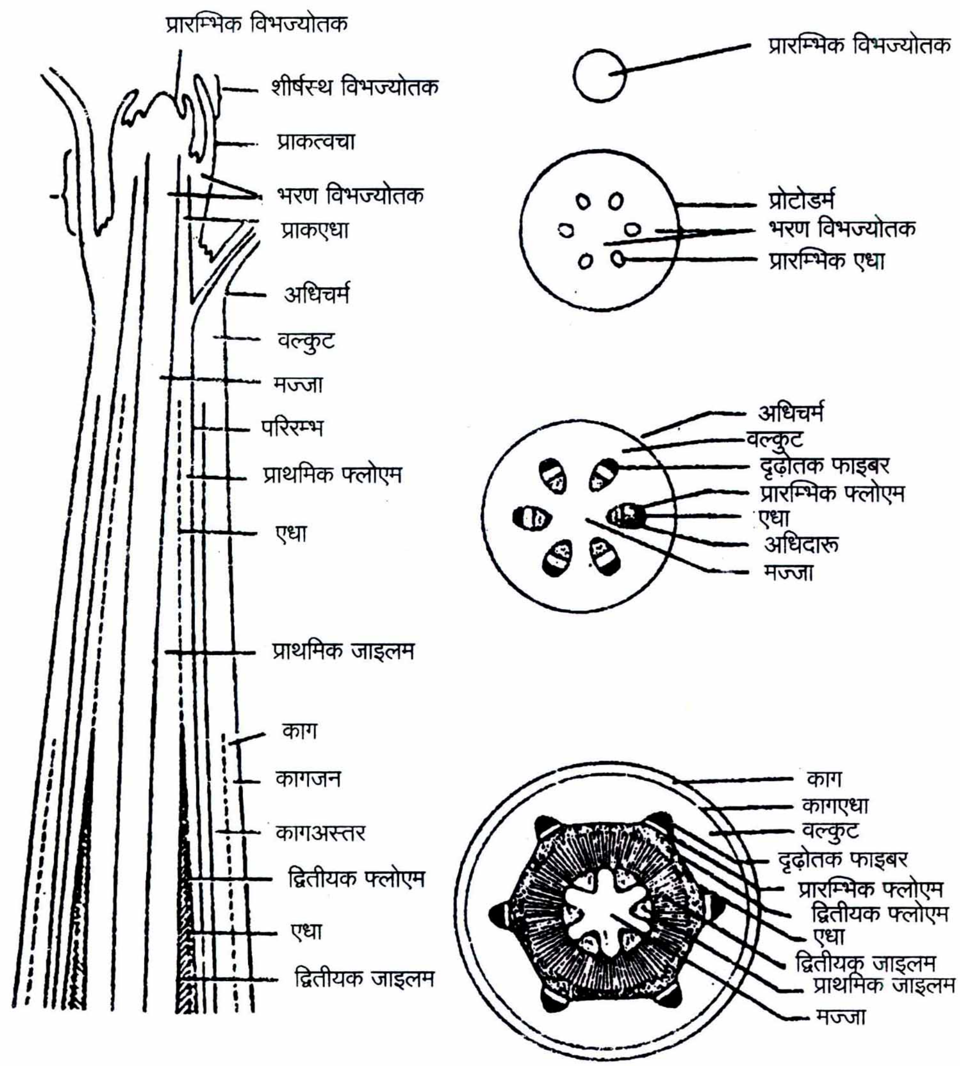

चित्र 4.4 : विभज्योतक : प्ररोह (स्तम्भ) की अनुदैर्ध्य काट में विभिन्न विभज्योतक दर्शाते हुए

(ii) **प्राथमिक विभज्योतक** (Primary meristem); यह पादपकाय के सभी मूल अंगों का निर्माण करती है तथा प्राक्विभज्योतक से उत्पन्न कोशिकाओं से बनी होती है । सामान्यतया किसी प्राथमिक विभज्योतक की सबसे पहली अवस्था प्राक्विभज्योतक ही होती है । उनसे उत्पन्न कोशिकाओं के विभिन्न चरणों में प्रारंभिक अवस्था को प्राथमिक विभज्योतक कहते है प्राथमिक विभज्योतक के मुख्य उदाहरण मूलशीर्ष, प्ररोहशीर्ष इत्यादि में पायी जाने वाली विभज्योतक है।

अनेक पादपों में अपस्थानिक कलिकाएँ एवं जड़े सुसप्त (dormant) कलिका आंरमिकाओं (bud intials) से बनती है ।

(iii) **द्वितीयक विभज्योतक** (Secondary Meristem): द्वितीयक विभज्योतक की उत्पत्ति प्राथमिक विभज्योतक से भिन्न होती है । इनकी कोशिकाएँ स्थायी ऊतकों (permanent tissue) से विशेषकर मृदूतक अथवा स्थूलकोणोतक से बनती है । स्थायी ऊतक की कोशिकाएँ आवश्यकता पड़ने पर अथवा द्वितीयक वृद्धि के समय विभाजन की क्षमता पुन : प्राप्त कर द्वितीयक विभज्योतक बनाती है । पादपकाय में ये सदा पार्श्व स्थिति (lateral position) में ही उत्पन्न होती है । कागएधा (cork cambium) क्षतएधा दोनों ही द्वितीयक विभज्योतक के उदाहरण है । कागएधा का विभेदन प्राथमिक फ्लोयम की बाहरी परतें, परिरम्भ (pericycle), वल्कुट अथवा अधिचर्म में से किसी एक परत से बना होता है। क्षतएधा की शल्य ऊतकों के पास की कोशिकाओं से विभेदित होती है ।

(2) **कार्य पर आधारित विभज्योतक** (Meristem on the Basis of Function): पौधों के विभिन्न भागों में कार्य के आधार पर विभज्योतक इस प्रकार है:

(i) **अधित्वक** (Protoderm): यह पादप के कोमल अंगों के शीर्ष पर उपस्थित विभज्योतक की सबसे बाहरी एक कोशिकीय मोटी परत है तथा बाह्यत्वचा अथवा अधिचर्म (epidermis) का निर्माण करती है (चित्र 4.4) ।

(ii) **प्राक्एधा** (Procambium): यह प्राकृतिक संवहन ऊतकों (primary vascular tissues) का निर्माण करती है, तथा सामान्यतया लम्बी एक संकीर्ण कोशिका ओं से बनी होती है । इनसे संवहन ऊतकों की आद्यक कोशिकाओं का निर्माण होता है त था इनसे एधा (cambium) का निर्माण होता है जो स्वयं एक प्रकार का विभज्योतक है (चित्र 4.4) ।

(iii) **भरण विभज्योतक** (Ground Meristem) यह पतली भित्तियुक्त, समव्यासी तथा बहुकोणीय बड़े आकार की कोशिकाओं से बनी होती है, त था उनसे अधश्चर्म (hypodermis), वल्कुट (cortex), परिरंभ (pericycle) मज्जा (pith) तथा मज्जाकिरणे (medullary rays) का निर्माण होता है (चित्र 4.4) ।

(3) **विभाजन तल पर आधारित विभज्योतक** (Meristem Based on the Plane of Divisions): विभज्योतक में विभाजन के तल के आधार पर वृद्धि के प्रतिरूपों का निर्धारण होता है । विभाजन के विभिन्न तलों के आधार पर तीन प्रकार के **विभज्योतक** (meristem) होते हैं (चित्र 4.4) ।

(i) **शिरा विभज्योतक** (Rib Meristem) : विभज्योतक की कोशिकाओं में अपतनिक (anticlinal) विभाजन होते हैं तथा विभाजन एक तल में ही कोशिका के लम्ब अक्ष अथवा अनुदैर्ध्य अक्ष (long axis) के समकोण पर ही होते हैं । इससे जड़ एवं तने में वल्कुट एवं मज्जा का परिवर्धन होता है । इससे कोशिकाओं की पंक्तियाँ (rows) बनती है ।

(ii) **पट्टिका विभज्योतक** (plane Meristem): इस विभज्योतक की कोशिकाएँ दो तलों में प्ररोह : शीर्ष विभज्योतक, विभाजन कर सकती है । इसकी कोशिकाएँ सामान्यतया एक परत में व्यवस्थित होती हे । इसकी क्रियाशीलता से पृष्ठीय क्षेत्रफल का विकास होता है ।

(iii) **पुंज विभज्योतक** (Mass Meristem): इस विभज्योतकी कोशिकाएँ सभी तलों में प्ररोह में विभाजित हो सकती है । इससे ऊतक की संहलि (Mass) बढ़ती है । इस प्रकार यह मुख्यतः भ्रूण की शुरू की अवस्थाओं में तथा भ्रूणपोष के विकास में सक्रिय होती है ।

(4) **पादपकाय में स्थिति पर आधारित विभज्योतक** (Meristem Based on Position in the Plane Body): विभज्योतक की स्थिति के आधार पर इन्हें तीन वर्गों में विभाजित किया गया है ।

(i) **शीर्षस्थ विभज्योतक** (Apical Meristem): यह तने शाखाओं एवं जड़ों के शीर्ष पर तथा कभी - कभी पर्ण शीर्ष पर पाया जाता है । इस विभज्योतक की क्रियाशीलता से इन अंगों की लम्बाई में वृद्धि होती है तथा पादप काय के प्राथमिक अंगों एवं उपांगों का निर्माण होता है (चित्र 4.3) ।

(ii) **अन्तर्वेशी विभज्योतक** (Intercalary Meristem): ये असल में शीर्षस्थ विभज्योतक के ही हिस्से होते हैं, जोकि विकास की प्रकिया में स्थायी ऊतकों के बीच में आने के कारण शीर्षस्थ विभज्योतक से विलेग हो जाते हैं । यह मुख्यतया घास कुल के पौधों में पर्वाधार (base of Internode) पर तथा एक बीजपत्री पत्तियों के आधार पर पाई जाती है (चित्र 4.3 तथा 4.4)I

(iii) **पार्श्व विभज्योतक** (Lateral Meristem): पार्श्व विभज्योतक की स्थिति तने अथवा जड़ों में पार्श्व (periclinal) तथा अरीय (radial) विभाजन होते हैं । संवहनएधा (vascular cambium) तथा कागएधा (cork cambium) पार्श्व विभज्योतक (lateral meristem) के उदाहरण है । पार्श्व विभज्योतक की क्रियाशीलता से तने अथवा जड़ों में द्‌वितीयक ऊतकों (secondary tissues) का निर्माण होता है त था घेरे में वृद्धि होती है । पार्श्व विभज्योतक प्राथमिक पूलीय एधा (fascicular cambium) अथवा द्‌वितीयक कागारधा तथा अन्तरापूलीय एधा (interfacicular cambium) प्रकृति के हो सकते हैं (चित्र 4.3 तथा 4.4) ।

4.2.3 विभज्योतकी संगठन; विभिन्न सिद्धान्त

(Organization of Meristem: Various Theories)

मूल तथा प्रोह के शीर्ष पर स्थित विभज्योतक को स्थिति के आधार पर शीर्ष विभज्योतक कहते हैं । पौधों के सभी प्राथमिक ऊतक शीर्षस्थ विभज्योतक से उत्पन्न होते हैं ।

प्ररोह शीर्ष (shoot apex) के ऊतक संगठन को स्पष्ट करने के लिए वैज्ञानिकों ने समय-समय पर अपने मत प्रस्तुत किये, जिन्हें गिफोर्ड (Gifford 1954) ने निम्न सिद्धान्तों के संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किये ।

1. **शीर्ष कोशिका सिद्धान्त** (Apical Cell Theory): सर्वप्रथम नेगली (Negeli 1858) ने शीर्ष कोशिका सिद्धान्त प्रस्तुत किया । इनके अनुसार शीर्षस्थ कोशिका शीर्ष विभज्योतक की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई (structural and functional unit) है, जो समस्त वृद्धि क्रियाओं को निर्धारित करती है । यह सिद्धान्त सामान्यतया आवृतबीजियों (angiosperms) पर संरचना एवं लागू नहीं होता है । ब्रायोफाइटा तथा टेरिडोफाइटा में यह सिद्धान्त पाया जाता है । वुल्फ (Wolff) एवं हाफमिस्टर (Hofmeister) ने इस सिद्धान्त का समर्थन किया ।

2. **हिस्टोजन सिद्धान्त** (Histogen Theory): इस सिद्धान्त को हैन्सटीन (Hanstein 1868) में प्रतिपादित किया । उन्होंने प्ररोहशीर्ष में तीन भ्रूणीय (embryonic) क्षेत्र स्थापित किये, इन्हें हिस्टोजन (histogen) नाम दिया (1) सबसे बाहरी हिस्टोजन, जो बाह्यत्वचा का निर्माण करती है वह डर्मेटोजन (dermatogen) कहलाती है (2) मध्य हिस्टोजन कार्टेक्स का निर्माण करती है तथा वह पेरीब्लम (periblem) कहलाती है । (3) वह हिस्टोजन, जोकि अन्तस्तर स्टील एवं पिथ का निर्माण करती है **प्लीरोम** (plerome) कहलाती है (चित्र 4. 5) । जब अन्य शीर्षों का अध्ययन किया गया तो पाया गया कि विकसित पत्तों का किसी हिस्टोजन स्तरों से कोई सम्बन्ध नहीं है । इसके अतिरिक्त अधिकतर अनावृतबीजी व आवृतबीजी से भी यह क्षेत्रीय विभेदन नहीं पाया गया अत: इस मत को भी समर्थन नहीं मिला ।

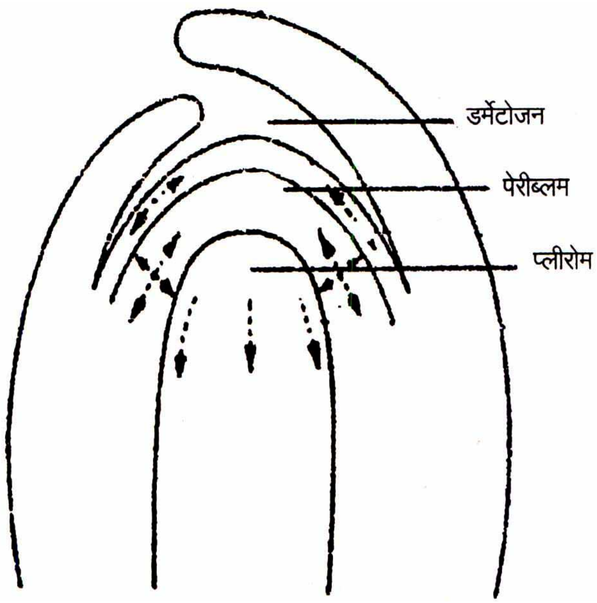

चित्र 4.5: प्ररोह शिखर हिस्टोजन वाद

(3) **ट्यूनिका कॉर्पस सिद्धान्त** (Tunica-Corpus Concept): यह मत श्मिटज (Schmidt 1924) द्वारा प्रतिपादित किया गया । उन्होंने प्ररोहशीर्ष को दो क्षेत्रों में विभेदित किया -

(i) **बाहरी टयूनिका** (Tunica): केवल अपनत (anticlinal) विभाजन प्रदर्शित करती है अत: यह मात्र सतह वृद्धि करती है।

(ii) **कार्पस** (Corpus): समस्त तलों में विभाजन प्रदर्शित करती है और इस प्रकार आकार अथवा आयतन में वृद्धि करती है । किसी एक पादप जाति में ट्यूनिका स्तरों की संख्या निश्चित होती है परन्तु कुछ में विभिन्नताएँ भी पायी जाती है । ट्यूनिका स्तर कभी-कभी परिधीय (periclinal) विभाजन प्रदर्शित करते हैं । पादप की आयु के साथ ही कभी-कभी ट्यूनिका स्तरों की संख्या भी परिवर्तित हो जाती है (चित्र 4.6) ।

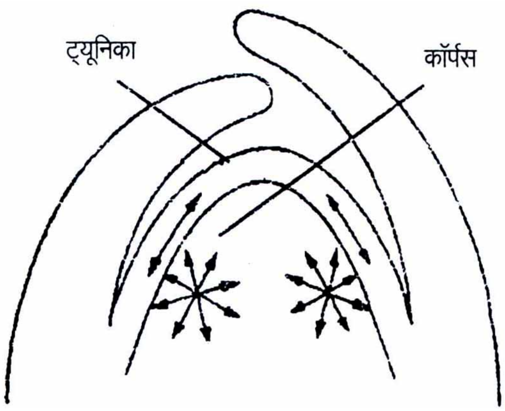

चित्र 4.6 : प्ररोह शिखर ट्यूनिका कार्पसवाद

इस सिद्धान्त पर **फोस्टर** (Foster 1937,49) तथा रवि (Reeve 1942) ने भी ट्यूनिका कॉर्पस सिद्धान्त के सम्बंध में निम्नलिखित महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किये ।

(i) विभिन्न पादप जातियों में ट्यूनिका की परतों की संख्या में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है । मौसमी वृद्धि परिवर्तनों (seasonal growth changes) से परतों की संख्या प्रभावित होती है । रवि (1942) ने इन प्रभावों का घटनान्तराल आवर्तिता (plastochron periodicity) बताया है ।

(ii) ट्यूनिका त था कॉर्पस के मध्य सीमारेखा सुनिश्चित नहीं होती है कई बार ही पादप जाति में यह भिन्न-भिन्न समय पर भिन्न-भिन्न भी हो सकती है ।

(iii) कुछ उदाहरणों में दोनों क्षेत्रों में स्पष्ट परिसीमा (boundary) नहीं होती है ।

(4) **हिस्टोजेनिक स्तर सिद्धान्त** (Histogenic Layer Concept) यह मत **डर्मन** (Derman, 1947) ने प्रतिपादित किया था । इस मत में ट्यूनिका-कॉर्पस के स्थान पर प्राथमिक हिस्टोजेनिक स्तरों (primary histogenic layers) का प्रयोग किया । इसके स्तरों में तीन प्रकार स्थापित किये LI, LII and LIII I इन स्तरों के प्लॉयडी स्तरों (ploidy level) में विभिन्नता थी । LI LII and LIII के प्लॉयडी स्तर 2-2ए 2-4 अथवा 4.4.4 हो सकते हैं ।) LI स्तर बाह्यत्वचा का LII स्तर अधत्वचा का (कभी - कभी कॉटेक्स का भी व LIII रम्भ (stele) व पिथ (pith) का निर्माण करते हैं । अत: यह मृत ऊतकजन का सुधरा हुआ रूप है ।

(5) **मेन्टल कोर अथवा स्तर कोर सिद्धान्त** (Mantle-core or Layer-core Concept): ट्यूनिका कॉर्पस मत की कमियों को दूर करने हेतु पॉफम व चैन (Popham and Cham-1950) नें एक संशोधित मत प्रस्तुत किया । इन्होंने प्ररोहशीर्ष के बाहरी स्तर के लिए मेन्टल (mantel) शब्द का प्रयोग किया । ऊतकीय संरचना में यह भीतरी स्तर से भिन्न था । भीतरी स्तर को कोर कहा गया । पाफम (1952) ने सात प्रकार के शीर्षों का वर्णन किया, जिनमें से दो आवृतबीजियों में पाये जाते हैं । (i) **सामान्य एन्जियोस्पर्मिक प्रकार** व (ii) **ओपन्शिया प्रकार** (opuntia) (चित्र 4.7) ।

(i) **सामान्य एन्जियोस्पर्मिक प्रकार** (Common Angiospermic Type): इसमें कॉर्पस अथवा कोर मध्यवर्ती जनक कोशिकाओं (central mother cell) में विभेदित होते हैं । मध्यवर्ती जनक कोशिकाओं के ठीक नीचे रिब विभज्योतक (rib meristem) स्थित होते हैं । यह रिब विभज्योतक फलेन्क विभज्योतक (Flank meristem) के मध्य में स्थित होते हैं । फलेन्क विभज्योतक पर्ण प्राइमोर्डिया, वल्कुट, प्रोकेम्बियम व कभी-कभी बाहरी पिथ का निर्माण करती है । बाह्यत्वचा का निर्माण मेन्टल के बाहरी क्षेत्र से एवं पिथ का निर्माण रिब विभज्योतक से होता है (चित्र 4.7) ।

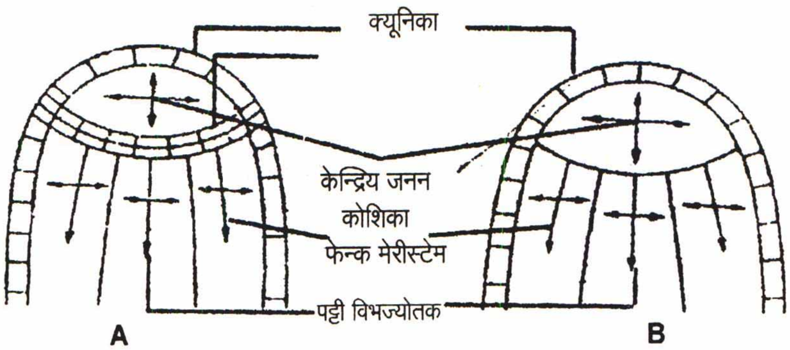

चित्र 4.7 : प्ररोह शीर्ष, मेन्टल कोर वाद A. ओपन्सिया B. सामान्य आवृत बीजी

(ii) **ओपन्शिया प्रकार** (Opuntia Type): मध्यवर्ती जनक कोशिकाओं के ठीक नीचे एक केम्बियन के समान क्षेत्र की उपस्थिति इसका मुख्य लक्षण है (चित्र 4.7) ।

यह वर्गीकरण अधिकतर शीर्षों द्वारा प्रदर्शित नहीं किया जाता है, अत: इसका अनुसरण नहीं किया गया ।

(6) **मेरिस्टेमे डी एटेन्टे सिद्धान्त** (Meristeme D Attente Concept): इस सिद्धान्त को बूवेट (Buvat, 1952, 1955) द्वारा प्रस्तुत किया गया ।. इन्होंने प्ररोहशीर्ष को चार क्षेत्रों में विभेदित किया, जिनको **एन्यूइनिशियल** (anneau initial) **मेरिस्टेमे डी एटेन्टे** (meristeme d attente), **मेरिस्टेमे मेडयूलेयर** (mcristeme medulliare) वर्धी प्ररोह का सक्रिय क्षेत्र को **एन्यू इनिशियल** नाम दिया गया (चित्र 4. 8) । यह शीर्ष के नीचे आधारी पार्श्व दिशा में स्थित होता है । मेरिस्टेमे मेडयूलेयर एक केन्द्रीय क्षेत्र है जो पिथ का निर्माण करता है । मेरिस्टेमे डी एटेन्टे को **प्रोमेरिस्टेमे स्पोरोजीन** (promeresteme sporogence) तथा प्रोमेरिस्टिमे रिसेप्टेकुलेर (promeresteme receptacularie) में विभेदित किया जाता है ।

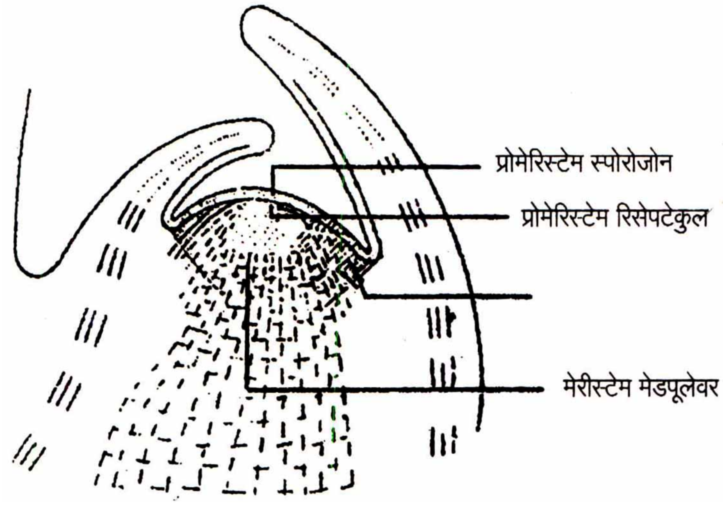

चित्र 4.8 : प्ररोह शीर्ष मेरिस्टेमे डी एटेन्टे वाद

शीर्ष पुष्प अथवा पुष्पक्रम के निर्माण के समय मेरिस्टेमे डी एटेन्टे (प्रतीक्षारत विभज्योतकत्र) सक्रिय हो जाता है । वास्तव में यह सिद्धान्त ट्यूनिका-कॉर्पस सिद्धान्त का मात्र संशोधित प्रारूप है। इसके विभिन्न क्षेत्रों को निम्न प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है (चित्र 4.8) ।

- ट्यूनिका
  - एन्यू इनेशियल
  - प्रोमेरिस्टेमे स्पोरोजीन
- कॉर्पस
  - प्रोमेरिस्टेमे रिसेप्टेकुलेर
  - मेरिस्टेमे मेडुलेयर

प्रोमेरिस्टेमे स्पोरोजीन, प्रोमेरिस्टेमे रिसेप्टेकुलेर — मेरिस्टेमे डी' एटेन्टे (प्रतीक्षारत विभज्योतक)

यह मत **प्लेन्टीफाल** (1947) के पर्ण विन्यास मत पर आधारित है ।

(7) **न्यूमेन का सिद्धान्त** (Newman's Concept): न्यूमेन (Newman 1965) ने प्ररोहशीर्ष में स्थायी ऊतकों की प्रारम्भिक कोशिकाओं का कोई समूह स्थापित नहीं किया । उनके विचार में यह एक विभज्योतकी कोशिकाओं की एक शृंखला है जिसे उन्होंने कन्टिन्यूइंग मेरिस्टेमेटिक रेजीडयू (continuing meristematic residue) कहा । कोशिकाएँ एक निश्चित समय के लिए प्रारम्भिक कोशिकाओं की भांति कार्य करती है । इस विभज्योतकी कोशिकाओं के प्रकार के आधार पर उन्होंने तीन प्रकार के शीर्ष स्थापित किये जो इस प्रकार है ।

(i) **मोनोप्लेक्स प्रकार** (Monoplex Type) इसमें नियमित विभज्योतक अवशेष विशिष्ट स्तर में पाये जाते हैं तथा भीतर की ओर मुख किये होते हैं । लम्बाई व चौड़ाई में वृद्धि के लिए इन्हें केवल एक विभाजन की आवश्यकता होती है । यह एक या कुछ कोशिकाओं का बना होता है । उदाहरणार्थ: फर्न (चित्र 4.9) ।

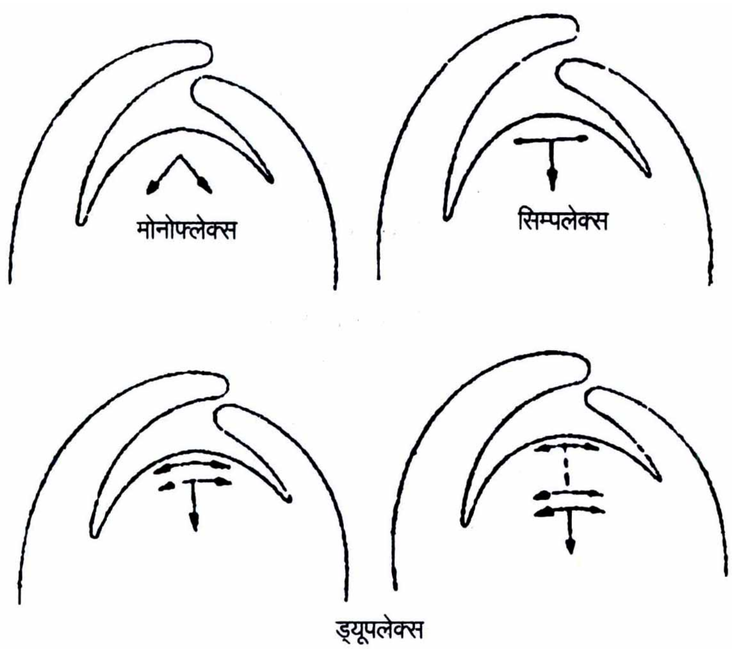

चित्र 4.9 : प्ररोह शीर्ष न्यूमेन सिद्धान्त के अनुसार

(ii) **सिम्लेक्स प्रकार** (Simplex Type): यह विशिष्ट स्तर (superficial layer) में समानान्तरित स्थित नियमित विभज्योतकी अवशेष धारण करते हैं । यह अपनत व परिधीय दोनों प्रकार से विभाजित होते हैं । उदाहरणार्थ. अनावृतबीजी पादप (चित्र 4.9) ।

(iii) **ड्यूप्लेक्स प्रकार** (Duplex Type) इसमें विभज्योतकी अवशेष समानान्तरीय रूप से म एवं द्वितीय स्तरों में स्थित होते हैं । यदि प्र थम स्तर में यह विभाजन केवल अपनत से होता है तो अगले स्तर में यह अपनत व परिनत (antidinal and periclinal) दोनों प्रकार से होता है (चित्र 4. 9) । उदाहरण : आवृतबीजी पादप ।

(8) **कोशिका ऊतकीय अनुक्षेत्र** (Cytohistological Zonation): **फोस्टर** (Foster 1939) विभेदन कोशिका विभाजन की प्रावस्था, केन्द्रक के आकार एवं कोशिकाद्रव्य की संघनता एवं संगठन के आधार पर किया जाता है । ये चार क्षेत्रों में निम्न प्रकार से बांटा गया है ।

(i) **शीर्षस्थ प्रारम्भिक क्षेत्र** (Apical Initial Zone): इस क्षेत्र में शीर्ष पर स्थित कोशिकाओं का समूह त था उनसे निर्मित सीमावर्ती पार्श्व कोशिकाओं को शामिल किया गया है । इस क्षेत्र की कोशिकाओं में अपनत विभाजन होता है, परन्तु कुछ परिस्थतियों में इनमें परिनत विभाजन भी होता है । इस क्षेत्र की कोशिका कम विभाजन करती है तथा परिधीय मेरिस्टेम (peripheral meristem) एवं केन्द्रीय जनन कोशिका क्षेत्र का निर्माण करती है (चित्र 4.10) ।

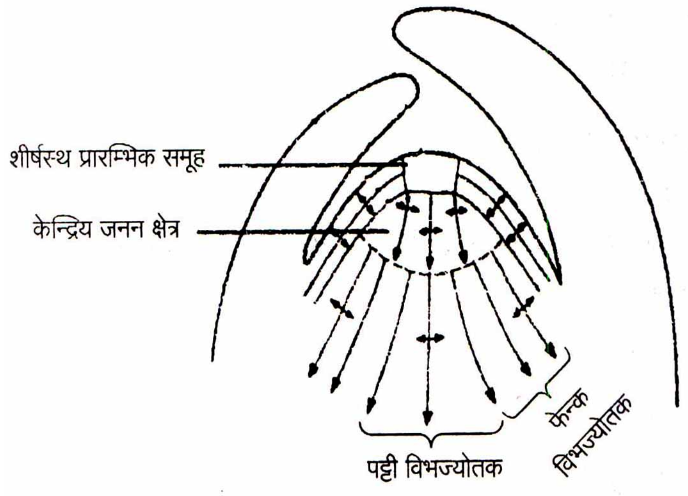

चित्र 4.10 शीर्ष विभज्योतक का कोशिका ऊतकी अनुक्षेत्र

(ii) **केन्द्रीय जननकोशिका क्षेत्र** (Central Mother Cell Zone): यह क्षेत्र शीर्षस्थ प्रारम्भिक क्षेत्र से निर्मित है तथा इसकी कोशिकाएँ अपेक्षाकृत बड़ी, बहु कोणीय व अनियमित रूप से व्यवस्थित होती है । इनकी कोशिकाओं में विभाजन दर अपेक्षाकृत कम होती है त था सभी तलों में विभाजन होता है । यह परिधीय विभज्योतक क्षेत्र का निर्माण करती है ।

(iii) **पट्टी विभज्योतक क्षेत्र** (Rib Meristem Zone): यह क्षेत्र जनन कोशिका क्षेत्र से निर्मित होता है । इस क्षेत्र की कोशिकाएँ उर्ध्वाधर क्रम में व्यवस्थित होती है, तथा अनुप्रस्थ (transverse) विभाजन करती है । इससे मज्जा (pith) का निर्माण होता है ।

(iv) **परिधीय विभज्योतक क्षेत्र** (Peripheral Meristem); इसका निर्माण शीर्षस्थ प्रारम्भिक क्षेत्र एवं केन्द्रीय जनन कोशिका क्षेत्र से होता है । निर्माण के आधार पर इसे **फ्लेक विभज्योतक** (flank meristem) भी कहते हैं । इनका कोशिकाद्रव्य सघन होता है, तथा इसमें विभाजन दर अधिक होती है । इससे **पर्णअद्यकों** (leaf primordia) का निर्माण होता है ।

कोशिका ऊतकीय क्षेत्र में चारों ही उपरोक्त क्षेत्रों में कोशिका आकारिकी (cell structure) तथा जैव रासायनिक (bio-chemical) विभिन्नताएँ पायी जाती है । यह क्षेत्र अनावृतबीजियों कें अतिरिक्त आवृतबीजियों में भी पाया जाता है । विभिन्न पौधों के प्रोहशीर्ष में DNA, RNA, हिस्टोन एवं शर्करा की मात्रा में विविधताएँ पायी जाती है ।

बोध प्रश्न - 1

1. विभज्योतक के वर्गीकरण में किस आधार को लिया गया है ।

   ....

   ....

2. द्वितीयक विभज्योतक का निर्माण किससे होता है ।

   ....

   ....

3. डर्मन ने कौन सा सिद्धान्त प्रतिपादित किया था ।

....

....

4. ट्यूनिका कॉर्पस सिद्धान्त किसने प्रस्तुत किया ।

....

....

5. अन्तर्वेशी विभज्योतक तथा पार्श्व विभज्योतक में अन्तर बताइये ।

....

....

4.3 तने की प्राथमिक संरचना (Primary Structure of Stem)

पादप मुख्य रूप से मूलतंत्र (root system) एवं प्ररोह तंत्र (shoot system) से बना होता है। तना मुख्य रूप से पत्तियाँ, फूल एवं फलों को यांत्रिक सहारा देता है तथा उन तक पदार्थों का संवहन का कार्य करता है ।

तने का विशिष्ट लक्षण (Characteristic Features of Stem/Shoot): तने के कुछ विशिष्ट आकारिकी एवं शारीरिक (morphological and anatomical) लक्षण होते हैं ।

1. तना सदैव कलिका (bud) से बनता है ।
2. तने पर पर्व एवं पर्व संधियाँ (node and internodes) पाये जाते हैं ।
3. तना सामान्यतया ऋणात्मक गुरुत्वानुवर्ती तथा घनात्मक प्रकाशनुवर्ती होता है ।

तने की शारीरिकी के विशिष्ट लक्षण (salient Characters of Stem Anatomy)

1. तने की बाह्यतम परत अधिचर्म (epidermis) पतली अथवा मोटी क्यूटिन की परत से ढकी होती है ।
2. तने पर उपस्थित रोम (hair) बहुकोशिकीय (multicellular) होते हैं ।
3. वल्कुट (cortex) की सबसे भीतरी पतर अंतश्त्वचा में सामान्यतया कैस्पेरियन पट्टिका नहीं होती है । अनेक पादपों में इस परत में मंडकण (starch grains) बहुलता से होते हैं, अत: यह मंड आच्छद (starch sheath) भी कहलाती है ।
4. संवहन पूल (vascular bundles) सामान्यतया **संयुक्त** (conjoint) **बहिपोषवाही** संपार्श्विक (collateral) होते हैं ।
5. शाखाओं की उत्पत्ति **बहिजात** (exogenous) होते हैं ।

तने की प्राथमिक आन्तरिक संरचना (Primary Internal Structure of Stem)

आवृतबीजी पादपों में दो मुख्य समूह द्विबीजपत्री एवं एक बीजपत्री पादपों के होते हैं । इन पादपों के तने की आन्तरिक संरचना एवं शारीरिकी भी भिन्न होती है । इन दोनों समूहों में तने की सामान्य संरचनाओं का वर्णन निम्न प्रकार से है ।

4.3.1 एक बीजपत्री तने की प्राथमिक संरचना

(Primary Structure of monocotyledon Stem)

सामान्यतया एक बीजपत्री तने की आन्तरिक संरचना के आधार पर इसमें भी द्विबीजपत्रियों कीं तरह तीन ऊतक तंत्र होते हैं ।

(i) **बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र** (Epidermal Tissue System)

आधिचर्म (Epidermis): अधिचर्म द्विबीजपत्री पादपों की तरह ही होती है । अधिकांश एकबीजपत्री पादप शुष्कोद्भिद होते हैं । ऐसे पादपों में **क्यूटिकल** (cuticle) की मोटी परत पाई जाती है तथा अनेक पादपों में अधिचर्म के रंध्र (stomate) पाए जाते हैं (गेहूँ)।

(ii) **भरण ऊतक तंत्र** (Ground Tissue System): एक बीजपत्री पादपों में द्विबीजपत्री पादपों से थोड़ी भिन्नता पाई जाती है । इनमें सुनिश्चित वल्कुट का अभाव होता है । तथा पूरे भरण ऊतक में संवहन पूल (vascular bundles) बिखरे रहते हैं । अनेक पौधों में भरण ऊतक का बाहरी भाग द्विबीजपत्रियों में अधश्त्वचा (hypodermis) की भाँति विभेदित होता है । अधिकांश एकबीजपत्री पादपों में अधश्त्वचा उपस्थित होती है, जोकि दृढ़ोतकी (sclerenechymatous) होती है । सामान्यतया अधश्त्वचा में स्थूलकोणोतक (collenchyma) का अभाव होता है । भरण ऊतक की बाहर की ओर कोशिकाएँ छोटे आकार की होती है, जबकि केन्द्र की ओर कोशिकाएँ बड़े आकार की तथा अधिक अन्तराकोशिकी अवकाश (intercellular space) युक्त होती है (चित्र 4.11) ।

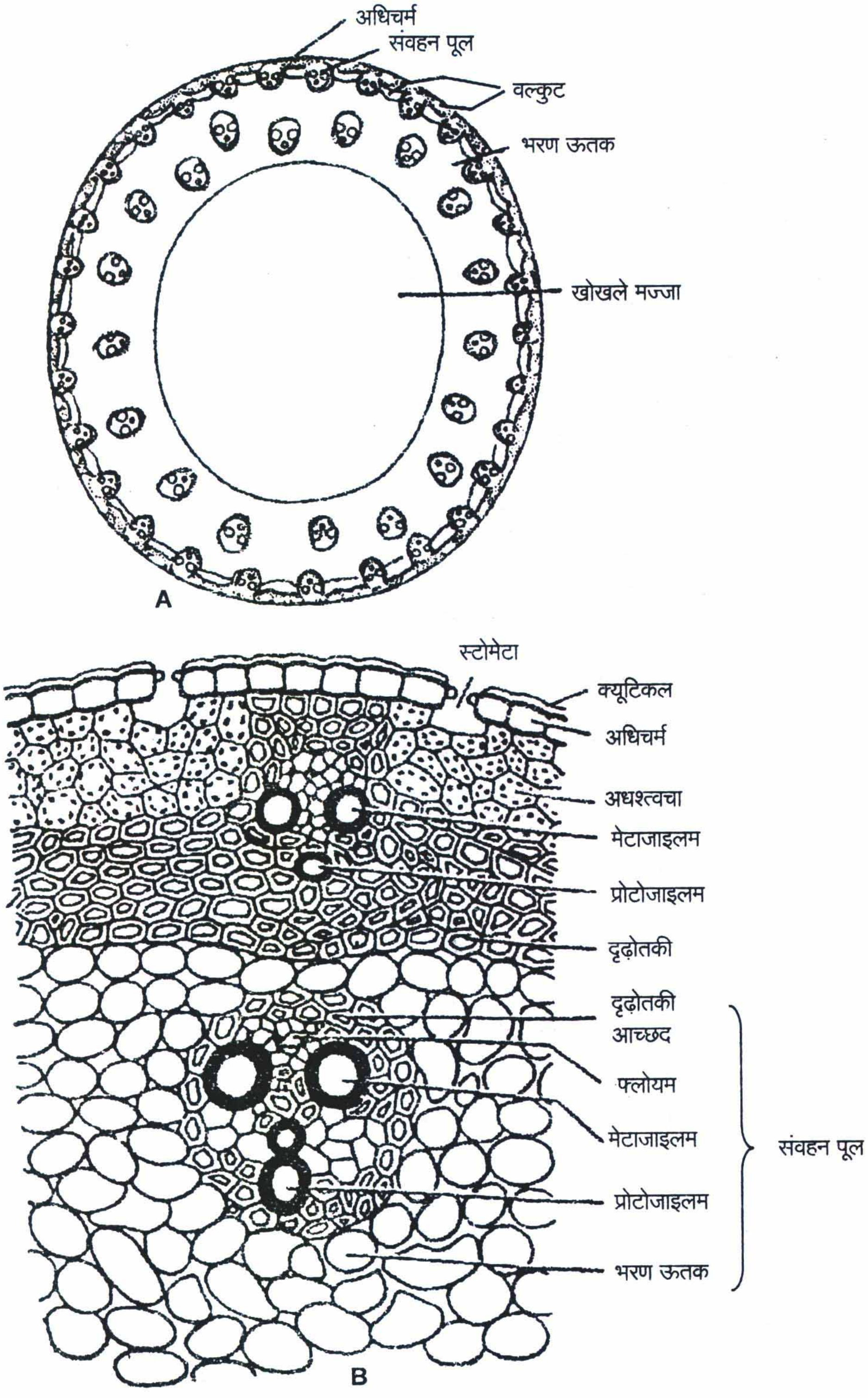

चित्र 4.11 : गेहूँ के तने की अनुप्रस्थ काट में वलयों में उपस्थित संवहन पूल : A आरेखी निरुपण एवं B. एक भाग कोशिकीय

(iii) संवहन ऊतक तंत्र (vascular Tissue System)

संवहन पूल (vascular Bundle) : अधिकांश एक बीजपत्रियों में संवहन में बिखरे रहते हैं । भरण ऊतक के बाहरी क्षेत्र में संवहन पूल छोटे आकार के तथा मज्जा अथवा केन्द्र की ओर बड़े आकार के होते हैं, तथा ठीक केन्द्र के आसपास का क्षेत्र पूलरहित होता है (चित्र 4.12) ।

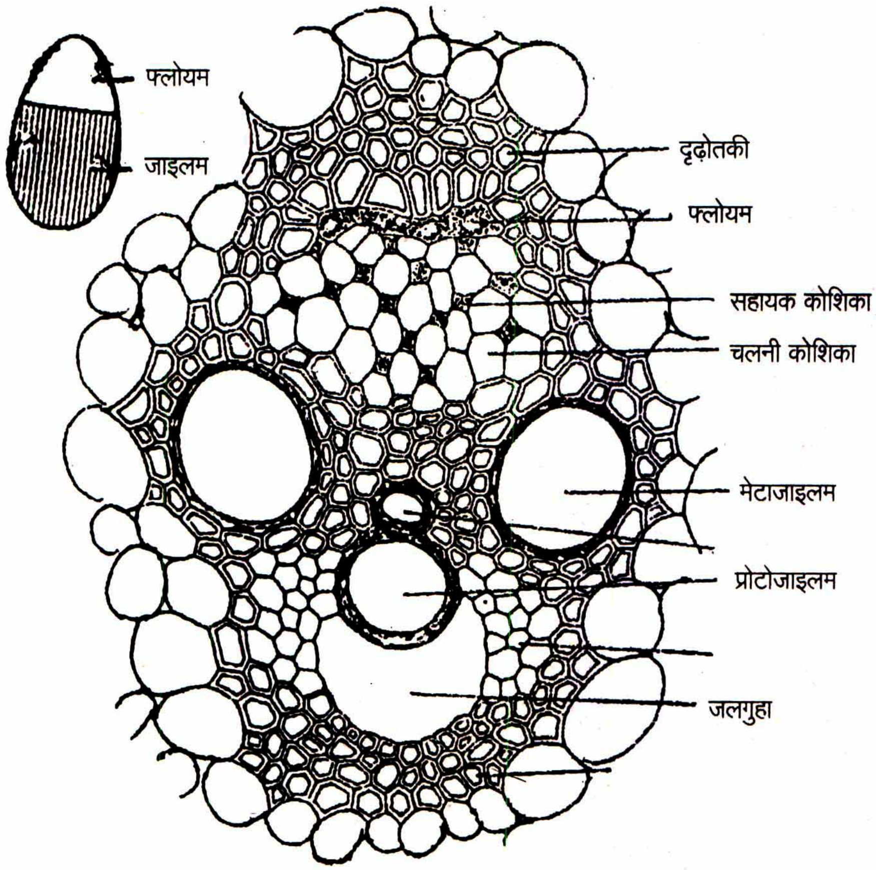

चित्र 4.12 : एकबीजपत्री पादपों में सामान्यत : उपस्थित अवर्धी संपार्श्विक संवहन पूल

संवहन पूल संयुक्त (conjoint) अवर्धी संपार्श्विक (collateral), अत : आदिदारूक (endarch) होते हैं अर्थात् एधाविहिन (without cambium) होते हैं । इसी कारण से एकबीजपत्रियों में सामान्य द्वितीयक वृद्धि नहीं पायी जाती है । संवहन पूल में जाइलम की रचना द्विबीजपत्रियों के समान ही होती है, परन्तु फ्लोएम में फ्लोएम मृदूतक (phloemparenchyma) का अभाव होता है । इसके मुख्य रूप से चालनी तत्व (sieve elements) तथा सहचर कोशिकाएँ (companion cells) ही होते हैं। (चित्र 4.12, 4.13) ।

संवहन पूलों की संख्या द्विबीजपत्रियों की तुलना में अधिक होती है । इनमें अनेक पर्ण अनुपथपूल (leaf trace bundle) होते हैं, जो तने में बहुत दूर तक चलते हैं तथा पर्व सीध (node) पर शाखामिलन (anastomosis) होते हैं ।

कुछ एकबीजपत्रियों में जैसे **एकोरस** (Acorus) प्राथमिक पूल तथा **ड्रेसीना** (Dracaena) में द्वितीयक वृद्धि के दौरान बने संवहन पूल **पोषवाह केन्द्री** होते हैं ।

4.3.2 द्विबीजपत्री तने की प्राथमिक संरचना (Primary Structure of Dicot Stem)

द्विबीजपत्री तने की प्राथमिक आंतरिक संरचना में तीन ऊतक तंत्र, (1) बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र (epidermal tissue system) भरण ऊतक तंत्र (ground tissue system) त था संवहन ऊतक तंत्र(vascular tissue system) समाहित होते हैं ।

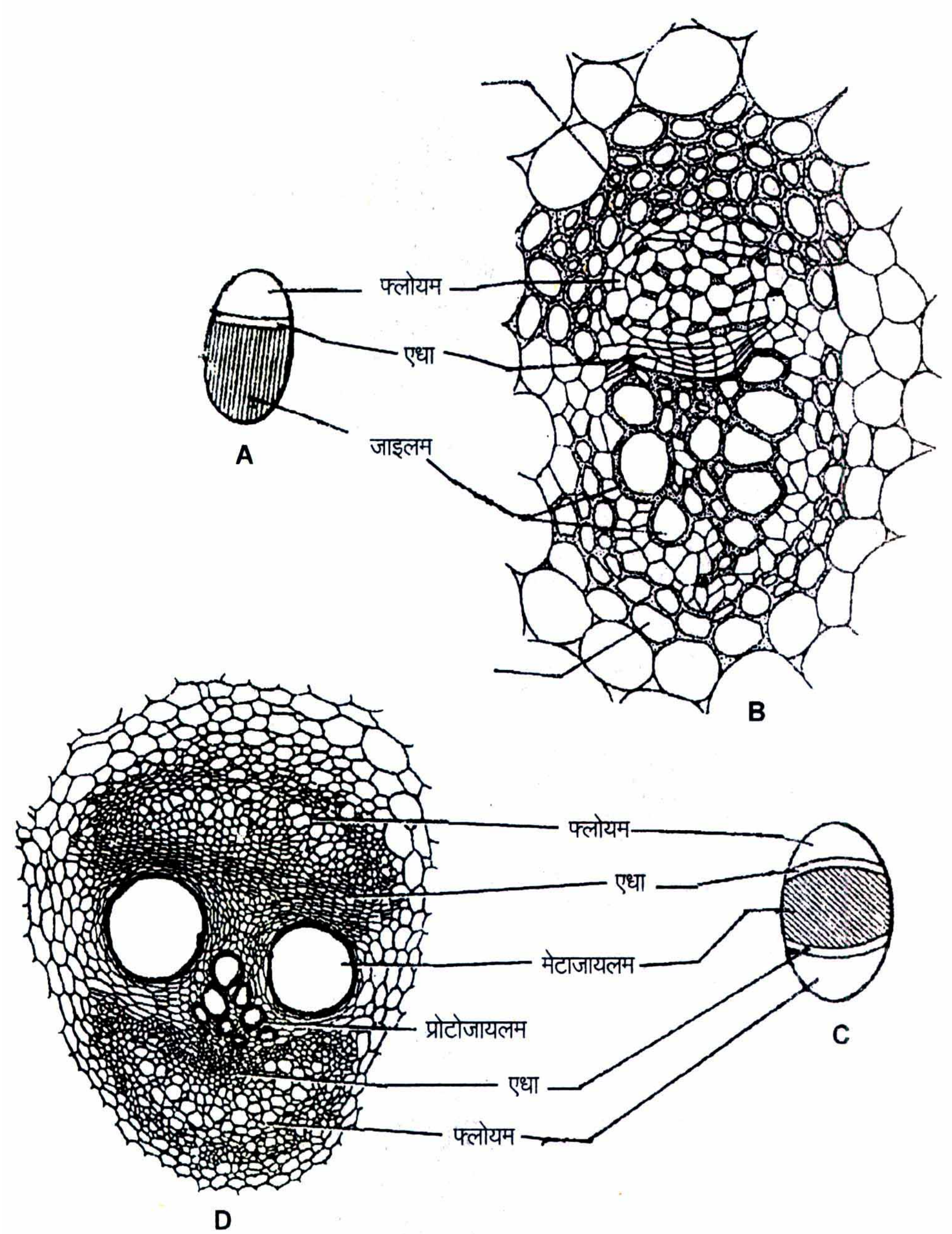

चित्र 4.13 : संयुक्त प्रकार के संवहन पूल : (A, B) संपार्श्विक वर्धी पूल एवं (C,D) कुकुरबिटा में संद्विपार्श्विक वर्धी पूल

(1) **बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र** (Epidermal Tissue System): इसके अन्तर्गत अधिचर्म (epidermis) आती है ।

1. **अधिचर्म** (Epidermis) : तने का बाह्यतम आवरण **अधिचर्म** अथवा बाह्यत्वचा कहलाती है, इसकी आयताकार कोशिकाएँ एक पंक्ति में व्यवस्थित रहती हैं । इसकी बाहरी स्पर्शरेखीय भित्ति पर **क्यूटिन** (cutin) की मोटी अथवा पतली परत होती हैं। जिसको **क्यूटिकल** (cuticle) कहते हैं । इसके अतिरिक्त कभी-कभी इनकी अरीय भितियाँ भी मोटी तथा क्यूटिन युक्त होती हैं । सामान्यता कोशिकाएँ जीवित होती हैं, एवं अपतनिक विभज्ञजन (anticlinal divisions) के द्वारा तने के व्यास की वृद्धि के समय स्पर्शरेखीय विस्तार (tangential expansion) होती हैं ।

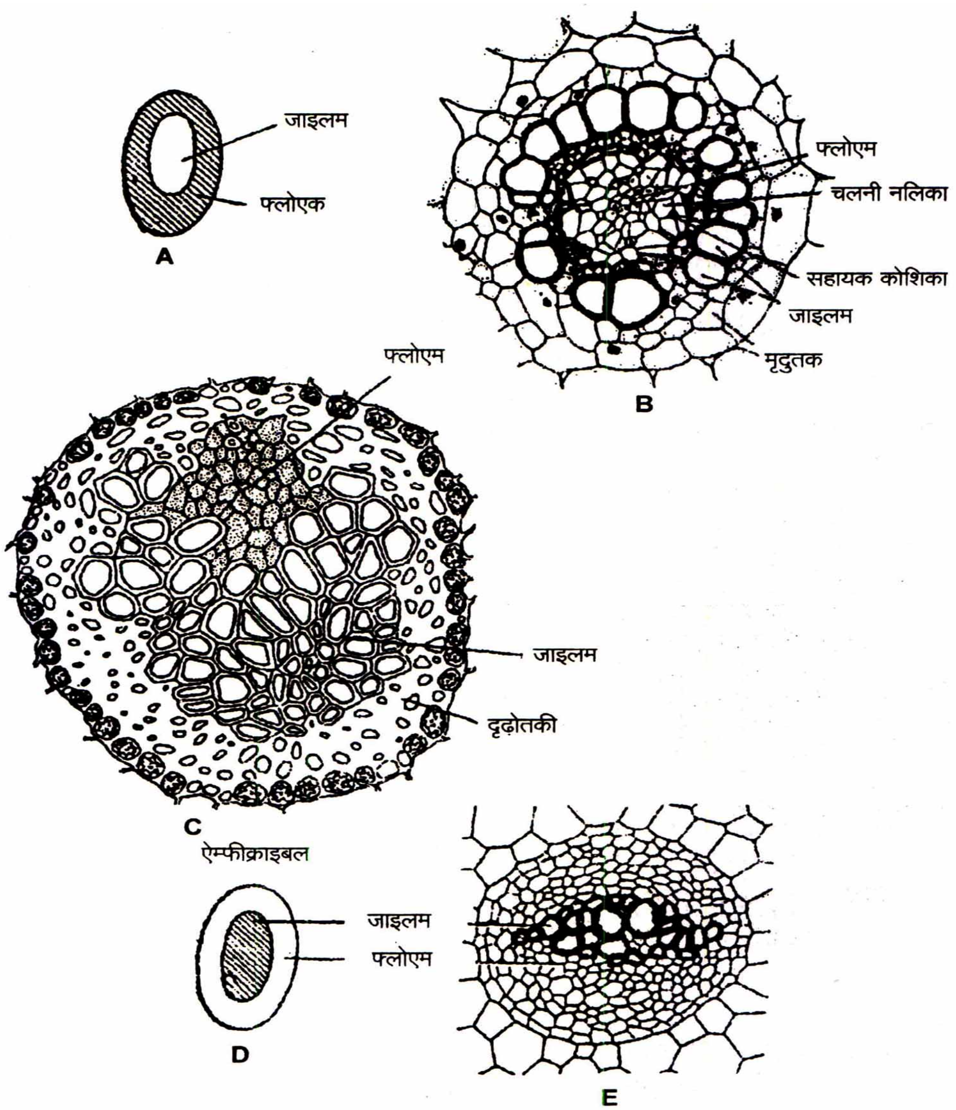

चित्र 4.14 : संकेन्द्री प्रकार के संवहन पूल : (A,B)पोषवाह केन्द्री पूल, (C) किंगिया में तीन ओर से घिरा फ्लोएम एवं (D,E) दारूकेन्द्री पूल

जलीय पादपों को छोड़कर अधिकांशतः पादपों में अधिचर्म में **क्लोरोप्लास्ट** (chloroplast) नहीं पाये जाते हैं, अनेक पादपों में अधिचर्म में बीचोबीच में रन्ध्र (stomata) पाए जाते हैं, रंध्र में वो वृक्काकार (kidney shaped) द्वार कोशिकाएँ (guard cells) होती है, जो क्लोरोप्लास्ट युक्त होती है, तथा रंध्रछिद्र (stomata pore) को नियंत्रित करते हैं । रंध्र के अतिरिक्त अधिचर्म से विभिन्न प्रकार के रोम जैसे ग्रंथिल (glandular), **अधिचर्म रोम** (epidermenl hair) **पेपिला** (papilla) इत्यादि भी होते है जो अल्पकालिक (short lived) अथवा **अपाली** (persistent) भी हो सकते हैं। (चित्र 4.15) ।

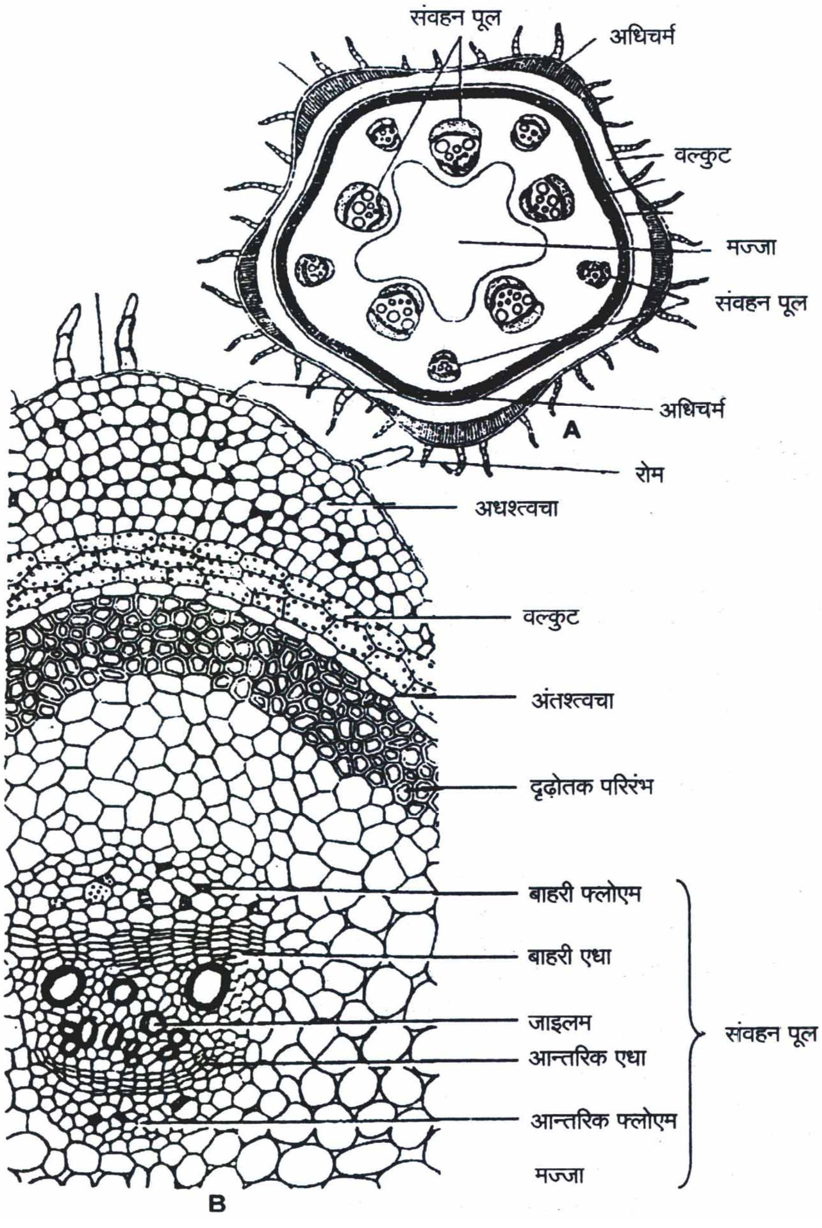

चित्र 4.15 : कुकरबीटा स्तम्भ की अनुप्रस्थ काट : A. आरेखी चित्र एवं B. एक भाग कोशिकीय (कोणीय उभार से होकर)

अधिचर्म अथवा बाह्यत्वचा मुख्य रूप से रक्षीपरत (protective layer) है, जो भीतरी ऊतकों को प्रतिकूल तापमान से बचाती है । क्यूटिकल एक जलसतह (waterproof) सतह के रूप में काम करती है । क्यूटिकल एक जलसतह (waterproof) सतह के रूप में काम करती है । यह वाष्पोत्सर्जन (transpiration) द्वारा जलहानि को कम करने में सहायक होती है । सामान्यतया शाकीय (herbaceous) पादपों में अधिचर्म चिरस्थायी (persistent) होती है जबकि बहुवर्षी काष्ठीय (perennial woody) पादपों में अधिचर्म नष्ट हो जाती है तथा परिचर्म (periderm) उसे विस्थापित करता है (चित्र 4.15)।

(ii) **भरण ऊतक तंत्र** (Ground Tissue System): यह ऊतक अधिचर्म के नीचे से मज्जा तक होता हैं I द्विबीजपत्री पादपों में यह वल्कुट (cortex), परिरंभ (pericycle), मज्जा (pith) एवं मज्जाकिरणे (medullary rays) में विभेदित होता है । वलयित संवहनपूल युक्त तने में वल्कुट को रंग बाह्य भरण ऊतक (extrasteler ground tissues) तथा शेष को अंतरारंभ भरण ऊतक (intrasteler ground tissues) भी कहते हैं । ये स भी भरण विभज्योतक से विकसित होते हैं (चित्र 4.15) ।

(i) **वल्कुट** (Cortex): यह अधिचर्म (epidermis) तथा संवहन ऊतक तंत्र (vascular system) के बीच का भाग है । अधिकांश द्विबीजपत्रियों में यह अधश्त्वचा (hypodermis) मध्य वल्कुट (middle cortex) तथा अतश्त्वचा (endodermis) में विभेदित होता है । (चित्र 4.15) I

(अ) **अधश्त्वचा** (Hypodermis): अधिचर्म (epidermis) के नीचे उपस्थित परत अधश्त्वचा (hypodermis) कहलाती है । अनेक शाकीय पौधों में अधश्त्वचा **स्थूल कोणोतकी** (collenchymatous) होती है । यह सामान्यतया 4-5 परतों से बनी होती है । अधश्त्वचा मुख्य रूप से तरुण तने को यांत्रिक सहारा (mechanical support) देती है । अनेक शाकीय पौधों में इन कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट भी होता है । इनकी कोशिकाएँ प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) का कार्य करती है (चित्र 4.15) ।

(ब) मध्य वल्कुट (Middle Cortex): अधश्त्वचा के नीचे बहुपरतीय मृदुतकी (parenchymatous) कोशिकाओं की परत होती है, इस भाग में कोशिकाएँ गोलाकार बहुभुजी अथवा अंडाकार होती है जिनसे बीच में अन्तराकोशिकी अवकाश (intercellular spaces) पाये जाते हैं । कुछ पादपों में इसकी बाहरी मृदुतकी परतों से **क्लोरोप्लास्ट युक्त** हरित ऊतक (chorenchyma) भी पाया जाता है । जलीय पौधों जैसे **हाइड्रिला** (hydrilla) में वल्कुट में वापुतक (aerebchyma) पाया जाता है । वापुतक में दृढकोशिकाएँ (sclereids) भी पाये जाते हैं । वल्कुट में मृदुतकी कोशिकाएँ पदार्थों के पार्श्वस्थानांतरण में मदद करती है । पदार्थों का संचय (storage) करती है । हरितलवक प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती है । अंतराकोशिकीय अवकाश गैसीय आदान-प्रदान में सहायता करता है (चित्र 4.15) ।

(स) अंतश्त्वचा (Endodermis): अंतश्त्वचा वल्कृट की सबसे भीतरी परत होती है । तने में वल्कुट एवं रंभ की परिसीमाएँ पहचानना कठित होता है, क्योंकि सुस्पष्ट (distinct) का अभाव होता है ना ही इसके उद्‌गम के बारे में कोई स्पष्टता होती है ।

अंतश्त्वचा सघन रूप से व्यवस्थित जीवित कोशिकाओं की एक परत होती है, जो खोखले सिलिंडर के रूप में संवहन तंत्र को घेरे रहती है ।

तने में सामान्यत : कैस्पेरियन पट्टी नहीं पायी जाती है, हालांकि कुछ शाकीय एवं जलीय पौधों में ये पट्टियां देखी गई है । अनेक द्‌विबीजपत्री पौधों में इस परत में मंड (starch) बहुतायत रूप में होता है तथा यह मंड आच्छद (starch sheath) कहलाती है जैसे कुकरबिटा एवं अरंड (Ricinus) (चित्र 4.12) ।

2. **परिरंभ** (Pericycle): परिरंभ सामान्यतया वल्कुट तथा संवहन ऊतक के बीच में स्थित अपोषवाही उत्पत्ति (nonphloic origin) वाले ऊतक को कहते हैं । परिरंभ एक पंक्तिक (singlelayered) अथवा बहुपंक्तिक्र हो सकती है । बहुपंक्तिक परिरंभ दृढ़ोतकी (sclerenchyman) तथा मृदुतकी दोनों प्रकार की कोशिकाओं से बना होता है । दृढ़ोतक एक पूरे वलय के रूप में भी हो सकता हैं । परिरंभ में दृढ़ोतकी तंतु अप तंतुओं के समान ही मोटी भित्ति युक्त लिग्निन स्थूलित (Lignified) लम्बी मृत कोशिकाएँ होती है तथा तने को यांत्रिक सहायता प्रदान करती है (चित्र 4.15) ।

3. **मज्जा** (pith): यह संवहन पूलों (vascular bundles) से घिरी लगभग बेलनाकार संरचना हैं, तथा इसे मेडुला (medulla) भी कहते हैं । सामान्यतया मज्जा मृदुतकी जो गोलाकार, अंडाकार, अथवा बहुभुजी कोशिकाओं से बनी होती है तथा इनके बीच में अन्तराकोशिकी अवकाश पाया जाता है । कभी-कभी मृदुतकी कोशिकाओं से लिग्निन स्थूलन भी पाया जाता है । तंतु बहुत कम ही मिलते हैं । पर्व में मज्जा की कोशिकाएँ बहुत शीघ्र ही परिपक्व होने लगती है ।

4. **मज्जाकिरणे** (Medullary Rays): मज्जा किरणें एक प्रकार से मज्जा का संवहन पूलों के बीच में विस्तार होता है तथा संवहन पूल इनमें माध्यम से एक दूसरे से विलग रहते हैं । सामान्यता मज्जा किरणों की कोशिकाएँ अरीय (radially) दिशा में लम्बी होती है । मज्जा किरणें मुख्य रूप से भोजन, जल एवं खनिजों के अरीव संवहन में उपयोगी होती है ।

(iii) **संवहन ऊतक तंत्र** (Vascular Tissue System): इसमें संवहन पूल (vascular bundles) आते हैं । संवहन में **जायलम** (xylem) तथा **फ्लोएम** (phloem) की व्यवस्था के आधार पर तने में मुख्यतया निम्न प्रकार के संवहन पूल होते हैं । (1) संयुक्त (conjoint) (2) सकेन्द्री (concentric)

(1) **संयुक्त** (conjoint): जाइलम एवं फ्लोएम दोनों एक पूल में एक साथ एक अर्धव्यास में पाये जाते है । ये दो प्रकार के होते हैं (चित्र 4.15) ।

(i) **संपार्श्विक** (Collateral): इस प्रकार के पूल आवृतबीजी तने एवं पत्तियों में सबसे ज्यादा पाए जाते हैं । जायलम एवं फ्लोएम एक ही अर्धव्यास पर एक दूसरे से सटे हुए पाये जाते हैं। जायलम अन्दर की ओर तथा फ्लोएम बाहर की ओर होते हैं । दोनों के बीच (cambium) हो

तो वर्धी (open) तथा अनुपस्थित होने पर **अवर्धी** (closed) पूल कहलाते हैं ।सामान्यतया वर्धीपूल द्विबीजपत्रियों में तथा अवर्धी पूल एक बीजपत्री पादपों में पाये जाते हैं ।

(ii) **समद्विपार्श्विक** (Bicollateral): इस प्रकार के संवहन पूलों (vascular bundles) में एधा के बाहर की ओर उपस्थित फ्लोएम के अतिरिक्त जाइलम के अन्दर की ओर भी फ्लोएम उपस्थित रहता हैं, अर्थात् जाइलम दोनों तरफ फ्लोएम से घिरा रहता है । अन्दर की ओर फ्लोएम अतः पोषवाह (internal phloem) कहलाता हे । अनेक द्विबीजपत्रियों में अतः पोषवाह पायी जाती है ,जैसे **कुकरबिटेस एस्कलिपिडीएसी** तथा कम्पोजिटी (एस्ट्रेसी) इत्यादि परिवार के पौधे ।

(2) **संकेन्द्री पूल** (Concentric bundles): इस प्रकार के पूलों में एक प्रकार का ऊतक दूसरे से पूरी तरह घिरा रहता है । ये दो प्रकार के होते हैं - (i) पोषवाह केन्द्रीपूल तथा (ii) दारूकेन्द्री पूल

(i) **पोषवाह केन्द्रीपूल** (Amphivasal bundles): इसमें जाइलम फ्लोएम को चारों ओर से घेरे रहते हैं (चित्र 4.14) ।

(ii) **दारूकेन्द्री पूल** (Amphicribal bundles): फ्लोएम जाइलम के चारों और से घिरी रहती है। इस प्रकार दारूकेन्द्री पूल सामान्यतया टेरिडोफाइट्स में पाये जाते हैं (चित्र 4.14) ।

4.4 द्विबीजपत्रियों में प्राथमिक प्ररोह का संवहनीकरण (Vascularization of Primary Shoot in Dicots)

विभिन्न प्रकार के द्विबीजपत्री एक दूसरे से प्राथमिक संवहनी भवन (vascularization) के तरीके (pattern) से काफी भिन्नता रखते हैं ।

प्राथमिक संवहन ऊतक एक ठोस बेलन से खोखले तथा अंत में पतले अलग-अलग संवहन पूल के रूप में मिल सकते हैं । विकास के दौरान प्राथमिक संवहन ऊतक की मोटाई कम होती गई अर्थात् अरीय दिशा (radial direction) में तथा पर्णशाला अंतराल (leaf and branch gap) एवं छिद्र (perforations) के कारण होते हैं । इसके साथ ही स्पर्श रेखीय (tangential) दिशा में भी संवहन ऊतक कम हो जाता है । इसके परिणामस्वरूप सतत सिलिण्डर विभिन्न खंडों अथवा पूलों में टूट जाता है ।

मज्जा संभवतः संवहन ऊतक से ही विकसित हुआ है । फ्लोएम सदैव जायलम की तरफ विकसित होती है । अर्थात् **प्राकपौषवाह** (protophloem) बाहर की ओर विकसित होता है । जबकि अनुपोषवाह (metapholem) भीतर की ओर विकसित होता है । इस प्रकार फ्लोएम का विकास अभिकेन्द्री (centripetal) अर्थात् बाहर से केन्द्र की ओर तथा **कुकरविटेसी** में पाई जाने वाली अंतपोषवाह का विकास **अपकेन्द्री** (centrifugal) अर्थात् अन्दर से बाहर की ओर होता है । यदि जाइलम का विकास अभिकेन्द्रकी तथा अपकेन्द्रकी दोनों दिशाओं में हो तो **मध्यादिदारूक** (mesarch) कहलाती है ।

प्ररोह (shoot) में विभिन्न प्रकार के संवहन पूल तथा व्यवस्था पाई जाती है, तथा विभिन्न प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि आवृतबीजी में प्ररोह में संवहन तंत्र पत्तियों एवं तने के

विकास सम्बन्धी क्रिया के फलस्वरूप अस्तित्व में आया है । प्ररोहपर्व एवं पर्वसधियों से बना होता है । सामान्यतया पर्वसंधि पर संवहन संरचना पर्व से कुछ भिन्न होती है, क्योंकि यहाँ से पत्तियों एवं शाखाएँ निकलती है । पत्तियाँ तथा तने के संवहनतंत्र को जोड़ने वाले संवहन पूल **पर्णअनुपथ** कहलाते हैं । एक पत्ती एक अथवा अधिक पर्णअनुपथ संबंधित हो सकती है । रंभ के संवहन तंत्र से इनके विलग होने के कारण बने अन्तराल (gap) को पर्णान्तराल (leaf gap) कहते हैं । यहाँ पर संवहन ऊतक के स्थान पर मृदूतक के समान ही लगता है । अंतःपुष्पी पादपों में यह सरलता से नहीं पहचाना जा सकता है । द्विबीजपत्रियों में पर्वसंधि में 3 प्रकार की रचनाएँ देखी जा सकती है

(i) पत्ती के लिए एक पर्णअनुपथ तथा एक ही पर्णान्तराल बनता है । इसके एक रिक्तिकी अथवा यूनिलेक्यूनर (unilacunar) पर्व संधि कहते हैं ।

(ii) मल्टी लैक्यूनर अथवा बहुरिक्तिकी (multilacunar) पर्वसंधि में स्व पत्ती अनेक पर्ण अनुपथ एवं पर्णान्तराल (leaf gap) से संबंधित होती है ।

(iii) पत्ती के लिए एक केन्द्रीय (median) तथा दो पार्श्व (lateral) (कुललीन) पर्ण अनुपथ निकलते है, तथा तीन पर्णतराल बन जाते हैं । यह रिक्तिकी (trilacunar) पर्वसंधि कहलाती है ।

पर्ण अनुपथ में तने के पूलों की अपेक्षा अधिक जायलम होती है, जैसे जैसे पर्ण अनुपथ पूल आगे बढ़ते है उनका आकार बढ़ता जाता है, जब तक कि वे पर्वसंधि पर पत्ती में प्रवेश नहीं कर जाते हैं । अपसारी (diverging) पर्णअनुपथ की जायलम में विशेष मृदूतक कोशिकाएँ होती है, जो संभवतः संरचना तरुणपादप (seedling) में शीर्षस्थ विभाज्योतक तथा परिपक्व पादपों में कक्षीय कलिकाओं के संदर्भ में पार्श्वीय (lateral) संवहन में मदद करती हैं ।

तने में पर्णअनुपथ जब बाहर की ओर मुड़ते है तो पर्णतराल बन जाते है । इनकी लंबाई, मोटाई, एवं दूरी विभिन्न पादपों में विभिन्न स्तरों (levels) में भिन्न-भिन्न हो सकती है तथा तने की संवहन संरचना को प्रभावित करती है ।

कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार परिरंभ को भी संवहन तंत्र का ही भाग माना गया है, क्योंकि अनेक पादपों में परिरंभ तंतुओं की उत्पत्ति फ्लोएमी (phloic) होती है । सामान्यतया परिरंभ बहिफ्लोएमी (ectophloic) उत्पत्ति वाले ऊतक जो फ्लोएम एवं अंतश्त्वचा के मध्य होता है, को माना गया है । सामान्यतया रंभ (stele) में अंतश्त्वचा के अन्दर के सभी ऊतक, परिरंभ संवहन ऊतक तथा मज्जा भी समहित होते हैं ।

तालिका : एक बीजपत्री एवं द्विबीजपत्री तने में अन्तर

(Differences Between Monocot and Dicot Stem)

क्रम संख्या	**लक्षण / संरचना (Character structure)**	**एक बीजपत्री स्तम्भ (Monocot Stem)**	**द्विबीजपत्री स्तम्भ (Dicot stem)**
1.	भरण ऊतक (Ground Tissue)	सामान्यतया अविभेदित रहती हैं।	अधश्त्वचा, मध्यकुट अंतश्त्वचा तथा मज्जा में

			विभेदित होता हैं।
2.	संवहन पूलों की व्यवस्था	विभिन्न आकार के सामान्यतया भरण ऊतक में बिखरे हुए होते हैं ।	लगभग समान आकार तथा वलयाकार घेरे में व्यवस्थित होते हैं ।
3.	संवहन पूल (Vascular Bundles)	संयुक्त (conjoint) संपार्श्विक, बहिपोषवाहि (collateral) अत: आदिदारूक (endarch) अवर्धी (closed) होते हैं।	संयुक्त (conjoint) संपार्श्विक, अन्तआदिदारूक (endarch) वर्धी (open) होते है ।
4.	पूलाच्छद (BundleSheath)	उपस्थित, दृढ़ोतकी (sclerenchymatous)	अधिकाश्त अनुस्थित
5.	पोषवाह (Phloem)	मात्र चलनी नलिका (sieve tubes) एवं सहचर कोशिकाएँ (companion cells) होती हैं	चलनी नलिका (sieve tubes) एवं सहचर ।कोशिकाएँ (companion cells) तथा पोषवाह मृदूतक (phloemParenchyma) होते है ।
6.	पोषवाह मृदूतक (Phloem parenchyma)	अनुपस्थित	उपस्थित
7.	मज्जा किरणें (Medullary rays)	सुस्पष्ट नहीं होती हैं	संवहन पूलों के बीच मृदुतकी कोशिकाओं की पट्टी के रूप में होती हैं ।
8.	मज्जा (pith)	अनुपस्थित	उपस्थित होती हैं ।
9.	द्वितीयक वृद्धि (Secondary Growth)	नहीं होती है ।	होती है
10.	उदाहरण	मक्का (zea mays)	सूरजमुखी (Helianthus)

बोध प्रश्न - 2

1. किस पादप में अंतदारूकी पोषवाह पाया जाता है ।

   ....

   ....

2. किस पादप के तने में परिरंभ में दृढ़ोतक पाया जाता है ।

   ....

   ....

3. एक बीजपत्री पादपों में अधश्त्वचा होती है ।

   ....

   ....

4. पृथक फ्लोएम पूल युक्त तने का उदाहरण

   ....

   ....

5. पादपों में प्राथमिक जाइलम का विभेदन कहाँ से प्रारम्भ होता है ।

   ....

   ....

4.5 सारांश

संवहनी पौधों में पादप शरीर प्रमुखतः **मूलतंत्र** (root system) एवं **प्ररोह तंत्र** (shoot system) से मिलकर बना होता है । पौधे का वायवीय (aerial) भाग जिसमें तने व अतिरिक्त पत्तियाँ एवं पुष्प एवं पुष्प सम्मिलित होते है, प्ररोह (shoot) कहलाता हैं। प्ररोह की उपयुक्त सभी संरचनाएँ **शीर्षस्थ विभज्योतक** (shoot apical meristem) विकसित है। विभज्योतकी की कोशिकाओं में प्रमुख लक्षणों आधार पर इनका वर्गीकरण किया गया है । जो कि मुख्यतया इस प्रकार है । (1) आरंभिक कोशिकाओं की उत्पत्ति एवं विकास के आधार पर विभज्योतक, (2) कार्य के आधार पर विभज्योतक, (3) विभाजन तल के आधारित विभज्योतक, (4) पादपकाय में स्थिति पर आधारित विभज्योतक ।

आवृतबीजी पादपों में दो मुख्य समूह द्विबीजपत्री (dicot) तथा एकबीजपत्री (monocot) पादपों के होते है । इनमें संवहनी पूल (vascular bundles) के अलावा बाहयत्वचीय ऊतक तंत्र पाये जाते हैं । इन पादपों के तने की आन्तरिक संरचना अथवा शारीरिकी (anatomy) भी भिन्न-भिन्न होती हैं।

4.6 शब्दावली

1. **विभज्योतक :** विभज्योतक (meristem) की उत्पत्ति ग्रीकशब्द मेरीस्टोर्स से हुई जिसका अर्थ विभाजन होता है ।

2. **प्राक्विभज्योतक :** पादपकाय में नए ऊतकों एवं अंगों का निर्माण जहाँ प्रारम्भ होता है, वह क्षेत्र प्राक्विभज्योतक कहलाता है ।
3. **प्राथमिक विभज्योतक** : यह पादपकाय के मूल अंगों का निर्माण करती है, तथा प्राक्विभज्योतक से उत्पन्न कोशिकाओं से बनी होती है ।
4. **द्वितीयक विभज्योतक :** इनकी कोशिकाएँ स्थायी ऊतकों से बनी होती है । पादपकाय में यह सदा पार्श्व स्थिति में ही उत्पन्न होती है ।
5. **अधित्वक :** यह पादप के कोमल अंगों के शीर्ष पर उपस्थित विभज्योतक की सबसे बाहरी एक कोशिकीय मोटी परत तथा बाह्यत्वचा का निर्माण करती है ।
6. **शीर्षस्थ विभज्योतक :** यह तने शाखाओं एवं जड़ों के शीर्ष पर तथा कभी-कभी पर्णशीर्ष पर पाया जाता है ।
7. **अन्तर्वेशी विभज्योतक :** स्थायी ऊतकों के बीच में कारण शीर्षस्थ विभज्योतक से विलग हो जाते हैं ।

4.7 संदर्भ ग्रन्थ

1. त्रिवेदी, शर्मा, शर्मा : पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन, 2008, रमेश बुक डिपो, जयपुर
2. अग्रवाल एवं शर्मा: पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन बी एस. सी. पार्ट : 11 2004, कॉलेज बुक हाऊस, जयपुर
3. सिंह, पाण्डे, एवं जैन: आवृतबीजी वनस्पति विज्ञान 2006 रस्तलोई एण्ड कम्पनी, मेरठ

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न

1. आलू   2. केपेरिस   3. दृढ़ोतकी   4. रिसिनस   5. पत्ति के आधार से

4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्ररोह की आन्तरिक संरचना के विषय में लिखिये ।
2. एकबीजपत्री तथा द्विबीजपत्री में अन्तर बताइये ।
3. विभिन्न प्रकार के विभज्योतक का वर्णन कीजिये ।
4. विभज्योतक को किन-किन आधार पर बाँटा गया है ।
5. द्वितीयक विभज्योतक की उत्पत्ति किससे होती है ।

इकाई 5 : कैम्बियम : संरचना एवं कार्य, द्वितीयक जाइलम का निर्माण एवं संरचना, वार्षिकवलय, रसकाष्ठ एवं अन्तकाष्ठ, छिद्रित एवं अछिद्रित काष्ठ (Cambium: Structure and Function, Development and Structure of Secondary Xylem, Annual rings, Sap wood and Heart wood, porous and Non-porous wood)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 कैम्बियम: संरचना एवं कार्य

- 5.2.1 एधा की उत्पत्ति
- 5.2.2 एधा के प्रकार
- 5.2.3 एधा की संरचना
- 5.2.4 एधा के कार्य
- 5.3.5 एधा में कोशिका विभाजन
- 5.2.6 एधा में कोशिका विभाजन
- 5.2.7 एधा की क्रियाशीलता

5.3 द्वितीयक जाइलम का निर्माण एवं संरचना

- 5.3.1 द्वितीयक दारू अथवा जाइलम
- 5.3.2 द्वितीयक जाइलम का बनना
- 5.3.3 द्वितीयक जाइलम की संरचना
- 5.3.4 जाइलम मृदूतक
- 5.3.5 जाइलम किरणें
- 5.3.6 अरीय तन्त्र
- 5.3.7 द्विबीजपत्रियों की द्वितीयक जाइलम संरचना
- 5.3.8 द्वितीयक जाइलम में वाहिकाओं का विन्यास
- 5.3.9 एक बीजपत्रियों की द्वितीयक जाइलम की संरचना

5.4 वार्षिकवलय

5.5 रस काष्ठ एवं अन्तकाष्ठ
5.6 छिद्रिल कार्य, अछिद्रित काष्ठ
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 संदर्भ ग्रन्थ
5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.0 उद्देश्य

पौधों में शीर्ष विभज्योतक (apical meristem) से मुख्यतया प्राथमिक संरचना का विकास होता है । यह प्राथमिक संरचना अपने आप में पूर्ण होती है । अनेक पादप एकबीजीपत्री अथवा एक वर्षीय शाकीय सामान्यतया मोटाई में वृद्धि नहीं करते हैं । पौधों में संवहनपूल (vascular bundle) शीर्ष विभज्योतक में उपस्थित **प्राकएधा** (procambium) से बनते हैं । इस प्राकएधा की एक पट्टी जायलम तथा फ्लोएम के बीच क्रियाशील बनी रहती है । तथा **एधा** (cambium) कहलाती है । उचित समय पर एधा की कोशिकाएँ विभाजित होती हैं तथा द्वितीयक संवहनी ऊतकों का निर्माण कर पादप की मोटाई में वृद्धि करने में सहायक होती है ।

5.1 प्रस्तावना

वृद्धिकाल के समय **कैम्बियम** (एधा) प्रारम्भिक रूप से एक एधा क्षेत्र (cambium zone) का निर्माण करती है । इस क्षेत्र की कोशिकाएँ धीरे-धीरे चौड़ाई में बढ़ती हैं, तथा जाइलम व फ्लोएम तत्वों का विभेदन करती है । एधा (cambium) की सक्रिय अवस्था से कैम्बियम क्षेत्र कई स्तरीय होता हैं परन्तु इसकी निष्क्रिय अवस्था में यह एक या दो स्तरीय रह जाता है । तीन स्तरीय अवस्था में अपरिपक्व-फ्लोएम के समीप स्थित कोशिकाएँ कैम्बियम प्रारम्भक कहलाती हैं तथा आन्तरिक स्तर जाइलम मातृ कोशिका का निर्माण करती है ।

5.2 कैम्बियम: संरचना एवं कार्य (Cambium: Structure and Function)

5.2.1 कैम्बियम (एधा) की उत्पत्ति (Origin of Cambium)

एधा एक प्रकार से पार्श्वीय विभज्योतक (lateral meristem) है, जो प्राक्एधा (procambium) से ही बनी होती है । एक बीजपत्री तथा कुछ अन्य पादपों में प्राक्एधा से उत्पन्न स भी कोशिकाएँ दारू (xylem) त था पौषवाह (phloem) में परिवर्तित हो जाती है । द्वितीयक वृद्धि (secondary) करने वाले पादपों में प्राक्एधा में उत्पन्न सभी कोशिकाएँ दारू एवं पोषवाह में परिवर्तित नहीं होती है तथा कुछ कोशिकाएँ विभज्योतकी (meristematic) बनी रहती है । द्वितीयक वृद्धि के समय ये फिर से क्रियाशील हो जाते हैं तथा द्वितीयक संवहन ऊतक बनाते हैं (चित्र 5.1 तथा 5.2) ।

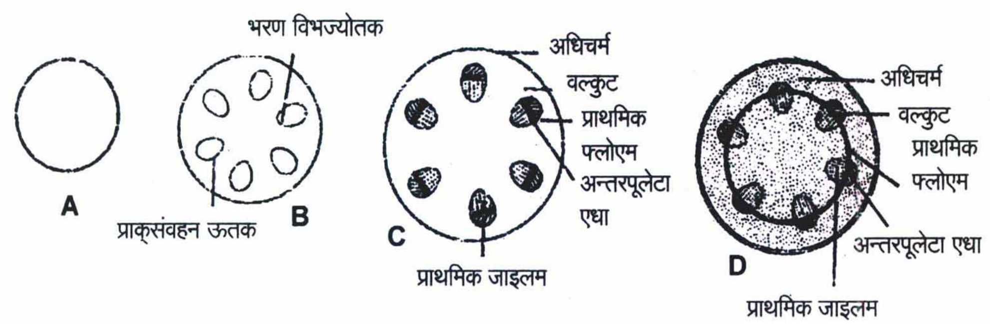

चित्र 5.1 : द्विबीजपत्री स्तम्भ में पूलीय एवं अन्तरापूलीय ऐधा का निर्माण

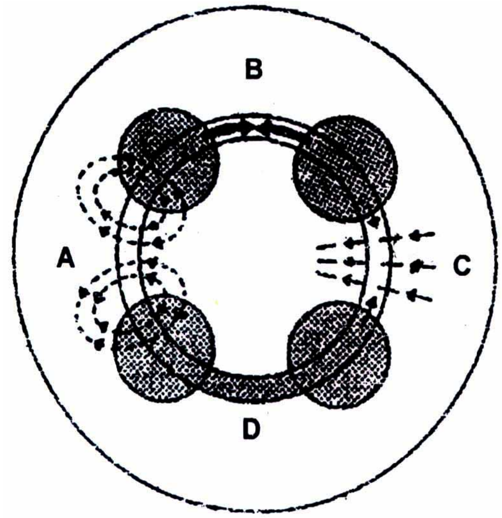

चित्र 5.2 : अन्तरापूलाय एधा का समारम्मन पर प्रेरण प्रभाव को दर्शाता आकार मात्र चित्र A.संवहन पूल से उत्पन्न हाइड्रोजन आयन प्रषणता का प्रेरण प्रभाव, B. पूली ऐधा पर प्रेरण प्रभाव, C. स्तम्भ सतह पर उत्पन्न प्रवणता का प्रभाव, D. कैम्बियन की स्थिति एवं धवता का प्राकऐधा पर निर्धारण

5.2.2 एधा के प्रकार (Types of Cambium)

अधिकांश द्वितीयक वृद्धि करने वाले पादपों में संवहनपूल वर्धी बंडल (open bundles) होते हैं, इन में दारू (दारू) तथा पोषवाह (phloem) के मध्य विभज्योतकी कोशिका ओं की एक परत होती है । इस प्रकार की संवहन पूल में उपस्थित एधा **पूलीयएधा** (fascicular cambium) कहलाती हैं I (चित्र 5.1)

अनेक पादपों में मज्जा किरण (medullary) में उपस्थित मृदुतकी कोशिकायें जो अब भी विभाजन की क्षमता रखती है, एधा कोशिकाओं के समान विभज्योतकी प्रकृति पुन : प्राप्त कर लेती है, तथा पूलीय एधा से जुड़कर वलयाकार एधा बनाती है । पूलीय एधा के बीच में अथवा मज्जा किरण (medullary ray) में उत्पन्न एधा **अन्तरपूलीय एधा** (inter fascicular cambium) कहलाती है, ये दोनों एधा मिलकर संवहनी एधा (vascular cambium) कहलाती है (चित्र 5.1)।

द्वितीयक वृद्धि के फलस्वरूप तने का घेरा विशेष रूप से काष्ठीय पादपों में काफी बढ़ जाता है तथा अधिचर्म बढ़ते घेरे के साथ सामंजस्य नहीं बिठा पातीं, ऐसी स्थिति में अनेक पादपों के अधिचर्म से लेकर अंतश्त्वचा (endodermis) अथवा **द्वितीयक पोषवाह** (secondary phleom) की बाह्यतम परतों में से किसी एक परत में मृदुतकी कोशिकायें विभज्योतकी हो जाती है तथा कार्क अथवा परिचर्म (periderm) बनती हैं । यह विभाज्योतकी परत **कागजन** (phellogen) अथवा **कागएधा** (cork cambium) कहलाती हैं ।

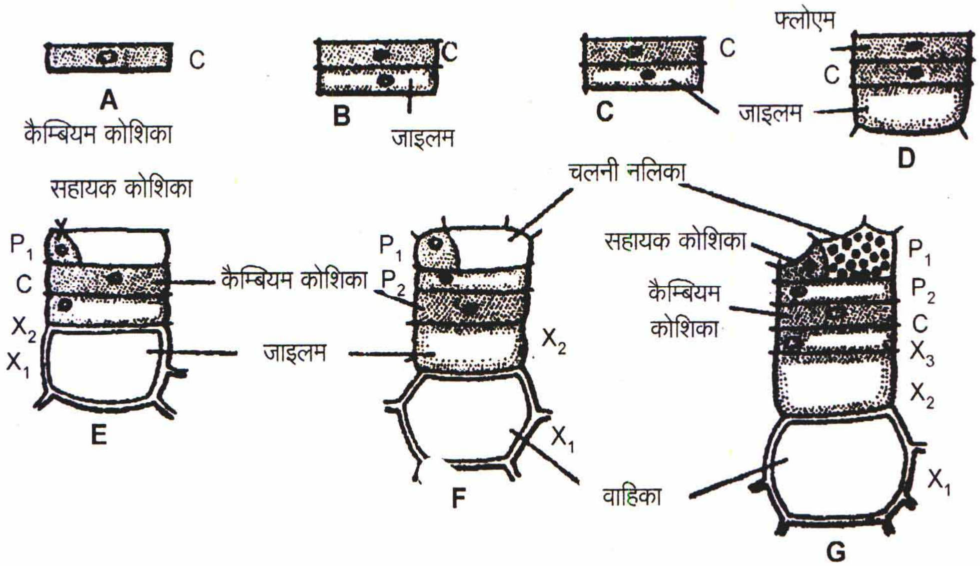

चित्र 5.3 : एधा में कोशिका विभाजन तथा जायलम व फ्लोएम में परिवर्धन

सामान्यतया बहुवर्षीय काष्ठीय पादपों में पूलीय एधा (vascular cambium) भी बहुवर्षीय होती है, अर्थात् निर्माण के समय से अंत तक पूलीय एधा क्रियाशील रहती है । पादप के झड़ जाने वाले अथवा विलय हो जाने वाली शाखाओं, पुष्पक्रम, पर्णवृन्त इत्यादि में एधा बहुत कम समय के लिए क्रियाशील रहती है ।

एकबीजीपत्री पादपों में विशेष प्रकार की द्वितीयक एधा विकसित होती है जो भरण ऊतक की भीतरी परतों में से किसी एक परत के विभज्योतकी होने से बनती है । यह एधा नये द्वितीयक संवहन पूलों के वलय बनाती है, तथा तने के व्यास में वृद्धि करने में सहायक होती है ।

5.2.3 एधा की संरचना (Structure of Cambium)

एधा विभज्योतकी (Meristematic) : कोशिकाओं से बनी एक परतीय संरचना है । इसमें दो प्रकार की एधा कोशिकायें होती है ।

(1) तर्कुरूपी आरम्भक कोशिकायें (Fusiform initials)

(2) किरण आरम्भक कोशिकायें (Ray initials)

(1) **तर्कुरूपी आरम्भक कोशिकायें:** ये कोशिकायें तर्कुरूप में लम्बाई में ज्यादा होती है, तथा चौड़ाई में कम होती है । मध्य में लगभग प्रिज्म के आकार की तथा दोनों सिरों पर वेजाकार

(wedge shaped) होती है । तर्कुरूप आरम्भिकाएँ तने का अक्षीय तंत्र (axial initial) बनाते हैं ।

(2) **किरण आरम्भक कोशिकायें:** समव्यासी (isodimetric) अथवा लम्बी कोशिकायें होती है । ये आरम्भक तने का अरीय तंत्र (radial system) बनाते हैं (चित्र 5.5, 5.6) ।

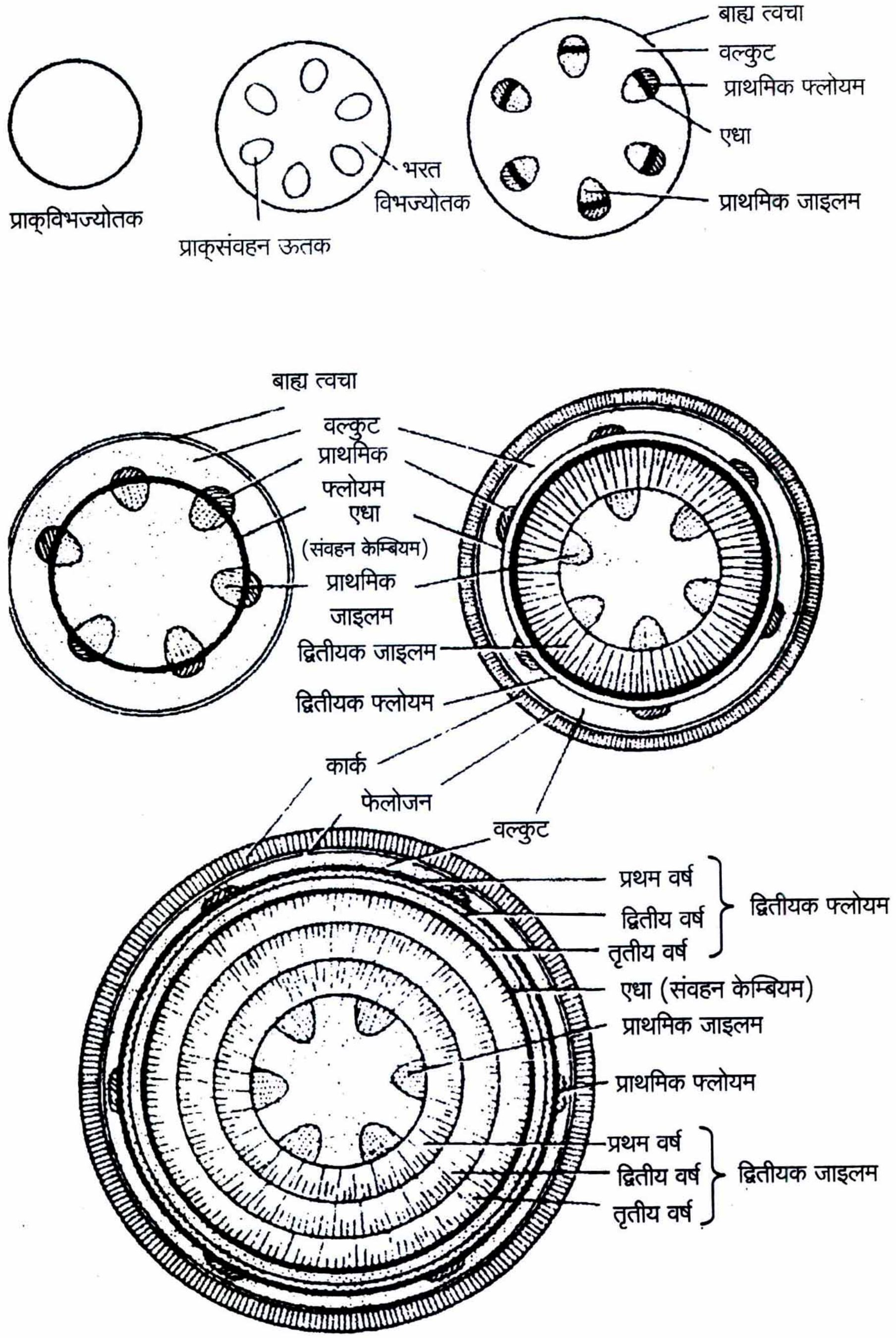

चित्र 5.4 : काष्ठीय तने में द्वितीयक वृद्धि की अवस्थाएँ

एधा कोशिकाओं में अनेक रिक्तिकाएँ अथवा एक बड़ी रिक्तिका एवं एक बड़ा केन्द्रक तथा परिधीय जीवद्रव्य की एक पतली परत होती है । सामान्यतया इन कोशिकाओं की अरीय भित्ति से पतली होती है तथा ये आपस में जीवद्रव्य तंतु (plasmodesmata) के द्वारा जुड़ी रहती है । अक्षीय तंत्र में दारूवाहक के वाहिका (vessel) वाहिनिका (tracheids), तंतु (fibres) तथा मृदूतक (parenchyma) तथा पोषवाहक (phloem) में चालनी कोशिकायें (sieve tubes) तंतु तथा मृदूतक आते हैं, । अरीय तंत्र में किरण कोशिकायें जो दारू एवं पोषवाह में अनुप्रस्थ पथ से चलती है ।

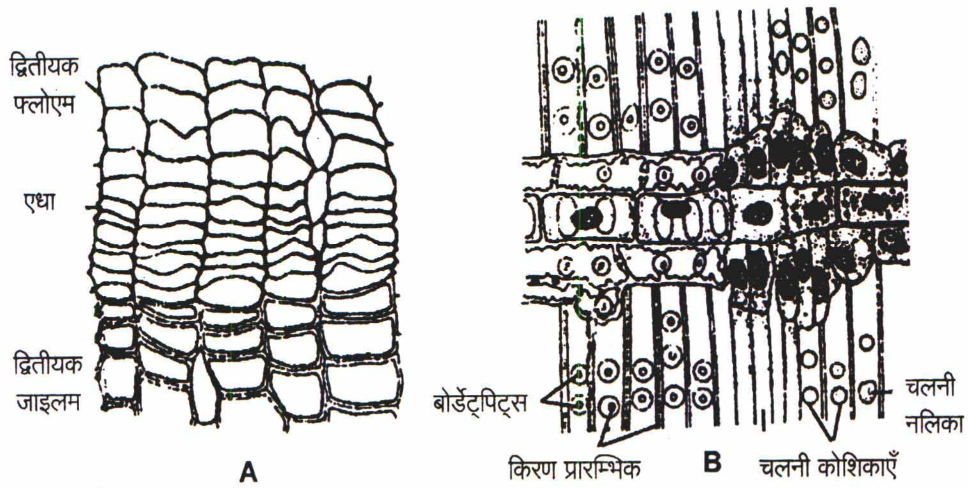

चित्र 5.5 : A. पाइनस के क्रास काट में कैम्बिय क्षेत्र का एक भाग, B. अरीय काट में संवहन किरण दर्शाता

एधा कोशिकायें जब बहु त तीव्र गति से विभाजन करती है तब पुत्री कोशिकायें भी कुछ समय तक विभज्योतकी बनी रहती है, तथा बाद में परिवर्धन दारू (xylem) पोषवाह अथवा मज्जा किरण (medullary rays) में विभाजन होता है । इस कारण एधा की एक परत की अपेक्षा अनेक परतें दिखाई देती हैं, तब यह क्षेत्र एधाक्षेत्र (cambium region) कहलाता है । परन्तु इन सभी परतों में से केवल प्राथमिक एधा परत ही अरल में दीर्घकालिक होती है (चित्र 5.6.5.7) ।

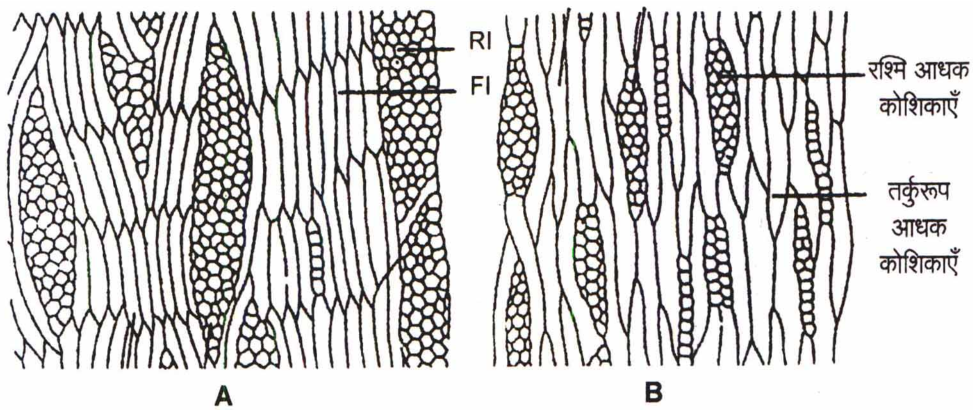

चित्र 5.6 A. स्तरित ऐधा, B. अस्तरित ऐधा

5.2.4 एधा के कार्य (Functions of Combium)

संवहन एधा (vascular cambium) के विभाजन से द्‌वितीयक दारू (secondary xylem) तथा द्‌वितीयक पोषवाह (secondary phloem) बनाते हैं । सामान्यतया एधा के बाहर की और काटी गई पुत्री कोशिकाओं से पोषवाह तथा अन्दर की और बनी पुत्री कोशिकाओं में दारू ऊतक का विभेदन होता है । कुछ एक बीजपत्री पौधे जैसे **ड्रेसीना** (dracaena) यक्का (yucca) आदि में एधा द्‌वितीयक संवहन पूलों तथा भरण ऊतक का निर्माण करती है तथा तने के व्यास में वृद्धि करती है ।

पौधों में जब आँख (bud) एवं ग्राफ्ट लगाते हैं तब भी स्कंध (stock) तथा कलम (scion) की एधा कैलेस (callus) बनाती है । तथा जुड़कर पूरी एधा परत बनाती है । यह एधा संवहन ऊतक बाद में बनाती है । यह प्रक्रिया द्‌विबीजपत्री पादपों में ही संभव होती है, क्योंकि इनमें एधा (cambium) वलयकार होती है । एकबीजपत्री पादपों में **एधा** की अनुपस्थिति के कारण कली अथवा कलम नहीं लगाई जा सकती है ।

5.2.5 एधा में कोशिका विभाजन (Cell Division in Cambium)

एधा कोशिकाओं में परिनतिक अथवा स्पर्शरेखीय विभाजन होते हैं । प्रत्येक एधा कोशिका के विभाजन के फलस्वरूप दो कोशिकायें बनती है, इनमें से एक कोशिका मातृकोशिका की तरह विभाजनशील रहती है, जबकि दूसरी कोशिका उसके स्थान के अनुसार जायलम (xylem) मातृ कोशिका अथवा पोषवाह फ्लोएम मातृ कोशिका कहलाती है । बाहर की और कोशिकायें पोषवाह तथा अन्दर की और जाइलम में परिवर्धित होती है । एधा कोशिका अरीय अक्ष में बढ़ती है और इनमें फिर से विभाजन होता है ।

जायलम ऊतक के बढ़ने से तने का घेरा बढ़ता है, साथ ही एधा की वलय की परिधि (circumference) भी बढ़ती है, जो मुख्य रूप से स्पर्शतिलीय दिशा में कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि के कारण होती है ।

5.2.6 एधा की क्रियाशीलता (Activity of the Cambium)

संवहनी एधा की क्रियाशीलता की उग्रता तथा समय दोनों में काफी विविधता दिखाई पड़ती है । एधा की सक्रियता बाह्य तथा आंतरिक दोनों प्रकार के कारको (factors) पर निर्भर करती है ।

अधिकांश पादपों में एधा, पादप की पूरी उम्र तक पूरे साल सक्रिय बनी रहती है तथा पुत्र कोशिकायें जाइलम तथा फ्लोएम में विभेदित होती है । यहाँ पर एधा परिवर्तित तथा अधिक सुनिश्चित होती है । यहाँ पर एधा (cambium) की सक्रियता प्रतिकूल परिस्थितियों जैसे पतझड़ या शरदकाल में कम हो जाती है । तथा लगभग पूरे बसन्त के आगमन तक एधा सुषुप्तावस्था (dormant) स्थिति में रहती है । बसन्त ऋतु में ये पुन: सक्रिय हो जाती है ।

एधा की सक्रियता सामान्यतया सक्रिय होती कक्षीय कलिकाओं (axillary buds) के नीचे से शुरू होती है तथा नीचे की ओर अग्रसर होती है । इन्डोल एसिटिक अम्ल (IAA) कलिकाओं में बनता है तथा नीचे की और स्थानांतरित होता है। IAA एधा को पुन: सक्रिय करने के लिए उत्तरदायी

माना जाता है । एधा से सामान्य जाइलम के परिवर्धन के लिए IAA तथा जिब्रेलिक अम्ल दोनों की आवश्यकता होती है । एधा की क्रियाशीलता के अवसान के बारे में अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है परन्तु ऐसा माना जाता है कि अम्ल प्रदीप्ति काल (short day) की अवस्था में एधा में सुषुप्तावस्था (dormancy) को प्रेरित करती है, तथा दीर्घ दीप्तिकाल (long day) की अवस्था में एधा की सक्रियता की और प्रेरित करती है ।

बोध प्रश्न - 1

1. संवहन पूल एधा............................... से ही बनती है ।
2. संवहन पूल में उपस्थित एधा को............................. कहते हैं ।
3. संवहन पूल के बीच की मज्जा में उपस्थित एधा क्या कहलाती है ।
   ....
   ....
4. अन्तरापूलीय एधा की प्रकृति किस प्रकार की होती है ।
   ....
   ....
5. एधा की क्रियाशीलता पर किस का प्रभाव होता है ।
   ....
   ....

5.3 द्वितीयक जाइलम का निर्माण एवं संरचना (Development and Structure of Secondary Xylem)

द्वितीयक संवहनी ऊतक बनने से प्राथमिक जाइलम और फ्लोएम की दूरी बढ़ जाती है, और तने के आन्तरिक भाग पर बड़ा दबाव पड़ने लगता है । **द्वितीयक जाइलम** (secondary xylem) अत्यधिक मात्रा में बनता है जो मज्जा और प्राथमिक जाइलम को ढ़क लेता है, जब द्वितीयक जाइलम की मात्रा बढ़ जाती है तो प्राथमिक जाइलम और मज्जा विरूपित हो जाते हैं, और केन्द्रीय सिलेन्डर केवल द्वितीयक जाइलम का बन जाता है । इसके कारण फ्लोएम भी प्रभावित होता है, द्वितीयक फ्लोएम में फ्लोएम किरण, और पैरन्काइमा की कोशिकाएँ विभाजित होकर बढ़ते हुए घेरे के साथ सन्तुलन बनाये रखती है ।

5.3.1 द्वितीयक दारू अथवा जाइलम (secondary xylem)

एधा (cambium) द्वारा अन्दर की और काटी गई कोशिकाएँ धीरे-धीरे द्वितीयक जायलम ऊतक में परिवर्धित होती है । द्विबीजपत्री पादपों में द्वितीयक जाइलम संरचना में काफी विविधता से युक्त होती है । कुछ पादप जैसे काक (quercus) की द्वितीयक जाइलम में वाहिकाएँ, वाहिनिकाएँ, तंतुवाहिनिका, विभिन्न प्रकार के तंतु काष्ठ मृदूतक (wood parenchyma) तथा

विभिन्न आकार की किरणें (rays) पाई जाती है, परन्तु **कैक्टेसी** कुल के कुछ पादपों में मात्र वाहिका, वाहिनिका त था मृदूतक ही होते हैं ।

द्वितीयक जाइलम में मुख्य रूप से दो प्रकार के तंत्र मिलते हैं - (1) अक्षीयतन्त्र तथा अरीय तंत्र (चित्र 5.8)।

1. **अक्षीय तंत्र** (Axial System) : इसमें वाहिनिकाएँ (tracheids); वाहिकाएँ (Vessels) तन्तु (fibers) यम : संरचना एवं तथा जायलम मृदुतकी (xylem parenchyma) कोशिकाओं की लम्बवत् पंक्तियाँ होती है । वाहिकाओं तथा वाहिनिकाओं में सोपानवत् (scalarifrom) एवं (pitted) स्थूलन होता है । वाहिकाएँ एवं वाहिनिकाएँ प्राथमिक जायलम में उपस्थित वाहिकाओं एवं वाहिनिकाओं से छोटी तथा अधिक होती है तथा इनमें **सर्पिल** (spiral) तथा वलयाकार (annular) स्थूलन नहीं होता हे, काष्ठ मृदूतक कोशिकाएँ जीवित होती है तथा अक्षीय तंत्र की कोशिकाएँ एवं अर मृदूतक (ray parenchyma) आपस में कहीं न कहीं सम्पर्क में होते हैं । एक प्रकार से जीवित कोशिकाओं का

एक सतत् तंत्र सा बन जाता है, जोकि सामान्यतया मज्जा (pith) पोषवाह (phloem.) एवं वल्कुट (cortex) की जीवित कोशिकाओं से भी सम्पर्क होता है ।

5.3.2 द्वितीयक जाइलम का बनना (Formation of Secondary Xylem)

द्वितीयक जाइलम के साथ -साथ संवहन एधा से प्रत्येक वर्ष द्वितीयक फ्लोएम परिधि की और उत्पन्न होता है । द्वितीयक जाइलम की अपेक्षा द्वितीयक फ्लोएम की मात्रा काफी कम उत्पन्न होती है । जाइलम तथा फ्लोएम की मात्रा अलग - अलग अनुपात में उत्पन्न होती है, लेकिन यह अनुपात वृक्षों की जातियों, वृद्धि की उत्तेजनशीलता तथा पर्यावरण की अवस्थाओं पर निर्भर करता है ।

द्वितीयक जाइलम के संगठन में **वाहिनिकाएँ** (tracheids), **वाहिकाएँ** विभिन्न प्रकार के तन्तु, मृदूतक कोशिकाएँ जाइलम रश्मि कोशिकाएँ तथा कभी -कभी स्रावी कोशिकाएँ होती है । पादपों के विभिन्न समूहों में इन तत्वों के विन्यास एवं प्राप्ति में भिन्नता होती है । एक वश की जातियों में इन तत्वों के साइल तथा कोशिकाओं की संख्या में मात्रात्मक अन्तर पाया जाता है । इसी आधार पर जातियों की पहचान हो सकती है (चित्र 5.7, 5.8) ।

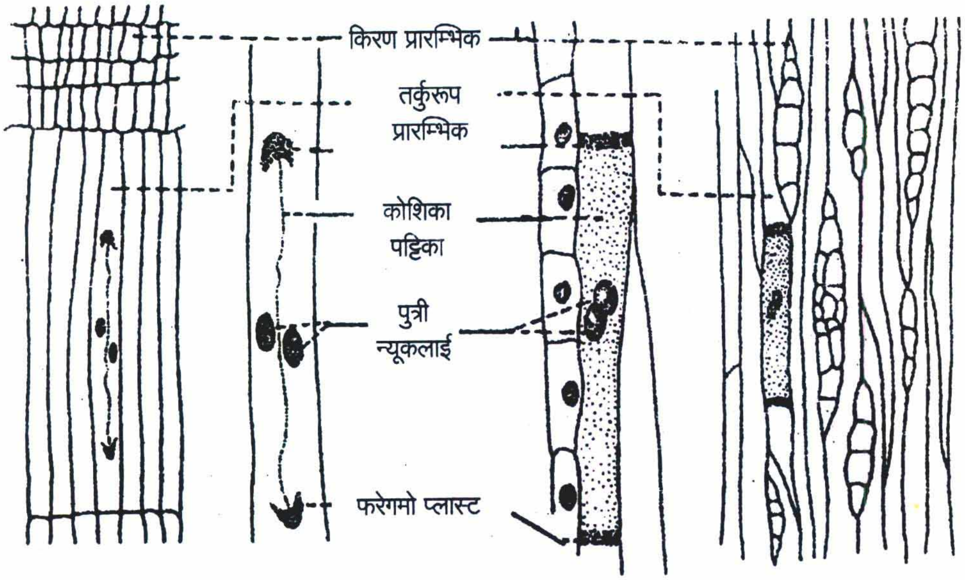

चित्र 5.7 : अरीय तथा स्पर्शरेखी आयाम में तर्कुरूप प्रारम्भिकाओं में स्पर्शरेखीय (परिनतिक) विभाजन के फलस्वरूप अरीय पंक्तियाँ जाइलम तथा फ्लोयम का उत्पन्न होती है ।

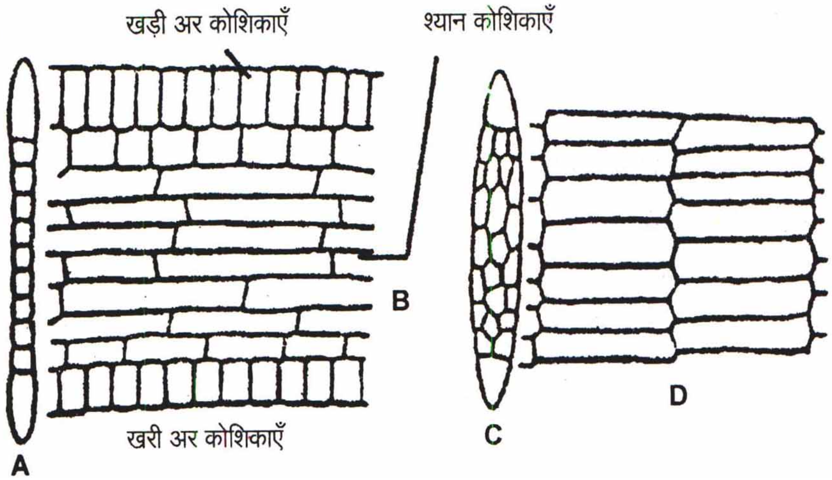

चित्र 5.8 : जाइलम किरणों के प्रकार

सामान्यतया प्राथमिक तथा द्वितीयक जाइलम को विभेदित करना कठिन काम है । बेली (Baily) 1944 के अनुसार इन दो ऊतकों की वाहिनिकाएँ तत्वों की लम्बाई के आधार पर विभेदित किया जा सकता है । द्वितीयक जाइलम की वाहिनिकाएँ प्राथमिक जाइलम की वाहिनिकाओं की अपेक्षा अधिक चौड़ी परन्तु कम लम्बी होती है । इनमें **वलयाकार** (annular) तथा **सर्पिलाकार** (spiral) स्थूलन का अभाव होता है । गर्तीय स्थूलन (pitted thickminp) पाये जाते हैं । प्राथमिक जाइलम **प्राक्एधा** (procambium) से तथा द्वितीयक जाइलम संवहन कैम्बियम से उत्पन्न होते हैं । प्राथमिक जाइलम के समान द्वितीयक जाइलम में प्रोटोजाइलम (protoxylem) तथा मेटाजाइलम (mrtaxxlem) में विभेदन नहीं होता है ।

5.3.3 द्वितीयक जाइलम की संरचना (Structure of Secondary Xylem)

द्वितीयक जाइलम अथवा काष्ठ दो प्रकार के उत्तक तंत्र स्थिति के आधार पर पाये जाते हैं । जोकि सामान्यतया निम्न प्रकार के है ।

(1) अक्षीय तंत्र या उदग्रतंत्र (Axil or vertical system)

(2) क्षैतिज तंत्र या रश्मितंत्र (Horizontal or ray system)

(1) **अक्षीय तंत्र** (Axil system) : इस तंत्र में द्वितीयक जाइलम में कोशिकाएँ अक्ष की लम्बाई के समानान्तर स्थित रहती है । इस तंत्र का निर्माण जाइलम के विभिन्न सगठन से होता है । अक्षीय तंत्र की कोशिकाएँ संवहन कैम्बियम की तर्कु प्रारम्भिकाओं से विकसित होती है । तने के अनुप्रस्थ काट में अक्षीय अवयव अनुप्रस्थ रूप से होते हैं । इनका विस्तार लघुतम दिखाई देता है । अक्षीय तंत्र में जाइलम मृदूतक सजीव होता है, तथा कहीं -कहीं पट तंत्र सजीव रश्मि या आर अर मृदुतको के सम्पर्क में होता है । इस प्रकार यह मृत एवं सजीव कोशिकाओं का एक मिश्रित सतत् तंत्र सा बन जाता है (चित्र 5.8) ।

(2) **क्षैतिज या रश्मितंत्र** (Horizontal or Ray system) : क्षैतिजतंत्र प्रमुख सजीव अर मृदुतको का बना होता है, जिसकी कोशिकाएँ मुख्य अक्ष की लम्बाई के क्षैतिज या समकोण पर व्यवस्थित रहती है । अर मृदूतक अरीय संवहन करती है । कभी -कभी अरो में कोशिकाओं की अरीय फाइले होती है, जो छिद्रों द्वारा **स्पर्शरेखीय** (tangential) भित्तियों को जोड़ती है । इस प्रकार की कोशिकाओं को **अरवाहिकाएँ** (ray Vessels) कहते हैं । जाइलम अर कोशिकाएँ द्वितीयक भित्ति प्राप्त कर लेती है तथा लम्बे समय तक सजीव बनी रहती है । अर -मृदुतक संग्रहण ऊतक का कार्य करती है । यह तंत्र सामान्य मज्जा फ्लोएम तथा वल्कुट की सजीव कोशिकाओं को जोड़ता है ।

5.3.4 जाइलम मृदुतक (Xylem Parenchyma)

द्वितीयक जाइलम में **अक्षीय मृदुतक** (axil parenchyma) तथा **अर मृदुतक** (parenchyma) होते हैं ।

अक्षीय मृदुतक तुर्कुरूपी (fusifrom) प्रारम्भिकाओं से बनते हैं त था उनके समान लम्बे या छोटे होते हैं । छोटे अक्षीय मृदुतक सामान्यतया पाये जाते हैं । इन मृदुतको में स्टार्च तथा तैलीय पदार्थों का संचय होता है । कभी - कभी टैनिन रवे (crystals) तथा अन्य पदार्थ भी इन कोशिकाओं में पाये जाते हैं । वितरण के आधार पर इन्हें निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है।

(1) **अपवाहिकी मृदूतक** (Apotracheal Parenchyma) जब अक्षीय मृदुतक जाइलम वाहिकाओं से स्वतंत्र रूप से वितरित रहती है । ये दो प्रकार की होती है ।

(अ) विसरित (Diffuse): एकल मृदुतक स्ट्रेन्ड या कोशिकाएँ तन्तुओं के मध्य अनियमित रूप से विसरित रहती है ।

(ब) समूह में विसरित (Diffuse in Aggregates): अर से मृदुतक कोशिकाएँ स्पर्श रेखीय लाइनो के छोटे समूह में लगी रहती है ।

(2) **परावाहिकी मृदुतक** (Paratracheal Parenchyma): अक्षीय मृदुतक वाहिका ओं या संवहन वाहिनिकाओं के साथ संलग्न रूप में रहते हैं । ये निम्न प्रकार के होते हैं ।

(i) **अल्प** (Scanty): वाहिकाओं के चारों और मृदुतक कोशिकाओं का अपूर्ण या कभी - कभी आच्छद पाया जाता है ।

(ii) **वाहिकाकेन्द्री** (Vasicentric): वाहिकाओं के चारों और मृदुतक कोशिकाओं की भिन्न मोटाई की गोल अथवा अण्डाकार पूर्ण आच्छद बनती है ।

(iii) **एलीफोर्म मृदुतक** (Alifrom Parenchyma): मृदुतक वाहिकाओं के चारों और पार्श्वी पंखरूपी अतिवृद्धि के रूप में आच्छद बनती है ।

(iv) **पट्टीरूप** (ConfluentI): वाहिका से वाहिका तक अनियमित स्पर्श रेखीय या कर्ण पट्टी (diagnal band) मृदुतक की होती है ।

(3) **बेन्डेड मृदुतक** (Banded Parenchyma): अक्षीय मृदुतक साकेन्द्रीय रेखा अथवा पट्टियाँ बनाता है । यदि पट्टीनुमा मृदुतक तीन से अधिक कोशिका मोटे होते हैं, उन्हें चोड़ी पट्टी (broad) कहते हैं । यदि तीन या तीन कोशिका से कम चौड़ी पट्टी होती है तो इसे कम चौड़ी पट्टी (narrow banded) अक्षीय मृदुतक कहते हैं ।

5.3.5 जाइलम किरणें (Xylem Rays)

जाइलम किरणें अरीय तंत्र का भाग है, जो कैम्बियम के **अर आद्यांको** (ray initials) से उत्पन्न होती है । ये सम्पूर्ण फ्लोएम में एक पट्टी के समान गुजरती है । कोशिकाओं के प्रकार के आधार पर ये दो प्रकार की होती है

(i) **समकोशिकीय अर** (Homocellular Rays): इस प्रकार की किरणें एक ही प्रकार की वार्षिकवलय, रसकाष्ठ कोशिकाओं की बनी होती है ।

(ii) **विषमकोशिकीय अर** (Heterocellular Rays): इस प्रकार की किरणें विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बनी होती है ।

(अ) श्यान कोशिकाएँ (Procumoent Ray Cells): इस प्रकार की कोशिकाएँ के दीर्घ अक्ष अरीय रूप से व्यवस्थित होते हैं ।

(ब) खड़ी अर कोशिकाएँ (Upright Ray Cells): इस प्रकार की कोशिकाएँ उदग्र रूप से दीर्घित होती है, या कोशिकाओं के दीर्घ अक्ष अनुदैर्ध्य रूप से व्यवस्थित होते है ।

विषमकोशिकयि संवहनी किरणें मोटाई (width) के आधार पर तीन प्रकार की होती है -

(i) **एक पंक्तिक** (Aniseriate): इसकी चौड़ाई एक कोशिका की होती है ।

(ii) **द्‌वि पंक्तिक** (Biseriate): इसकी चौड़ाई दो कोशिकाओं की होती है ।

(iii) **बहु पंक्तिक्क** : इनकी चौड़ाई दो से अधिक कोशिकाओं की होती है । ये अनुप्रस्थ काट में तर्कुरूप दिखाई देते हैं ।

5.3.6 अरीय तंत्र (Radial System)

अधिकांश जिम्नोस्पर्म पादपों में वाहिनिकाएँ ही वाहिनिकीय तत्वों के रूप में पायी जाती है, जिन्हें वाहिनिकीय तन्तु (fibra tracheids) कहते हैं । क्योंकि इनकी संरचना में भित्ति अपेक्षाकृत अधिक मोटी तथा गर्त छोटे गर्त क्षेत्र (pitchamber) युक्त एवं लम्बी नलिका समान व्यवस्था पायी जाती है । इसके कारण वृद्धिकाल के अन्त में बनने वाला जाइलम गहरे रंग का प्रतीत होता है (चित्र 5.6, 5.7, 5.8) ।

5.3.7 द्विबीजपत्रियों की द्वितीयकी जाइलम संरचना

(Structure of Secondary Xylem in Dicots)

द्विबीजपत्रियों में द्वितीयक जाइलम तंत्र जटिल प्रकार का होता है । इसमें वाहिनिकाएँ (tracheids), वाहिकाएँ (vassels) तन्तु वाहिनिकाएँ (fibre tracheids) पोषवाहक रूपी तन्तु श्लेष्मिक तन्तु (gelatinous fibers) काष्ठ पेरन्काइमा (wood parenchyma) त था विभिन्न आकार प्रकार की किरणें (rays) पायी जाती है ।

वृद्धि काल के आरम्भ में निर्मित कोशिकाएँ पतली भित्तियुक्त चौड़ी गुहा (lumen) वाली होती है, जबकि वृद्धिकाल के अन्त में बनने वाली कोशिकाएँ अपेक्षाकृत मोटी भित्ति की एवं सकरी गुहावाली होती है ।

वाहिनिकाएँ व्यवस्थित रहती है तो एक बड़े समूह का निर्माण करती है ।

5.3.8 द्वितीयक जाइलम में वाहिका ओं का विन्यास

(Arrangement of Vessels in Secondary Xylem)

द्विबीजपत्रियों में द्वितीयक जाइलम में वाहिकाओं का विन्यासव एक विशिष्ट लक्षण है । जिसका उपयोग प्रजातियों को पहचानने में किया जाता है । वाहिका ओं के व्यास तथा वितरण के आधार पर काष्ठ दो प्रकार का होता है - (1) विसरित छिद्रिल काष्ठ (2) वलय छिद्रिल काष्ठ (चित्र 5.9) ।

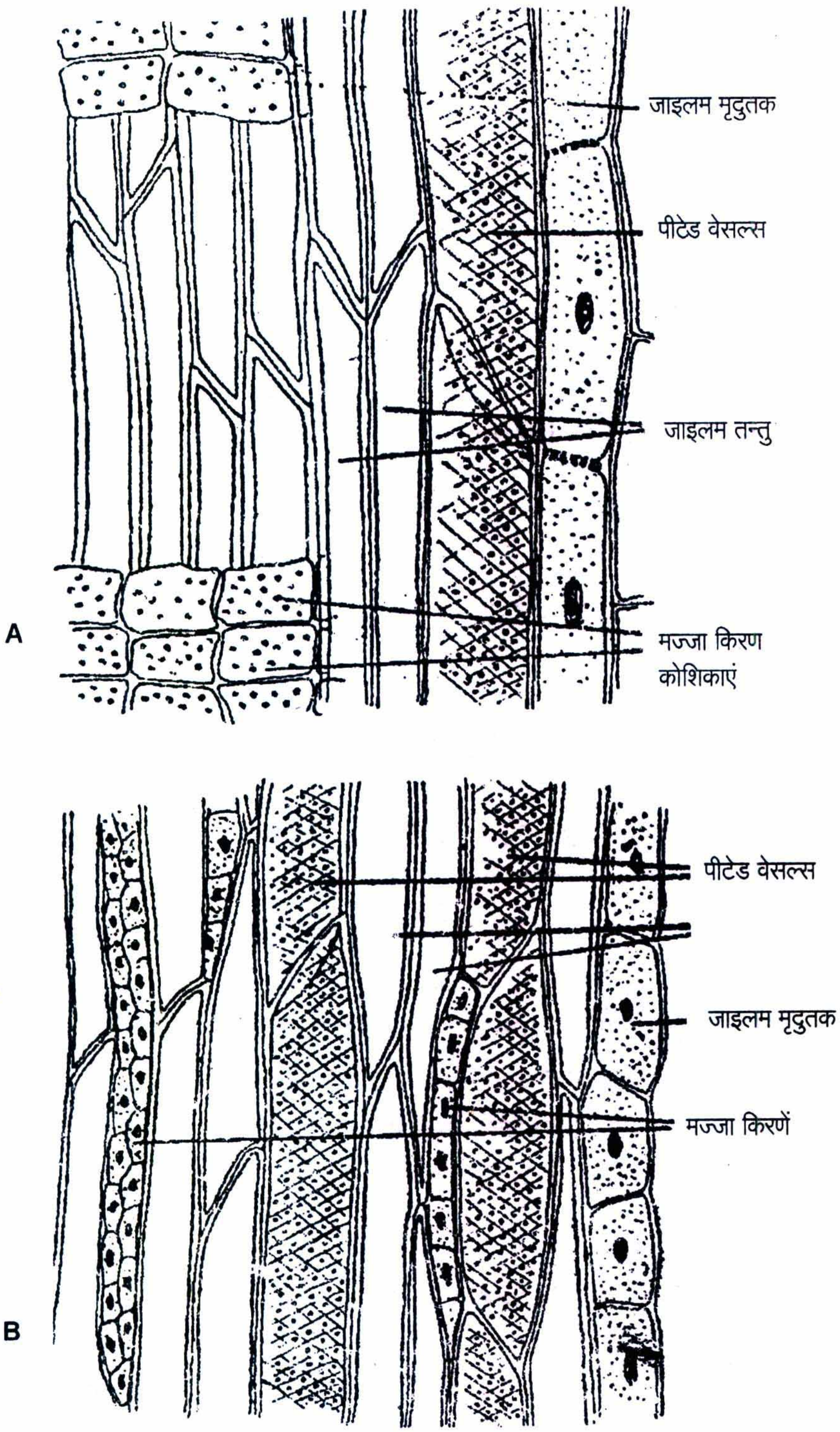

चित्र 5.9 : द्‌वितीयक जाइलम की संरचना : A. अरीय काट,
B. स्पर्शरेखी अनुदैध्य काट (TLS)

5.3.9 एक बीजपत्रियों की द्वितीयक जाइलम की संरचना

(Structure of Secondary Xylem on Monocotyledon)

एकबीजपत्री पादपों में द्वितीयक वृद्धि का अभाव होता है, इनमें संवहन कैम्बियम की अनुपस्थिति के एवं कारण स्तम्भ के व्यास में वृद्धि प्राथमिक स्थूलन विभज्योतक के कारण पायी जाती है । कुछ ताड़वृक्षों में स्तम्भ भरण ऊतक की कोशिकाएँ विभाजन द्वारा स्तम्भ के व्यास में वृद्धि करती है जिसे विसरित द्वितीयक वृद्धि (diffused secondary growth) कहते हैं ।

कुछ एकबीजपत्रियों में एक विशेष प्रकार की संवहन कैम्बियम की उत्पत्ति प्राथमिक संवहन पूलों के बाहर स्थित पैरेन्क्राइमी कोशिकाओं से होती है तथा प्राथमिक स्थूलन मेरिस्टेम जुड़ा रहता है । इस प्रकार द्वितीयक जाइलम व फ्लोएम तथा यौगिक ऊतक (conjunctive tissue) अन्दर एवं बाहर की और पैरन्काइमी ऊतक का विकास करते हैं । इस कैम्बियम से संवहन ऊतक सिलिन्डर के रूप में न बनकर पूलों (bundles) के रूप में विकसित होते हैं । उदाहरण **अगेव** (agave), **यक्का** (yucca) तथा **ड्रेसिना** (dracaena)

5.4 वार्षिकवलय (Annual Rings)

अनेक बहु वर्षी पादपों में प्रतिवर्ष एधा अथवा कैम्बियम की क्रियाशीलता के कारण द्वितीयक जाइलम के घेरों का निर्माण होता है, जो सामान्यत : तने के अनुप्रस्थ काट में संकेन्द्री वलयों के रूप में दिखाई देते हैं । ये **वलय वार्षिक वलय** अथवा वृद्धिवलय (annual or growth rings) कहलाती है (चित्र 5.9) ।

अधिकांश समशीतोष्ण एवं कभी -कभी उष्ण (tropical) जलवायु में तापमान के परिवर्तन के कारण पादपों में क्रियाशील एवं सुषुप्त काल एकान्तर क्रम से चलते रहते है । सामान्यतया बसन्त रख ग्रीष्मकाल में नयी कलिकाएँ फूटती है, एवं नई शाखाएँ बनती है जिनके लिए खनिज एवं जलापूर्ति के लिए अधिक वाहिकाओं की आवश्यकता होती है, तथा एधा अधिक क्रियाशील होती है। इस समय बनी एवं परिवर्धित वाहिकाएँ अधिक व्यास वाली होती है । जिसके परिणाम स्वरूप अधिक काष्ठ बनता है । कोशिका में इनकी भित्ति पश्च काष्ठ में बने जाइलम तत्वों की अपेक्षा पतली होती है । इसके विपरीत पतझड़ एवं शरद ऋतु में एधा अपेक्षाकृत कम क्रियाशील होती है। तथा वाहिकाएँ वाहिनिकाएँ तन्तु इत्यादि छोटी तथा कम व्यास वाली होती है । इनकी मात्रा भी इस समय कम होती है (चित्र 5.9) । सामान्यतया एक वर्ष में स्व वार्षिक वलय बनती है परन्तु कुछ पादपों में एक वर्ष में दो वार्षिक वलय बनते हैं जैसे - **टेमेरिक्स** (tamarix) (चित्र 5.10) ।

5.5 रसकाष्ठ एवं अन्त (Sapwood and Heart Wood)

अधिकांश काष्ठीय वृक्षों में द्वितीयक ऊतक के केन्द्रीय वलय गहरे रंग का क्षेत्र बनता है जिसे **डयूरामेन** (duramen) अथवा **अन्तकाष्ठ** (heart wood) कहते हैं । इसके परिधीय क्षेत्र का रग अपेक्षाकृत हल्का होता है । जिस **एल्वर्नम** (alburnam) अथवा. **रसकाष्ठ** (sapwood) कहते हैं (चित्र 5.11) ।

A

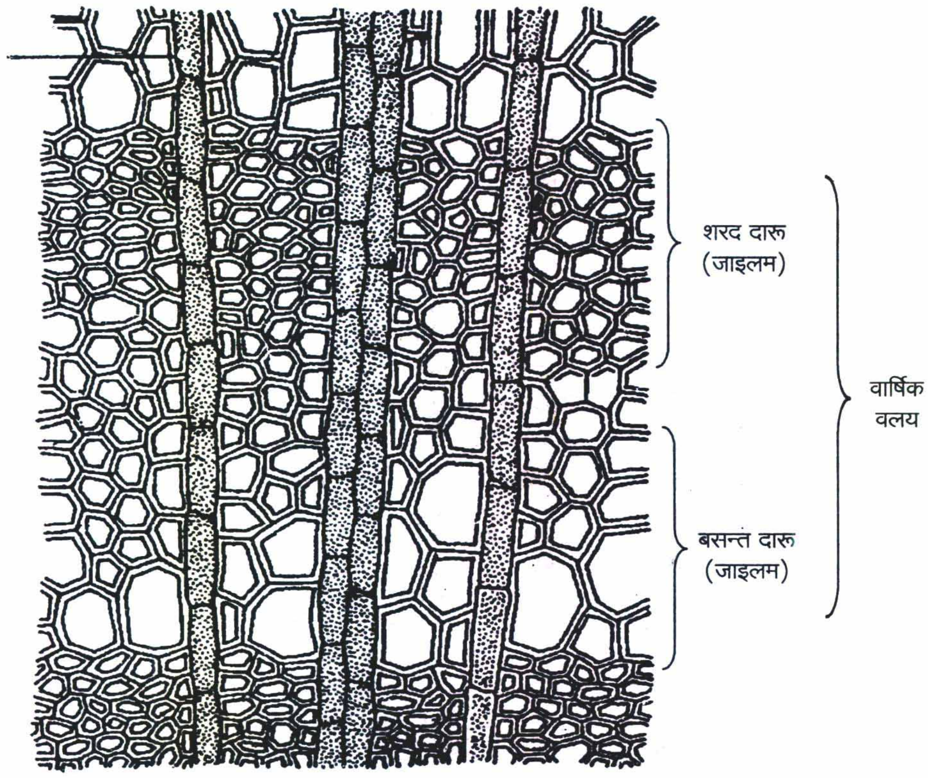

B

चित्र 5.10 : A वार्षिक वलय दर्शाता वृद्ध स्तम्भ का अनुप्रस्थ काट, B वार्षिक वलय के एक भाग की विस्तृत संरचना

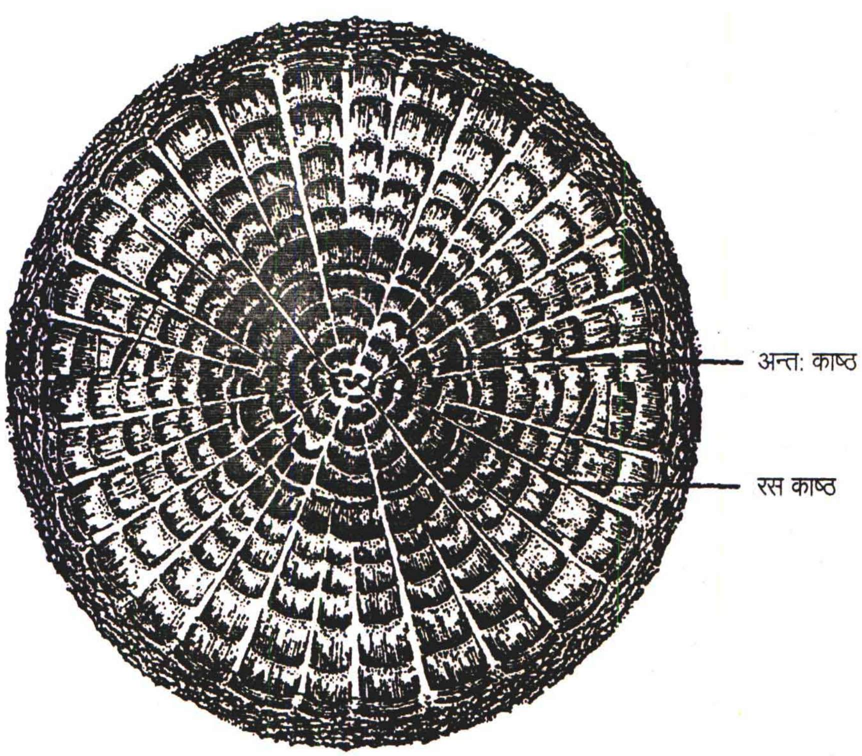

चित्र 5.11 : एक बड़े वृक्ष का अनुप्रस्थ काट रसदारू और अन्तःकाष्ठ दिखाते हुए

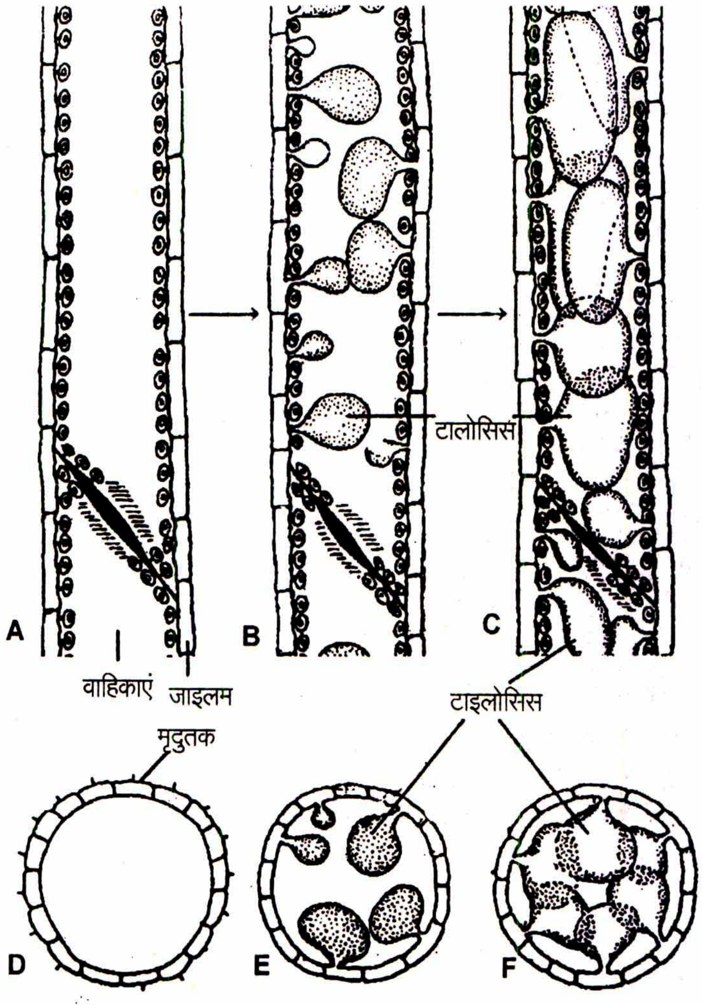

चित्र 5.12 : जाइलम वाहिकाओं में टाइलोस बनने की विभिन्न अवस्थाएं A-C. अनुदैर्ध्य सेक्शन में, D-F. अनुप्रस्थ सेक्शन में

अन्त: काष्ठ का गहरा रग इसकी कोशिका ओं में गोंद, टेनिन, रैजिन इत्यादि पदार्थों के सचेतन (impregnation) के कारण होता है इसी कारण ये कोशिकाएँ मृत (dead) एवं जल-संवहन (water conduction) में अक्षय पायी जाती है । यह काष्ठ यांत्रिक आधार प्रदान करने के साथ ही उपरोक्त वर्णित पदार्थों के संसेच के कारण । कीटप्रतिरोधी (insect resistant) भी हो जाती हे । अत: निर्माण कार्यों हेतु उपयोगी मानी जाती है । कुछ पादपों जैसे हीमेटाक्सीलान (haemaoxylon) की अन्त: काष्ठ से वर्णक (pigment) हिमेटोजाइलिन (hematoxyline), टैरोकार्पस से सेन्टिलिन (santalin) प्राप्त होता है ।

रस दारू (sap wood) की जीवित कोशिकाओं में कार्यिकी संक्रियता पायी जाती है । इसके बाह्यवलय की कोशिकाएँ जल-चालन व भीतरी वलय की कोशिकाएँ संचयन (storage) में सहायक होती है । अंतःकाष्ठ रहित खोखला वृक्ष भी अनेक वर्षों तक जीवित रह सकता है ।

पौधों की आयु के साथ - साथ रसकाष्ठ में भी टैनिन, रेजिन, इत्यादि पदार्थों का संचयन प्रारम्भ हो जाता है और यह अन्त:काष्ठ में रूपान्तिरत होने लगता है ।

रस काष्ठ का उपयोग लुगदी (pulp wood), औजारों के हत्थे (tool handles) लानियाँ इत्यादि बनाने में किया जाता है ।

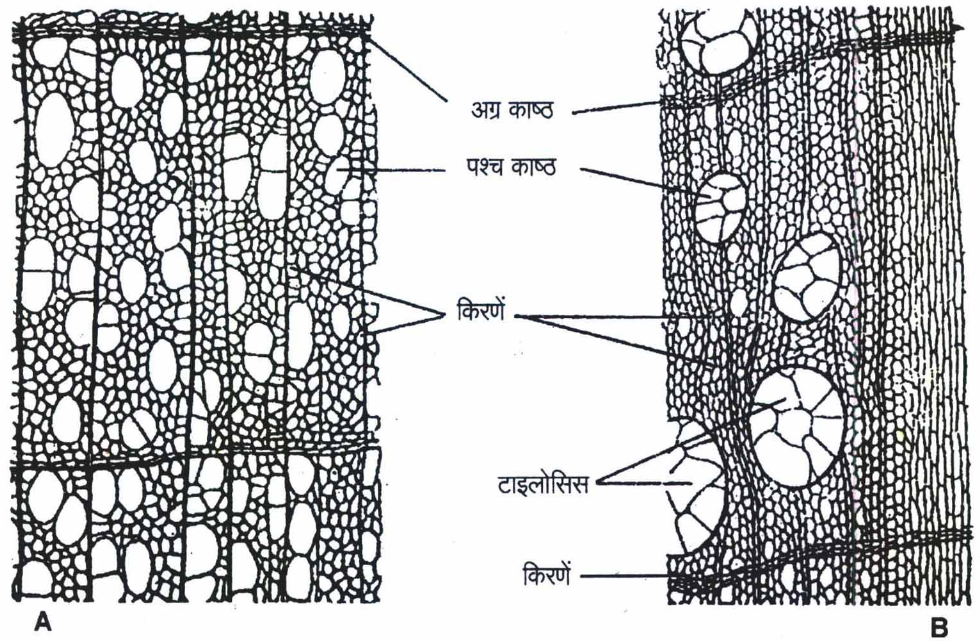

चित्र 5.13 : द्वितीयक जाइलम अनुप्रस्थ काट में : A विसरित छिद्रिल काष्ठ, B वलय छिद्रिल काष्ठ

अन्तःकाष्ठ की वाहिकाएँ साधारणतया **टाइलोसो** से भर जाती है और उनकी अवकांशिकाएँ अवरूद्ध हो जाती है । एक **टाइलोस** (tylem) गुब्बारे या थैलीनुमा झिल्ली का फुलाव होता है जो एक जीवित जाइलम कोशिका (xylem) अर्थात् जाइलम पैरन्काइमा या जाइलम रे और वाहिका या वाहिनिका के अर्थ परिवेशित गर्तयुग्म (half bordered pit pair) से फूलकर वाहिका की अवकाशिका को भर देता है । यह नाजुक झिल्ली फैलकर और वृद्धि करके गर्तगुहा (pit cavity) से बाहर निकलकर निर्जीव कोशिका में बहि:सरण कर जाती है । टाइलोस में पैरन्काइमा का न्यूक्लियस या उसका कुछ साइटोप्लाज्म प्रवेश कर जाता है । टाइलोस के कोशिकीय अजैव (ergastic) पदार्थ इकट्ठे हो जाते हैं तथा काष्ठ की पारगम्यता को घटा देते हैं । जातियों के अनुसार टाइलोसो की संख्या और आकार भिन्न-भिन्न होते हैं । ये रसकाष्ठ में भी उपस्थित हो सकते हैं । टाइलोस काष्ठ (wood) की चिरस्थायीपन को भी बढ़ा देते हैं । अवरूद्ध करके पानी हवा कवक के प्रवेश को बहुत धीमा कर देते । पतझड़ के समय या जख्म भरने के समय भी टाइलोसो का निर्माण होता है (चित्र 5.12) ।

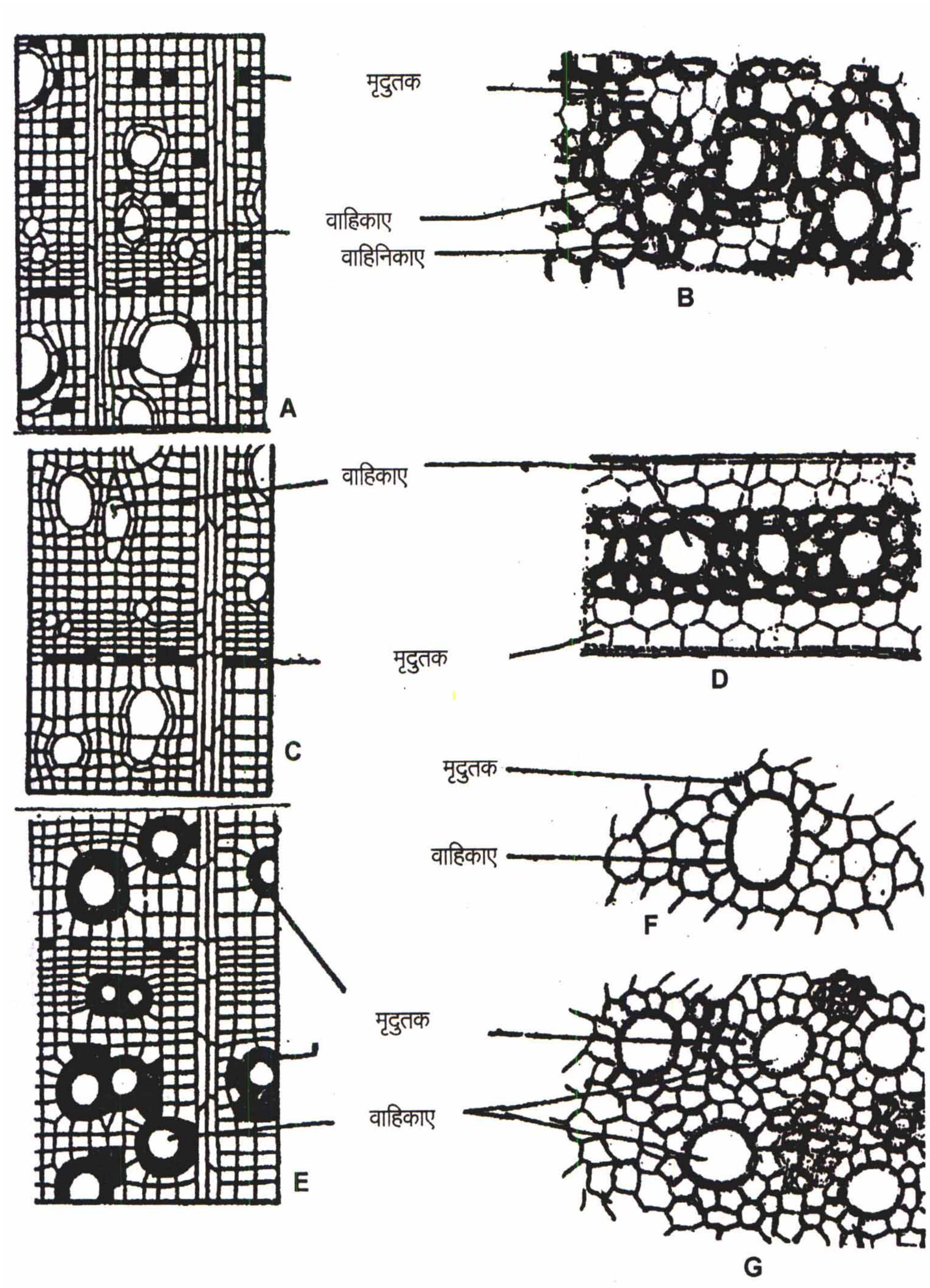

चित्र 5.14 : (A,B) विसरित अपवाहिकीय मृदुतक (C,D) अन्तस्थ अपवाहिकीय मृदुतक (E,F) परावाहिकीय मृदुतक एवं (G) वाहिकाकेन्द्री संगामी

5.6 छिद्रिल एवं अछिद्रिल काष्ठ (Porous and Non-porous Wood)

वाहिकाओं के व्यास तथा वितरण के आधार पर काष्ठ दो प्रकार का होता है ।

(1) **विसरित छिद्रिल काष्ठ** (Diffuse Porous Wood): जब लगभग समान व्यास वाहिकाएँ की समान रूप सम्पूर्ण काष्ठ में बिखरी हुई होती है या जब सम्पूर्ण वृद्धिवलय में उत्तरोतर रूप से साइज तथा वितरण में परिवर्तन होता है, तब इसे विसरित छिद्रिल काष्ठ कहते हैं (चित्र 5.13) । जैसे - **पोपूलस एल्बा एसर यूकेलिप्टस ओलिवा** तथा **अकेशिया** इत्यादि ।

(2) **वलय छिद्रिल काष्ठ** (Ring Porous Wood): जब काष्ठ में भिन्न व्यास की वाहिकाएँ मिलती है । बसन्त ऋतु में बने अग्रकाष्ठ (early wood) में बनी वाहिकाओं का व्यास अधिक होता है, जबकि पतझड़ में बने पश्चकाष्ठ (late wood) में बनी वाहिकाओं का व्यास कम होता है । जैसे - क्यूर्कसु अल्मस रोविनिया इत्यादि ।

प्रिस्टली तथा स्कोट के अनुसार वलय छिद्रिल काष्ठ में वाहिकाएँ एकाएक तीव्रता से, जबकि विसरित छिद्रिल काष्ठ में धीमें रूप से परिवर्धित होती है । वलय छिद्रिल काष्ठ की वाहिकाएँ विसरित छिद्रिल काष्ठ से लम्बी होती है । वलय छिद्रिल काष्ठ में विसरित छिद्रिल काष्ठ से दस गुना तेजी से जल का परिवहन होता है (चित्र 5.13, 5.14 व 5.15) ।

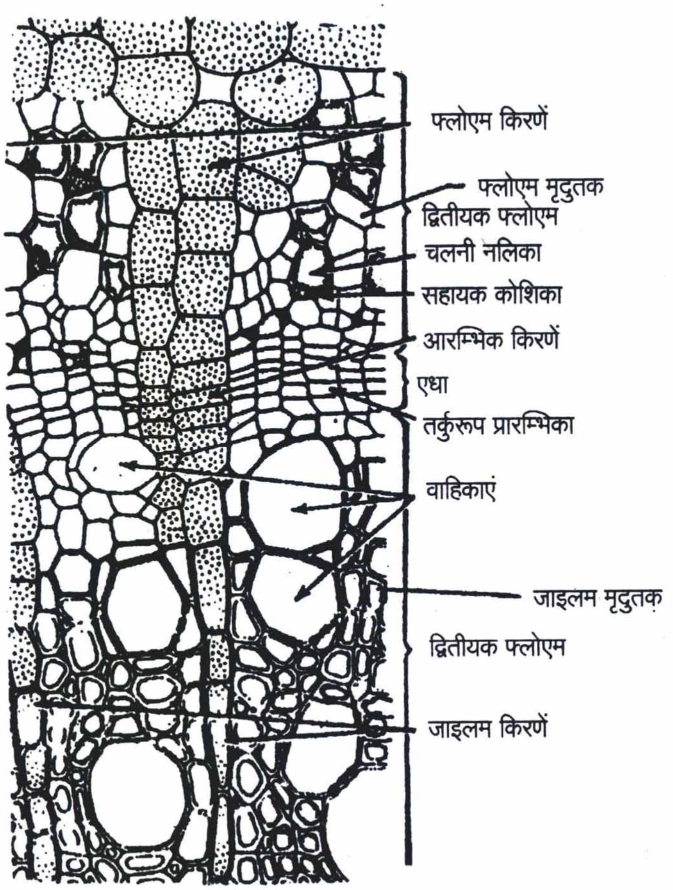

चित्र 5.15 : काष्ठ मृदुतक के प्रकार एवं काष्ठ में जायलम अथवा फ्लोएम किरणें दर्शाते हुए

बोध प्रश्न - 2

(1) तने के अनुप्रस्थ काट में जाइलम के घेरे को........................... कहते हैं ।

(2) द्वितीयक वृद्धि..................... एवं.........................के कारण होती है ।

(3) एरिस्टोलोकिया में अन्तरपूलीय एधा से...........................बनती है ।

(4) एक ही प्रकार की कोशिकाओं से बनी किरणे........................ कहलाती है ।

5.7 सारांश

पादपों में शीर्ष विभज्योतक से मुख्यतया प्राथमिक संरचना का विकास होता है । पौधों में संवहनपूल तथा शीर्ष विभज्योतक में उपस्थित प्राकएधा से बनते हैं । इस प्राकएधा की एक पट्टी जायलम तथा फ्लोएम के बीच क्रियाशील बनी रहती है तथा एधा (cambium) कहलाती है ।

एधा सामान्य तथा निम्न प्रकार की होती है - (1) पूलीय एधा, (2) अन्तरपूलीय एधा (3) संवहनी एधा (4) कागएधा इत्यादि । एधा द्विबीजपत्री पादपों में पाई जाती है जबकि एकबीजपत्री पादपों में एधा नहीं पायी जाती है ।

द्वितीयक जाइलम में सामान्यतया दो प्रकार के तंत्र मिलते है, जिसे अक्षीय तंत्र (axial system) तथा अरीय तंत्र कहते हैं । द्वितीयक जाइलम द्विबीजपत्रियों में जटिल प्रकार का होता है । द्विबीजपत्रियों में वाहिकाओं के व्यास तथा वितरण के आधार पर काष्ठ दो प्रकार का होता है । (1) विसरित छिद्रिल काष्ठ तथा (2) वलय छिद्रिल काष्ठ

अनेक बहुवर्षीय पादपों में प्रतिवर्ष एधा की क्रियाशीलता के कारण द्वितीयक जाइलम के घेरों का निर्माण होता है, जोकि सामान्यतया तने के अनुप्रस्थ काट में सकेन्द्री वलयों के रूप में दिखाई देते हैं ये वलय, वार्षिकवलय अथवा वृद्धिवलय (annual ring or growth ring) कहलाती है ।

5.8 शब्दावली

(1) **एधा** (Cambium): प्राकएधा की एक पट्टी जायलम तथा फ्लोएम के बीच क्रियाशील बनी रहती है ।

(2) **पूलीय एधा** (Fasicular Cambium): संवहन पूल में उपस्थित एधा पूलीय एधा कहलाती है।

(3) **अन्तर पूलीय एधा** (Interfasicular Cambium): पूलीय एधा के बीच में उपस्थित एधा अन्तरपूलीय एधा कहलाती है ।

(4) **वार्षिक वलय** (Annual Ring): बहुवर्षीपादपों में प्रतिवर्ष द्वितीयक जाइलम के घेरों (rings) का निर्माण होता है, उसे वार्षिक वलय कहते हैं ।

(5) **अन्तःकाष्ठ** (Heart wood): द्वितीयक ऊतक के केन्द्रीय वलय गहरे रंग का क्षेत्र बनाते है।

(6) **रस काष्ठ** (Sap wood): द्वितीयक ऊतक के परिधीय क्षेत्र का रंग हल्का होता है, वह रसकाष्ठ कहलाता है ।

5.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. त्रिवेदी, शर्मा, घनखंड: वनस्पति शास्त्र बी.एस.सी. पार्ट ii, 2007, रमेश बुक डिपो जयपुर

2. अग्रवाल एवं शर्मा पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन, बी.एस.सी. पार्ट ii 2004, कॉलेज बुक हाऊस, जयपुर
3. सिंह, पाण्डे एवं जैन: आवृतबीजी वनस्पति विज्ञान 2006, रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ
4. शर्मा, शर्मा एवं गोदारा: पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन बी.एस.सी. पार्ट ii 2004, साक्षी पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

(1) प्राकएधा
(2) पूलीय एधा
(3) अन्तरपूलीय एधा
(4) द्वितीयक प्रकार की
(5) IAA तथा GA का

बोध प्रश्न - 2

(1) वार्षिक वलय
(2) सवहन एधा, कागएधा
(3) मज्जा किरण
(4) संभागीय अर

5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) एधा की संरचना एवं काय का वर्णन कीजिये ।
(2) कागएधा व पूलीय एधा में अन्तर बताइये ।
(3) द्वितीयक जाइलम का निर्माण किस प्रकार से होता है ।
(4) काष्ठ कौन-कौन से प्रकार की होती है ।
(5) द्वितीयक जाइलम में अक्षीय तंत्र का वर्णन कीजिये ।

इकाई 6 : द्वितीयक फ्लोयम का संरचना एवं कार्य (Structure and Function of Secondary Phloem)

इकाई संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 द्वितीयक फ्लोयम की संरचना एवं कार्य

6.2.1 द्वितीयक फ्लोयम का निर्माण (Formation of Secondary Phloem)

6.2.2 द्वितीयक फ्लोयम की संरचना (Structure of Secondary Phloem)

6.2.3 द्वितीयक फ्लोयम की क्रियाशीलता का काल (duration of the Activity of Secondary Phloem)

6.2.4 द्वितीयक फ्लोयम में संरचना कार्य सम्बन्ध (Structure, Function Relationship in Secondary Phloem)

6.3 परित्वक: निर्माण, संरचना एवं कार्य (Periderm: Development, Structure and Function)

6.3.1 परित्वक अवयवों की संरचना (Structure of the Periderm Components)

6.3.2 कागजन (Phellogen)

6.3.3 काग (Phellem or cork)

6.3.4 काग अस्तर (Phelloderm)

6.3.5 कागजन का परिवर्धन (Development of Phellogen)

6.4 परित्वक का परिवर्धन (Development of Periderm)

6.5 सारांश

6.6 शब्दावली

6.7 संदर्भ ग्रन्थ

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.0 उद्देश्य

प्राथमिक विभज्योतक से उत्पन्न कोशिकाओं व ऊतकों से प्राथमिक संरचना बनती है तथा मुख्य रूप से उर्ध्व (vertical) होती है । पादपों में पार्श्व विभज्योतक तथा संवहन एधा त था काग एधा

(cork cambium) के कारण हुई वृद्धि द्वितीयक वृद्धि कहलाती है । अधिकांश द्विबीजपत्री पादपों में द्वितीयक वृद्धि समान्य तौर पर पाई जाती है ।

6.1 प्रस्तावना

द्वितीयक पादप तने में सामान्यतया संवहन पूल वर्धी (open), संपार्श्विक (collateral) होते हैं तथा वलय (ring) में व्यवस्थित होते हैं । वर्धी संवहन पूलों में जायलम (xylem) तथा फ्लोयम के बीच में उपस्थित विभज्योतकी कोशिकाएँ (meristemaic cell) पूलीय एधा (vascular cambium) कहलाती है ।

अनेक पादपों में एधा की सक्रियता के कारण तने की मोटाई में वृद्धि होती है, इसे द्वितीयक वृद्धि (secondary growth) कहते हैं । द्वितीयक वृद्धि के दौरान जो ऊतक बनते हैं वे द्वितीयक ऊतक कहलाते हैं । ये मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं -

1. द्वितीयक सं वहन ऊतक (Secondary Vascular Tissue): द्वितीयक जायलम (Secondary Xylem) तथा द्वितीयक फ्लोयम (Secondary Phloem)
2. काग अथवा परित्वक (Cork or Periderm)

6.2 द्वितीयक फ्लोयम की संरचना एवं कार्य (Structure of Secondary Phloem and Function)

6.2.1 द्वितीयक फ्लोयम का निर्माण (Formation of Secondary Phloem)

संवहन कैम्बियम द्वारा द्वितीयक जाइलम के समानान्तर **द्वितीयक फ्लोएम** (Secondary Phloem) का निर्माण होता है । इसकी कोशिकाओं की आधारभूत संरचना द्वितीयक जाइलम के समान ही होती है परन्तु इसकी मात्रा द्वितीयक जाइलम की अपेक्षा कम पाई जाती है ।

द्वितीयक फ्लोएम में भी अनुदैर्ध्य (vertical) व क्षैतिज (horizontal) तंत्र का निर्माण पाया जाता है । इसके अनुदैर्ध्य तंत्र (system) का निर्माण **चालनी नलिकाओं** (sieve tubes), **सहचर कोशिका ओं** (companion cells), **फ्लोयम पेरनकाइमा** (phloem parenchyma) एवं **फ्लोएम तन्तु** (phioem fibres) द्वारा होता है । इसकी उत्पत्ति कैम्बियम की तर्कुरूप प्रारम्भिक (fusifrom inital) से होती है । फ्लोएम के इस तंत्र द्वारा कार्बनिक पदार्थों का पादप में लम्बवत् चालन किया जाता है । क्षैतिज तंत्र का विकास कैम्बियम की अर प्रारम्भिक (ray initial) द्वारा होता है तथा इसके प्रस्तुत तत्वों में अर पेरन्काइमा (ray parenchyma) पाया जाता है जिसके द्वारा फ्लोएम किरणें (phloem rays) बनती है (चित्र 6.1) ।

फ्लोयम के दोनों तंत्रों में दृढ़ता (sclereids), स्रावी अवयव (secretory elements) लैटेक्स कोशिकाएँ (latex cells) एवं अनेक विचित्र कोशिकाएँ (idio blasts) पायी जाती है । इनमें फ्लोयम तन्तुओं का अभाव होता है । फ्लोयम तन्तु उपस्थित होते हैं तो इनके द्वारा समानान्तर अवस्था में स्पर्शरेखीय पट्टियों का निर्माण किया है ।

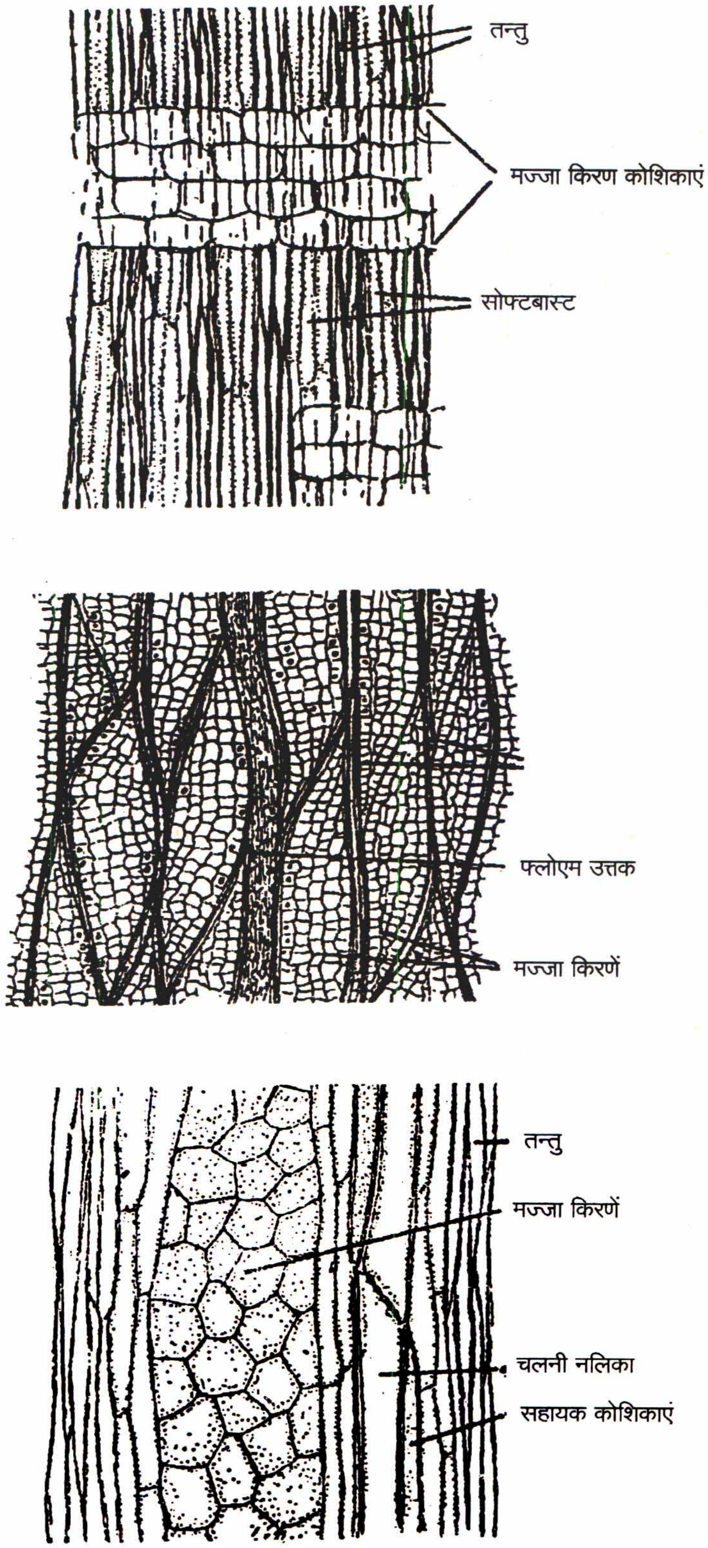

चित्र 6.1 : द्वितीयक फ्लोयम की संरचना :

A अरीय, B_1 1 स्पर्शरेखीय काट B_2 विस्तृत संरचना

द्वितीयक फ्लोयम में प्राथमिक फ्लोयम की अपेक्षा संरचनात्मक जटिलता (structural complexity) पायी जाती है । इसकी कोशिकाएँ अरीय पंक्तियों में व्यवस्थित रहती है, व चालनी नलिकाएँ आकार में अपेक्षाकृत छोटी एवं संख्या में अधिक पायी जाती है । द्विबीजपत्री स्तम्भों में फ्लोयम पेरन्काइमा अधिकता में पाया जाता है तथा दृढ़ोतक भी आवश्यक रूप से उपस्थित होता है । प्रत्येक वृद्धिकाल के अन्त में पुराना फ्लोयम दृढ़क कोशिकाओं में रूपान्तरित होने लगता है, व तन्तु दृढ़क (fiber sciereids) कहलाता है । इस दृढ़ीकरण से यह अप्रकार्यक (non junctional) होने लगता है और टूटकर परित्वक (periderm) द्वारा अलग कर लिया जाता है ।

द्वितीयक फ्लोयम की फ्लोयम किरणें भी एक पंक्तिक या बहुपंक्तिक हो सकती है, रख पुराने फ्लोयम में ये विस्फारित (dilated) अवस्था में पायी जाती है । जाइलम के समान फ्लोयम द्वारा यह स्पष्ट वृद्धि वलयों का निर्माण नहीं किया जाता है । द्वितीयक फ्लोयम का जीवनकाल प्रायः एक वृद्धिकाल ही होता है । इसके विपरीत कुछ उदाहरणों में चालनी नलिकाएँ अनेक वर्षो तक प्रकार्यक रहकर अन्त में बास्ट तन्तुओं (bast fibres) में परिवर्तित हो जाती है । उदाहरण - टीलिया (Tilia) (चित्र 6.16.2) ।

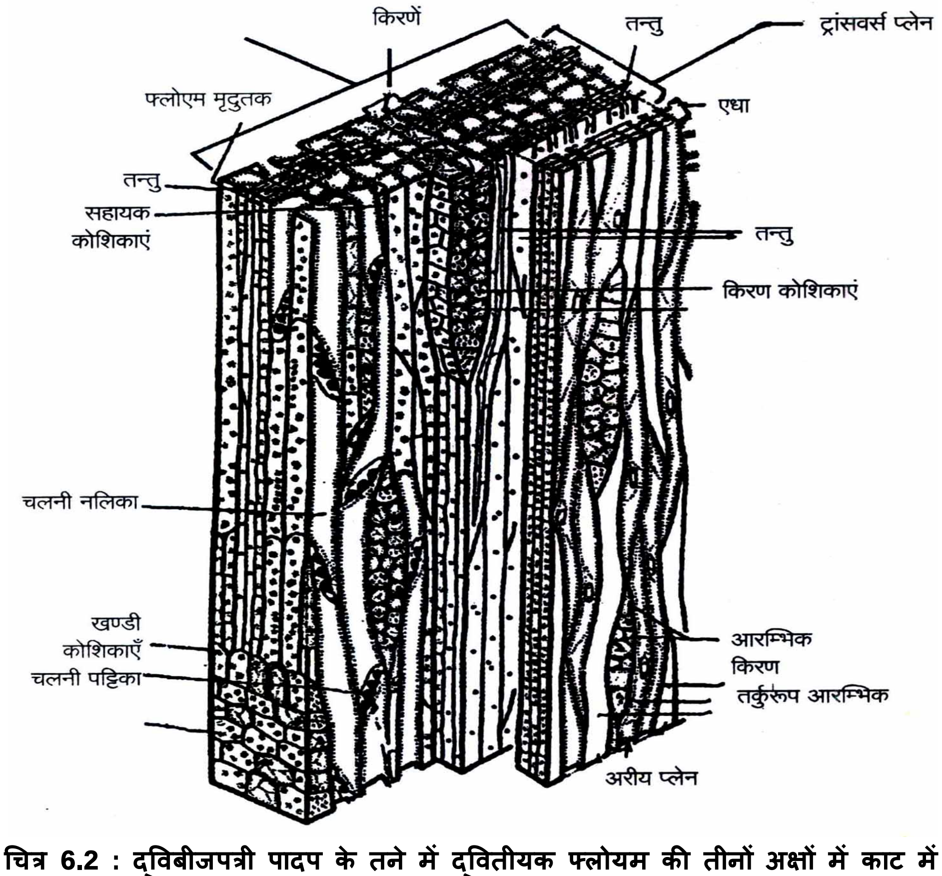

चित्र 6.2 : द्विबीजपत्री पादप के तने में द्वितीयक फ्लोयम की तीनों अक्षों में काट में विभिन्न अवयव दर्शाते हुए (प्लॉट एनोटोनी इसाउ, 1965 से लिया गया)

6.2.2 द्विबीजपत्री -द्वितीयक फ्लोयम की संरचना

(Dicotyleddons- Structure of Secondary Phloem)

द्वितीयक फ्लोयम जटिल में जटिल संरचना वालों उदग्र (ventical) तंत्र का निर्माण चालनी नलिका सदस्यो (sieve tube members), सहायक कोशिकाओं (companion cells), पेरेन्काइमा (parenchyma) एवं तन्तुओं (fibers) द्वारा होता है । इसके क्षैतिज तंत्र (horizontal system) मे विभिन्न आकार की किरण पायी जाती है जोकि एक या बहुपंक्तिक (uni to multiseriate) एवं पेरेन्काइमा कोशिकाओं की बनी होती है, दोनों तंत्रों में दृढ़क, लयजात स्रावी संरचनाएँ, लैटेक्स कोशिकाएँ इत्यादि विशिष्ट पदार्थ धारण करने वाली कोशिकाएँ पायी जाती है (चित्र 6.1, 6.3) ।

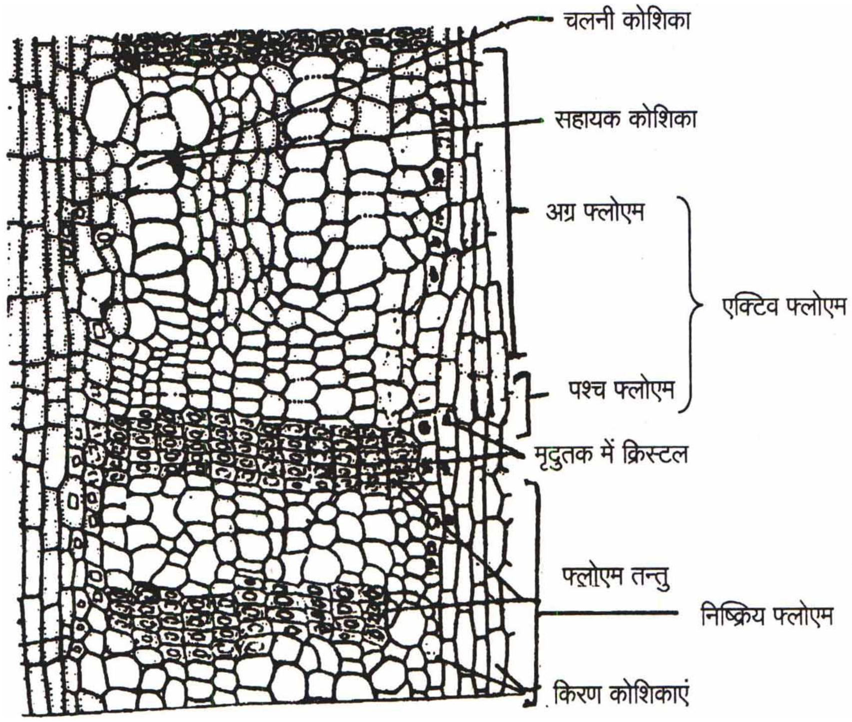

चित्र 6.3 : द्वितीयक फ्लोयम में बसंत अथवा पूर्व एवं पश्च फ्लोयम दर्शाते हुए

द्वितीयक फ्लोयम तंतु विभिन्न प्रकार से व्यवस्थित रहते हैं तथा सहायक कोशिकाओं चालनी ' नलिकाओं एवं पेरन्काइमा के साथ एकान्तर क्रम से पट्टियों (bends) का निर्माण करते हैं । **एरिस्टोलोकिया** में फ्लोयम तन्तु अनुपस्थित रहते हैं ।

दृढ़क व तन्तु दृढ़क (sclereids and fibre sclereids) प्रकार्यक (functional) व अप्रकार्यक (non-functional) दोनों प्रकार के फ्लोयम में पाये जाते हैं, परन्तु अप्रकार्यक फ्लोयम में इनकी अधिक पायी जाती है । **प्रूनुस** (prunus) के प्रकार्यक फ्लोयम में दोनों कोशिकाएँ अनुपस्थित अप्रकार्यक में उपस्थित रहती है (चित्र 6.2 तथा 6.3) ।

रोबिनीआ (Robinia) व **एरिस्टोलोकिया** में चालनी नलिकाएँ व पेरन्काइमा कोशिकाएँ एकान्तर में व्यवस्थित रहती है ।

चालनी नली सदस्यों में चालनी क्षेत्र पार्श्वभित्तियाँ की अपेक्षा चालनी प्लेट (sieve plate) क्षेत्रों में धक विकसित रहती है ।

6.2.3 द्वितीयक फ्लोयम की क्रियाशीलता का काल

(Duration of the Activity of Secondary Phloem)

सामान्यता अधिकांश द्विबीजपत्री पादपों में पिछले वृद्धिकाल या एक वर्ष पहले बना द्वितीयक फ्लोयम क्रियाशील होता है, कभी -कभी कैम्बियम से नया द्वितीयक फ्लोयम बनने से पहले ही पिछले वर्ष की बनी सम्पूर्ण चलनी नलिकाएँ निष्क्रिय हो जाती है । **टीलिया** (tilia) में चालनी नलिकाएँ अनेक वर्षों तक सक्रिय रहती है तथा शीत ऋतु में भी इनमें कोई परिवर्तन नहीं होता है। **वाइटिस** (vitis) में फ्लोयम दो वर्ष तक सक्रिय रहता है, परन्तु पतझड़ में इसमें **केलोसप्लग** (calloseplugs) बन जाते हैं ।

द्वितीयक फ्लोयम का वह भाग जो संवहन नहीं करता है, उसे अक्रिय या अकार्यात्मक (inaction) फ्लोयम कहते हैं । निष्क्रिय चलनी तत्वों में कैलस की मोटी परत जमा हो जाती है, जिससे जीवद्रव्य विसंगठित एवं विघटित हो जाता है तथा फ्लोयम तत्व संदिलित (crushed) हो जाते हैं । सहकोशिकाएँ भी चालनी नलिकाओं के साथ निष्क्रिय हो जाती है ।

6.2.4 द्वितीयक फ्लोयम में संरचनात्कार्य सम्बंध (Structure, Function Relationship in Secondary Phloem)

द्वितीयक फ्लोयम का मुख्य कार्य भोज्य पदार्थो का संवहन करना है, इसके अतिरिक्त निष्क्रिय अथवा सुषुप्तावस्था (dormant phase) में अनेक पदार्थों जैसे कार्बोहाइड्रेट, वसा एवं नाइट्रोजीनी पदार्थों के संग्रह में भी इसकी **अक्षीय** एवं **अरीय तंत्र** की मृदुतकी कोशिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । चलनी नलिकाएँ, सहचर कोशिकायें तथा अक्षीय मृदुतकी कोशिकाएँ लम्बवत् दिशा में भोजन का संवहन तथा अक्षीय मृदुतकी कोशिकाएँ लम्बवत् दिशा में भोजन का संवहन करते हैं । जबकि अर कोशिकाएँ (ray cells) इत्यादि क्षैतिज दिशा में संवहन के लिए उत्तरदायी होते हैं । सामान्यतया फ्लोयम एक वर्ष तक क्रियाशील रहती है, इसमें उपस्थित मृदुतकी कोशिकाएँ एवं सहचर कोशिकाएँ (companion cells) चालनी नलिकाओं में **दबाव प्रवणता** (pressure gradient) बनाने में मदद करते हैं । इसके अतिरिक्त तंतु एवं दृढ़ कोशिकायें इसे यांत्रिक सहारा प्रदान करते हैं ।

अनेक पादपों में द्वितीयक फ्लोयम में उपस्थित तंतु आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण होते हैं, जैसे - **लाइनम** में उपस्थित बास्ट तंतु, द्वितीयक फ्लोयम में उपस्थित टैनिन दवाओं में प्रयोग किये जाते हैं । **रबड़** (Hevea) में उपस्थित रबरक्षीरी नलिकाओं की क्रियाशीलता के कारण उससे रबरक्षीर (latex) प्राप्त किया जाता है ।

6.3 परित्वक : निर्माण संरचना एवं कार्य (Periderm: Development , Structure and Function)

परित्वक (Periderm): परित्वक (Periderm) सामान्यतया द्विबीजपत्री एवं अनावृतबीजी पादपों की तने एवं जड़ों में पाई जाने वाली रक्षी (protective) परत है, जो द्वितीयक वृद्धि के फलस्वरूप बनती है । परिचर्म अथवा परित्वक को आम भाषा में कार्क अथवा छाल कहते हैं । सामान्यतया छाल संवहन एधा (cambium) के बाहर के ऊतकों को कहते हैं ।

सामान्यतया संवहनी एधा की क्रिया के कारण द्वितीयक जायलम तथा फ्लोयम बनती है तथा लगातार तने का घेरा बढ़ता जाता है, जिसके कारण अधिचर्म बढ़ते घेरे के साथ फैल नहीं पाती तथा कट फट जाती है । इसके परिणामस्वरूप एधा बनती है, जो बाहर की और कार्क बनाती है । समय के साथ प्रथम परिचर्म से अन्दर की ओर अन्य परिचर्म की परतें बनती है । प्रत्येक समय नई कार्क एधा पहली कार्क एधा से अन्दर की और अन्य परिचर्म की परतें बनती है ।

6.3.1 परित्वक अवयवों की संरचना (Structure of Peirderm Components)

परित्वक में तीन अवयव होते हैं, जोकि निम्न प्रकार है ।

1. विभज्योतक परत कागजन (Phellogen) अथवा कार्क कैम्बियम (Cork Cambium)
2. काग (phellem)
3. काग अस्तर (Phelloderm)

6.3.2 कागजन (Phellogen)

कागजन द्वितीयक विभज्योतक (meristematic tissue) है, अर्थात् यह उन कोशिकाओं से बनती है, जिनका विभेदन (differentiation) स्थायी ऊतकों में हो चुका है । यह संवहन एधा (vascular cambium) की ही भाँति पार्श्व विभज्योतक (lateral meristem) है । यह सामान्यतया मृदुतकी कोशिका ओं से बनती है, तथा रिक्तिकाओं (Vacuoles) से युक्त होते हैं । कभी - कभी इनमें हरितलवक (chloroplast) एवं टेनिन इत्यादि भी हो सकते हैं । सामान्यतया **वातरन्ध्र** (lenticel) के अतिरिक्त इनमें अन्तरकोशिकी अवकाश (inter cellular spaces) नहीं पाये जाते हैं । इनकी उत्पत्ति अधिचर्म एवं अधिचर्म (hypodermis) से लेकर **वल्कुट** (cortex) की किसी भी परत अथवा अन्तश्चर्म (endodermis) में उपस्थित जीवित मृदुतकी अथवा स्थूल कोणतकी कोशिकाओं से हो सकती है । कभी-कभी द्वितीयक फ्लोयम की बाह्यतम परतें भी फेलोजन बनाती है । **कनेर** एवं सेव में प्रथम कागजन की उत्पत्ति अधिचर्म (epidermis) से होती है जबकि **पोपूलस** (populus) एवं **जुगलेंस** (juglens) में अधश्त्वचा से होती है । कुछ पादपों जैसे रोबिनिया त था एरिस्टोलोकिया में वल्कुट की दूसरी अथवा तीसरी परत से तथा **वाइटिस** में द्वितीयक पौषवाह के नजदीक अथवा मृदुतकी कोशिकाओं से कागजन की उत्पत्ति होती है ।

कागजन (phellogen) की संवहनी एधा के समान क्रियाशीलता एवं निष्क्रियता भी दर्शाती है । कुछ पादपों जैसे - **क्विरकस** (quercus) में फेलोजन एवं संवहन एधा दोनों एक ही समय क्रियाशील रहते हैं । कुछ पादपों जैसे - रोबिनिया में वर्ष में दो बार कार्क एधा क्रियाशील होती है। हॉर्मोन तथा बाह्यकारक जैसे तापमान, दीप्तिकाल (photoperiod) इत्यादि कार्क एधा की क्रियाशीलता को प्रभावित करते हैं ।

6.3.3 काग (phellem or cork)

फैलोजन द्वारा बाहर की ओर जो कोशिकाएँ बनती हैं वे कार्क में विकसित होती है । इस परत को **फैलम** (phellem) अथवा **कार्क** (cork) कहते हैं । ये कोशिकाएँ भी फैलोजन की कोशिकाओं की भांति बहुभुजी (polygonal) होती है त था अनुप्रस्थ काट में आयताकार (rectangular) दिखाई देती है । काग कोशिकाएँ अरीय पंक्तियों में सघन विन्यास (compactly arranged) में होती है 1 इनमें अन्तरकोशिकी अवकाश नहीं होते हैं । ये कोशिकाएँ मृत एवं अधिकांशतः सुबेरिन युक्त होती है । सुबेरिन की परत में सुबेरिन के साथ मोम की परत भी होती है (चित्र 6.4) ।

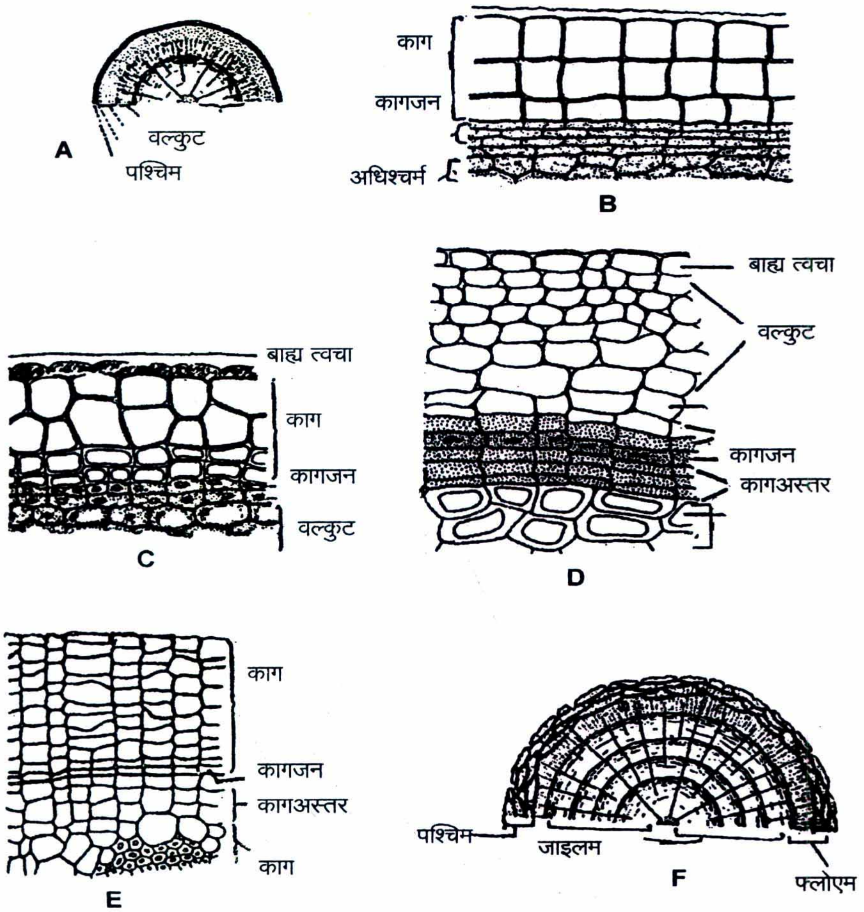

चित्र 6.4 : परिचर्म का परिवर्धन : (A) तरुण तना, (B) अधिचर्म में कागजन की उत्पत्ति, (C) अधश्त्वचा अथवा बाहय परतों में कागजन की उत्पत्ति, (D) परिरंभ में कागजन की उत्पत्ति, (E) परिचर्म में विभिन्न परतें एवं (F) 4 वर्षी तने में परिचर्म, फ्लोयम एवं जायलम

बाजार में उपलब्ध कार्क **क्विरकस सुबेर** (Quercus suber) से प्राप्त किया जाता है । इस पादप की विशेषता यह है कि यदि इसकी ऊपरी प्रथम परिचर्म निकाल दी जाती है तो इसकी वल्कुट (cortex) गहरी परतों में से परिचर्म बनाती है, जोकि व्यावसायिक स्तर पर प्रयोग में ली जाती है ।

6.3.4 कागअस्तर (Phelloderm)

कार्क एधा द्वारा भीतर की और बनने वाली कोशिकायें कागअस्तर (phelloderm) बनाती है । ये कोशिकाएँ वल्कुट की मृदुतकी कोशिकाओं (parenchyma) के समान ही होती है । ये जीवित एवं आकार में **कागएधा** (pellogen) कोशिकाओं के समान ही होती है । यदि इनकी कोशिकाएँ बहुस्तरित होती है तो अरीय क्रम में पंक्तिबद्ध रहती है । अनेक पादपों में इन कोशिकाओं के हरितलवक होते हैं । **बर्सेरा** (bursera) में इनमें (starch grains) भी उपस्थित होते हैं । कभी-कभी इन कोशिकाओं के बीच में दृढ़ कोशिकाएँ (sclereids) एवं विशिष्ट कोशिकाएँ भी बनती है । इस परत को आमतौर पर द्वितीयक वल्कुट भी कहते हैं । तकनीकी दृष्टि से यह उचित नहीं है (चित्र 6.4) ।

6.3.5 कागजन का परिवर्धन (Development of Phellogen)

निरन्तर संवहनी एधा से द्वितीयक ऊतकों के बनने के प्रतिशत से बाह्यत्वचा फट जाती है, इसके फलस्वरूप प्रथम कागजन परत की उत्पत्ति संवहनी एधा के बाहर विभिन्न ऊतकों से होती है । अनेक पादपों जैसे- **सोलेमन डल्कामारा** (Solanum dulecumara), **नीरियम** (nerium) इत्यादि में कागजन बाह्यत्वचा से उत्पन्न होती है । सामान्यतया कागजन बाह्यत्वचा की भीतरी परत से परिवर्धित होती है । कुछ पौधों में 20 से 30 वर्ष तक एक ही कागजन परत सतत रूप से कार्य करती है, तथा कुछ पौधों में प्रतिवर्ष नई कागजन बनती है । कुछ पादपों जैसे- रोबिनिया में वर्ष में दो बार कार्क कैम्बियम क्रियाशील होती है ।

6.4 परित्वक का परिवर्धन (Development of Periderm)

परित्वक फैलोजन के विभाजन से बनता है, जब विभाजन शुरू होता है, जब मंडकण, टैनिन इत्यादि धीरे धीरे लुप्त हो जाते हैं । फैलोजन में परिनतिक (periclinal) विभाजित होती है व उनसे बनी दो कोशिकाओं से बाह्य कोशिका से काग (cork) कोशिका बनती है रख विभाजन करती है । कभी- कभी कागजन कोशिकाएँ काग के बढ़ते घेरे से सामंजस्य बिठाने के लिए अपनत (anticlinal) विभाजन भी करती है ।

सामान्यतया कागजन से कागफैलम कोशिकाओं की फैलोडर्म कोशिकाओं की अपेक्षा अधिक परतें बनती है । एवं परिवर्धित होती है । अनेक पादपों में कागअस्तर (phelloderm) लगभग, अनुपस्थित रहती है । काग अथवा फैलम की परतों की संख्या पादप की उम्र, मौसम, तथा पादप की प्रजाति के अनुसार भिन्न हो सकती है । प्रथम वर्ष में बनी काग (phellem) परत यदि लम्बे समय तक रहती है तो इसकी बाहरी परत में दरारें (cracks) पड़ जाती है (चित्र 6.4) ।

साधारणतया वृक्षों में प्रतिवर्ष नई कागजन विभेदित होती है तथा नई परिचर्म परतें बनती है । हर वर्ष बाद में बनी परिचर्म (periderm) प्रथम वर्ष में परिचर्म से अन्दर की और बनती है । इससे बाहरी परतों को जल एवं पौषक तत्व समुचित मात्रा में नहीं मिल पाते अत: ये परतें एवं कोशिकाएँ मृत हो जाती है । काग में परिचर्म के ऊतकों की ये परतें जो अन्दर की और बनने वाली परिचर्म के कारण पृथक हो जाती है एवं परिचर्म अब वृद्धि नहीं करती तब ये **राइटिडोम** (rhytidome) कहलाती है । अत: राइटिडोम में बाहरी छाल समाहित होती है तथा यह विशेष रूप से अधिक उम्र के वृक्षों में अधिक विकसित होते हैं ।

बोध प्रश्न

1. .... को कार्क कैम्बियम भी कहते है
2. सरल चालनी पट्टिका किसमें पाई जाती है ।
   ....
   ....
3. किस पादप में चालनी नलिकाएँ अरीय पंक्तियों में विन्यासित होती है ।
   ....
   ....
4. कागजन की उत्पत्ति कहाँ से होती है ।
   ....
   ....
5. जुगलैंस में कागजन की उत्पत्ति कहाँ से होती है ।
   ....
   ....

6.5 सारांश

संवहन कैम्बियम द्वारा द्वितीयक जाइलम के समानान्तर द्वितीयक फ्लोयम का निर्माण होता है। इसकी कोशिकाओं की आधारभूत संरचना द्वितीयक जाइलम के समान ही होती है, परन्तु इसकी मात्रा द्वितीयक जाइलम की अपेक्षा कम पायी जाती है ।

द्वितीयक फ्लोयम में भी अनुदैर्ध्य व क्षैतिज तंत्र का निर्माण पाया जाता है । इसके अनुदैर्ध्य तंत्र का निर्माण चालनी नलिकाओं (sieve tubes); सहचर कोशिकाओं (companion cells) फ्लोयम पैरनकाइमा रख फ्लोयम तन्तु द्वारा होता है । इसकी उत्पत्ति कैम्बियम की तर्कुरूप प्रारंभिक से होती है । फ्लोयम के इस क्षेत्र द्वारा कार्बनिक पदार्थों का पादप में लम्बवत् चालन किया जाता है ।

बाहयत्वचा के नष्ट होने पर पादप अक्ष के चारों और जो नई सुरक्षात्मक परत बाहयरम्मीय विभज्योतक (extrastelar meristem) से उत्पन्न होती है, इसे **परित्वक** (periderm) कहते

हैं। सामान्यतया परित्वक काष्ठीय पादपों के पुराने स्तम्भों और जड़ों पर पाया जाता है । पर्णीय अंगों पर सामान्यतया परिचर्म नहीं होता है ।

6.6 शब्दावली

1. **ऊतक** : एक या एक से अधिक प्रकार की कोशिकाओं का समूह जो संयुक्त रूप से मिलकर किसी कार्य को करती है ।
2. **अरीय संवहन बंडल :** जिनमें जाइलम एवं फ्लोयम ऊतक अलग- अलग समूहों में, व पृथक त्रिज्या पर पाये जाये ।
3. **परित्वक :** यह एक सुरक्षा पर्त है, जोकि अतिरिक्त रंभीय द्वितीयक वृद्धि के परिणामस्वरूप विकसित होती है ।
4. **छाल :** कार्क कैम्बियम के बाहर स्थित

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. त्रिवेदी, शर्मा, धनखंड : वनस्पति शास्त्र, बी एस. सी. पार्टii, 2007 रमेश बुक डिपो, जयपुर
2. अग्रवाल एवं शर्मा : पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन बी.एस.सी. पार्टii 2004, कॉलेज बुक हाऊस, जयपुर
3. शर्मा, शर्मा एवं गोदारा : पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन बी.एस.सी. पार्ट ii 2004, साक्षी पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर
4. सिंह, पाण्डे, एवं जैन : आवृतबीजी वनस्पति विज्ञान, 2006 रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. कागजन
2. अल्मस
3. एरिस्टोलोकिया
4. अधिचर्म एवं अधिश्चर्म
5. अध:श्त्वचा

6.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. द्वितीयक वृद्धि को समझाइये ।
2. द्वितीयक ऊतकों के नाम बताइये ।
3. राइटिडोम को समझाइये ।
4. परित्वक के परिवर्धन के बारे में लिखिये ।

इकाई 7 : तनों में असंगत द्‌वितीयक वृद्धि

(Abnormal secondary growth in stem)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 तने की सामान्य व असंगत वृद्धि के लक्षण

7.3 प्राथमिक असंगत रचनायें

7.4 असंगत वृद्धि के कारण व उपयोगिता

7.5 द्‌वितीयक असंगत संरचनायें

7.6 एकबीजपत्री तने की असंगत वृद्धि

7.7 सारांश

7.8 शब्दावली

7.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.0 उद्देश्य

पृथ्वी पर लगभग चार लाख से अधिक पादपों की जातियाँ पायी जाती है । इन सभी में अलग-अलग प्रकार के संरचनात्मक सगठन उपस्थित होते हैं । कुछ पादपों में सामान्य द्‌वितीयक वृद्धि पायी जाती है व कुछ पादपों में असंगत प्रकार की वृद्धि पायी जाती है । इस पाठ को पढ़ने के पश्चात् आपको पादपों की असंगत वृद्धि किस प्रकार से व क्यों होती है यह स्पष्ट समझ आ जायेगा ।

7.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आप एकबीजपत्री व द्‌विबीजपत्री तनों में पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की असंगत वृद्धि की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे । इसके साथ-साथ सामान्य वृद्धि व असंगत वृद्धि के क्या मुख्य लक्षण होते हैं इसके बारे में आपको पता चलेगा ।

7.2 तने की सामान्य व असंगत वृद्धि के लक्षण

पादप जगत में कुछ कुल के पादप केवल सामान्य वृद्धि प्रदर्शित करते हैं व कुछ कुल (family) ऐसे है जिनकी प्रारंभिक संरचनात्मक सगठन में आरम्भ से ही असामान्यता अथवा असंगत संरचना देखने को मिलती है ।

सामान्य व असंगत वृद्धि के लक्षण

(Characters of Normal and Anomalous Growth)

क्रम स.	सामान्य वृद्धि	असामान्य वृद्धि
1.	द्विबीजपत्री पादपों में संवहन पूल वलय मे व्यवस्थित	द्विबीजपत्री पादपों में संवहन पूल वलय हुई अवस्था में
2.	एकबीजपत्री पादपों के संवहन पूल बिखरी हुये अवस्था में ।	एक बीजपत्री पादपों के संवहन पूल वलय मे स्थित ।
3.	वल्कुट में संवहन पूल अनुपस्थित ।	वल्कुट में संवहन पूल उपस्थित ।
4.	जायलम में वाहिकायें उपस्थित ।	जायलम में वाहिकायें अनुपस्थित ।
5.	जायलम के मध्य फ्लोयम अनुपस्थित ।	जायलम के मध्य अन्तर जायलरी फ्लोयम उपस्थित ।

7.3 प्राथमिक असंगत संरचनायें

द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादपों में निम्नलिखित प्रकार की असंगत संरचनायें पायी जाती हैं:

(1) द्विबीजपत्री पादपों में बिखरे हुये संवहन बंडल ।
(2) एकबीजपत्री पादपों के संवहन बंडल वलय में स्थित ।
(3) वल्कुट में संवहन बंडल वलय में स्थित ।
(4) पिथ में अन्तराजायलरी फ्लोयम उपस्थित ।
(5) पिथ में संवहन पूल उपस्थित ।
(6) जायलम के मध्य फ्लोयम की उपस्थिति ।
(7) जायलम में वाहिकाओं की अनुपस्थिति ।
(8) जायलम तथा फ्लोयम के पृथक बंडल ।
(9) तने में एक से अधिक रंभ (बहुरंभीय स्थिति)
(10) आतंरिक संवहन बंडल ।
(11) एकबीजपत्री पादपों की असामान्य संरचना

द्विबीजपत्री पादपों में बिखरे संवन पूल -

द्विबीजपत्री पादपों में संवहन पूल सामान्यत : एक वलय (ring) में व्यवस्थित रहते हैं । कुछ आद्य कुलों में संवहन पूल बिखरी हुई अवस्था में पाये जाते हैं जैसे रैननकुलेसी कुल के थैलिस्ट्रिम व ऐनीमोन, निम्फिऐसी कुल का निम्फिया, पैपैवेरेसी कुल का पैपेवर, पाइपिरेसी कुल का पाइपर तथा पोडोफिल्लेसी कुल का पोडोफिल्लम आदि ।

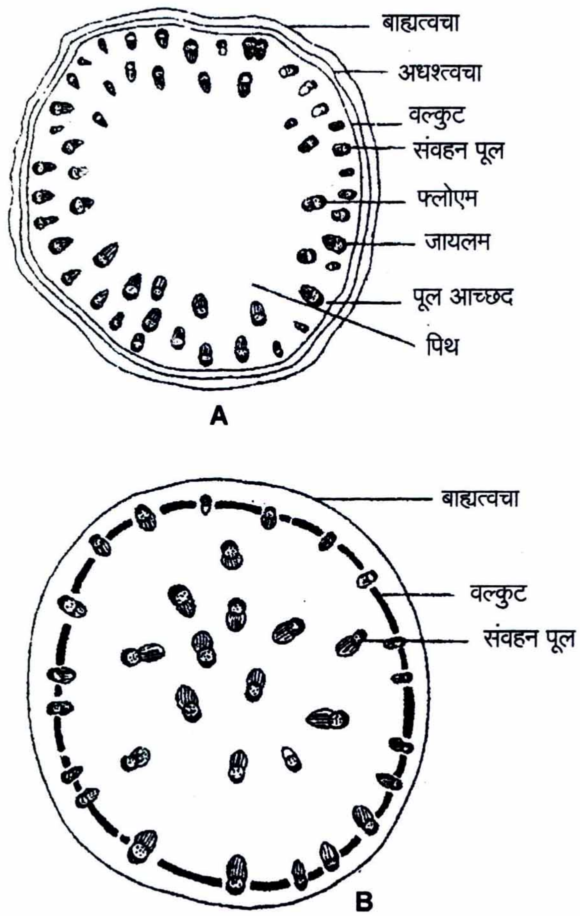

चित्र 7.1 : (A) पोडोफिल्लम (Podophyllum),
(B) पैपेवर के तने में बिखरे हुए संवहन पूल

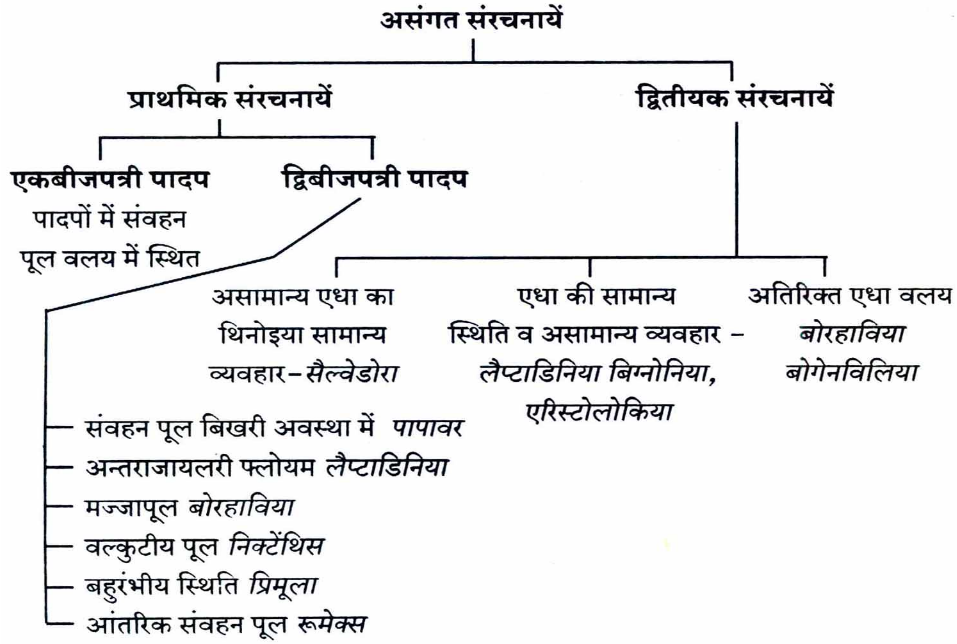

एकबीजपत्री पादपों के संवहन पूल वलय में स्थित

अधिकांश एकबीजपत्री पादप कुलों में संवहन पूल भरण ऊतक में बिखरी हुई स्थिति में पाये जाते हैं तथा यह स्थिति एकबीजपत्री तनों का एक विशिष्ट लक्षण माना जाता है । कुछ कुल एकबीजपत्री पादपों के ऐसे भी है जहाँ पर द्विबीजपत्री पादपों के समान उनके संवहन पूल एक केन्द्रीय मज्जा के चारों ओर (कुछ में मज्जा अनुपस्थित होती है व मध्य स्थान खोखला होता है) दो अथवा अधिक चक्रों में व्यवस्थित रहते हैं जैसे पोऐसी कुल के ट्रिटिकम, सायनोडन, लिलिऐसी कुल का एस्फोडीलस, डाइओस्कोरेसीकुल का टैमस आदि ।

वल्कुट में संवहन पूल की उपस्थिति

पादप जगत में लगभग 38 कुलों के वल्कुट में संवहन पूल पाये जाते हैं जैसे कैजूराइनेसी कुल का कैजूराइना, ऑलीऐसीकुल का निक्टेथिस, फैबेसी कुल का लैथायरस सिल्वेस्ट्रिस आदि । मिलेस्टोमेसी कुल के लगभग 18 वंश (genera) ऐसे हे जिनमें वल्कुटीय पूल उपस्थिति होते हैं । यह पूल आकारिकीय प्रकृति में पर्ण ट्रेस के संवहन पूल होते हैं जो पर्णवृन्त में जाने से पहले कुछ दूर तक वल्कुट में से गुजरते हैं । विभिन्न पादपों के वल्कुट में इनका विन्यास व संगठन निम्न प्रकार का होता है ।

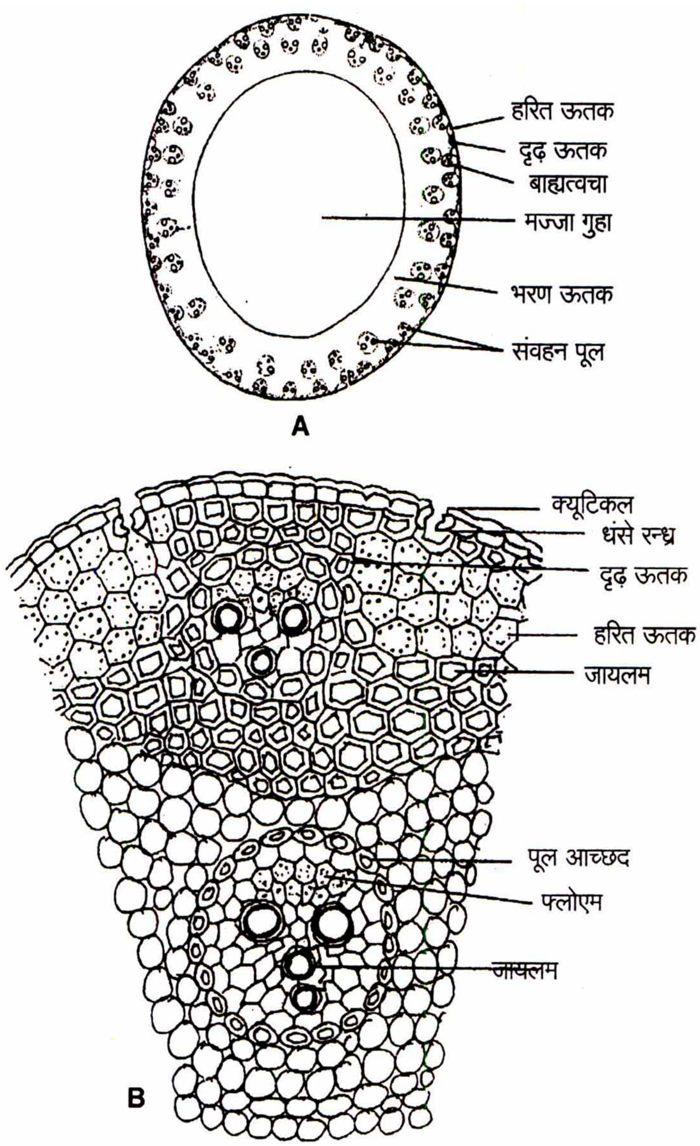

चित्र 7.2 : ट्रिटिकम के तने का अनुप्रस्थ काट : A. आरेखीय, B. कोशिकीय

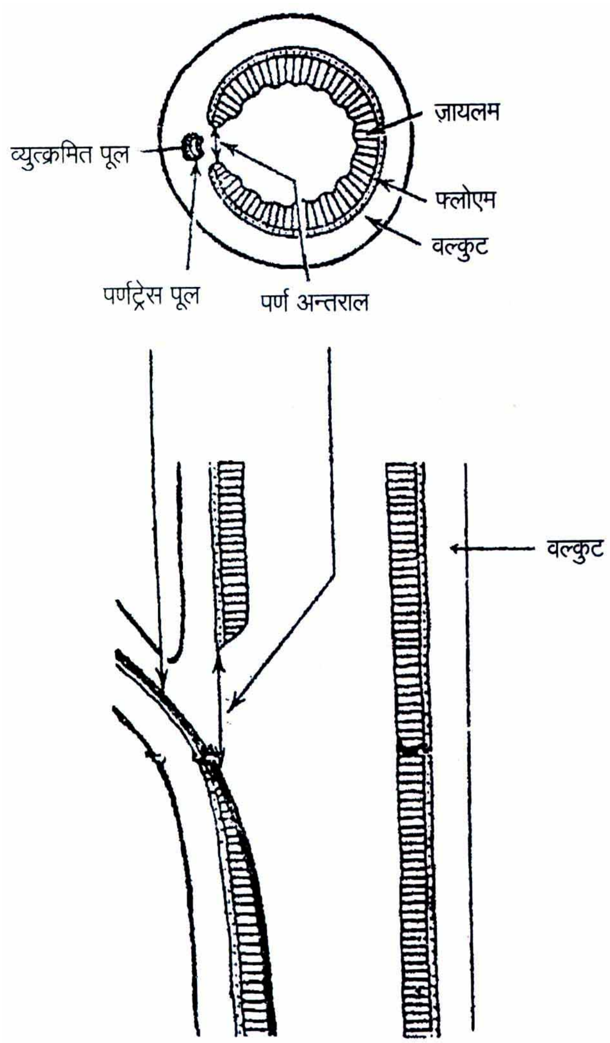

चित्र 7.3 : वल्कुट के पर्ण ट्रेस बंडल का निर्माण

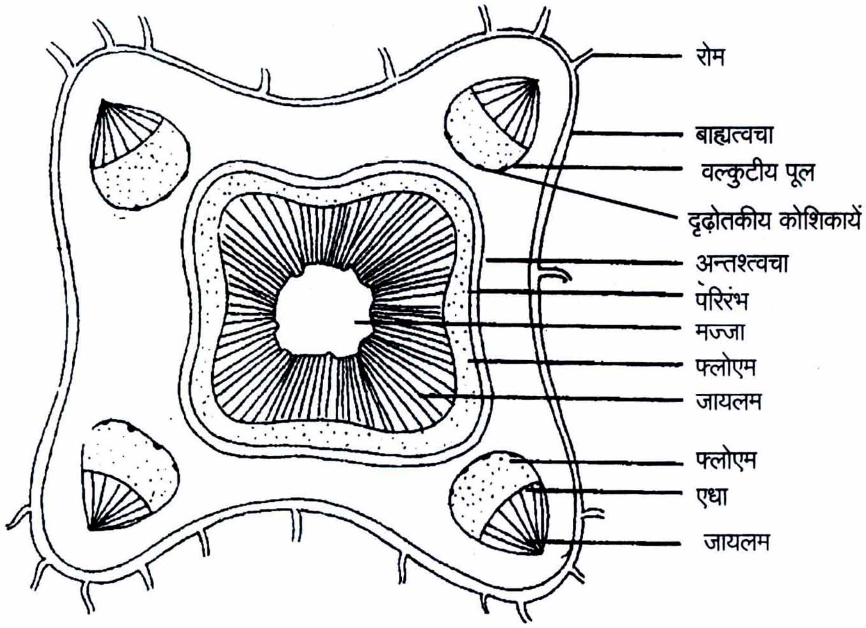

चित्र 7.4 : निक्टेंथिस के तने का अनुप्रस्थ काट

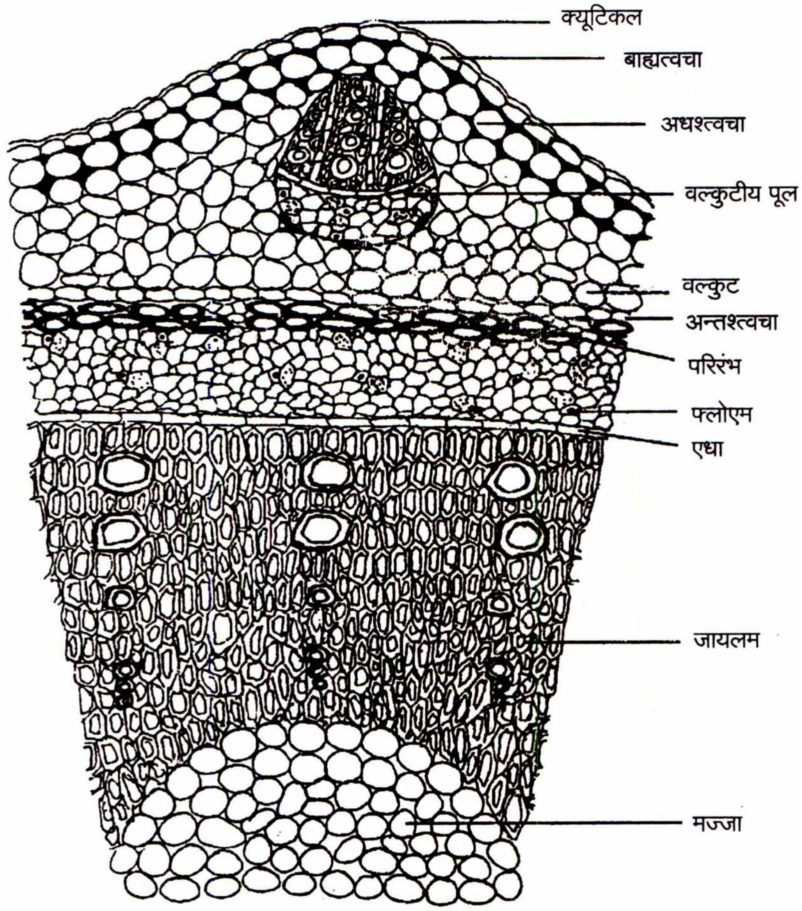

चित्र 7.5 : कैजूराइना के तने का अनुप्रस्थ काट

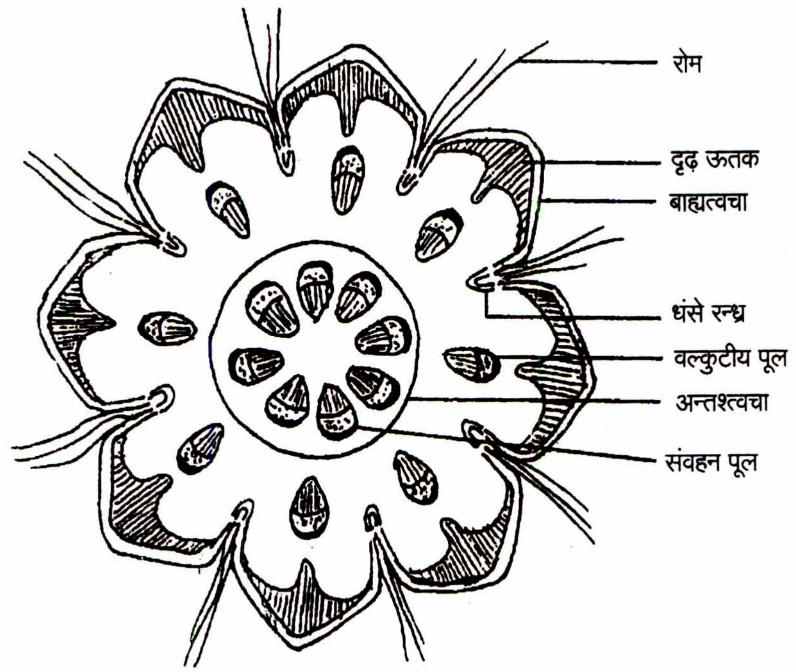

चित्र 7.6 : निक्टेंथिस के तने का अनुप्रस्थ काट (कोशिकीय)

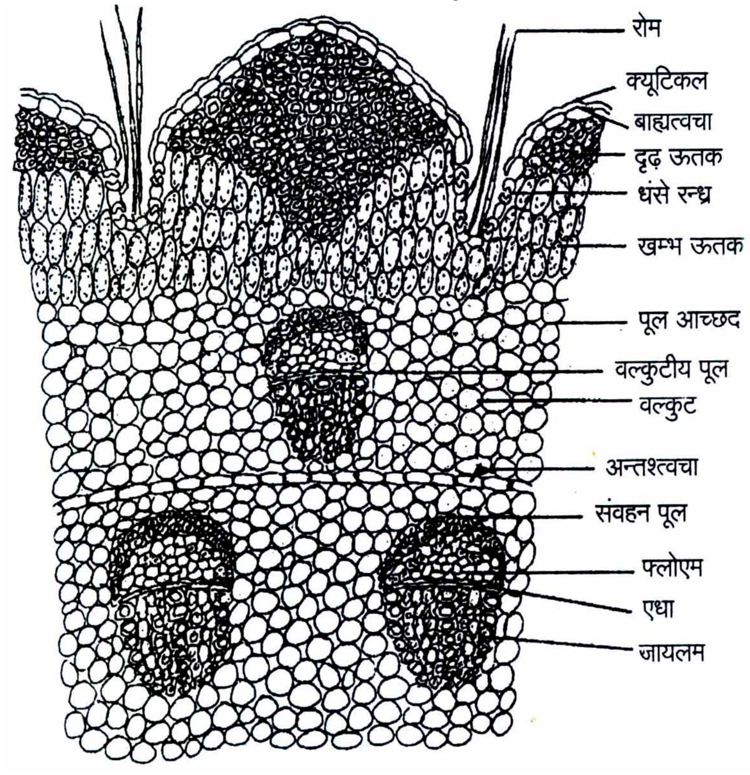

चित्र 7.7 : केजूराइना के तने का अनुप्रस्थ काट

वल्कुटीय बंडल के प्रकार

व्युत्क्रमित, वैजाकार, संयुक्त बहि:पोषवाही, बाह्य द्विदारुक व वर्धी (inverted, wedge shaped, conjoint, collateral exarch and open) जैसे *निक्टेंथिस* (*Nyctanthes*)	द्विबीजपत्री के समान सामान्य संवहन पूलों का एक वलय वल्कुट में पाया जाता है। यह वलय अन्तश्त्वचा के अन्दर उपस्थित संवहन पूलों के एकान्तर व उनसे आकार में कुछ छोटे होते हैं जैसे (*कैजूराइना*) (*Casuarina*)	संवहन पूल के केन्द्र में जायलम व इसके चारों ओर फ्लोयम पाया जाता है। यह दारूकेन्द्री पूल (amphicribal bundle) कहलाते हैं जैसे कैलेन्को (*Kalanchoe*)

एकबीजपत्री पादपों के समान संयुक्त, संपार्शिवक बिखरे हुये संवहन पूल (conjoint collateral, (scattered vascular bundles) मिलते हैं जैसे लाइमोनियम (Limonium)

फ्लोयम संवहन बंडल के केन्द्र में होता है तथा इसके चारों ओर जायलम पाया जाता है । यह फ्लोयम केन्द्री (amphivasal bundle) कहलाते हैं जैसे लोबिलिया (Lobeilia)

पिथ में संवहन बंडल

द्विबीजपत्री पादपों के 38 कुलों में मज्जा पूल रिपोर्ट किये गये हैं । पादपों में सामान्य पूलों के अलावा यह पूल पाये जाते हैं । मज्जा की कुछ मृदुतकीय कोशिकायें विभज्योतकी (meristmatic) होकर एधा (cambium) बनाती हैं जो सीमित मात्रा में पूलों का निर्माण करती है । यह एधा जब अक्रियाशील हो जाती है तब इन पूलों के बाहर स्थित कुछ मृदुतकीय कोशिकायें विभज्योतकी होकर नई एधा का निर्माण करके फिर कुछ संवहन पूलों का निर्माण कर लेती है । यह बंडल निश्चित वलयों (बोरहाविया) अथवा बिखरी अवस्था (बोगेनविलिया) में पाये जाते हैं । इनकी संख्या तने की पूरी लम्बाई में निश्चित रहती है । मज्जा में उपस्थित होने के कारण यह मज्जा पूल कहलाते हैं । पादपों में मज्जा पूलों के कई वलय उपस्थित हो सकते हैं । इन पूलों का विन्यास व संगठन निम्न प्रकार का होता है ।

मज्जा में संवहन बंडलों का विन्यास

बोरहाविया

मज्जा के मध्य में दो बड़े संवहन पूल वलय में स्थित बाहरी वलय में 6-8 या 14 तक छोटे संवहन पूल वलय में स्थित। तीसरा वलय उपस्थित हो सकता है जिसमें 15-20 तक परिधीय पूल होते हैं। यह पर्ण ट्रेस बंडल के समकक्ष माने गये हैं। सभी पूल संयुक्त, संपार्श्विक, खुले व सीमित वृद्धि प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण निक्टेजिनेसी कुल का *बोरहाविया*

अमैरेन्थस

निक्टेजिनेसी कुल के *मिराबिलिस*, *बोगनविलिया*, अमैरेन्थेसी का *अमैरेन्थस* व पाइपिरेसी के *पाइपर* में मज्जा पूल मज्जा में बिखरी अवस्था में पाये जाते हैं। संवहन पूल संयुक्त, संपार्श्विक, खुले होते हैं।

आर्जीरिया

कन्वॉलन्व्यूलेसी के *आर्जीरिया* के मज्जा में 20 के करीब पूल बिखरी अवस्था में पाये जाते हैं। यह पूल प्रतिलोमित (inverted), फ्लोयम केन्द्री, समद्विपार्शिवक अथवा संयुक्त, संपार्श्विक, खुले प्रकार के हो सकते हैं। इसकी मज्जा में कुछ स्रावी कोशिकायें भी पायी जाती है।

अरेलिया

अरेलियेसी कुल के अरेलिया में संवहन पूल प्रतिलोमित वलय में व्यवस्थित रहते हैं।

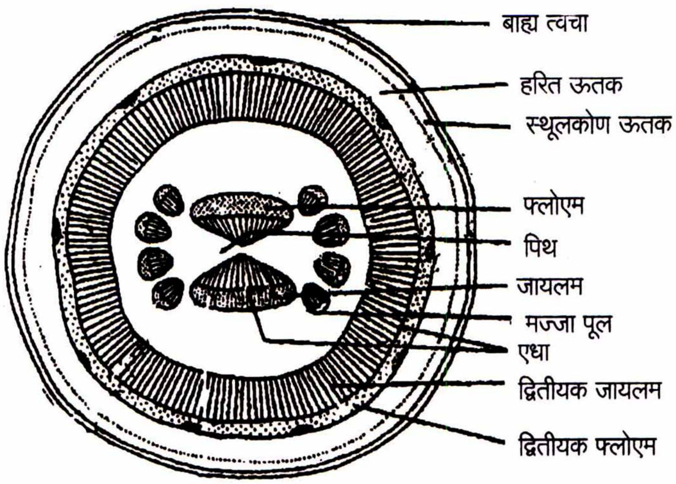

चित्र 7.8 : बोरहाविया के तने का अनुप्रस्थ काट (A) आरेखीय

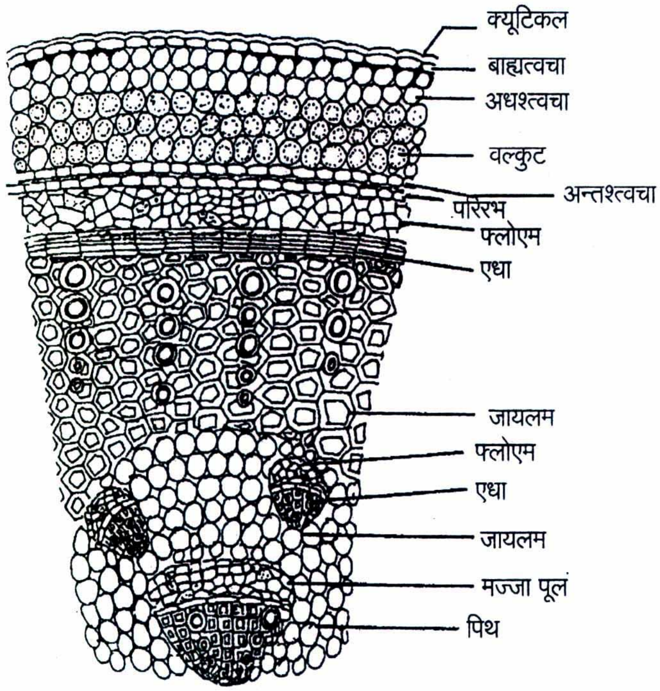

चित्र 7.8 : बोरहाविया के तने का अनुप्रस्थ काट (B) कोशिकीय

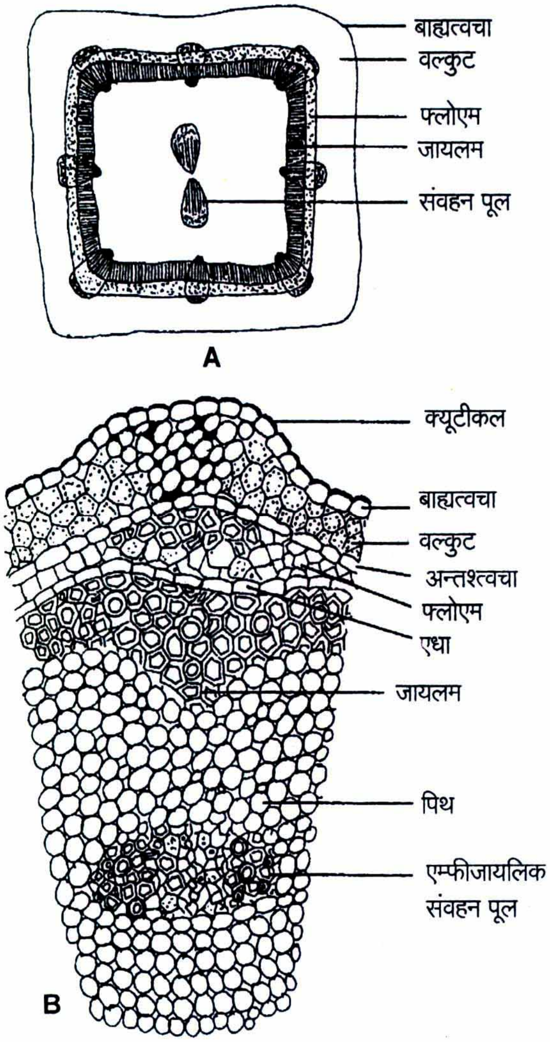

चित्र 7.9 : एकायरेन्थस के तने का अनुप्रस्थ काट (A) आरेखीय (B) कोशिकीय

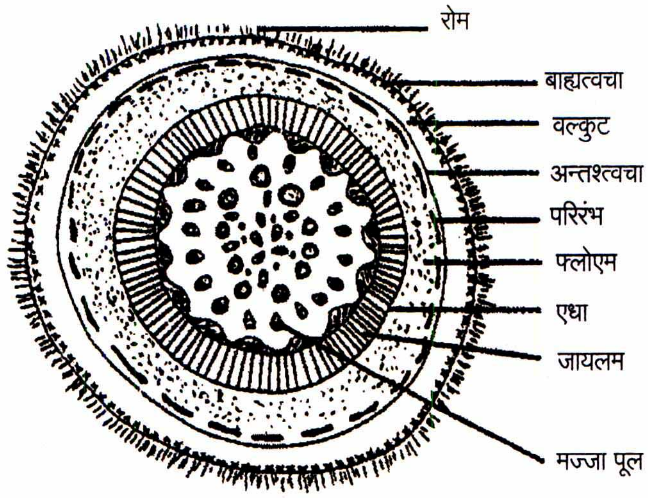

चित्र 7.10 : आर्जिरिया के तने का अनुप्रस्थ काट

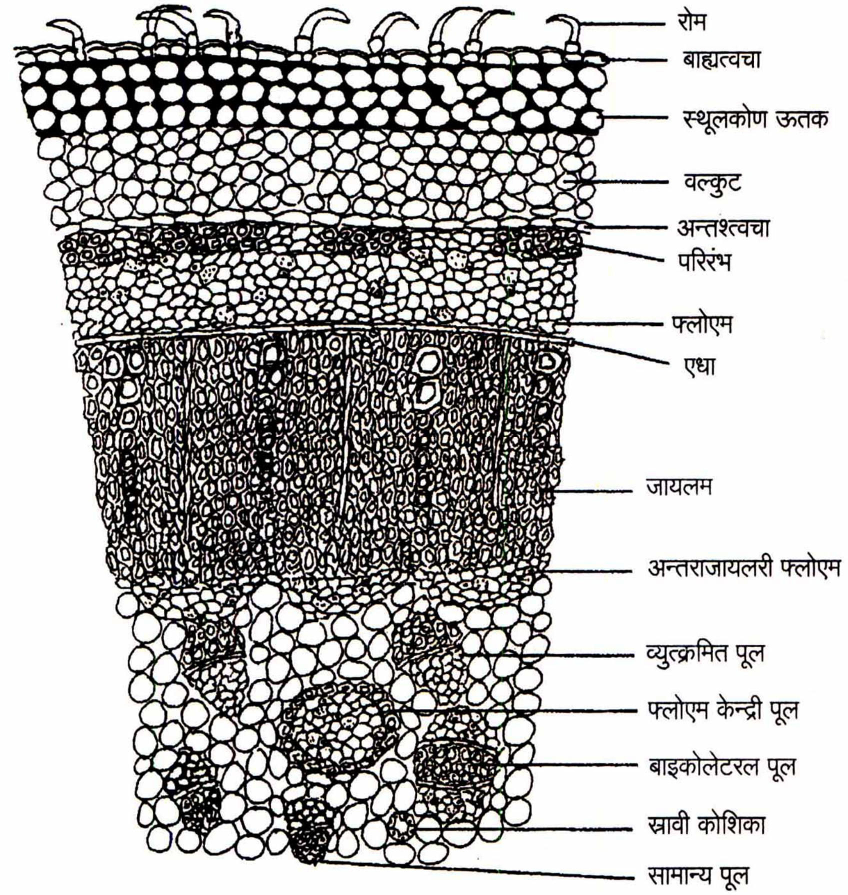

चित्र 7.11 : आर्जिरिया के तने का अनुप्रस्थ काट

मज्जा पूलों की प्रकृति (Nature of Medullary Bundles)

वर्सडैल (Worsdell-1919) के मतानुसार बिखरी हुई अवस्था में संवहन बंडलों का पाया जाना एक आद्य (primitive) लक्षण है जो वर्तमान में एकबीजपत्री पादपों में पाया जाता है किन्तु द्विबीजपत्री पादपों में यह लक्षण समाप्त हो गया है फिर भी यह आदिम चिन्ह कुछ पादपों में मज्जा में उपस्थित संवहन पूलों के रूप में आज भी विद्यमान है । जैफरी (Jeffery) व जोशी (Joshi-1932) के मतानुसार मज्जा पूल शरीर क्रियात्मक आवश्यकताओं के अनुरूप बने हैं तथा इनका निर्माण आद्य ना होकर आधुनिक है । उनके मतानुसार पर्वसंधि पर स्तंभ में मज्जा पूल एक वलय में व्यवस्थित नहीं रह सकते हैं अत: वह पिथ में गमन कर जाते हैं

जायलम के मध्य फ्लोयम की उपस्थिति :

कुछ पूल संयुक्त, संपार्श्विक, बंद (conjoint, collateral, closed) पूलों के मध्य ऐसे होते हैं जिनमें जायलम फ्लोयम को घेरे रहता है । इस प्रकार के फ्लोयम केन्द्री (amphivasal) संवहन पूल एकोरस व ड्रेसीना पादपों में उपस्थित होते हैं । ड्रेसीना में असंगत द्वितीयक वृद्धि पायी जाती है तथा इसके बाहरी विभज्योतकी क्षेत्र में फ्लोयम केन्द्री पूल पाये जाते हैं ।

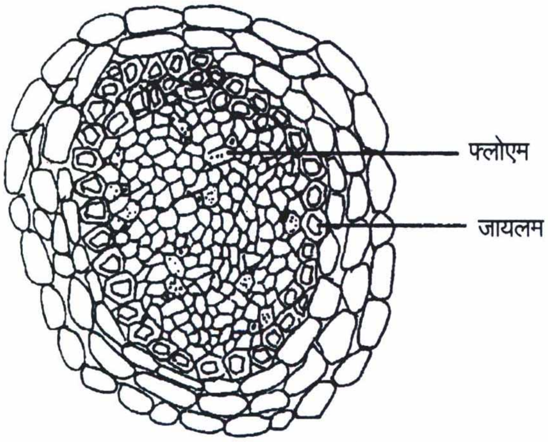

चित्र 7.12 : एकोरस केलेमस के तने में फ्लोयम केन्द्री संवहन पूल

जायलम में वाहिकाओं की अनुपस्थिति :

अनावृतबीजी पादपों में (इफीड्रा के अलावा) तथा आवृतबीजी पादपों के कुछ आद्य कुल है जिनके वाहिकायें नहीं पायी जाती है उदाहरणस्वरूप :

(i) **विन्टरेसी** (Winteraceae) स्यूडोवींटरा (Pseudowintera) ड्रिमिस (Drimys), डिजिनेरिया (Degenaria), बुबिया (Bubbia), एक्सोस्परम (Exospermum) आदि ।

(ii) **टेट्रासेनट्रेसी** (Tetracentraceae) टेट्रासेन्ट्रान (Tetracentron) आदि ।

(iii) **ट्रोकोडेन्ड्रेसी** (Trochodendraceae) ट्रोकोडेन्ड्रान (Trochodendron) आदि ।

(iv) कुछ जलीय (hydrophytic) पादपों में भी वाहिकायें अनुपस्थित होती है जैसे इलोडिया हाइड्रिला, सिरेटोफिल्लम यूट्रिक्लेरिया आदि । इन पादपों में वाहिकाओं की अनुपस्थिति पारिस्थितिक कारणों से पायी जाती है (चित्र 7.13) ।

जायलम तथा फ्लोयम के पृथक बंडल

संयुक्त, संपार्श्विक, खुले संवहन पूलों के मध्य कभी किसी कुल में ऐसे पूल भी मिलते हैं जो केवल जायलम से निर्मित होते हैं जैसे पिओनिआ (रेननकुलेसी) तथा कुछ केवल फ्लोयम से निर्मित होते हैं जैसे कस्कुटा (कन्वॉलब्यूलेसी) ।

तने में एक से अधिक रंभों की उपस्थिति

आद्य संवहनी पादपों (primitive vascular cryptogam) में यह एक सामान्य स्थिति मानी जाती है किंतु आवृतबीजी पादपों में यह असामान्य स्थिति मानी गयी है । द्विबीजपत्री के निम्न पादपों में बहुरंभी स्थिति मिलती है :

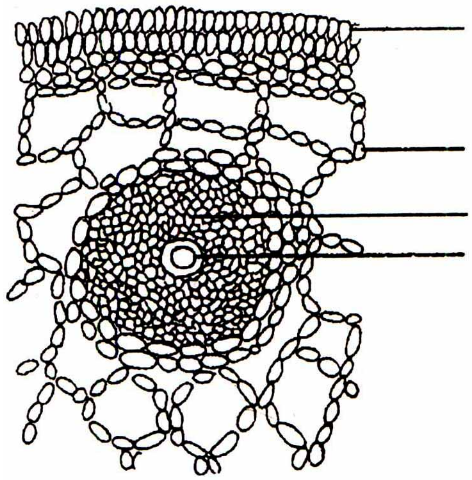

चित्र 7.13 : हाइड्रिला के तने का अनुप्रस्थ काट

(i) **अकेन्थेसी** के डायेन्थिरा में सर्वप्रथम मेट्कॉफ व चाक ने 1950 में बहुरंभीय स्थिति रिपोर्ट की थी।

(ii) **निम्फिऐसी** के निम्फिया में बहुरंभी स्थिति मिलती है ।

(iii) **प्रिम्पूलेसी** के प्रिम्यूला में सामान्य वलय के संवहन बंडलों के विभाजित हो जाने से कई संकेन्द्री बंडल बन जाते हैं जो नियमित अथवा अनियमित रूप से तने में विन्यासित रहते हैं। उपरोक्त सभी पादपों के रंभ अपनी अन्तश्त्वचा (कैस्पेरी पट्टिका सहित) तथा परिरंभ से घिरे पाये जाते हैं ।

अन्त : जायलमी फ्लोयम तथा मज्जा फ्लोयम

द्विबीजपत्री पादपों के 28 कुलों में मज्जा की परिधि पर फ्लोयम पाया जाता है जो प्राक्संवहनी ऊतक (provascular tissues) से निर्मित होता है अत : प्रकृति में प्राथमिक प्रकार का माना गया है । इस फ्लोयम में चालनी नलिकायें कम तथा फ्लोयम तन्तु अनुपस्थित होते हैं । मज्जा की परिधि व जायलम के अन्दर उपस्थित इस फ्लोयम का संगठन निम्न प्रकार का हो सकता है:

(i) **पृथक छोटे-छोटे चप्पों के रूप में जैसे**: केप्सीकम, सोलेनम, दयबरोसम, केलोट्रोपिस, लेप्टाडिनिया आदि ।

(ii) **एक पूर्ण वलय के रूप में जैसे** : प्यूनिका ग्रेनेटम, यूक्लिपटस ऑबलीगा तथा कनवालवुलस फ्लोरीडस आदि (चित्र 7.14) ।

आंतरिक संवहन बंडल

पॉलीगोनेसी कुल के कई सदस्यों में पी. महेश्वरी (1929) ने आंतरिक संवहन बंडल रिपोर्ट किये । उनके मतानुसार रूमेक्स की कई स्पीशीस जैसे रूमेक्स क्रिस्पस, रूमेक्स पेटोन्शिया तथा रूमेक्स ओरिन्हिलिस आदि में आंतरिक संवहन पूल उपस्थित होते हैं । उनका मानना था कि एक सामान्य संवहन पूल का वलय एक दृढ़ोतकीय आच्छद (sclerenchymatous sheath) द्वारा घिरा रहता है तथा इसी के अन्दर एक और सामान्य संवहलन बंडल का वलय भी इसी दृढ़ोतकीय आच्छद के द्वारा (जिसने बाहरी वलय को घेर रखा था) घिरा रहता है अत: एक ही आच्छद द्वारा दो संवहन बंडलों के वलय घिरे होने पर अन्दर वाले वलय को उन्होंने आंतरिक संवहन

बंडल नामांकित किया । इन्हें मज्जा पूल इसलिये नहीं माना जा सकता है क्योंकि यह मज्जा में उपस्थित मृदुतकीय कोशिकाओं से निर्मित नहीं होते हैं बल्कि इनका निर्माण उन प्राक्संवहनी कोशिकाओं द्वारा होता है जो सामान्य संवहन बंडल के वलय का निर्माण करती है अत: इन्हें आंतरिक संवहन बंडल मानना ही उचित है ।

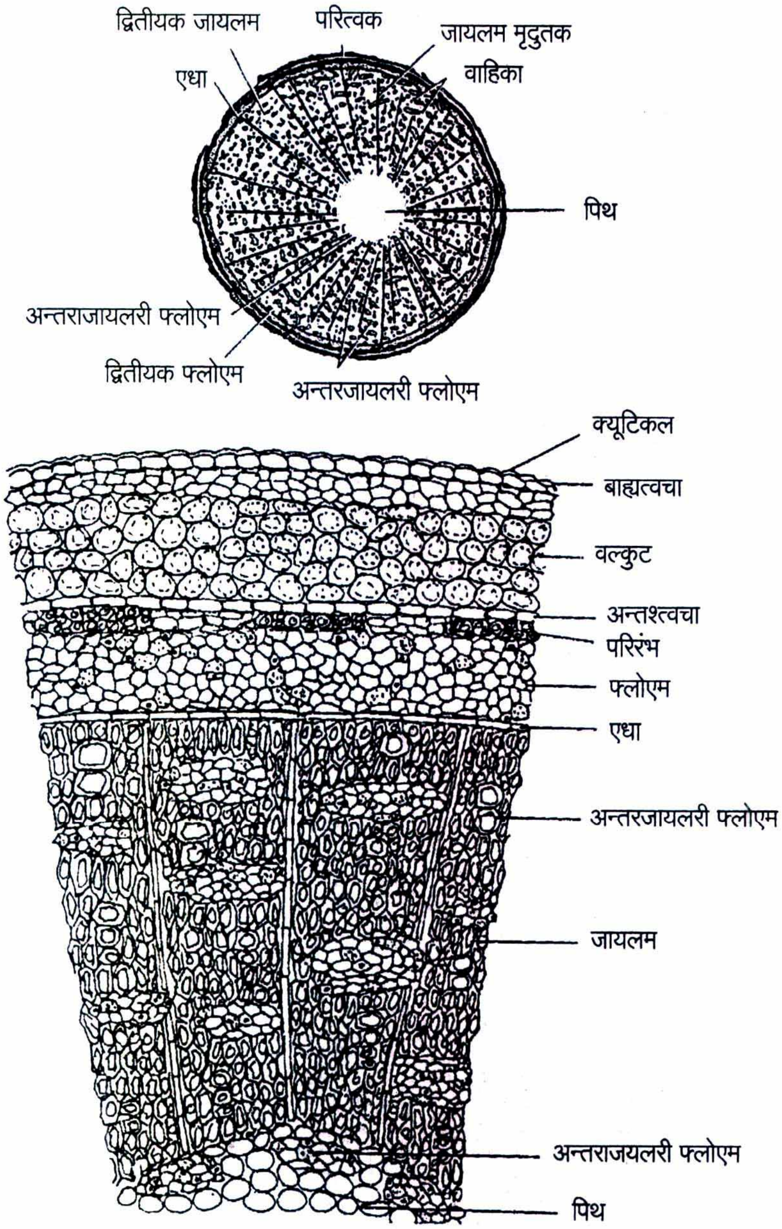

चित्र 7.14 लेप्टडिनिया के ताने का अनुप्रस्थ काट

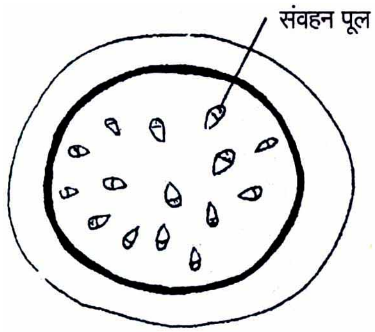

चित्र 7.15 : स्मेक्स के तने का अनुप्रस्थकाट

7.6 एकबीजपत्री पादपों की असामान्य संरचना

सामान्यत : एकबीजपत्री पादपों के संवहन बंडल बिखरी हुई अवस्था में पाये जाते हैं एवं वह एटेक्टोस्टील (Atactostele) का निर्माण करते हैं । इनमें वल्कुट, अन्तश्त्वचा तथा परिरंभ भी अनुपस्थित होते हैं तथा केवल भरण ऊतक होता है जिसमें सभी संवहन पूल बिखरी अवस्था में विन्यासित रहते हैं । एकबीजपत्री पादपों के कुछ कुल ऐसे पाये गये हैं जिनमें द्विबीजपत्री पादपों के समान वलय में संवहन पूल विन्यासित रहते हैं । यह माना जाता है कि इन कुलों का द्विबीजपत्री कुलों से कुछ फायलोजेनेटिक सम्बंध हो सकता है किन्तु इसके बारे में कुछ ठोस प्रमाणिक रूप से नहीं कहा जा सका है । टैमस कम्यूनिस (डॉयसकोरिऐसी) में वल्कुट, अन्तश्वत्वा तथा दृढ़ोत्तकीय परिरंभ पाया जाता है, मध्य में

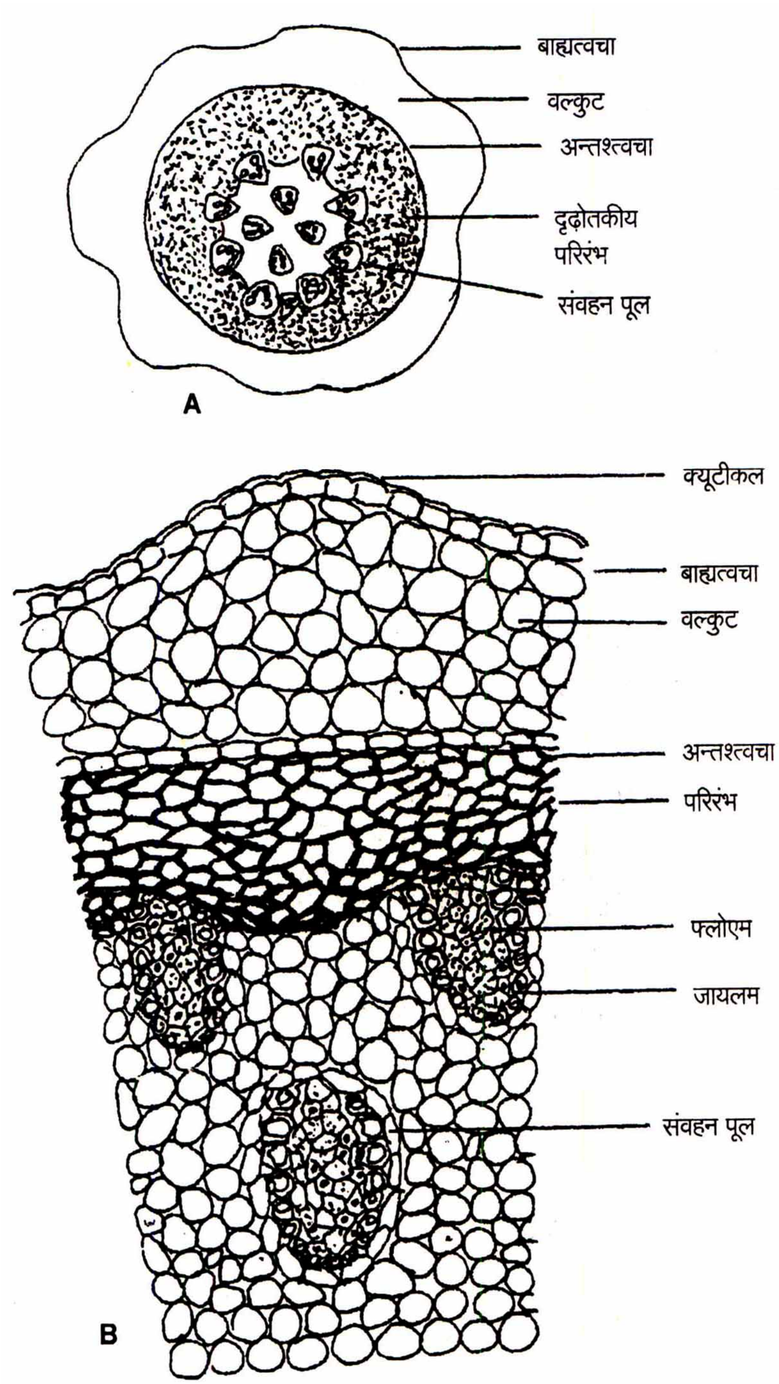

चित्र 7.16 : टैमस के तने का अनुप्रस्थ काट (A) आरेखीय(B) कोशिकीय

मज्जा भी उपस्थित होती है, संवहन पूल निश्चित वलय में व्यवस्थित होते हैं । द्विबीजपत्री लक्षणों के अलावा इसमें एकबीजपत्री पादपों के निम्न लक्षण पाये जाते हैं - अनगिनत, संयुक्त, सम्पार्श्विक, बंद, संवहन पूल, परिरंभ में संवहन बंडलों का निर्माण, जायलम वाहिकाओं का 'V' विन्यास, फ्लोएम में मृदुतकीय कोशिकाओं की अनुपस्थिति आदि ।

टैमस के अलावा पोऐसी कुल के ट्रिटिकम, अवीना, हॉरडियम, ओरयजा आदि में भी संवहन पूल दो अथवा अधिक निश्चित वलयों में व्यवस्थित पाये जाते हैं ।

बोध प्रश्न - 1

1. निक्टेंथिस के वस्कुटीय बंडल किस प्रकार के होते हैं?

----

2. असामान्य स्थिति में द्विबीजपत्री पादपों के संवहन पूल कैसे व्यवस्थित रहते हैं?

----

3. बोरहाविया की मज्जा के मध्य में कितने संवहन पूल पाये जाते हैं?

----

4. अन्तराजायलरी फ्लोयम का एक उदाहरण दीजिये ।

----

5. एक अनावृतबीजी का नाम बताइये जिसमें वाहिका पायी जाती है ।

----

6. एक आवृतबीजी कुल का नाम बताइये जिसमें वाहिका नहीं पायी जाती है ।

----

7. किस कुल में आंतरिक संवहन पूल मिलते हैं?

स्तम्भ की असंगत द्वितीयक वृद्धि (Abnormal secondary growth in stems)

सामान्य वृद्धि के दौरान तने में अन्तर व अन्त: पूलीय एधा (inter and intrafascicular cambium) का एक पूर्ण वलय बन जाता है जो अंदर की ओर जायलम व बाहर फ्लोएम कोशिकायें निर्मित करता है । एधा की गतिविधि से अंदर की ओर जायलम का एक पूर्ण वलय बन जाता है तथा प्राथमिक जायलम मज्जा की ओर धकेल दिया जाता है इसके विपरीत फ्लोएम का एक पूर्ण वलय बाहर की ओर निर्मित हो जाता है तथा प्राथमिक फ्लोएम की कोशिकायें कुछ समय बाद या तो नष्ट हो जाती है अथवा वह फ्लोएम तन्तुओं में रूपान्तरित होकर लम्बे समय तक रह सकती है । चौड़ाई में इस प्रकार की वृद्धि से बाहरी हिस्से में (परिरंभ अन्तश्वत्वा, वल्कुट, बाह्यत्वचा) खिंचाव आता है व कुछ समय बाद इस क्षेत्र से कार्क कैम्बियम का निर्माण होने लगता है । सामान्यत : देखा गया है कि एक संवहनी एधा का एक वलय ही द्वितीयक वृद्धि करने में सहायक होता है और उसकी गतिविधि काफी हद तक एक समान (uniform) ही रहती

है । इस प्रकार की उपरोक्त द्वितीयक वृद्धि के अलावा स्तम्भ में अगर और किसी भी प्रकार की द्वितीयक वृद्धि पायी जाती है तब वह असंगत द्वितीयक वृद्धि का निर्माण करती है । हैबरलैंड (1914) व कटर (1971) ने असामान्य द्वितीयक वृद्धि को निम्नलिखित रूप में विभाजित किया है ।

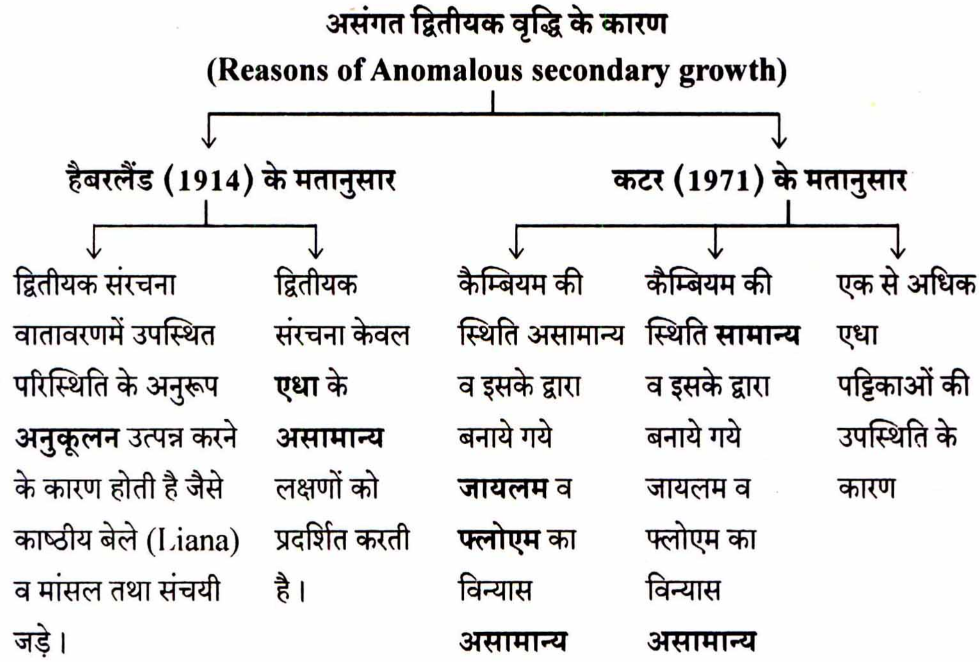

कैम्बियम की असामान्य स्थिति अथवा व्यवहार के कारण पादपों में जो असामान्य द्वितीयक वृद्धि (abnormal secondary growth) होती है उसे हम निम्म रूप में वर्गीकृत करके अध्ययन कर सकते हैं :

(i) कैम्बियम की अपसामान्य स्थिति

(ii) कैम्बियम का अपसामान्य व्यवहार

(iii) एक से अधिक एधा पट्टियों का निर्माण

(iv) संवहन क्षेत्र के बाहर एधा वलय का निर्माण

(v) अन्त: जायलरी काग (cork) का निर्माण

(vi) एक बीजपत्री स्तंभ में द्वितीयक वृद्धि

(i) कैम्बियम की अपसामान्य स्थिति (Abnormal position of the cambium) :

कुछ पादपों में परिस्थिति के अनुकूलन के फलस्वरूप कैम्बियम अपसामान्य स्थिति प्रदर्शित करता है । इस प्रकार का कैम्बियम काष्ठीय बेलों व लताओं (liana) में पाया जाता है । यह निम्न प्रकार के हो सकते हैं :

कैम्बियम की संरचना कटक व खांचों युक्त (ridges and grooves) आरोही पादप थिनोइया स्कैन्डैन्स में। कैम्बियम का वलय एकरूप (uniform) ना होकर खांच व कटक का बना होता है। यह स्थिति कुछ समय के लिये युवा स्तंभ में दिखाई पड़ती है। उसके बाद कटक (ridge) की प्रत्येक कैम्बियम पट्टिका पृथक् होकर एक एकल संवहन पूल बनाती है जिसमें द्वितीयक जायलम व फ्लोएम उपस्थित होते हैं।

कैम्बियम की स्पष्ट छोटी-छोटी पट्टिकाओं के रूप में। *सेरजानिया* (प्रतान आरोही) में कैम्बियम छोटी पट्टिकाओं युक्त होता है तथा प्रत्येक पट्टिका में द्वितीयक वृद्धि के बाद द्वितीयक फ्लोएम बाहर की ओर व द्वितीयक जायलम अंदर की ओर निर्मित हो जाता है। परिपक्व अवस्था में तने में कई संवहनी क्षेत्र अनियमित रूप से बिखरे हुये दिखाई देते हैं एवं ऐसा आभास होता है कि तने के छोटे-छोटे भाग पास आकर संयुक्त हो गये हैं। बाद में परित्वक बनने के बाद सब एक घेरे में परिबद्ध दिखाई देते हैं।

कैम्बियम के अन्तरापूलीय भाग में मृदुतकीय कोशिकायें निर्मित करने से परिपक्व तने में काष्ठ मृदुतकीय पट्टिकाओं के कारण कटा-फटा प्रतीत होता है *बॉहिनिया लैंग्सडॉरफिना* में जायलम व फ्लोएम की मृदुतकीय कोशिकाओं के कारण कैम्बियम छोटी-छोटी पट्टिकाओं में बंट जाता है द्वितीयक फ्लोएम व जायलम में द्वितीयक मृदुतकीय कोशिकाओं की मात्रा बढ़ जाती है जिससे संवहन बंडल कई छोटे टुकड़ों में बंट जाता है।

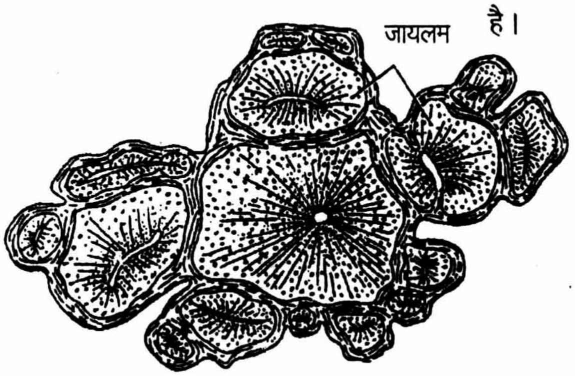

चित्र 7.17 : थिनोइया के स्तम्भ का अनुप्रस्थ काट

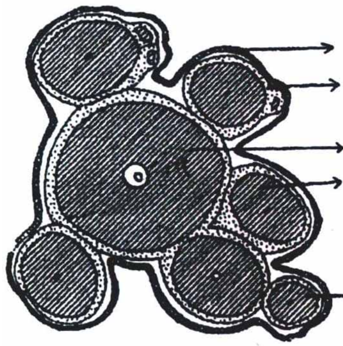

चित्र 7.18 : सेरजानिया के तने का अनुप्रस्थ काट

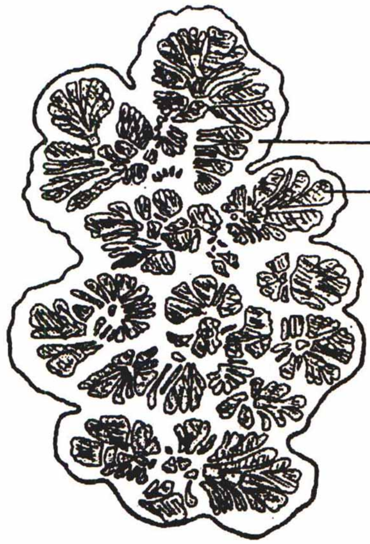

चित्र 7.19 : बॉहिनिया लैग्सडोरफिना के स्तम्भ का अनुप्रस्थ काट

(ii) **कैम्बियम का अपसामान्य व्यवहार (Abnormal behavior of cambium) :** बिग्नोनिया वायटिस तथा एरिस्टोलोकिया में अन्त: तथा अन्तरपूलीय एधा (intra and interfascicular cambium) मिल कर एक सतत एधा वलय (continuous ring of cambium) बना लेते हैं जो सामान्य व्यवहार में तो अंदर की ओर सतत वलय जायलम की व बाहर की ओर फ्लोएम बनाती है कि इन पादपों में जो कि **काष्ठीय आरोही त**नो (lianas and climbers) की श्रेणी में आते हैं कैम्बियम की सक्रियता (activity of cambium) अपसामान्य हो जाती है । इन पौधों को दूसरे तनों को आधार बना कर ऊपर वृद्धि करनी होती है अत: इसके कारण इन पर पार्श्वीय दबाव पड़ता है । अगर जायलम का एक पूर्ण बेलनाकार वलय (cylindrical ring) उपस्थित होता तो वह टूट सकता था एवं उसमें तनन सामर्थ्य इतनी नहीं होती जितनी कि मृदुतकीय कोशिकाओं के बेलनाकार वलय बन जाने के कारण तने में बनता है । अर्थात् यह कोमल मृदुतक कोशिकायें प्रघात अवशोषक (shock absorber) का कार्य करती है ।

बॉहिनिया की जातियों में कैम्बियम का असंगत व्यवहार

बॉहिनिया रूबिजिनोसा
इसके तने में एधा की सक्रियता चारों तरफ समरूप (uniform) नहीं होती हैं अत: इसमें तना कटक व खांच में विभक्त हो जाता है।

बॉहिनिया फ्रक्टीकोसा
इसके तने मे जायलम के मध्य से चौड़ी अर बन जाते हैं जिससे वह कई भागों में बंट जाता है तथा ऐसा लगता है जैसे संवहन बंडल वलय में व्यवस्थित हो।

बॉहिनिया
की कुछ जातियों में एधा केवल कुछ ही स्थानों पर वृद्धि करता है जिससे तने की संरचना पट्टिका रूपी हो जाती है।

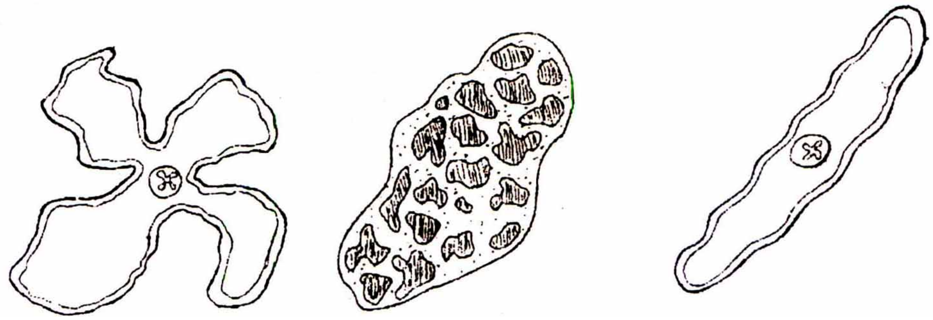

बिग्नोनिया अंगुस केरी में कैम्बियम का असंगत व्यवहार

इसमें एधा का एक वलय सामान्य रूप से बन जाता है किन्तु वह अक्ष की परिधि पर कुछ -कुछ स्थान पर असंगत व्यवहार दर्शाता है तथा जायलम व फ्लोएम के अनुपात बराबर मात्रा में ना बना कर अलग-अलग अनुपात में बनाता है । कुछ स्थान पर जायलम कम बनाता है व फ्लोएम अधिक जिससे तना खाँचदार (grooved) हो जाता है तथा इसमें द्वितीयक फ्लोएम भर जाता है । इसमें कुछ तन्तु भी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं । परिपक्वावस्था में यह खाँच काफी बड़ी हो जाती हैं तथा जायलम कुछ स्पष्ट पट्टियों में बंटा दिखाई देता है । तेज हवाओं से द्वितीयक फ्लोएम की यह कोशिकायें पादप को तेज हवाओं के उग्र प्रभाव को सहन करने के योग्य बनाती हैं तथा पार्श्वीय दबाव तनन सामर्थ्य प्रदान करने का कार्य करती हैं ।

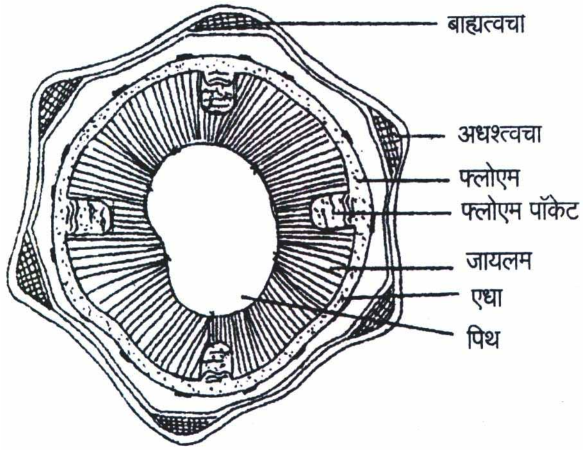

चित्र 7.20 : बिग्नोनिया के तने का अनुप्रस्थ काट

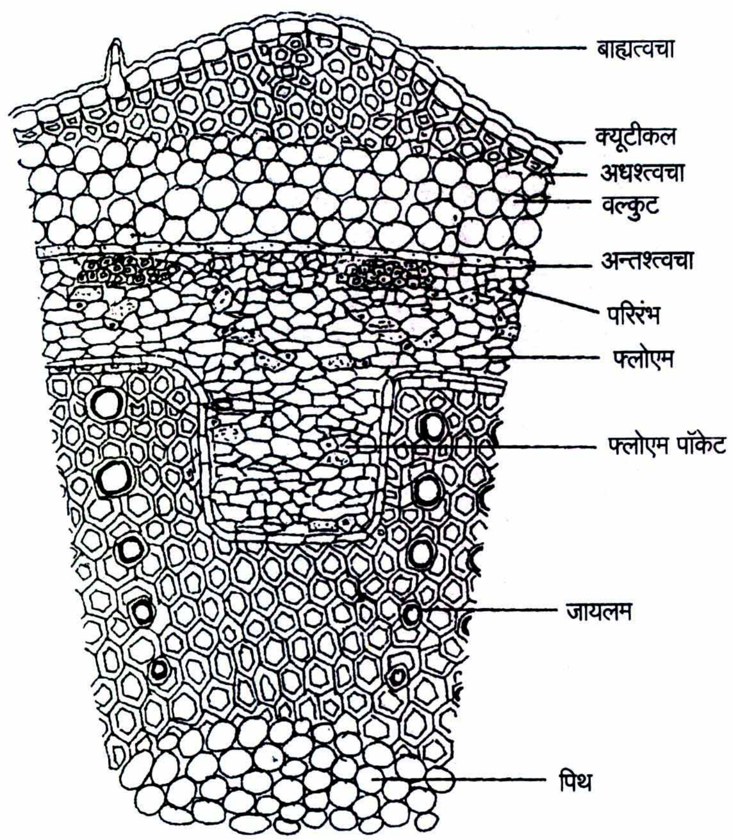

चित्र 7.21 : बिग्नोनीया के ताने में फ्लोएम खांच

एरिस्टोलोकिया में कैम्बियम का असंगत व्यवहार

इसमें भी अन्त: पूलीय कैम्बियम का एक सामान्य सतत वलय (continuous ring) बनता है जिसकी अन्त: पूलीय एधा तो बाहर की ओर द्वितीयक फ्लोएम तथा अन्दर की ओर द्वितीयक जायलम बनाती है एवं अन्तरपूलीय एधा (interfascicular cambium) द्वितीयक जायलम तथा फ्लोएम के स्थान पर बाहर व अंदर दोनों ओर मृदुतकीय कोशिकायें निर्मित करती है जिसकी वजह से रश्मियों (rays) चौड़ी हो जाती है व पिथ y के समान हो जाती है । इन चौड़ी रश्मियों के कारण संवहन पूल द्वितीयक वृद्धि के बाद भी स्पष्ट वलय में दिखाई देते हैं । इन संवहन पूलों में द्वितीयक फ्लोएम बनने से प्राथमिक फ्लोएम परिधि की ओर खिसक जाता है व कुछ समय बाद इसकी कोशिकायें नष्ट प्रायः हो जाती है । प्राथमिक जायलम अंदर की ओर खिसक जाता है व इसकी कोशिकाएँ कुछ समय तक दिखाई देती है । इन संवहन पूलों में सीमित द्वितीयक वृद्धि होती है तथा इसके पास कभी-कभी छोटे संवहन पूल भी दिखाई देते हैं जो स्थानाभाव के कारण अधिक वृद्धि नहीं कर पाते हैं । संवहन पूलों के बाहर परिसंवहनी तन्तु पाये जाते हैं । इन चौड़ी अरों के कारण एरिस्टोलोकिया का तना तनन सामर्थ्य प्रदर्शित करता है । जब इन आरोही तनों पर आधार (support) पर वृद्धि के कारण पार्श्वीय दबाव पड़ता है तब अरों की मृदुतक कोशिकायें सामान्य रहती हैं क्योंकि वह व्यावर्तन व कर्तन (twisting and shearing) का दबाव सहन करने में सक्षम होती हैं । खिंचाव व दबाव के कारण बाहयत्वचा भी

कही-कहीं नष्ट हो जाती है अत: इस सतह के नीचे कार्क एधा का टुकड़ों में निर्माण हो जाता है जो बाहर की ओर कार्क की कोशिकायें तथा अंदर की ओर द्‌वितीयक वल्कुट का निर्माण करती है । तने पर वातरन्ध्र भी उपस्थित होते हैं ।

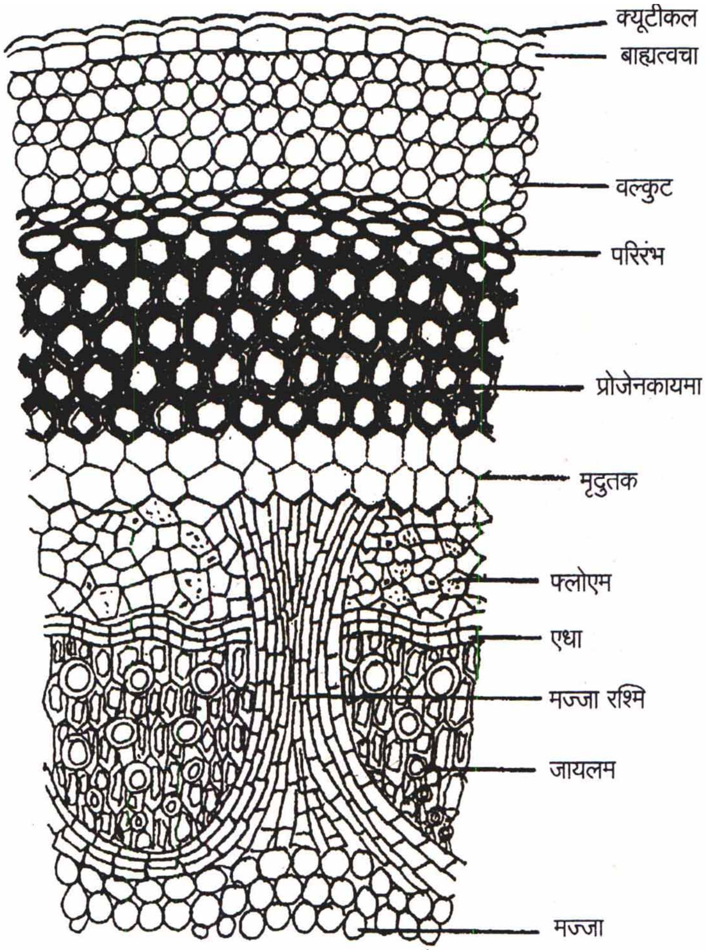

चित्र 7.22 : एरिस्टोलोकिया के तने का अनुप्रस्थ काट

कैम्बियम का अपसामान्य व्यवहार

कभी-कभी पादपों में कैम्बियम अपसामान्य व्यवहार प्रदर्शित करती है जैसे लैप्टाडिनिया, सैल्वेडोरा आदि में । यह पादप जगत के 25 कुलों में रिपोर्ट किया गया है । इन पौधों में जब द्‌वितीयक वृद्धि शुरू हो जाती है तो कैम्बियम के कुछ छोटे-छोटे भाग कुछ स्थानों पर द्‌वितीयक जायलम के स्थान पर द्‌वितीयक फ्लोएम काटना शुरू कर देता है कुछ समय बाद वही भाग सामान्य रूप से द्‌वितीयक जायलम अंदर व द्‌वितीयक फ्लोएम बाहर बनाने लगते हैं जिससे पहले बना हुआ द्‌वितीयक फ्लोएम द्‌वितीयक जायलम में धंस जाता है ।

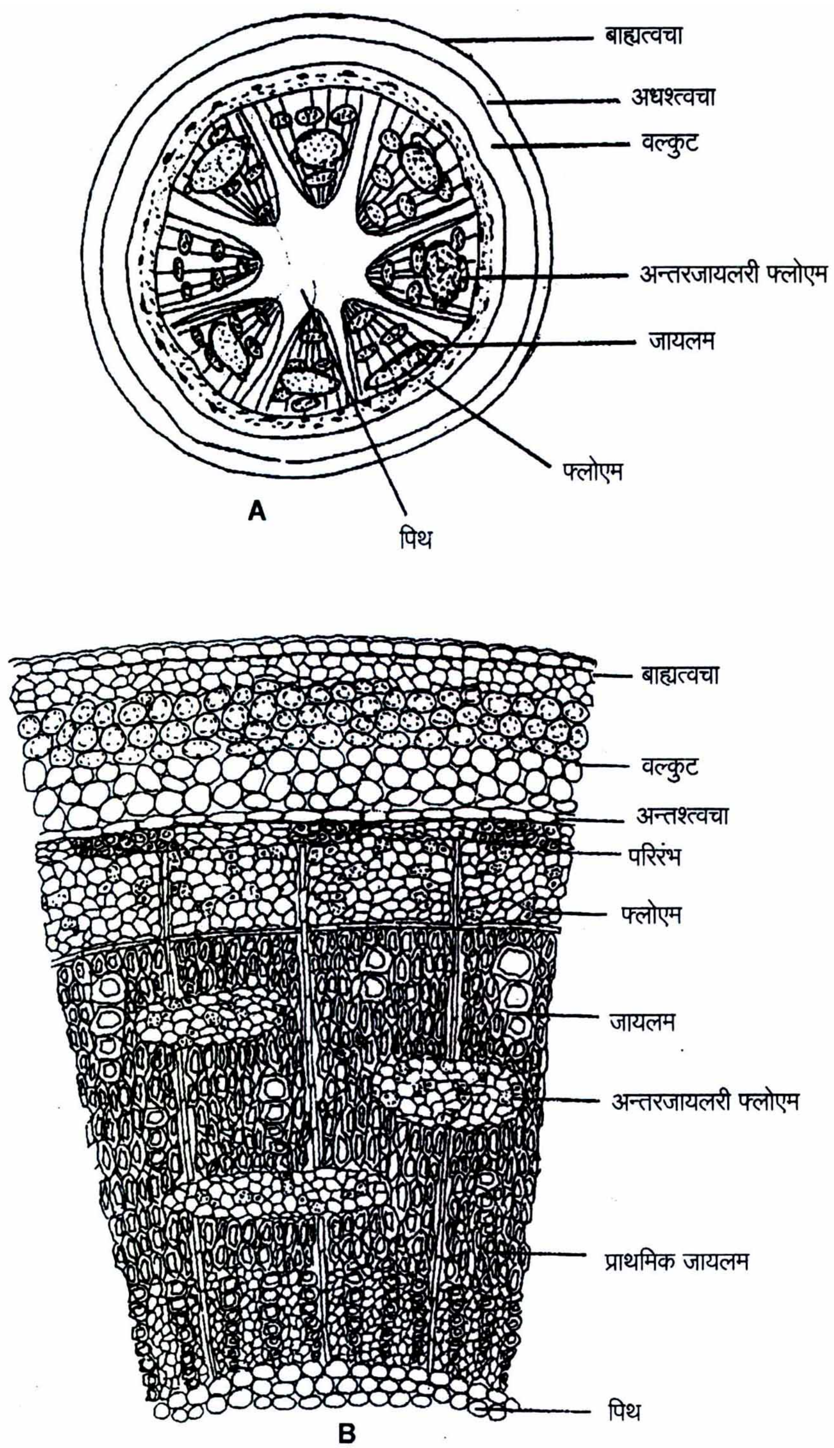

चित्र 7.23 : सैल्येडोरा के तने का अनुप्रस्थ काट (A) आरेखीय (B) कोशिकीय

लैप्टाडिनिया में तथा सैल्वेडोरा में एधा का यह अपसामान्य व्यवहार जायलम में किसी भी स्थान पर तथा कई स्थान पर दृष्टिगोचर होता है इस प्रकार अन्त: जायलरी फ्लोएम का निर्माण कोम्ब्रेटम प्रकार (Combretrum type) कहा जाता है । लैप्टाडिनिया में अन्तरजायलरी फ्लोएम

(intraxylary phloem) के साथ-साथ अन्त: जायलरी फ्लोएम (intraxylaryphloem) भी उपस्थित होता है जो एक प्राथमिक संरचना (primary structure) माना जाता है तथा प्राथमिक ऊभयपोषवाही (primary bicollateral phloem) संवहन बंडल के आंतरिक फ्लोएम के समान माने जाते हैं अर्थात् उसका प्रतिनिधित्व करते हैं । अन्त: व अन्तर जायलरी फ्लोएम मरू भूमि में उगने वाले पौधों में महत्वपूर्ण कार्य करते हैं । गर्मी में जब पौधे मुरझा जाते हैं और ऊतक सूख जाते हैं व निष्क्रिय होने लगते हैं तब यह फ्लोएम सक्रिय रहता है व अनुकूल मौसम आने पर यह क्रियाशील फ्लोएम भोजन को कलिकाओं तक पहुँचाता है व पौधा सामान्य वृद्धि शुरू कर देता है ।

एक से अधिक एधा पट्टियों का निर्माण

पादप जगत के 28 कुलों में द्वितीयक एधा वलयों (secondary cambial rings) द्वारा भी तने में असंगत द्वितीयक वृद्धि होती है । यह विभज्योतकी कोशिकायें ज्यादातर परिरंभ में निर्मित होती हैं व एक सामान्य एधा के रूप में कार्य करती है । यह एधा सक्रियता से तब कार्य करती है जब पहले से बनी एधा की पर्त निष्क्रिय हो जाती है इस प्रकार जायलम व फ्लोएम एकान्तर रूप से संकेन्द्री सतहें (alternate, concentric rings) निर्मित कर लेती है ।

बोरहाविया तथा मिराबलिस के स्तंभ में एधा की पाँच तक सतह बनती हैं जो संयुक्त, सम्पार्श्विक पूल के कई उत्तरोत्तर वलय निर्मित करती है । यह बंडल यौगिक ऊतक (conjuctive tissue) में धंसे रहते हैं । यह यौगिक ऊतक कुछ हद तक लिग्निकृत होता है किन्तु भोजन संचय में सहायक होता है । कैम्बियम वलय बाहर की ओर पतली भित्ति युक्त मृदुतकीय संचयी कोशिकायें बनाता है । प्रथम एधा वलय द्वारा बाहर की ओर कटी मृदुतकीय कोशिकाओं व परिरंभ की मृदुतकयि कोशिकाओं से नया एधा वलय अनुकूल समय पर निर्मित हो जाता है । यह वलय स्तंभ की द्वितीयक वृद्धि में सहायक होते हैं । डॉ. पी. महेश्वरी (1930) ने मिराबलिस व बोरहाविया पर कार्य किया व बताया की कभी-कभी सामान्य मज्जा रश्मियाँ द्वितीयक यौगिक ऊतकों (secondary conjuctive tissue) को काटती हैं । यौगिक ऊतकों का सबसे अंदर का भाग जो द्वितीयक विभज्योतकी द्वारा इसके क्रियाशील होने के शुरू में ही निर्मित हो जाता है सत्य पिथ के समान होता है अत : इस प्रकार सबसे अंदर के द्वितीयक संवहन पूल मज्जा में होने के कारण मज्जा पूल कहलाते हैं । बोरहाविया की मज्जा के मध्य में दो बड़े संवहन पूल दृष्टिगोचर होते हैं जो संयुक्त, संपार्श्विक व खुले होते हैं तथा कुछ हद तक द्वितीयक वृद्धि प्रदर्शित करते हैं ।

संवहन क्षेत्र के बाहर एधा वलय का निर्माण

अमेरेन्थेसी व चीनोपोडिएसी आदि कुल में असामान्य द्वितीयक वृद्धि संवहन क्षेत्र के बाहर परिरंभ में स्वत: ही उत्पत्र होती है । यह पूर्ण वलय के रूप में उपस्थित हो सकती है अथवा छोटी-छोटी एधा पट्टियों के रूप में होते हैं । अमेरेन्थस में द्वितीयक संवहनी ऊतक वलयों में उपस्थित होते हैं जबकि एकाइरेन्थस में संवहनी बंडल मज्जा में अनियमित रूप से व्यवस्थित रहते हैं । एकाइरेन्थस एस्पेरा स्तंभ स्थलों पर पूल संयुक्त हो जाते हैं व उभयजायलिक (amphixylic) संवहन पूल का निर्माण करते हैं ।

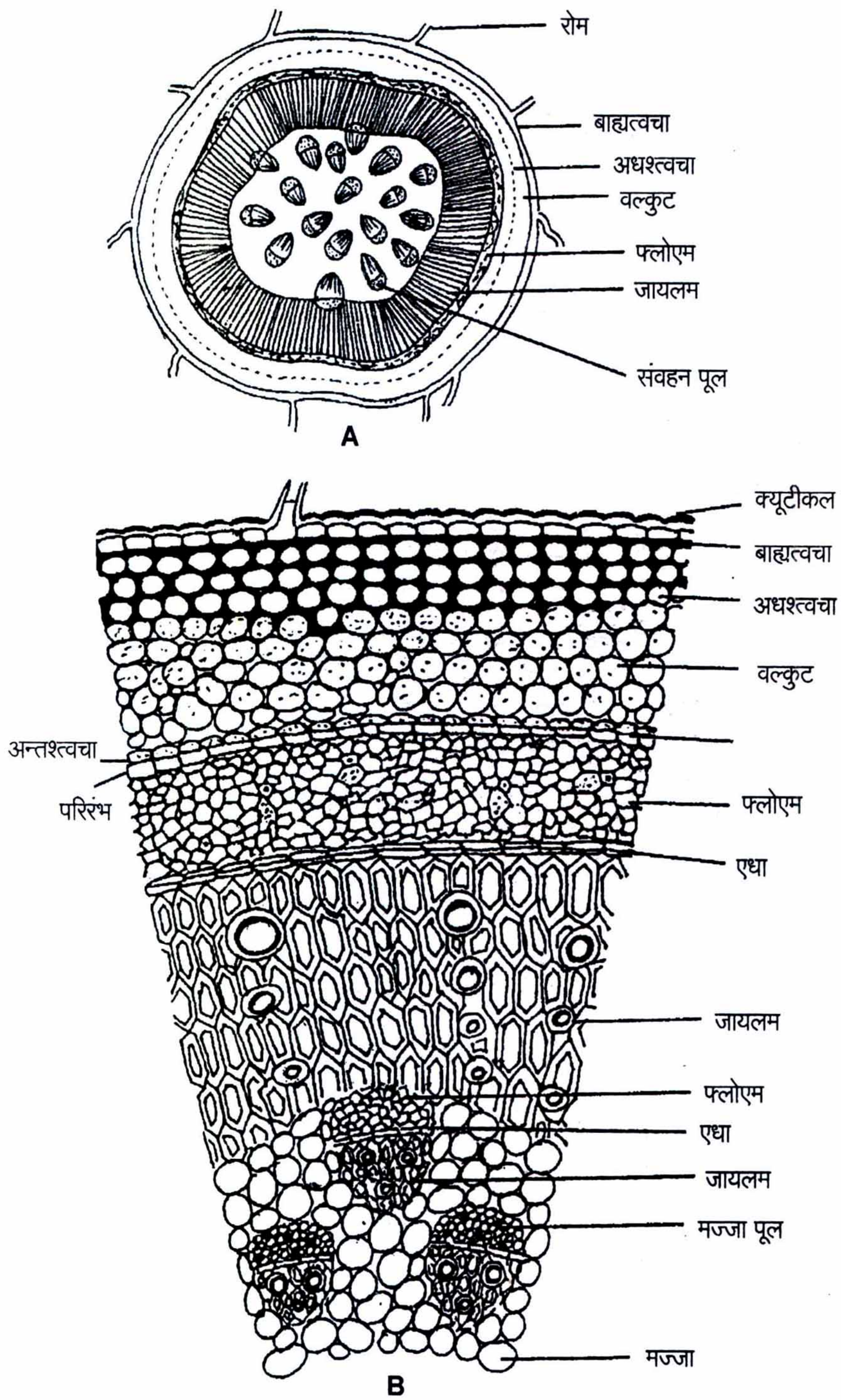

चित्र 7.24 : मिराबलिस के तने का अनुप्रस्थ काट (A) आरेखीय (B) कोशिकीय

अन्तर जायलरी काग का निर्माण : दो वृद्धि वलय के मध्य उपस्थित मृदुतकीय कोशिकाओं से काग एधा का निर्माण अन्तर जायलरी काग कहलाता है । चिरकाल तक लगे रहने वाले भागों में पाया जाता है तथा यह पौधे की सूखे से रक्षा करने में सहायता प्रदान करता है । उदाहरण - ओनेग्रसी व एस्ट्रेसी कुल आदि ।

एकबीजपत्री स्तंभ में द्वितीयक वृद्धि : एकबीजपत्री स्तंभ में संयुक्त, सम्पार्श्विक व बंद संवहन पूल पाये जाते हैं अत : सामान्यत: उनमें द्वितीयक वृद्धि अनुपस्थित होती है । कुछ एकबीजपत्री पादप जैसे यक्का, ऐलो, ड्रेसीना, सैन्सीवियरा आदि में असंगत द्वितीयक वृद्धि पायी जाती है ।

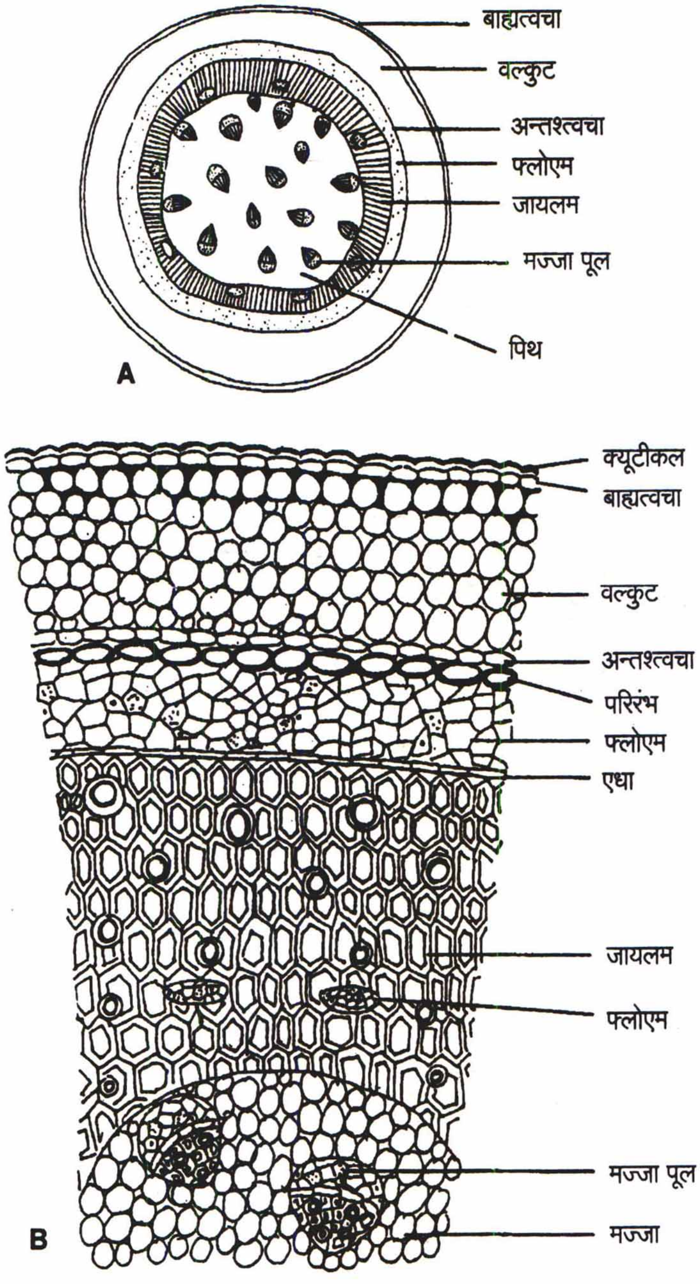

चित्र 7.25 : बोगेनविलिया के तने का अनुप्रस्थ काट (A) आरेखीय (B) कोशिकीय

ड्रेसीना में द्वितीयक वृद्धि

ड्रेसीना में प्राथमिक संरचना में कई अवधी पूल भरण ऊतक में अनियमित रूप से बिखरी हुई अवस्था में पाये जाते हैं । द्वितीयक वृद्धि शुरू होने पर स्तंभ में द्वितीयक विभज्योतकी ऊतक बनना आरम्भ हो जाता है । जो प्राथमिक संवहन पूल के बाहर मृदुतकीय कोशिकायें निर्मित

करता है । यह कई सतह मोटी एधा का स्पर्श रेखीय तल (tangential plane) में विभाजित होकर निर्माण कर लेता है जो संरचना में आयताकार अथवा तुर्करूपी होती हैं ।

कैम्बियम की कोशिकायें अंदर की ओर अधिक क्रियाशील होती है फलस्वरूप अंदर की ओर नई कोशिकायें बनाना शुरू कर देती है जो बहुत शीघ्र द्वितीयक संवहन बंडलों का निर्माण कर लेती हैं । संवहन पूल के साथ ही लिग्निकृत मृदुतक जो यौगिक ऊतक कहलाता है निर्मित करता है । बाहर की ओर एधा पतली भित्ति युक्त मृदुतकीय कोशिकायें बनाता है ।

द्वितीयक संवहन बंडल का निर्माण व परिवर्धन एक एधा द्वारा निर्मित कोशिका से होता है । यह अपनतिक रूप से विभाजित होकर दो से तीन कोशिकाओं की सतह बनाती है जो जायलम में विभेदित हो जाती है तथा अंदर की कोशिकायें केन्द्रीय फ्लोएम में अत : यह फ्लोएम केन्द्री (amphivasal) संवहन पूल कहलाते हैं । यह अरीय पंक्तियों में व्यवस्थित रहते हैं । जायलम में वाहिकायें नहीं पायी जाती केवल वाहिनिकायें तथा मृदुतक उपस्थित होता है । प्रत्येक संवहन पूल के चारों ओर मोटी अथवा पतली भित्ति युक्त पूल आच्छद उपस्थित होता है ।

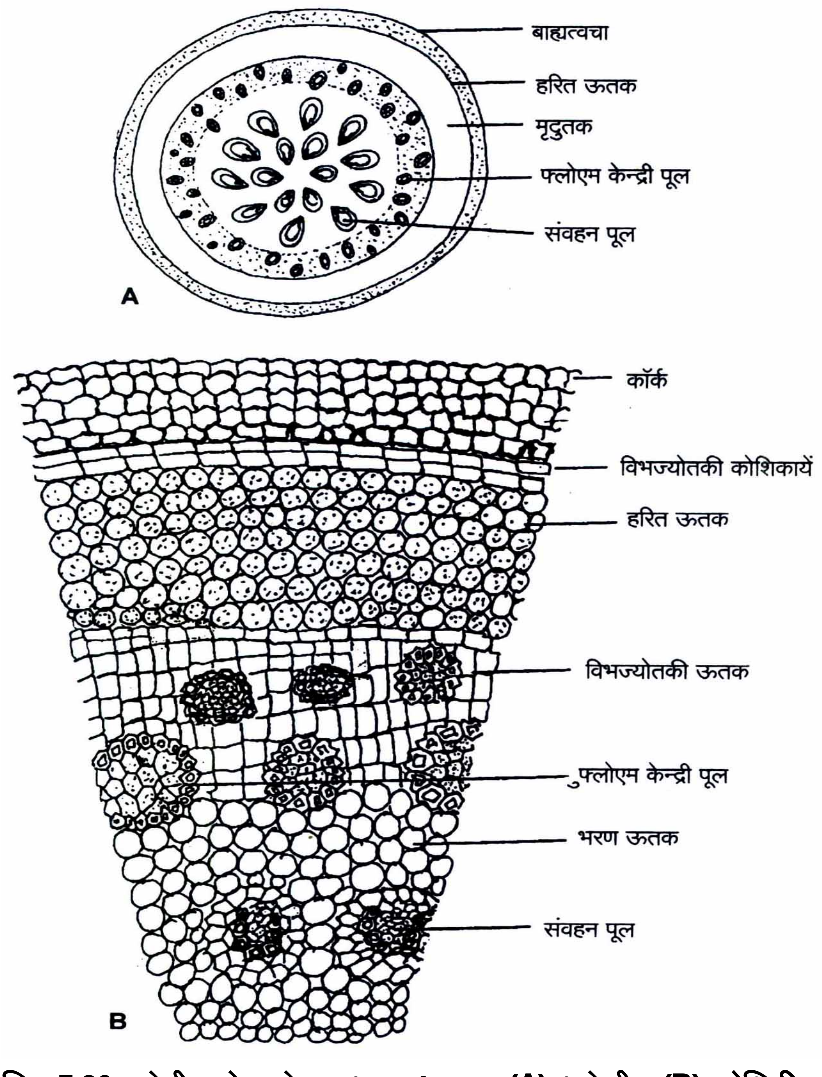

चित्र 7.26 : ड्रेसीना के तने का अनुप्रस्थ काट (A) आरेखीय (B) कोशिकीय

कुछ समय की द्वितीयक वृद्धि के पश्चात् बाह्यत्वचा के ठीक नीचे मृदुतकीय कोशिकायें विभज्योतकीय हो जाती हैं । यह कोशिकायें स्पर्श रेखीय (tangential) रूप में विभाजित होकर रेखीय (linear) परतों का निर्माण करती हैं जो कुछ समय बाद सूबेरिनिकृत (suberized) हो जाती हैं तथा कार्क का निर्माण करती हैं । कुछ समय बाद मृदुतक की अंदर की सतहों में फिर विभेदन आरम्भ हो जाता है तथा कार्क बन जाता है इस तरह का कार्क पंक्तियों में निर्मित होता दृष्टिगोचर होता है । चूँकि यह कार्क

बिना काग एधा के उत्पन्न होता है अत: यह स्तरित कार्क (storied crok) कहलाता है ।

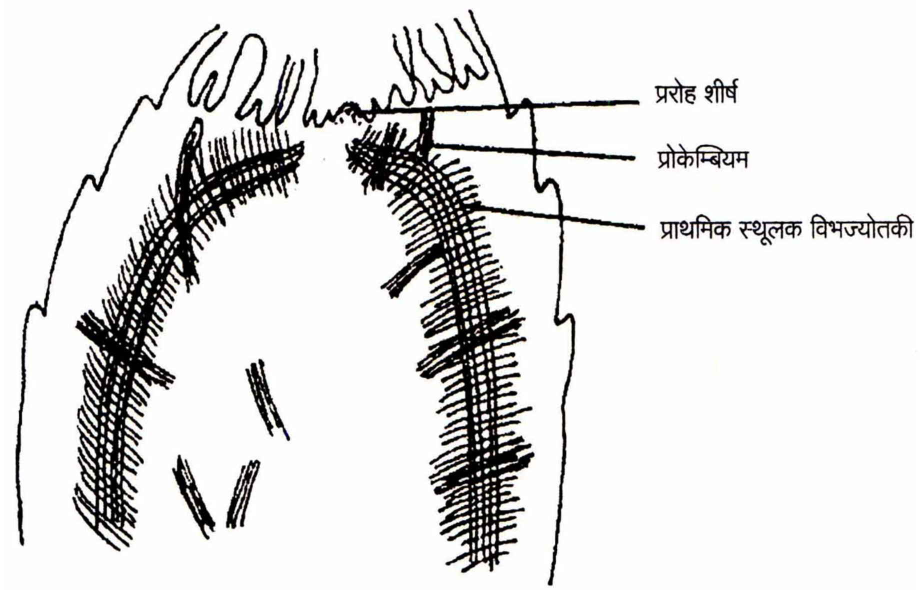

चित्र 7.27 : ताड़ के तने के शीर्ष भाग का अनुदैर्ध्य काट (L.S. of shoot apex of Palm)

एकबीजपत्री पादपों में सामान्यत: द्वितीयक वृद्धि अनुपस्थित होती है क्योंकि इनमें संवहन बंडल संयुक्त, सम्पार्श्विक व बंद होते हैं । ताड़ आदि पौधों की चौड़ाई लम्बे समय तक प्राथमिक वृद्धि करने वाले एक प्राथमिक स्थूलक विभज्योतकी (primary thickening meristream) के नीचे स्थित होता है जो तने की लम्बाई व चौड़ाई में सहायता प्रदान करता है । यह विभज्योतकी कोशिकायें प्राक्एधा स्ट्रेंड बनाती है जो संवहन बंडल का निर्माण करते हैं । यही संवहन बंडल तने की चौड़ाई बढ़ाते हैं ।

बोध प्रश्न - 2

1. एक पादप का नाम बताइये जिसमें फ्लोयम पॉकेट पाये जाते हैं ।

----
2. असंगत द्वितीयक वृद्धि का एक कारण बताइये --------------------------------
----
----
3. अन्तरजायलरी फ्लोएम किसमें पाया जाता है?

4.	कैम्बियम के अपसामान्य व्यवहार का एक उदाहरण दीजिये ----------------------
	---

5.	किसी एक बीजपत्री पादप का नाम बताइये जिसमें द्वितीयक वृद्धि पायी जाती है।

7.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको यह ज्ञात हो गया होगा कि एकबीजपत्री व द्विबीजपत्री पादपों के सामान्य लक्षण क्या होते हैं । कई बार परिस्थिति के अनुरूप अनुकूलन उत्पन्न करने के कारण विभिन्न कुलों के पादपों में एधा (cambium) की अपसामान्य स्थिति एवं व्यवहार हो जाता है जिससे पादप असंगत द्वितीयक वृद्धि प्रदर्शित करते हैं ।

7.8 शब्दावली

दारुकेन्द्री पूल : संवहन पूल के केन्द्र में जायलम व इसके चारों ओर फ्लोयम पाया जाता है । यह दारुकेन्द्रीपूल.(amphicribal bundle) कहलाते हैं ।

फ्लोयम केन्द्री पूल : फ्लोयम संवहन बंडल के केन्द्र में होता है तथा इसके चारों ओर जायलम पाया जाता है । यह फ्लोयम केन्द्री (amphivasal bundle) कहलाते हैं ।

स्तरित कार्क (Storied cork) : यह कार्क बिना कागएधा के उत्पत्र होता है ।

7.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Cutter, E.G, 1969. Part 1 Cells and tissues; Edward Arnold London.
2. Esau, K. 1977 anatomy of speed plants, 2nd edition; John Wiley & sons New York
3. पुष्पीय पादपों की संरचनाएं परिवर्धन एवं जनन; त्रिवेदी, शर्मा; शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर
4. आवृतबीजी की आकारिकी एवं आर्थिक वनस्पति विज्ञान; त्यागी, सक्सैना; कॉलेज बुक हाऊस, जयपुर

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. निक्टेंथिस के वल्कुटीय बंडल व्युत्क्रमित (inverted), वैजाकर, संयुक्त, संपार्श्विक, बाह्यदिदारुक (exarch) एवं वृद्धि (open) होते है ।
2. असामान्य स्थिति में द्विबीजपत्री पादपों के संवहन पूल बिखरी अवस्था में पाये जाते हैं।
3. बोरहाविया की मज्जा के मध्य में दो संवहन पूल पाये जाते हैं ।
4. लैप्टाडिनिया 5. इफीड्रा

6. कुल विन्ट्रेसी   7. कुल पॉलीगोनेसी

बोध प्रश्न - 2

1. बिग्नोनिया
2. परिस्थिति के अनुरूप अनुकूलन उत्पन्न करने के लिये असंगत द्वितीयक वृद्धि पायी जाती है।
3. सैल्वेडोरा   4. एरिस्टोलोकिया
5. ड्रैसीना

7.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. तने में उपस्थित वल्कुटीय बंडल पर टिप्पणी लिखिये ।
2. मज्जा पूल पर टिप्पणी लिखिये ।
3. एकबीजपत्री तनों में असंगत द्वितीयक वृद्धि पर टिप्पणी लिखिये ।
4. तनों में पायी जाने वाली प्राथमिक असंगत वृद्धि पर निबंध लिखिये ।
5. एरिस्टोलोकिया के तने में पायी जाने वाली असंगत द्वितीयक वृद्धि का सचित्र वर्णन कीजिये।
6. बिग्नोनियाके तने में पायी जाने वाली असंगत द्वितीयक वृद्धि का सचित्र वर्णन कीजिये ।
7. बोरहावियाके तने में पायी जाने वाली असंगत वृद्धि का सचित्र वर्णन कीजिये ।

इकाई 8 : पत्ती : आकारिकी, उत्पत्ति एवं विकास (Leaf : Morphology , Origin and Evolution)

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 पत्ती की उत्पत्ति एवं विकास

8.3 पत्ती के आमाप व आकृति में विविधता तथा पत्ती के रूपांतरण

8.4 सारांश

8.5 शब्दावली

8.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.0 उद्देश्य

पादपों में पत्ती पर्वसंधि से निकलने वाली बर्हिजात (exogenous) अतिवृद्धि होती है । प्रत्येक पर्ण के कक्ष में कक्षस्थ कलिका पायी जाती है । पत्ती प्ररोह पर उपस्थित एक महत्वपूर्ण संरचना होती है । अक्ष से पत्ती को जोड़ने वाला भाग पर्णाधार कहलाता है । इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको पत्ती के आमाप, आकृति में विविधता इसके रूपांतरण तथा इसकी उत्पत्ति एवं विकास के बारे में ज्ञान हो जायेगा ।

8.1 प्रस्तावना

पत्ती प्रायः हरी होती है तथा सीमित वृद्धि प्रदर्शित करती है । पत्ती के मुख्य कार्य प्रकाश संश्लेषण तथा वाष्पोत्सर्जन हैं । तने पर लगने वाली सभी पत्तियाँ एक जैसी नहीं होती हैं । कुछ पर्ण हरी होती है व प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती है यह सामान्य पर्ण कहलाती है । अधोपर्ण (cataphylls) सफेद, भूरी या हरी होती हैं । यह खाद्य पदार्थो के संचयन का कार्य भी कर सकती है । पादप अंकुरण के समय एक या अधिक पत्तियाँ उपस्थित हो सकती हैं यह बीजपत्र (cotyledons) कहलाती हैं । आरबर (Arber) ने उपर्युक्त सभी प्रकार के पर्णो को पर्णोम (phyllome) कहा है ।

8.2 पत्ती की उत्पत्ति एवं विकास

द्विबीजपत्री पादपों में पर्ण फलक अथवा पर्णक से पूर्व अक्ष का परिवर्धन होता है । पर्ण आद्यक एक से अधिक ट्यूनिका एवं कॉरपस की पर्तो से निर्मित होता है । कुछ पादपों में बाहयत्वचा

ट्यूनिका की बाह्य पर्त से निर्मित होती है व पर्ण मध्योतक व संवहन पूल ट्यूनिका की भीतरी पर्तो व कॉरपस की कोशिकाओं से निर्मित होते हैं ।

आरम्भ में पर्ण आद्यक तीव्र गति से वृद्धि करते हैं एवं इनकी आकृति चपटे ऊपरी सतह युक्त शंकु के समान हो जाती है । शंकु की शीर्षस्थ कोशिकायें कुछ समय बाद विभाजन करना बंद कर देती हैं । आगे चल कर यह कोशिकायें अन्तर्वेशी वृद्धि द्वारा पत्ती की लम्बाई बढ़ाती है । पर्ण फलक की लम्बाई में वृद्धि के साथ ही साथ इसकी चौड़ाई भी बढ़ती जाती है ।

अधिकांश पत्तियों में पर्ण फलक क विकास सीमांत (marginal) एवं उपसीमान्त (sub-marginal) आरंभिक कोशिकाओं से होता है । आवृत्तबीजी पादपों में अपनतिक विभाजन के फलस्वरूप पर्ण की अभ्यक्ष (adaxial) व अपाक्ष (abaxial) सतह में फैलाव होता है । कुछ एकबीजपत्री पत्तियों में कभी कभी परिनतिक विभाजन हो जाता है जिससे नई संतति कोशिकायें भरण उत्तक में व्यवस्थित हो जाती है ।

संयुक्त पत्तियों में सीमान्त विभाज्योतकी पट्टिकाओं में कोशिकाओं के उभारों का निर्माण दो पंक्तियों में होता है जिससे पर्णक (leaflets) विकसित होते हैं । मुख्य अक्ष के शीर्षस्थ सिरे से शीर्षस्थ पर्णक निर्मित होता है (फ्लोचार्ट) ।

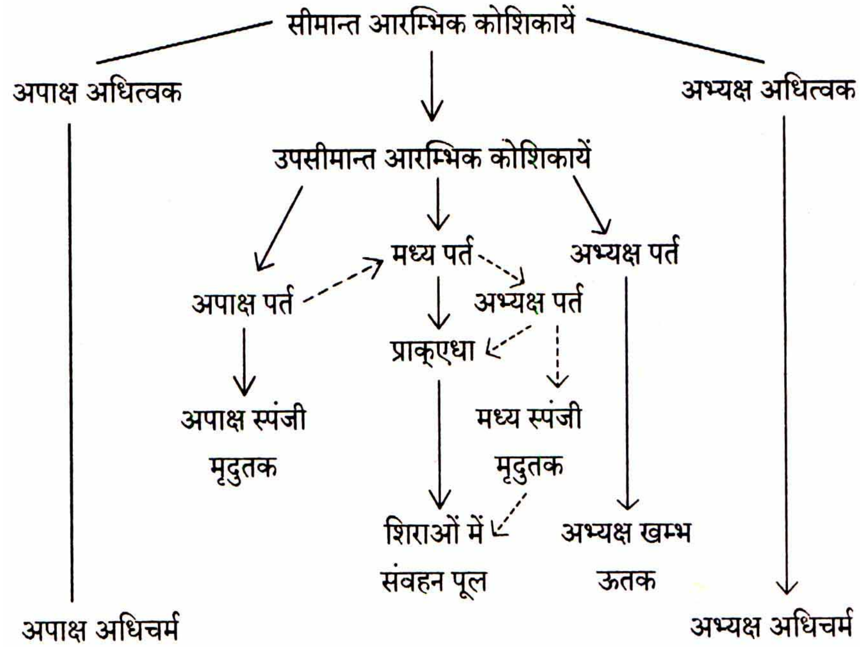

फ्लोचार्ट : द्विबीजपत्री पादपों के संयुक्त पत्तियों में पर्ण ऊतक जनन

सीमान्त विभज्योतकी कोशिकाओं की वृद्धि दर कम होते ही विभिन्न पर्तो में अधिकतर अपनतिक विभाजन के फलस्वरूप पर्ण फलक वृद्धि करता है । सभी पते पट्टिका विभाज्योतक (plate meristream) कहलाती हैं । इसके द्वारा पर्णफलक के क्षेत्रफल में वृद्धि हो जाती है किन्तु मोटाई में वृद्धि नगन्य मध्यशिरा की प्रोकेम्बियम पट्टिका पर्णफलक से पूर्व अग्राभिसारी दिशा में विकसित होती है ।

पर्णफलक के विकास के साथ ही साथ बड़ी पाश्वीर्य शिराओं एवं अन्य छोटी शिराओं की प्रोकेम्बियम पट्टिका धीरे-धीरे बनने लगती है । कुछ पादपों में प्रोकेम्बियम पट्टी का अग्राभिसारी

क्रम में विकास प्रथम अक्षीय पर्ण अनुपथ से होता है इसी कारण पत्ती के मध्य शिरा के पहिले संवहन बंडल निर्मित होते हैं जो बाद में पर्णफलक में तिरछे फैल जाते हैं । इन पूलों से द्वितीयक शिराओं का निर्माण तलाभिसारी क्रम में होता है । इसके पश्चात् इनका विभेदन (differentiation) एवं विकास पर्ण फलक में ही होता है ।

एकबीजपत्री पादपों जैसे मक्का में मध्यशिरा एवं मुख्य पार्श्व शिराओं की प्रोकेम्बियम पट्टिकाओं का विभेदन अग्राभिसारी क्रम में होता है । जब मुख्य शिरा में प्रोटोफ्लोयम विकसित हो जाते हैं तब बाकी छोटी व पतली शिरायें तलाभिसारी क्रम में विकसित होती है । इन सभी शिराओं को जोड़ने वाली पतली शिराओं का विकास सबसे बाद में होता है । पर्ण के संवहन पूलों में पहले प्रोटोफ्लोयम व इसके पश्चात् प्रोटोजायलम निर्मित होता है । इनका विभेदन अग्राभिसारी क्रम में होता है । सबसे अन्त में जब शिरायें पूर्ण लम्बाई प्राप्त कर लेती हैं तब तलाभिसारी क्रम में मेटाफ्लोयम व मेटाजायलम का विभेदन होता है । (फ्लोचार्ट)

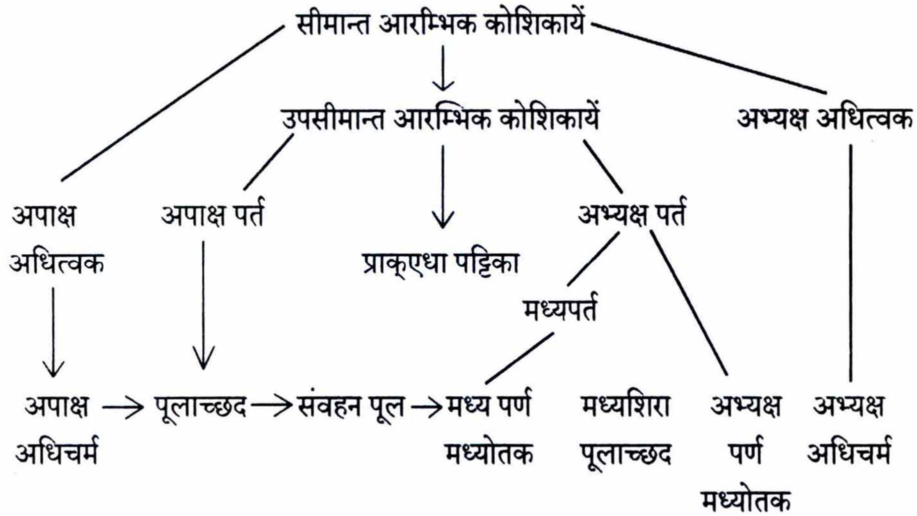

फ्लोचार्ट : चावल एकबीजपत्री पादप में पर्ण ऊतक जनन

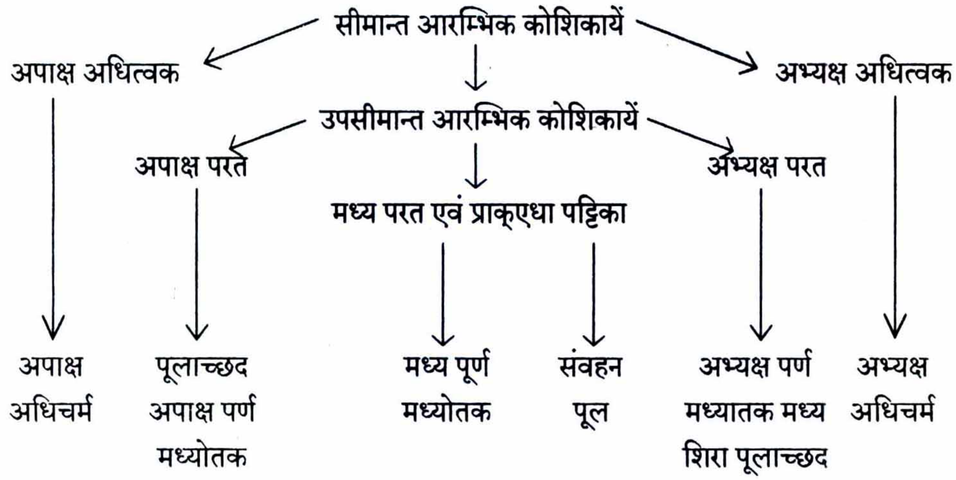

बोध प्रश्न- 1

1. पादपों में तने पर पत्ती कहाँ स्थित होती हे?

----

2. पत्ती कैसी अतिवृद्धि होती है।

----

3. पत्ती की वृद्धि कैसी होती है?

----

4. कौनसी पर्ण प्रकाश संशलेषण का कार्य करती हैं?

----

5. अधोपर्ण का क्या कार्य है?

----

6. आरबर के अनुसार सभी पर्ण क्या कहलाते है?

8.3 पत्ती के आमाप, आकृति में विविधता व पर्ण रूपांतरण

आवृतबीजी पादपों में उपस्थित पत्तियों के आमाप व आकृति में अत्यधिक विविधता पायी जाती है । यह विविधता आनुवांशिक लक्षणों व पादप जिस पर्यावरण में उग रहे होते हैं उसके कारण होती है । सामान्यत: एक ही पादप पर लगने वाली पत्तियों एक ही आमाप व आकृति की होती है । किन्तु कुछ जलीय पादपों जैसे रेननकुलस एक्वाटिलिस व लिम्नोफिल्ला आदि में विषय पर्णता उपस्थित होती है । इन पादपों में जलनिमग्न पत्तियाँ कटी फटी व शाखित होती है । जबकि पानी से बाहर निकले हुए हिस्से की पत्तियाँ अशाखित व अच्छिन्नकोर युक्त होती है (चित्र 8.1) ।

कुछ पादपों के पर्ण शल्की व छोटे होते हैं व कुछ में पिच्छाकार पर्ण कई मीटर लम्बे हो सकते हैं । एक जलीय पादप विक्टोरिया रीजिया के पर्ण का व्यास लगभग चार मीटर होता है । इसके किनारे उठे हुये होते हैं तथा यह जल में पड़े हुयेकाफी बडे हरे थाल के रूप में आभासित होते हैं।

पत्तियों का विन्यासक्रम, आमाप, आकृति में विविधता एवं पर्ण रूपांतरण

पत्तियों के तने व शाखाओं पर लगने का विकास क्रम

(Bearing of leaves on stem and branches)

मूलज (Radical) : यह भूमिगत (subterranean) तने से उत्पन्न होती है उदाहरण एलियम सीपा (Allium cepa)

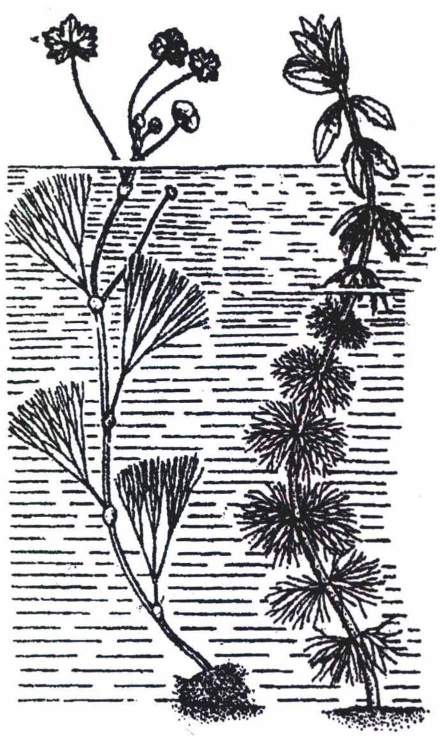

चित्र 8.1 : पर्ण आकृति में विविधता : A. रेननकुलस, B. लिम्नोफिल्ला पर्ण

चित्र 8.2 : पत्तियों के तने व शाखाओं पर लगने का क्रम

स्तंभिक (Cauline) : यह केवल मुख्य तने जो अधिकतर अशाखित होता है उस पर उपस्थित होती है उदाहरण फिनिक्स (Phoenix)

स्तंभिक व शाखीय (Cauline and Ramal) : इसमें मुख्य तना शाखित होता है एवं पत्तियाँ मुख्य तने तथा शाखाओं दोनों पर ही उपस्थित होती है ।

पर्ण के प्रकार (Types ऑफ Leaves)

सामान्य हरी पर्ण : यह भोजन निर्माण में सहायक होती है ।

बीजपत्र : भ्रूण में बनने वाली नये पौधे की प्रथम पत्तियाँ होती हैं ।

शल्क पत्र : छोटे शल्की पूरे रंग के होते हैं ।

सहपत्र : यह अल्प विकसित पर्ण होते हैं जिनके कक्ष में पुष्प निकलते हैं ।

पुष्प पत्र : पुष्प के विभिन्न भाग पत्तियों के रूपान्तरण हैं ।

अनुपर्ण (Stipules) : कुछ पादप जातियों में पर्णवृन्त पर विभिन्न प्रकार के कायिक उपांग या अतिवृद्धियाँ पायी जाती है यह अनुपर्ण कहलाती है । अधिकतर यह दो हरी पार्श्वीय (lateral) होती है किन्तु इनमें निम्न विभिन्नतायें पायी जाती है :

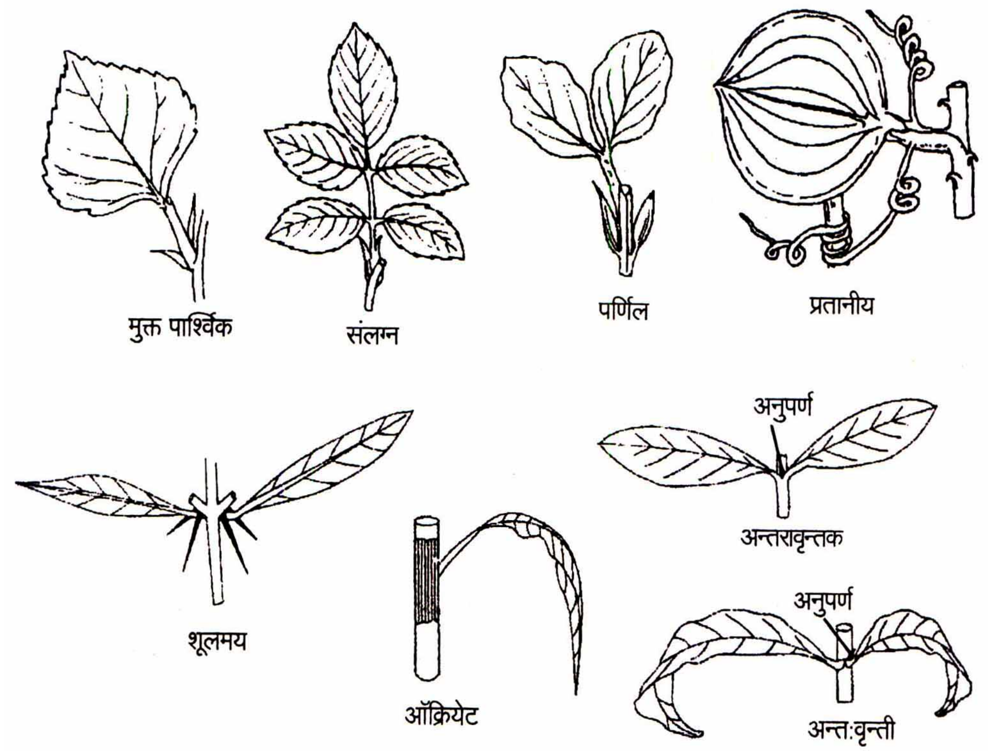

चित्र 8.3 : अनुपर्ण के प्रकार

मुक्त पार्श्वी (Free lateral) : वृन्त पर दो पार्श्व में स्थित व पृथक यह मालवेसी कुल में पाया जाता है जैसे गुड़हल - हिबिस्कस रोजा- साइनेसिस (Hibiscus rosa-sinensis)

संलग्न (Adnate) पर्ण वृन्त पर कुछ दूर तक जुडे हुये - गुलाब - रोजा (Rosa)

पर्णिल (Foliaceous) अनुपर्ण बड़े हरे, पर्ण समान - जंगली मटर - लैथायरस (Lathyrus) ।

प्रतानीय (Tendrillar) : अनुपर्ण तन्तु रूपी कुंडलित संरचनाओं में बदल जाते हैं - स्माइलैक्स (Smilax) ।

शूलमय (Spinous) : स्वरक्षा के लिये कांटों में रूपान्तरित - बबूल - अकेशिया अरेबिका (Acacia arabica) ।

आक्रियेट (Ochreate) : एक पत्ती के दोनों अनुपर्ण जुड़कर ऊपरी पर्व पर नली बना लेते हैं -

पौलीगोनम (Polygonum) ।

अन्तः वृन्ति (Intrapetiolar) : दोनों अनुपर्ण अपने भीतरी किनारों से जुड़कर संयुक्त अनुपर्ण बनाते हैं - गार्डिनिया (Gardenia) ।

अन्तरावृन्तक (Interpetiolar) : दो अनुपर्ण सम्मुख या चक्रिक पत्तियों के मध्य पाये जाते हैं - मुसैन्डा (Mussenda) ।

पर्णाधार (Leaf base)

जिन सरल पत्तियों में अनुपर्ण उपस्थित होते हैं वह अनुपर्णी (stipulate) तथा जिनमें अनुपस्थित होती है वह अनअनुपर्णी (exstipulate) कहलाती है । संयुक्त पर्ण की पर्णिकाओं (Leaflets) के आधार पर जब अनुपर्ण सदृश: संरचना उपस्थित होती है तब वह अनुपर्णिक (stipel) कहलाती है ।

अवृन्त पर्णाधार निम्न प्रकार के होते हैं :

पालिवत् या कर्णकार (Auriculate) : तने पर अवृन्त पर्णाधार पालियों में विकसित जैसे सोनकस (Sonchus) ।

स्तंभवेष्ठी (Perfoliate) : पर्णाधार की दोनों पालियाँ पर्वसंधि के चारों ओर जुड़ जाती हैं : वोजिलिया (Vogelia) ।

सहजातीय स्तंभवेष्ठी (Connate) : सम्मुख पर्ण में पर्णो के आधार पर्वसंधि के चारों ओर जुड़ जाते हैं जैसे लोनिसिरा फ्लेवा (Lonicera flava) ।

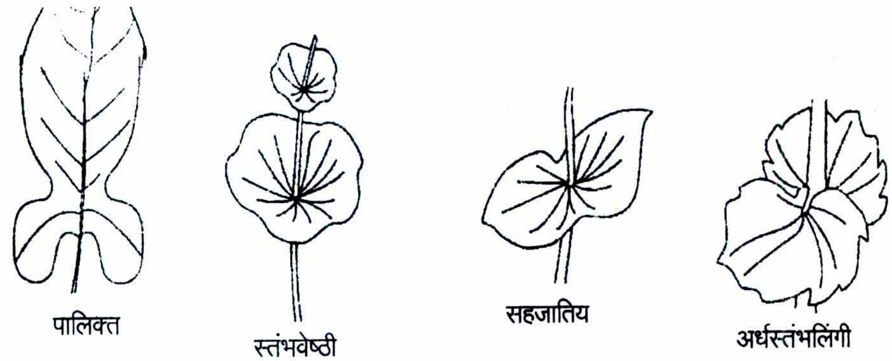

चित्र 8.4 : पर्णधारों के प्रकार

अर्धस्तंभलिंगी (Semiamplexicaule) : इसमें पर्णधार अपूर्ण रूप से स्तंभ को ढके रखता है. रैनकुलस (Ranunculus)

स्तंभलिगी (Amplexicaule) : पर्णाधार पूर्ण रूप से कम या अधिक पर्व संधि को पूरी तरह से ढके रखता है जैसे ऐमिलिया (Emellia) ।

पर्णवृन्त (Petiole)

पर्ण में जब छोटा अथवा लम्बा वृन्त होता है तब वह सवृन्त और अनुपस्थित होने पर अवृन्त कहलाता है । यह ठोस, खोखला अथवा स्पंजी हो सकता है । कभी-कभी इनमें रूपान्तरण भी हो सकता है :

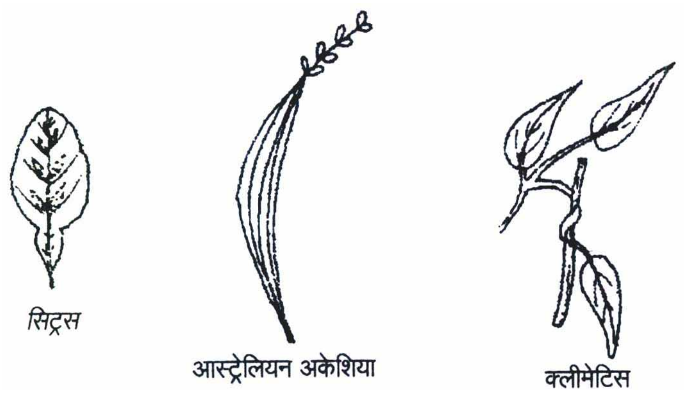

चित्र 8.5 : पर्णवृन्त के प्रकार

(i) **सपक्षीय :** वृन्त में पक्ष उपस्थित : नींबू : सिट्रस (Citrus) ।

(ii) **प्रतानीय :** तन्तुमय संरचना में रूपान्तरित : क्लीमेटिस (Clematis) ।

(iii) **स्पंजी :** पर्णवृन्त फूलकर स्पंजी हो जाते हैं : ट्रेपा (Trapa)

(iv) **कंटक :** पर्ण फलक गिर जाता है व पर्ण वृन्त कंटक में बदल जाता है : क्विसस्वैलिस (Quisqualis) ।

(v) **पर्णाभवृन्त :** पर्णवृन्त चपटा हरा : आस्ट्रेलियन अकेशिया (Australian acacia) ।

पर्णफलक (Lamina)

यह पत्ती का सबसे आवश्यक भाग होता है जो पत्ती के अधिकतर कार्यो जैसे प्रकाश संश्लेषण, जल व खाद्य का संवहन एवं कंकाल (skeleton) के रूप में पत्ती को साधे रखने आदि कार्य करती है । यह कई आकार व रंगों में पाया जाता है । इसके दो तल होते हैं ऊपर की ओर अभ्यक्ष (adaxial) व नीचे की ओर अपाक्ष (abaxial) तल कहलाते हैं । एक समान तल वाली पत्तियाँ समद्विपार्श्व (isobelateral) जैसे जियामेज (Zia mays) व दोनों तल अलग होने पर पृष्ठ धारी (dorsiventral) जैसे : मेन्जीफोरा (Mangifera) कहलाते हैं । इसके निम्न प्रकार पाये जाते हैं :

सूच्याकार (Acicular) : सुई की आकृति के जैसे : **पाइनस** (Pinus)

रेखाकार (Linear) : कम चौड़ी व अधिक लम्बी जैसे : **सायनोडोन** (Cynodon)

भालाकार (Lanceolate) : इसमें फलक भाले के समान होता है, नीचे की ओर थोड़ा चौड़ा व शीर्ष की ओर धीरे-धीरे नुकीला हो जाता है - **निरियम** (Nerium)

दीर्घायत (Oblong) इसमें पर्ण पूरी लम्बाई में बराबर चौड़ाई का होता है सिर्फ आधार व शीर्ष को छोड़कर : केला-म्यूजा (Musa)

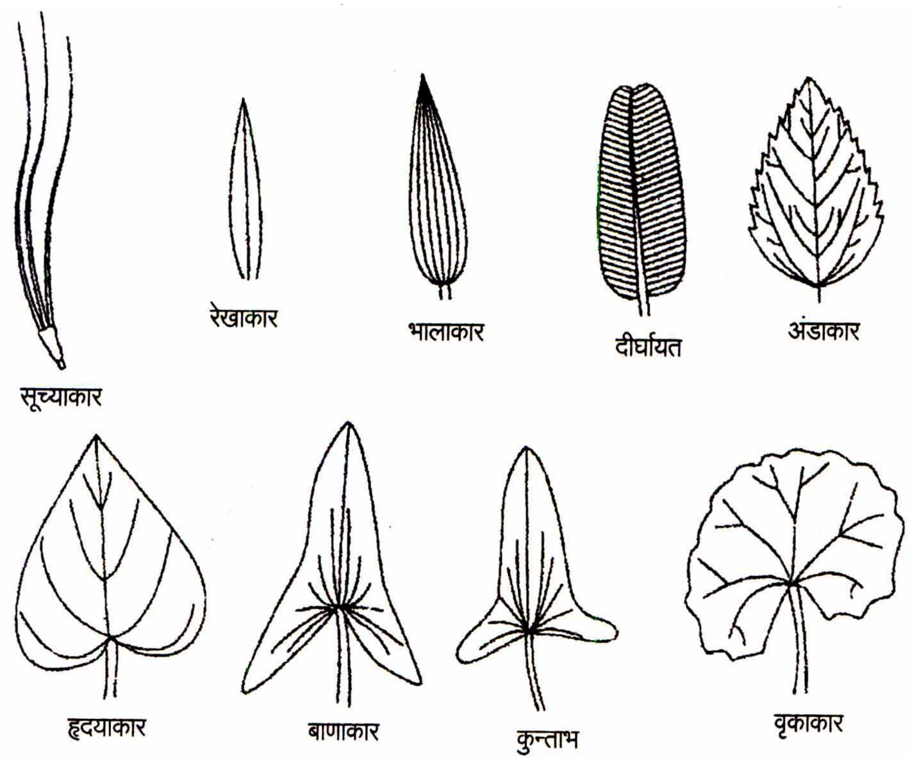

चित्र 8.6 : पर्णफलक के आकार

सूच्याग्री (Subulate) : आधार से ऊपरी सिरे की ओर क्रमशः पतली हो जाती है : **सालसोला** (Salsola)

अंडाकार : इसमें पर्ण आधार की ओर गोलाई लिये हुये चौड़ा होता है त था इसका शीर्ष नुकीला होता है. **हिबिस्कस** (Hibiscus)

हृदयाकार (Cordate) : इसमें आधार पर गहरा गडढा पाया जाता है त था इसका शीर्ष नुकीला होता है जिससे पर्ण हृदयाकार आभासित होता है **पाइपर बीटल** (Piper betle)

बाणाकार (Sagittate) : बाण के आकार का फलक : **सैजिटेरिया** (Sagittaria)

कुन्ताभ (Hastate) : बाणाकार के समान फलक किन्तु आधारीय किनारे अन्दर के बजाय बाहर को मुड़े हुये : आइपोमिया (Ipomea)

वृक्काकार (Renifrom) : इसमें फलक आकार में सेम के बीज के समान होता है. **सेंटिला** (Centella)

नवचन्द्राकार (Lunate) : इसमें पर्णफलक अर्ध चन्द्रमा के आकार का होता है - पैसीफ्लोरा (Passiflora)

अधोमुखि अण्डाकार (Obovate) : इसमें पर्णफलक शीर्ष पर चौड़ा व आधार की ओर संकरा होता चला जाता है : **कटहल**

अधोमुख हृदयाकार (Obcordate) : इसमें शीर्ष की ओर एक खाँच होती है किन्तु आधार पर दो पालियों में वि भक्त रहता है : बोहिनिया (Bauhinia)

स्पैचुलाकार (Spathulate) : चमम्च के आकार का फलक: ड्रॉसेरा (Drosera)

फानाकार (Cuneate) : त्रिभुजाकार, पतला सिरा पर्णवृन्त की ओर : पिस्टिया (Pistia)

दीर्घावृत्ताकार (Elliptical) : मध्य में चौड़ी व दोनों ओर संकरी : साइडियम ग्वावा

गोलाकार या वर्तुलाकार (Rotund or orbicular) : इसमें फलक गोल या चक्राकार पाया जाता हे निलम्बो (Nelumbo)

तिर्यक (Oblique) : इसमें फलक तिरछा होता है अर्थात् इसके दोनों हिस्से बराबर नहीं होते नीम : मिलिया अजेडिरक्टा (Melia azadirachta)

पश्चदंती (Runcinate) : इसके फलक में शीर्ष की ओर त्रिकोणाकार व आधार की ओर छोटी पालियाँ होती है जिनके दंत आधार की ओर लक्ष्य करते हैं. लोनिया (Launea)

वीणाकार (Lyrate) : इसमें शीर्षस्थ बड़ी पाली व नीचे की ओर दो पार्श्वी दो पालियाँ छोटी जिससे फलक वीणाकार आभासित होता है: मूली: रेफेनस सेटाइवस (Raphanus sativus)

पर्णफलक कोर (Leaf margins) :

पर्ण फलक के किनारों की संरचना के आधार पर ये निम्न प्रकार के हो सकते हैं :

अच्छिन्न (Entire) : किनारा चिकना हो कटा फटा न हो । उदाहरण : आम - मेन्जीफोरा

तंरगित (Wavy) : किनारे लहरदार - सराका इंडिका,

क्रकची (Serrate) : आरी के समान पतले दाँतों युक्त किनारे जो शिखर की ओर लक्ष्य करते जैसे - रोजा

द्विक्रकची (Biserrate) : जब बड़े दाँतों में छोटे आरी के समान दांते उपस्थित होते हैं : चिलबिल

अद्योमुख क्रकची : जब आरी के समान दांत आधार की ओर लक्ष्य करते हैं : कुमुदनी

कुण्ठदंती (Crenate) : जब किनारों के दांत गोल होते हैं । जैसे - ब्राही

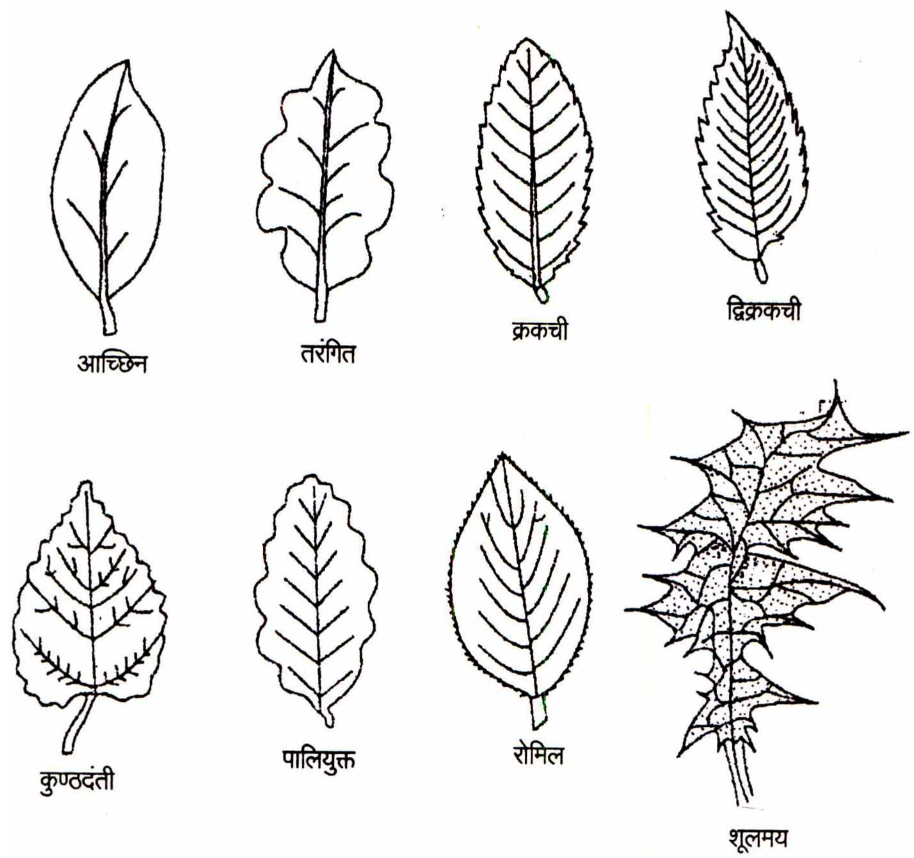

चित्र 8.7 पर्णफलक के तट

द्विकुण्ठदंती (Bicrenate) : बड़े गोल दांत के मध्य में छोटे गोलदांत उपस्थित होते हैं

शूलमय (Spiny) : जब किनारे कांटोयुक्त होते हैं जैसे - पीली कटेली : आर्जिमोन

पालियुक्त (lobed) : किनारों पर कटाव से पालियाँ बन जाती हैं जैसे - बैंगन सोलेनम मेलोजिना

रोमल (hairy) : जब किनारों पर छोटे रोम उपस्थित होते हैं जैसे - क्लीओम (Cleome)

पर्ण शीर्ष (Leaf apices) :

पर्ण के शीर्ष निम्न प्रकार के हो सकते हैं

निशिताग्र (Acute) : शिखाग्र नुकीला जैसे : सिट्रस

लम्बाग्र (Acuminate) : गोल व चौड़ा शिखाग्र _ बरगद

तीक्ष्णाग्री (Mucronate) : चौड़ा शिखाग्र मध्य में नुकीला जैसे : कैथेरेन्यस (Catharanthus)

कंटकाकार (Cuspidate or spiny) : शिखाग्र कठोर व कांटे के समान नुकीला जैसे : फीनिक्स (Phoenix)

प्रतानविक (Tendrillar) : शिखाग्र प्रतान में रूपान्तरित जैसे _ ग्लोरिओसा (Gloriosa)

तन्तुवत (Cirrhose) : शिखाग्र चौड़ा किन्तु मध्य में मुलायम तन्तु समान रचना जैसे - केला

खण्डित (Truncate) : शिखाग्र अचानक कटा हुआ सा प्रतीत होता है जैसे : पेरिस पोलिफिल्ला

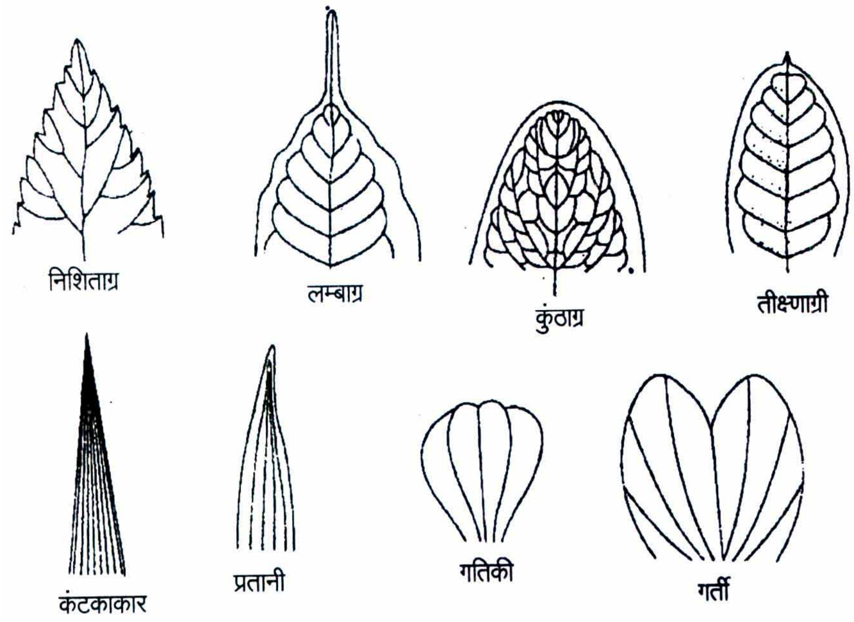

चित्र 8.8 : पर्ण के शिखाग्र

गतिकी (Retuse) : चौड़े व गोल कुण्ठाग्र शीर्ष पर जब एक गर्त पाया जाता है जैसे. ऑक्जेलिस (Oxalis)

गति (Emarginate) : जब गोल व चौड़े कुण्ठाग्र शीर्ष पर मध्य में बड़ी खाँच उपस्थित होती है। जैसे कचनार: बाहिनिया (Bauhinia)

कुंठाग्र (Obtuse) : पर्ण शीर्ष नुकीला नहीं होता जैसे टर्मिनेलिया

पर्णफलक सतह के प्रकार (Type of leaf surface)

पर्ण फलक की सतह निम्न प्रकार की हो सकती है :

अरोमिल (Glabrous) : चिकनी रोम रहित जैसे. टेबरेमोनटाना (Taebramontana)

नीलाभ (Glaucous) : सतह पर मोमी आवरण के कारण नीली हरी (Bluish green) एवं चमकदार सतह जैसे : केलोट्रोपिस (Catotropis)

खुरदरी (Rough or scabrous) : सतह छूने पर खुरदरी व कठोर अनुभव होती है जैसे : हैलिऐन्थस (Helianthus)

लसदार (Glutinous) : सतह स्पर्श करने पर चिपकने वाला जैसे : निकोटिआना (Nicotiana)

शूलमय (Spiny) : जब सतह पर कांटे पाये जाते हैं जैसे : सोलेनम मेलोजिना (Salanum melongena)

रोमिल (Hairy) : जब सतह पर रोम पाये जाते हैं जैसे ब्रैसिका (Brassica)

पर्ण की बनावट (Taxture of a leaf)

1. **शल्की** (scarious): पतली सूखी पर्णरहित जैसे: ऐस्पेरेगस (Asparagus)
2. **झिल्लीमय** (membranous): पतली शल्की किन्तु हरी होती है जैसे: ट्रिटिकम (Triticum)

3. **माँसल** (fleshy): मोटी व कोमल पर्ण जैसे: रिसिनस (Ricinus)
4. **गूदेदार** (Succulent): मोटी व रसयुक्त पर्ण जैसे: एलो (Aloe)
5. **चमड़िल** (leathery): मोटी व कड़ी पर्ण जैसे. केलोट्रोपिस (Calotropis)

फलक का शिरा विन्यास (Venation of lamina)

जालिकारूपी (Reticulate)
शिरायें पर्ण फलक के शाखित होने के बाद आपस में मिलकर जाल सा बना लेती हैं : उदाहरण आम

द्विबीज पत्री

- एक शिरीय एक मध्य प्रमुख शिरा उपस्थिति
- बहुशिरीय कई सारी मुख्य शिरायें उपस्थित

समान्तर (Parallel)
जब पर्णफलक की शिरायें एक-दूसरे के समान्तर पायी जाती है।

- एक शिरीय एक मुख्य शिरा
- बहुशिरीय कई मुख्य शिरायें
  - बहुशिरीय अपसारी (mullticostate divergent) जब मुख्य शिरायें एक दूसरे से अलग ऊपर की ओर बढ़ती हैं।
  - बहुशिरीय अभिसारी (multicostate convergent) जब प्रमुख शिरायें शिखाग्र पर एक दूसरे के नजदीक आ जाती है।

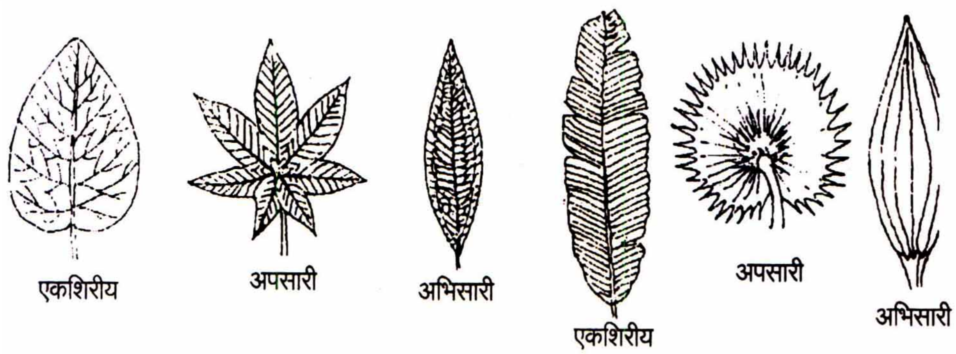

चित्र 8.9 : विभिन्न प्रकार के शिरा विन्यास

पर्ण विन्यास (Phyllotaxy)

स्तंभ पर पर्ण के लगने का क्रम या विन्यास कहलाता है । यह निम्न प्रकार का होता है

एकान्तर (Alternate) : इस प्रकार के पर्ण विन्यास में पर्व संधि पर बायें ओर पत्ती निकलती है तो अगली पर्व संधि पर वह दायें ओर निकलेगी हिबिस्कस रोजा साइनेसिस ।

विपरीत (Opposite) : जब एक पर्व संधि पर दो पर्ण आमने -सामने निकलते हैं तब वह विपरीत या सम्मुख कहलाते हैं जैसे : यूफोर्बिया हिर्टा (Euphorbia hirta) जब पर्णो के उत्तरोत्तर जोड़े एक दूसरे पर अध्यारोपित (superposed) दिखाई देते हैं तब यह अध्यारोपित

सम्मुख कहलाती है जैसे क्विसकेलिस (Quisqualis) जब पर्णो के उत्तरोत्तर जोड़े एक-दूसरे से 90^0 का समकोण बनाते हैं जिससे ऊपर से देखने पर पर्णो की चार उर्ध्वाधर कतारें दिखाई देती है तब वह सम्मुख क्रासित (opposite decussate) कहलाता है जैसे - केथैरेन्यस (Catharanthus)

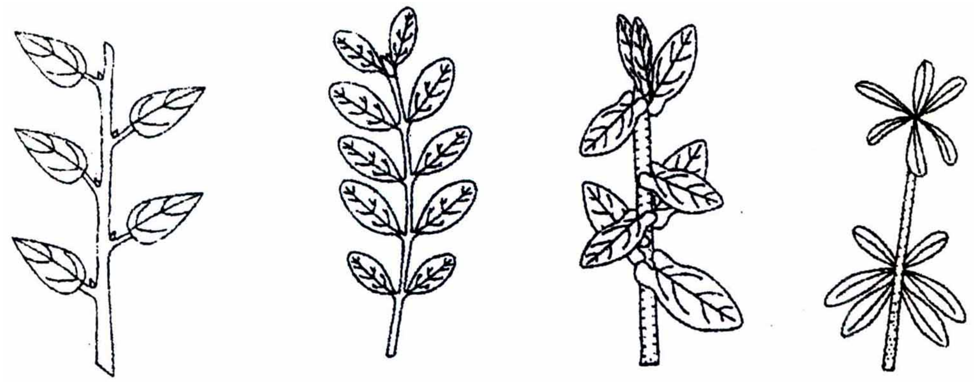

चित्र 8.10 : विभिन्न प्रकार के पर्ण विन्यास

चक्रकी (Verticillate) : जब दो से अधिक पर्ण स्व ही पर्ण संधि से निकलते हैं व चक्र में लगे रहते हैं जैसे : नीरियम (Nerium)

पर्ण मोजेक (Leaf mosaic) : कुछ पादपों में पत्तियों के वृन्त अलग-अलग लम्बाई के होते हैं। जिससे पर्ण एक दूसरे को ढक नहीं पाते किन्तु एक ही तल पर व्यवस्थित रहते हैं जैसे : ऑक्लजेलिस (Oxalis)

सरल व संयुक्त पर्ण (Simple and Compound leaves)

सरल पर्ण (Simple leaf)

जब पर्णफलक सम्पूर्ण हो तथा अगर उसमें कटाव भी हों तो वह फलक के टुकड़े -टुकड़े नहीं करें ऐसी पत्तियाँ सरल पर्ण कहलाती है । एकशिरीय व बहुशिरीय विन्यास वाले पत्तियों में अगर इनके किनारे तट से मध्य तक कुछ कटे हो तो व दीर्घतर पिच्छाकार तथा दीर्घ तथा दीर्घतम हस्ताकार कहलाते हैं ।

संयुक्त पर्ण (Compound leaf)

एकशिरीय सरल पर्ण में जब कटाव अधिक हो जाता है व पर्ण फलक के टुकड़े -टुकड़े हों व उनका आपस में कोई सकध ना रहता हो ऐसे में पर्ण को सयुक्त पिच्छाकार (compound pinnate) पर्ण कहते हैं । इसी प्रकार बहुशिरीय पर्णो में कटाव जब मध्य तक पहुँच कर पर्ण के कई टुकड़े कर देता है जिनका आपस में कोई सकध नहीं रहता तो ऐसे पर्ण हस्ताकार संयुक्त (Palmate compound) पर्ण कहलाते हैं । संयुक्त पिच्छाकार व हस्ताकार पर्ण निम्न प्रकार के हो सकते हैं।

एक पिच्छाकर : एक मध्य शिरा जो पिच्छाक्ष (rachis) कहलाती है उस पर फलक के टुकड़े - टुकड़े पर्णक (leaflets) लगे रहते हैं

समपिच्छकी (Paripinnate) जब एक पिच्छकी के सिरे के पर्णक युग्म में उपस्थित हो - कैसिआ फिस्टुला (Cassia fistula) अमलतास

विषम पिच्छकी (Imparipinnate) जब एकपिच्छकी के सिरे पर पर्णक युग्म में ना हो व शीर्ष पर एक ही पर्णक उपस्थित हो : नीम-मिलिया अजेडिरक्टा (Melia azadirachta)

द्विपिच्छकी (Bipinnate) : जब पर्णक फिर से कट कर और अधिक छोटे पर्णकों या पिन्यूल (pinnules) को बनाते है : अकेशिया(Acacia)

त्रिपिच्छकी. जब द्विपिच्छकी के भी पर्णक या पिन्यूलस भी कटे हुये हो : उदाहरण सहजन : मोरिंगा (Moringa)

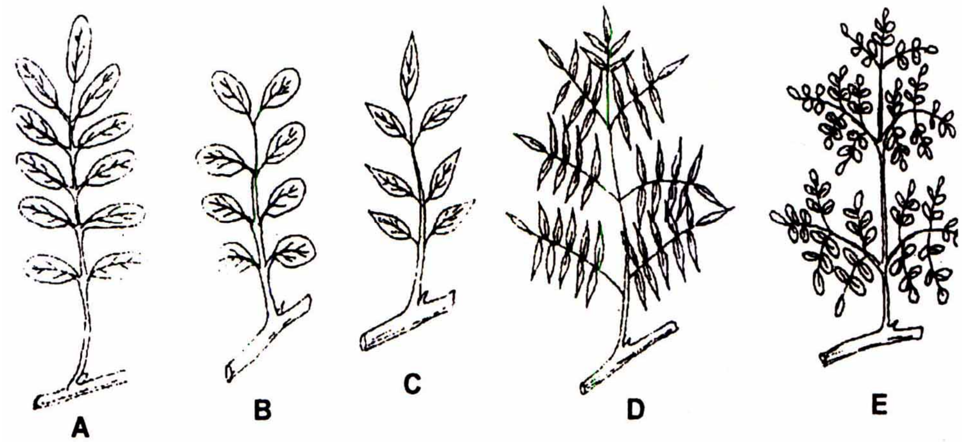

चित्र 8.11 : पिच्छाकार संयुक्त पर्ण - A. एक पिच्छकी B. समपिच्छकी C. विषमपिच्छकी D. द्विपिच्छकी E. त्रिपिच्छकी

बहुपिच्छकी (Decompound) : इस प्रकार की पत्ती में अनेक बार कटाव हो जाते हैं : कोरिएनड्रम (Coriandrum)

हस्ताकार कटाव के प्रकार एवं हस्ताकार संयुक्त पर्ण

(Palmate types and incision, palmate compound leaves)

दीर्ण हस्ताकार (Palmatified) : इसमें कटाव तट से मध्य शिरा तक आधे से कम दूरी का

दीर्णतर हस्ताकार (Palmatipartite) : इसमें कटाव तट से मध्य शिरा तक आधी दूरी का

दीर्णतम हस्ताकार (Palmatisect) : इसमें कटाव तट से मध्य शिरा तक आधी दूरी से अधिक का हो ।

हस्ताकार संयुक्त पर्ण (Palmate compound leaf) : जब कटाव तट से पर्णफलक के मध्य होकर उसे खंडों में बाँट देता है ।

एकपर्णी (Unifoliate) : सामान्यतः त्रिपर्णी संयुक्त पर्ण के केवल शीर्षस्थ पत्रक को छोड़कर सभी ह्रासित अतः रष्क पर्णी का आभास देता है । वृन्त सपक्ष हो सकता है जैसे : नींबू : सिट्रस

द्विपर्णी (Bifoliate) : जब केवल दो पर्णक उपस्थित हों : रेगनेलिडयम (Regnellidium)

त्रिपर्णी (Trifoliate) : इसमें केवल तीन पत्रक उपस्थित होते हैं : बेल, खट्टी बूटी,

चतुपर्णी (Quadrifoliate) : जब चार पत्रक उपस्थित होते हैं : मार्सीलिया (Marsilea)

बहुपर्णी (Multifoliate or digitate) : जब चार से अधिक पत्रक उपस्थित होते हैं? बोम्बेक्स, (Boxbax) एल्स्टोनिआ (Alstonia)

पर्ण के रूपान्तरण एवं कार्य (Modification of Lamina and its Functions)

पर्ण के रूपान्तरण में सम्पूर्ण पत्ती अथवा संयुक्त पर्ण के पर्णक विभिन्न रूपों में रूपान्तरित हो जाते हैं

(i) **पर्ण प्रतान** (Leaf tendril): जब सम्पूर्ण पत्ती तन्तुवत संरचनाओं में आरोहण के लिए बदल जाती है: लैथायरस (Lathyrus)

(ii) **पत्रक प्रतान** (Leaflet tendril): जब एक या अधिक पत्रक प्रतानों में आरोहण के लिए रूपान्तरित हो जाते हैं: पाइसम (Pisum)

(iii) **पर्ण शूल** (Leaf spine): जब पत्ती सुरक्षा या आरोहण के लिए कांटों में रूपान्तरित हो जाती है: जिजिफस (Zizyphus)

(iv) **पर्ण शल्क** (Leaf scales): जब पर्ण अल्पजीवी, पतले शल्की व छोटे हो जाते हैं: रसकस

(v) **पर्णाभवृन्त** (Phyllode): जब पर्णवृन्त चपटा हरा व पर्ण समान होकर प्रकाश संश्लेषण का कार्य करने लगता है: आस्ट्रेलियन अकेशिया (Australian acacia)

(vi) **घट (Pitcher)**: जब सम्पूर्ण पत्ती या उसका कुछ भाग कीटों को पकड़ने के लिए घट में रूपान्तरित हो जाता है: नेपेन्थीस (Nepenthes)

(vii) **थैली (Bladder)**: जब सम्पूर्ण पत्ती या उसका कुछ भाग कीटों को पकड़ने के लिए थैली या ब्लैडर में रूपान्तरित हो जाता है: यूट्रीक्यूलेरिया (Utricularia)

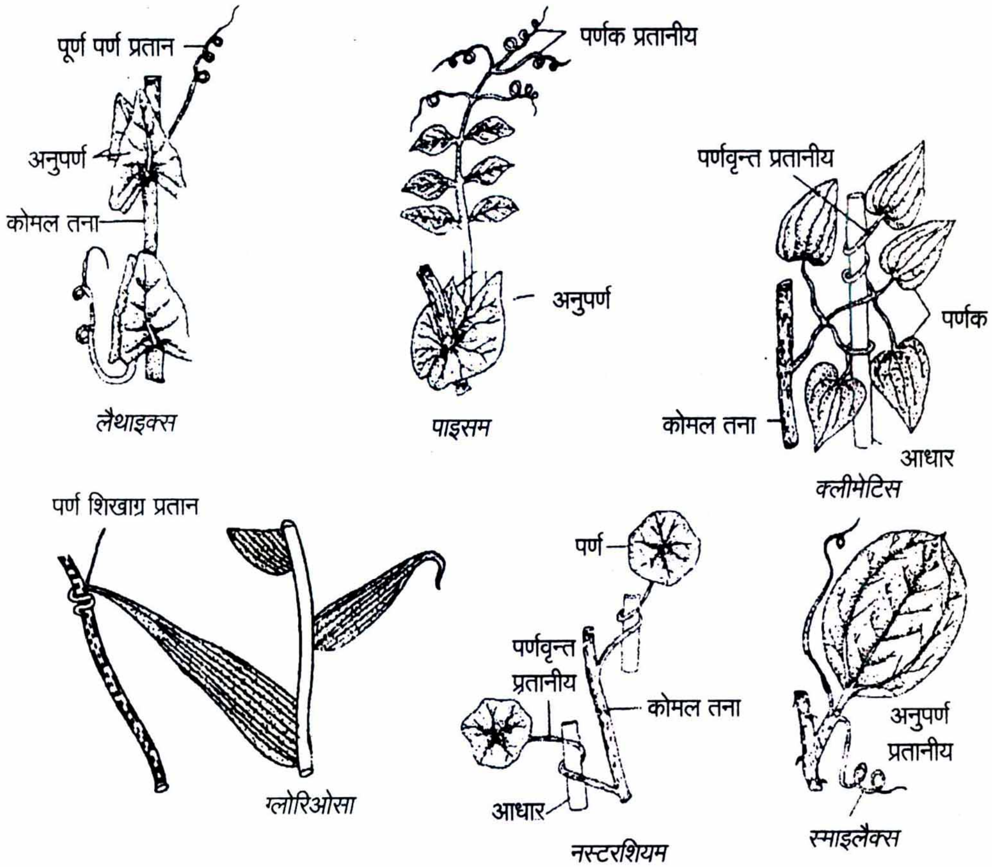

चित्र 8.12 : पर्ण के विभिन्न रूपान्तरण पत्ती : आकारिकी, उत्पत्ति एवं विकास

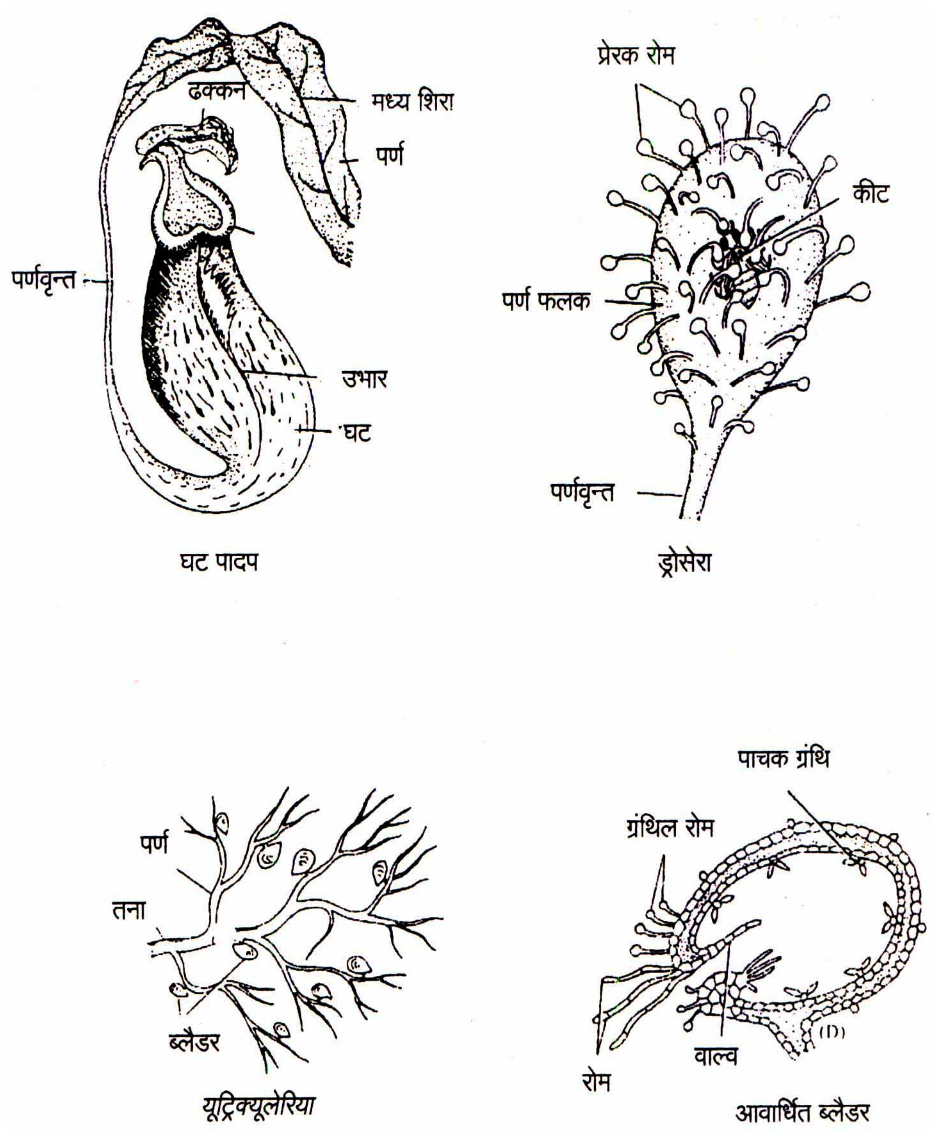

चित्र 8.13 : कटि भक्षी पादप

बोध प्रश्न - 2

1. मुक्त पार्श्विक अनुपर्ण किस कुल में पाये जाते हैं?
....
....
2. ग्लोरिओसा पादप के पर्ण में शिखाग्र कैसा होता है?
....
....
3. पर्ण शूल हो क्या कार्य होते हैं?
....
....

4.	पर्णभवृंत्त का क्या कार्य होता है?	
	....	
	....	
5.	घट पादप का एक उदाहरण दीजिये ।	
	....	
	....	

8.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको पत्ती की उत्पत्ति एवं विकास कैसे होता है यह ज्ञात हो गया होगा । इसके साथ ही साथ एक बार पर्ण विकसित हो जाती है तब आनुवंशिक व वातावरणीय कारणों से उसके आमाप व आकृति में विविधताये आ जाती है तथा उनके पर्णाधार, पर्णफलक, अनुपर्ण की विभिन्नतायें देखने को मिलती है । विभिन्न परिस्थितियों का सामना करने के लिए पर्ण में कई रूपांतरण भी हो जाते हैं यह भी आपको ज्ञात हो गया होगा ।

8.5 शब्दावली

बीज पत्र : भ्रूण में बनने वाली नये पौधे की प्रथम पंक्तियाँ होती है ।

अनुपर्ण : पर्णवृन्त पर पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार के कायिक उपांग या अभिवृद्धियां ।

अरोमिल : चिकनी रोम रहित पर्णफलक सतह ।

पर्ण विन्यास : स्तम्भ पर पर्ण के लगने का क्रम या विन्यास ।

समपिच्छकी पर्ण : जब एक पिच्छकी के सिरे के पर्णक युग्म में उपस्थित हों ।

8.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Cutter, E.G, 1969 Part I cells and tissues. Edward Arnold London.
2. Esau, K. 1997. Anatomy of seed plant. 2nd edition; John Wiley & sons; New York.
3. पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन; त्रिवेदी, शर्मा, शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर
4. आवृतबीजी की आकारिकी एवं आर्थिक वनस्पति विज्ञान; त्यागी, सक्सैना; कॉलेज बुक हाऊस, जयपुर ।
5. बीजी पादपों की विविधता रण वर्गिकी; त्यागी सक्सैना; कॉलेज बुक हाऊस, जयपुर

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. पादपों में तने पर पत्ती पर्वसंधि पर स्थित होती हे?
2. पत्ती बर्हिजात अतिवृद्धि होती है ।
3. पत्ती की सीमित वृद्धि होती है ।
4. सामान्य हरी पर्ण प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती है ।

5. अधोपर्ण कोमल पादप भागों की रक्षा व खाद्य संचय का कार्य करती है ।
6. आरबर के अनुसार सभी पर्ण पर्णोम कहलाते हैं ।

बोध प्रश्न - 2

1. मुक्त पार्श्विक अनुपर्ण कुल मालवेसी में पाये जाते हैं ।
2. ग्लोरिओसा पादप के पर्ण में शिखाग्र प्रतानविक होता है ।
3. पर्ण शूल पादप की सुरक्षा करता है व आवश्यकता होने पर आरोहण में मदद करता है ।
4. पर्णाभवृन्त प्रकाश संश्लेषण करता है ।
5. घट पादप का उदाहरण नेपेन्थीस है ।

8.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. पर्ण की उत्पत्ति रख विकास पर एक लेख लिखिये ।
2. पर्ण में उपस्थित अनुपर्ण पर टिप्पणी लिखिये ।
3. पर्णाधार पर टिप्पणी लिखिये ।
4. पर्ण के रूपांतरण पर टिप्पणी लिखिये ।
5. पर्ण के वृन्त पर टिप्पणी लिखिये ।
6. पर्णफलक के शिरा विन्यास पर टिप्पणी लिखिये ।

इकाई 9 : पत्ती : आन्तरिक संरचना

(Leaf: Internal Structure)

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 पत्ती की आन्तरिक संरचना पृष्ठाधारी व समव्यासी पत्तियाँ

9.3 प्रकाश संश्लेषण व वाष्पोत्सर्जन के लिये अनुकूलन

9.4 रन्ध्र संरचना, प्रकार एवं रन्ध्राक

9.5 सारांश

9.6 शब्दावली

9.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.0 उद्देश्य

यह इकाई पढ़ने के पश्चात् आपको पर्ण की आतंरिक संरचना, पृष्ठाधारी व समव्यासी पर्ण में अन्तर पता चलेगा । इसके साथ ही साथ आपको यह भी ज्ञात होगा कि प्रकाश संश्लेषण एवं वाष्पोत्सर्जन के लिए विभिन्न पत्तियों में क्या -क्या अनुकूलन पाये जाते हैं । इनके रन्ध्र किस प्रकार के व कहाँ स्थित होते हैं तथा रन्ध्रों के क्या कार्य होते हैं ।

9.1 प्रस्तावना

पत्ती तने का एक महत्वपूर्ण उपांग होती है । सामान्य पत्तियाँ हरी, चपटी व पतली होती हैं तथा प्रकाश संश्लेषण व वाष्पोत्सर्जन का कार्य करती हैं । अन्य अंगों के समान पत्तियों में भी अधिचर्म ऊतक तन्त्र, भरण ऊतक तन्त्र तथा संवहन ऊतक तन्त्र पाया जाता है । पत्तियों की दो स्पष्ट सतहें होती हैं ऊपरी अध्यक्ष, निचली अपाक्ष । पत्तियों पर पड़ते सूर्य के प्रकाश के आधार पर इन्हें पृष्ठाधारी व समद्विपार्श्व पत्तियों में विभक्त किया गया है ।

9.2 पत्ती की आंतरिक संरचना, पृष्ठाधारी व समव्यासी पत्तियों

एक प्रारूपिक पृष्ठाधारी द्विबीजपत्री (आम) की पत्ती की आंतरिक संरचना

बाह्यत्वचा (Epidermis)

पर्ण पटल दोनों ओर ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा से घिरा होता है । यह कोशिकायें लगभग बेलनाकार व संहतरूप से सटी रहती हैं । इनकी कोशिकाओं के मध्य रन्ध्र उपस्थित होते हैं जो ऊपरी सतह पर संख्या में कम व निचली सतह पर अधिक होते हैं । बाह्यत्वचा के बाहर क्यूटिकल उपस्थित होती है तथा रोम भी पाये जा सकते हैं ।

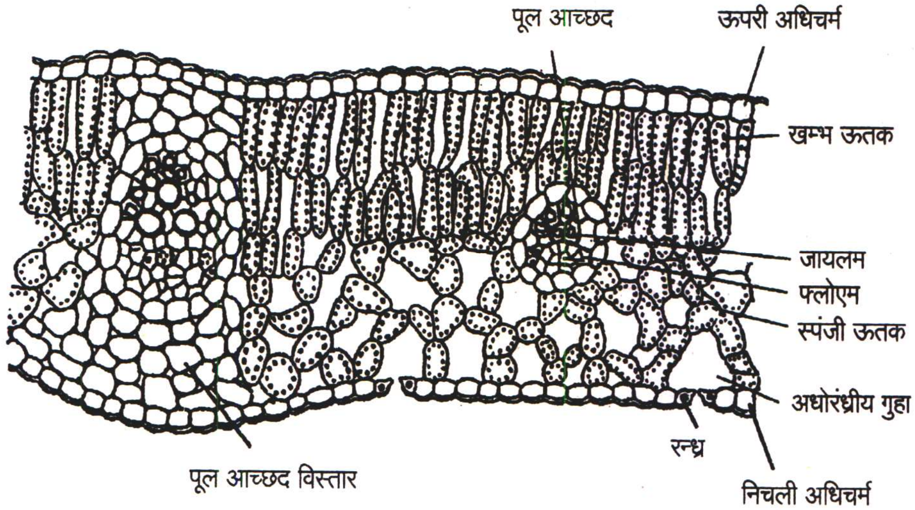

चित्र 9.1 : आम की पत्ती का अनुप्रस्थ काट

पर्णमध्योतक (Mesophyll) :

पटल की दोनों बाह्यत्वचा के मध्य पर्णमध्योतक अर्थात् भरण ऊतक होता है तथा यह खम्भ व स्पंजी ऊतक में विभेदित रहता है । इस प्रकार की पर्ण में प्रकाश की किरणें ऊपरी सतह पर अधिक पड़ती हैं अत: खम्भ ऊतक ऊपरी बाह्यत्वचा के नीचे पाया जाता है रख इसकी कोशिकायें बाह्यत्वचा के समकोण पर स्थित स्तम्भाकार (columnar) बिना अन्तरा कोशिकीय स्थान युक्त होती हैं तथा इनमें अधिक मात्रा में हरित लवक होता है । खम्भ ऊतक की एक या अधिक सतहें हो सकती हैं तथा यह पत्ती पर पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा पर निर्भर करती हैं ।

निचली बाह्यत्वचा के अंदर स्पंजी ऊतक स्थित होता है । इसकी कोशिकायें गोलाकार, अनियमित आकार अथवा अंडाकार होती हैं । इनके मध्य वायु अवकाश अधिक मात्रा में उपस्थित होते हैं । इन बड़े अन्तराकोशिकीय वायु स्थानों द्वारा गैसीय विनिमय आसानी से हो जाता है । स्पंजी ऊतक में हरित ऊतक कम मात्रा में पाया जाता है ।

इन दोनों खम्भ व स्पंजी ऊतक के अलावा पर्णमध्योतक में दृढ़ऊतक, मृदुतक व स्थूलकोण ऊतक भी पाये जा सकते हैं । इनमें हरित ऊतक उपस्थित नहीं होता है । यह ऊतक अधिकतर शिराओं व मध्य शिरा के पास स्थित होता है ।

संवहन पूल (Vascular bundle)

संवहन पूल के चारों ओर एक आच्छद पाया जाता है अत: यह पर्णमध्योतक के सम्पर्क में नहीं होते हैं । पर्ण के संवहन पूल संयुक्त, सम्पार्श्विक व बंद होते हैं । जायलम ऊपरी बाह्यत्वचा के नीचे व फ्लोएम निचली बाह्यत्वचा की ओर उपस्थित होता है । जायलम में मृदुतक, वाहिका, वाहिनिका तथा फ्लोएम में फ्लोएम मृदुतक, चालनी नलिका एवं सहचर कोशिकायें उपस्थित होती हैं । शिराओं के अंत में वाहिकायें नहीं पायी जाती है तथा केवल वाहिनिका उपस्थित होती है । बहुत छोटे बंडलों में केवल एक वाहिनिका व स्व फ्लोएम मृदुतक कोशिका पायी जाती है ।

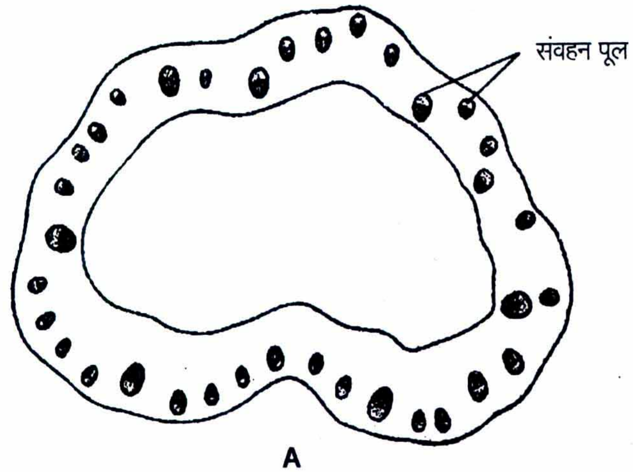

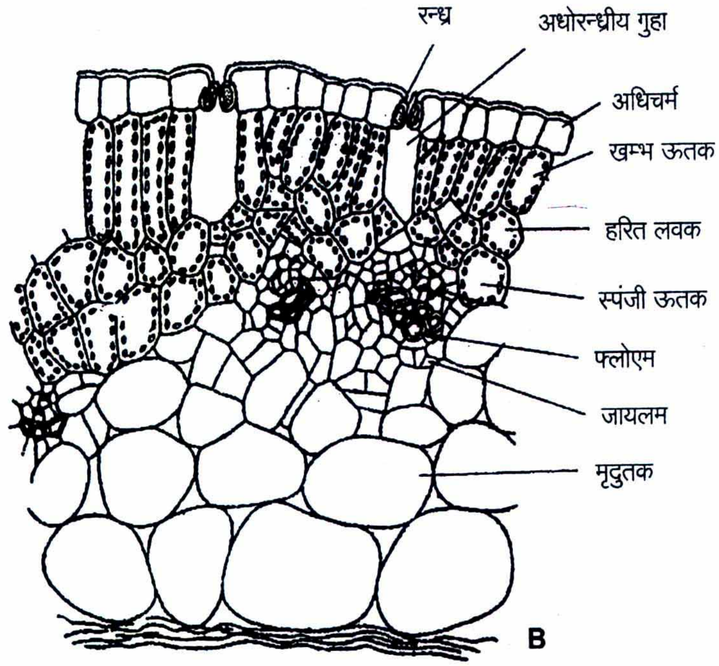

चित्र 9.2 : प्याज की पत्ती (A) आरेखीय (B) कोशिकीय भाग

एकपृष्ठीय पत्ती (Unifacial leaf)

प्याज की पत्ती एकपृष्ठीय या संकेन्द्रीय पर्ण का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है । पर्ण का अनुप्रस्थ काट लेने पर इसमें ऊपरी पर्तो का विभेदन स्पष्ट रूप से उपस्थित नहीं होता है किन्तु अधिचर्मीय, भरण तथा संवहन ऊतक तंत्र पूर्ण रूप से विभेदित अवस्था में पाये जाते हैं । प्याज की पर्ण का अनुप्रस्थ काट लेने पर निम्न कोशिकीय व्यवस्था दिखाई देती है :

बाह्यत्वचा (Epidermis) : इसकी एक सतह होती है जिसमें छोटी व गोलाकार कोशिकायें संहत रूप से व्यवस्थित रहती हैं । इनमें गर्तो में रन्ध्र उपस्थित होते हैं । क्यूटिकल भी बाह्यत्वचा के ऊपर पायी जाती है ।

पर्णमध्योतक (Mesophyll) : यह खम्भ व स्पंजी ऊतक में विभेदित होता है । खम्भ ऊतक दो पर्ती होता है । इसमें अन्तराकोशिकीय वायुस्थान अनुपस्थित होते हैं । इनमें हरित लवक काफी मात्रा में पाया जाता है ।

स्पंजी ऊतक खम्भ ऊतक के नीचे पाया जाता है । इसकी कोशिकाओं में मध्य अन्तराकोशिकीय वायुस्थान उपस्थित होते हैं । इनमें हरित ऊतक कम मात्रा में उपस्थित होता है । स्पंजी ऊतक के बाद ढोलकाकार कोशिकाओं की एक पर्त उपस्थित होती है । यह हरित लवक विहीन होती है अर्थात् उसकी सीमा रेखा निर्धारित करती हे ।

संवहन पूल (Vascular bundle) : यह संयुक्त, संपार्श्विक बंद (conjoint, collateral, closed) होते हैं । यह स्पंजी ऊतक में स्थित होते हैं । प्रत्येक संवहन पूल एक मृदुतकीय पूलाच्छद से घिरा होता है । फ्लोएम परिधीय व जायलम केन्द्रीय गुहिका की ओर स्थित होता है।

समद्विपार्श्व पत्तियाँ (Isobilateral leaves)

इस प्रकार की पत्तियों एक बीजपत्री पादपों का विशिष्ट लक्षण होती है । इनमें रन्ध्र दोनों सतहों पर लगभग समान मात्रा में पाये जाते हैं । पर्णमध्योतक खम्भ व स्पंजी ऊतक में विभेदित नहीं होता तथा पूर्ण भरण ऊतक स्पंजी मृदुतक कोशिकाओं से निर्मित होता है । किसी किसी पत्ती में जब पर्णमध्योतक खम्भ व स्पंजी ऊतक में विभेदित होता है तब खम्भ ऊतक ऊपरी तथा निचली दोनों बाह्यत्वचा के अंदर पाया जाता है । उदाहरण: अगेव अमेरिकाना ।

एक प्रारूपिक समद्विपार्श्व (बाँस) की पत्ती की आंतरिक संरचना

बह्यत्वचा (Epidermis) : ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा एक सतह की ढोलकाकार संहत रूप से व्यविस्थत तथा क्यूटिकल से निक्षेपित कोशिकाओं से निर्मित होती है । इनकी कोशिकाओं के मध्य कहीं कहीं कुछ बड़ी आदर्धत्वक अथवा प्रेरक (bullifrom or motor) कोशिकायें उपस्थित रहती है । यह पत्ती की लम्बाई के साथ -साथ कतारों में व्यवस्थित रहती हैं । अनुकूल परिस्थितियों में इनमें जल उपस्थित रहता है अत: यह स्फीत दशा प्रदर्शित करती है जब वाष्पोत्सर्जन की दर अधिक होती है तब इनका जल वाष्पित हो जाता है तथा पत्ती अंदर की ओर मुड़ जाती है व वाष्पोत्सर्जन की दर कम हो जाती है । प्रेरक कोशिकाओं के दोनों ओर कभी कभी रोम भी उपस्थित हो सकते हैं । पत्तियों में रन्ध्र ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा दोनों सिरों पर उपस्थित होते हैं । इसमें दृढ़ोतकीय कोशिकायें उपस्थित होती हैं जो ऊपरी व निचली बाह्यत्वचा तक फैली रहती है व पर्ण को यांत्रिक बल प्रदान करने का कार्य करती हैं ।

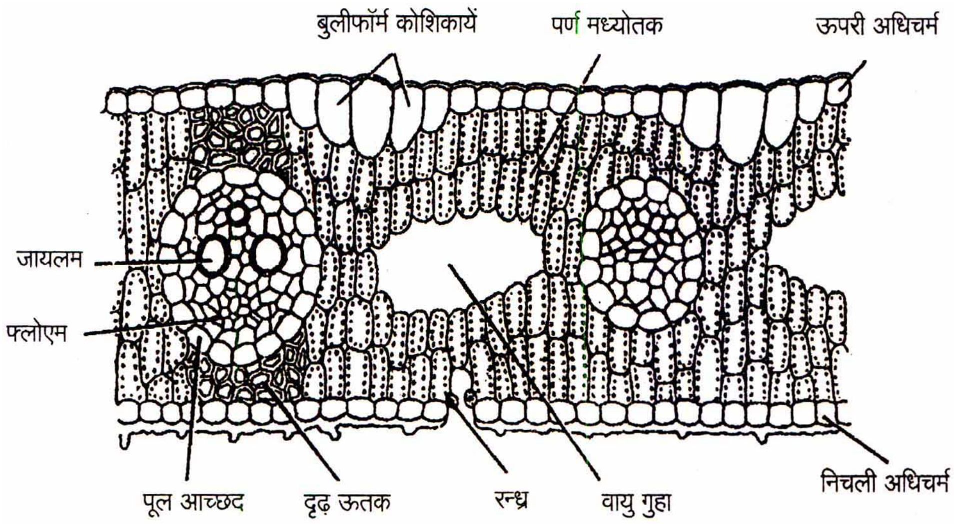

चित्र 9.3 : बाँस की पर्ण का अनुप्रस्थ काट

एकबीजपत्री तथा द्विबीजपत्री पर्ण में अन्तर

एकबीजपत्री पर्ण	**द्विबीजपत्री पर्ण**
1. यह समद्विपार्श्व होती है ।	यह द्विपृष्ठी होती है ।
2. प्रायः पर्ण मध्योतक विभेदित नहीं होता ।	यह खम्भ व स्पंजी ऊतक में विभेदित होता है।
3. स्पंजी ऊतक में अन्तरा कोशिकीय वायुस्थान छोटे होते हैं ।	इसमें वायुस्थान बड़े होते हैं ।
4. दोनों बाह्यत्वचा पर रन्ध्र समान मात्रा में होते हैं।	ऊपर की ओर कम व निचली बाह्यत्वचा पर अधिक पाये जाते हैं ।
5. ऊपरी बाह्यत्वचा पर प्रेरक कोशिकायें पायी जाती हैं ।	प्रेरक कोशिकायें अनुपस्थित होती हैं ।
6. क्यूटिकल दोनों सतहों पर समान होती है ।	यह ऊपरी बाह्यत्वचा पर कुछ मोटी होती है

बोध प्रश्न - 1

1. पर्ण के क्या कार्य होते हैं?

....

....

2. पत्तियों के ऊतक तन्त्रों के नाम लिखिये?

....

....

3. पृष्ठाधारी पर्ण में अधिक रन्ध्र किस सतह पर होते हैं?

....

....

4. बाँस की पर्ण में प्रेरक कोशिकायें किस सतह पर होती है?

....

....

9.4 प्रकाश संश्लेषण के लिए अनुकूलन

प्रकाश संश्लेषण के लिये अनुकूलन

पत्तियाँ प्रकाश, जल, CO_2 व क्लोरोफिल की उपस्थिति में मंड का निर्माण करती है अत: प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को दक्षता से करने हेतु पत्तियों में कई प्रकार के अनुकूलन दिखाई देते हैं । सूर्य के प्रकाश में उपस्थित 400 से 700 तरंग दैर्ध्य का प्रकाश ही पादपों द्वारा प्रकाश संश्लेषण हेतु प्रयोग किया जाता है । यह प्रकाश संश्लेषणात्मक सक्रिय विकिरण (photosynthetically active Radiation PAR) कहलाता है । पादप में पत्तियाँ सर्वाधिक मात्रा में फोटोरिसेप्शन क्रिया द्वारा प्रकाश ग्रहण करती है तथा यह क्रिया तभी संभव होती है जब पर्णफलक प्रकाश की किरणों के समकोण पर स्थित होता है । विभिन्न पादपों की पत्तियाँ अपनी स्थिति प्रकाश की दिशा में अनुरूप बदलती रहती हैं । लेग्यूमिनोसी कुल के पादपों की पत्तियाँ प्रकाश के अनुरूप अपना अभिविन्यास (orientation) भी बदलने की क्षमता रखती है क्योंकि इनके पर्णाधार में कुछ मोटर कोशिकायें पायी जाती है जो इस कार्य में इन्हें मदद करती हैं ।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह सिद्ध होता है कि स्वयंपोषी (autotrophic) पादपों की पत्तियाँ प्रकाश संश्लेषण की दर अधिकतम रखने हेतु अधिकतम प्रकाश में रहने की क्षमता रखती हैं ।

उष्ण कटिबंधीय तथा उपउष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगने वाले पादपों की पत्तियों में विशेष प्रकार की आतंरिक संरचना क्रेंज शारीरिकी उपस्थित होती है । जिन पादपों में इस प्रकार की शारीरिकी पायी जाती है वह उच्च ताप 30^0Cए से 45^0C तक पर आसानी से अपना जीवन यापन कर सकते हैं व उन्हें C_4 पादप कहते हैं । इन पादपों में उच्च तापक्रम पर जब रन्ध्र कुछ बद होने लगते हैं तब भी CO_2 का उपयोग प्रकाश संश्लेषण के लिये करने की क्षमता रखते हैं क्योंकि इनके पर्ण मध्योतक में उपस्थित PEP कार्बोक्सिलेसिस में CO_2 ग्रहण करने की क्षमता काफी ज्यादा पायी जाती है । उपरोक्त तथ्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पत्ती की आतंरिक संरचना भी अधिकतम प्रकाश का उपयोग करने हेतु उपयुक्त संरचनात्मक बदलाव करने की क्षमता रखती है।

वाष्पोत्सर्जन के लिये अनुकूलन

शुष्क आवासों पर उगने वाले पादपों को ही मुख्यतः वाष्पोत्सर्जन के लिये अनुकूलित होना आवश्यक होता है क्योंकि यह पादप जलाभाव की स्थिति में जीवनयापन करते हैं । इन पादपों की जलाभाव की दो स्थितियाँ स्पष्ट है (i) भौतिक दृष्टि से जल का अभाव, (ii) कार्यिकीय दृष्टि से जल का अभाव । उपरोक्त दोनों स्थितियों के पादपों की पत्तियों में कई अनुकूलन पाये जाते हैं जिससे वह दक्षतापूर्ण वाष्पोत्सर्जन कम कर सकती है ।

1. **आकारिकीय अनुकूलन** : जलाभाव वाले स्थलों पर रहने वाले पादप मरुदभिदी पौधे कहलाते

हैं । इनमें उपस्थित पत्तियाँ शल्क समान हो सकती हैं जैसे - कैजूराइना या फिर वह कांटों में रूपांतरित हो जाती हैं जैसे - नागफनी : ऑपन्शिया । कुछ पादपों में जैसे ऑनेलियन अकेशियाव पार्किन्सोनिया में पर्णक छोटे होते हैं या विलुप्त हो जाते हैं, पर्णवृन्त व रेकिस चपटे, हरे पर्ण समान हो जाते हैं तथा प्रकाश संश्लेषण का कार्य करते हैं तथा यह पर्णाभ वृन्त कहलाते हैं । पाइनस में पत्ती सूई समान हो जाती है जिससे उसका क्षेत्रफल कम होने से वाष्पोत्सर्जन की दर भी कम हो जाती है ।

फाइकस्पी (पीपल व बरगद) की पर्ण की सतह पर क्यूटिन व मोम की पर्त का निक्षेपण हो जाता है जिससे वह चमकीली हो जाती है तथा अधिकांश प्रकाश की मात्रा परावर्तित हो जाती है जिससे पर्ण का तापमान कम रहता है एवं वाष्पोत्सर्जन की दर भी घट जाती है । कुछ पौधे जैसे- कैलोट्रोपिस हीलियोट्रोपियम में पर्ण सतह रोमों से आच्छादित रहती है जिससे वाष्पोत्सर्जन की दर कम रहती है । कुछ पादपों की पत्तियों की सतह चिपचिपी (pubescent) व रोमिल होती है जो वाष्पोत्सर्जन को कम करती है ।

पोऐसी कुल के पादपों जैसे एमोफिल्ला में ऊपरी अधिचर्म पर उपस्थित मोटर कोशिकाओं उच्च ताप की अवस्था में पत्तियों को भीतर की ओर मोड़ देती है जिससे वाष्पोत्सर्जन की दर में कमी आ जाती है ।

2. **संरचनात्मक अनुकूलन**: वाष्पोत्सर्जन की दर कम करने के लिए पत्तियों में विभिन्न प्रकार के संरचनात्मक अनुकूलन विकसित हो -जाते हैं । इनकी बाह्यत्वचा पर मोटी क्यूटिकल की पर्त जम जाती है तथा बाह्यत्वचा बहुस्तरीय हो जाती है । निचली अधिचर्म पर रन्ध्र धँसी अवस्था में पाये जाते हैं एवं यह अधोरन्धीय गुहा में खुलते हैं जिसमें काफी संख्या में रोम उपस्थित होते हैं उदाहरण - नीरियम ।

कुछ पत्तियों में खम्भ ऊतक स्पंजी ऊतक की तुलना में अधिक विकसित होता है । इनमें कोशिकायें लिग्निन युक्त होती है । संवहन पुल सुविकसित एवं दृढ़ोतकीय ऊतक की मात्रा अधिक होती है । कुछ पत्तियों में जलाभाव में स्फीति कम हो जाती है जिससे पर्ण सिकुड़ कर छोटी हो जाती है इससे इनका पृष्ठीय क्षेत्रफल कम हो जाता है व इस प्रकार यह वाष्पोत्सर्जन की दर को कम कर लेती है ।

वाष्पोत्सर्जन कम करने के लिए कुछ मरूभूमि में उगने वाली घासों में गरमी की ऋतु में रन्ध्र स्थाई रूप से बंद हो जाते हैं क्योंकि इनकी द्वार कोशिकाओं में अत्यधिक स्थूलन हो जाता है । कुछ पौधे जैसे रूमेक्स में संवहन पूल के नजदीक की कोशिकायें तेल या रेजिन पदार्थो का स्रावण करती है । यूफोर्बिया में रबड़क्षीर ऊतकों द्वारा रबड़क्षीर (latex) का स्रावण होता है जिससे वाष्पोत्सर्जन की दर कम हो जाती है ।

लवणोभिद् पादपों में पर्ण कोशिकायें लवण क्रिस्टल के रूप में संचित कर लेती है । इनकी पत्तियाँ माँसल व गूद्देदार होती है जो जल संचय कर सकती है । कुछ पर्ण लवण स्रावित करने के लिये लवण ग्रंथियाँ निर्मित कर लेते हैं इस प्रकार यh जलाभाव से बच जाते हैं ।

9.4 रन्ध्र संरचना, प्रकार एवं रन्ध्राव

रन्ध्र सूक्ष्म छिद्र के समान होते हैं जो पादप के वायवीय भागों पर पाये जाते हैं किन्तु पर्ण पर इनकी संख्या सर्वाधिक होती हैं । मूल व भूमिगत भागों में यह नहीं पाये जाते ।

रन्ध्र की संरचना (Structure of Stomata)

प्रत्येक रन्ध्र में दो वृक्काकार द्वार कोशिकायें होती हैं जो एक दूसरे से अवतल-तल के सिरों से सयुक्त रहती हैं व रन्ध्र का छिद्र इन के मध्य निर्मित होता है । द्वार कोशिकाओं पर छिद्र के समीपस्थ सिरे मोटी भित्ति युक्त होते हैं जबकि दूरस्थ सिरे पतली भित्ति द्वारा निर्मित होते हैं। **जेम्स इ. प्लास व हिल्टन** (James E. Pallas Hilton,1997) ने निकोटिआना अबेकम व विसिया फाबा के द्वार कोशिकायें की संरचना का अध्ययन किया व पाया कि इनमें अनेक माइट्रोकॉन्ड्रिया, एण्डोप्लाजमिक रेटीकुलम, परऑक्सीसोम तथा अपरिपक्वावस्था में अनेक राइबोसोम भी उपस्थित होते हैं । द्वार कोशिकायें अपने चारों ओर उपस्थित बाह्यत्वचा की कोशिकाओं से गहरे जीवद्रव्य, केन्द्रक व हरितलवक के कारण अलग दिखाई पड़ती हैं व इनके चारों ओर कुछ कोशिकायें उपस्थित होती हैं जो सहायक कोशिकायें कहलाती हैं । रन्ध्रों के नीचे एक गुहिका उपस्थित हो सकती है जो अधोरूध्रीय गुहा (substomatal Cavity) कहलाती है । इस गुहिका के द्वारा पर्ण के आन्तरिक ऊतक का बाहर के वातावरण से आसानी से गैसीय आदान -प्रदान होता रहता है । **डॉ. सेन** (सेन,1975) के मतानुसार सहायक कोशिकायें रन्ध्रों के खुलने व बद होने में सहयोग प्रदान करती है ।

सामान्यत : रन्ध्र दिन में खुले रहते हैं व रात्रि में बद हो जाते हैं तथा इस कार्य में द्वार कोशिकाओं का असमान स्थूलन तथा स्फीत दाब तथा अन्य कई कारक उत्तरदायी होते हैं । घास अथवा एक बीजपत्री पादपों में रन्ध्र कोशिकायें डम्बल आकार की होती हैं तथा इनका मध्य भाग सीधा व स्थूल तथा किनारे फूल हुये और पतले होते हैं । यह ग्रेमीनेशियस प्रकार के रन्ध्र कहलाते हैं ।

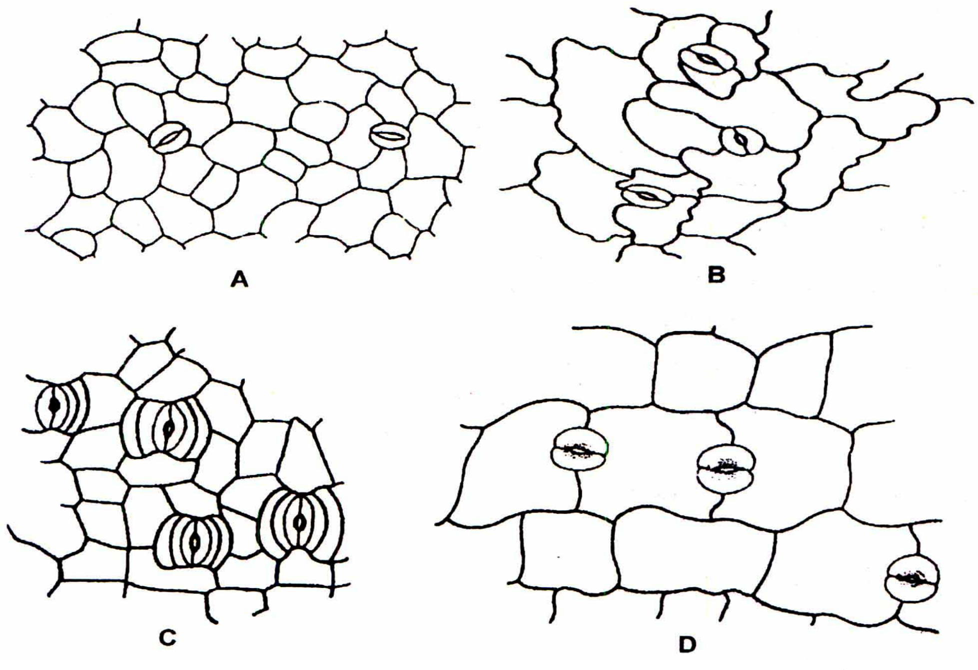

चित्र 9.4 : (A) एनोमोसिटिक (पिलेरगोनियम), (B) एनआइसोसिटिका (ब्रैसिका), (C) पेरासिटिक (अकेशिया), (D) डायसिटिक (डायेन्थिस) प्रकार के रन्ध्र

मैटकॉफ एवं चॉक (Metcalfe and Chalk, 1950) ने रन्ध्रों की सहायक कोशिकाओं की प्रकृति व दिक्विन्यास (orientation) के आधार पर जो वर्गीकरण प्रस्तुत किया वह निम्नलिखित है :

मेटकॉफ व चॉक द्वारा प्रस्तुत रन्ध्रों का वर्गीकरण

अनियमित कोशिक या रेननकुलेसिस प्रकार (Anomocytic = irregular celled)	**असमकोशिक क्रूसीफेरस प्रकार (Anisocytic = unequal celled**	**पराकोशिक रुबिऐसिबस प्रकार (Paracytic = parallel celled)**	**लम्ब कोशिक केरिओ फिलि–ओसिस प्रकार (Diacytic = cross celled)**
इस प्रकार में रन्ध्रों के आसपास उपस्थित बाह्यत्वचा की कोशिकायें सभी समान होती है अर्थात् सहायक कोशिकायें नहीं पायी जाती। उदाहरण : कुल रैननकुलेसी तथा कैपेरेसी आदि।	इस प्रकार में रन्ध्र के चारों ओर एक छोटी व तीन बड़ी सहायक कोशिकायें उपस्थित होती है। उदाहरण : कुल : क्रूसीफेरी आदि।	रन्ध्र के पार्श्व व द्वार कोशिकाओं के अक्ष के समान्तर एक या अधिक सहायक कोशिकायें उपस्थित उदाहरण कुल रुबिऐसी तथा मैग्नोलिऐसी आदि।	रन्ध्र दो सहायक कोशिकाओं द्वारा घिरा जो द्वार कोशिकाओं के समकोण पर स्थित होती है। उदाहरण : कुल कैरिओफिलेसी तथा एकेन्थैसी आदि।

स्टेस (Stace 965) ने मेटकाफ व चॉक के रन्ध्रों के चार उपरोक्त प्रकार के अलावा दो और प्रकारों का वर्णन किया है।

(i) **एक्टिनोसिटिक (**Actinocytic) इसमें रन्ध्र चार अथवा इससे अधिक सहायक कोशिका द्वारा घिरा रहता है तथा यह कोशिकायें द्वार कोशिका के लम्बवत स्थित रहती हैं ।

(ii) **सायक्लोसिटिक** (Cyclocytic) इसमें भी रन्ध्र चार अथवा उससे अधिक सहायक कोशिका द्वारा घिरा रहता है किन्तु यह कोशिकायें द्वार कोशिका के चारों ओर एक घेरे के रूप में विद्यमान रहती हैं ।

रन्ध्रों की उत्पत्ति (Origin of stomata)

रन्ध्रों की उत्पत्ति के लिये एक प्रोटोडर्म कोशिका अपनत विभाजन करके दो पुत्री कोशिकायें बनाती है जिनमें से एक रन्ध्र मातृ कोशिका कहलाती है । यह कोशिका विभाजित होकर दो द्वार कोशिकायें (guard cells) बनाती है । यह आकृति में वृक्काकार हो जाती है । इनकी भित्ति पर असमान स्थूलन हो जाता है तथा बीच में एक छिद्र निर्मित हो जाता है । सहायक कोशिकायें प्रोटोडर्म कोशिकाओं के द्वारा मातृ कोशिकाओं के संलग्न स्थिति में निर्मित होती हैं ।

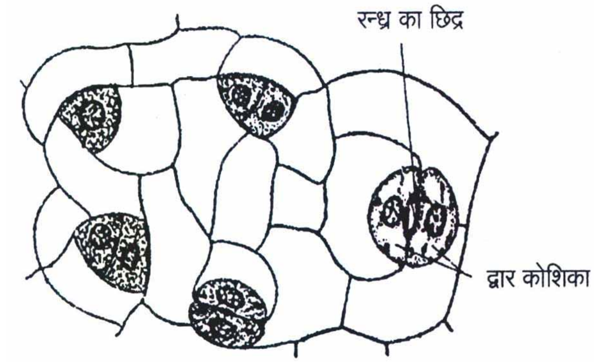

चित्र 9.5 : रन्ध्र का परिवर्धन

पन्त (Pant, 1965) ने परिवर्धन के आधार पर रन्ध्रो को निम्न रूप से विभाजित किया है -

रन्ध्रों की उत्पत्ति (Origin of Stomata)

मध्यज प्रकार (Mesogenous type)
एक मातृ कोशिका के विभाजन से द्वार व सहायक कोशिकायें निर्मित होती है। उदाहरण : क्रुसीफेरी व रुबिएसी कुल आदि।

मध्यपरिज प्रकार (Mesoperigenous type)
एक मातृ कोशिका के विभाजन के फलस्वरुप द्वार कोशिकायें तथा इसके एक ओर की सहायक कोशिकायें बनती हैं। दूसरी ओर की सहायक कोशिका का स्वतंत्र निर्माण आस पास की कोशिकाओं से होता है। उदाहरण : रैननकुलेसी व कैरिओफिलेसी कुल आदि।

परिजात प्रकार (Perigenous type)
एक मातृ कोशिका के विभाजन के फलस्वरुप केवल द्वार कोशिकायें बनती हैं तथा इसके दोनों ओर स्थित सहायक कोशिकाओं का स्वतंत्र निर्माण इसके आस पास की कोशिकाओं से होता है। उदाहरण : कुकरबिटेसी कुल आदि।

स्टीबेन्स व जैन (Stebbins and Jain 1960) के मतानुसार एक बीजपत्री पादपों में निम्नलिखित चार प्रकार के रन्ध्र पाये जाते है ।

एकबीजपत्री पादपों के रन्ध्र (Stomata of Monocots)

एलियम प्रकार
द्वार कोशिकायें के चारों ओर विशिष्ट प्रकार की सहायक कोशिकाओं का अभाव।

होर्डियम प्रकार
जिआमेज़ में द्वार कोशिकायें डम्बल प्रकार की व दो सहायक कोशिकाओं द्वारा घिरी हुई होती है।

रोहियो प्रकार
द्वार कोशिकायें चार सहायक कोशिकाओं द्वारा घिरी हुई। दो सहायक कोशिकायें पार्श्वीय व दो सीमान्तीय स्थिति में।

कोमेलाइना प्रकार
द्वार कोशिकायें छः सहायक कोशिकाओं द्वारा घिरी हुई। चार सहायक कोशिकायें पार्श्वीय व दो सीमान्तीय स्थिति में।

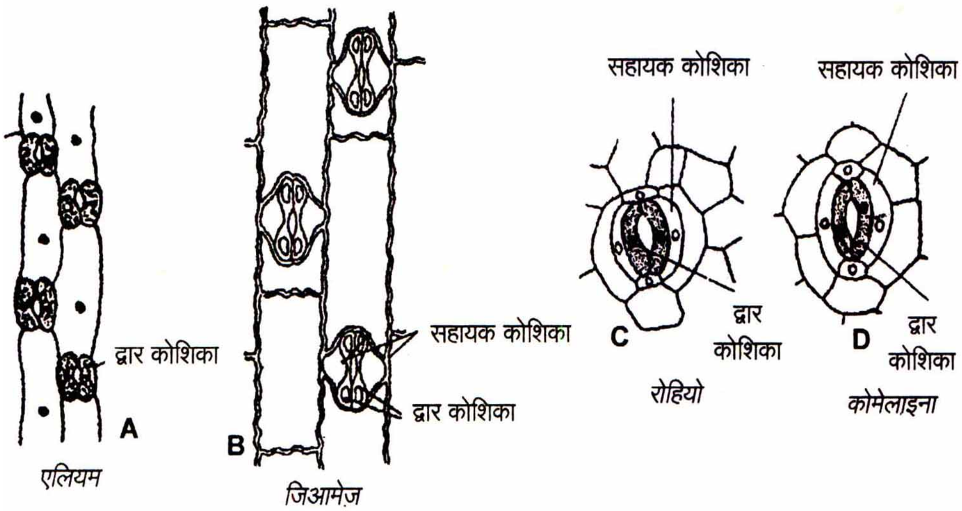

चित्र 9.6 : एकबीजपत्री पादपों के रन्ध्र प्रकार

रन्ध्रों के कार्य (Functions of Stomata)

(i) पौधे व वातावरण के मध्य गैसीय विनिमय में सहायता प्रदान करते हैं ।

(ii) वाष्पोत्सर्जन क्रिया में सहायता प्रदान करते हैं ।

(iii) तापमान सम रखने में सहायता करते हैं ।

रन्ध्राक (Stomatal index)

पादपों की पत्तियों में रन्ध्रों की संख्या क भी निश्चित नहीं पायी जाती है तथा पर्ण सतह पर इनकी आवृत्ति व घनत्व (Frequency and density) में स्पष्ट अंतर दिखाई देता है । रन्ध्रों की संख्या पादप किसी परिस्थिति में उग रहा है उस पर निर्भर करती है । इनकी संख्या ऊपरी व निचली अधिचर्म पर भी अलग - अलग हो सकती है । **ई. जे. सेलिसबरी** (E.J. Salisbury, 1927) ने उपरोक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए विभिन्न पत्तियों का रन्ध्राक ज्ञात करने के लिए एक फार्मूला दिया गया है जिसकी सहायता से किसी भी प्रकार की पर्ण पर कितने रन्ध्र उपस्थित है यह आसानी से ज्ञात किया जा सकता है । रन्ध्राक निम्न रन्ध्रीय सूत्र से ज्ञात किया जा सकता है ।

$$\text{रन्ध्राक (Stomatal index) SI} = \frac{S}{E+S} x100$$

S = रन्धों की संख्या पर्ण के प्रति mm^2 क्षेत्र में ।

E = अधिचर्म कोशिकाओं की संख्या पर्ण के mm^2 क्षेत्र में ।

बोध प्रश्न - 2

1. जिआमेज में द्वार कोशिकायें कैसी होती हे?

....

....

2. नीरियम में कैसे रन्ध पाये जाते हें?

....

....

3. पर्णाभ वृन्त के दो उदाहरण दीजिये ।

....

....

4. पाइनस की पर्ण का आकार कैसा होता है व क्यों?

....

....

9.5 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपको पर्ण की आतंरिक संरचना के बारे में पता चल गया होगा । पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण अधिकतम व वाष्पोत्सर्जन न्यूनतम हेतु क्या अनुकूल होते हैं यह भी ज्ञात हुआ होगा । रन्ध्र की संरचनाओं उसमें उपस्थित द्वार कोशिकाओं व सहायक कोशिकाओं की उपस्थिति तथा इन कोशिकाओं व परिवर्धन के आधार पर इनके वर्गीकरण के बारे में जानकारी हुई होगी ।

9.6 सारांश

अनियमित रन्ध्र (Anomocytic stomata) : इस प्रकार में रन्ध्रों के आसपास उपस्थित बाहयत्वचा की कोशिकायें सभी समान होती है ।

असमकोशिक रन्ध्र (Anisocytic stomata) : इस प्रकार के रन्ध्र के चारों ओर एक छोटी व तीन बड़ी सहायक कोशिकायें उपस्थित होती है।

पराकोशिक रन्ध्र (Paracytic Stomata) : रन्ध्र के पार्श्व व द्वार कोशिकाओं के अक्ष के समान्तर एक या अधिक सहायक कोशिकायें उपस्थित होती है ।

9.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Cutter, E.G,1969. Part I cells and tissues, Edward Arnold; London.
2. Esau, K 1977. Anatomy of seed plants.2nd, edition; John Wiley & Sons; New York
3. Comparative Morphology of Vascular Plant; Foster, A and E.N. Gifford, jr. 1959; W.H. Freeman & Company.
4. बीजी पादपों की विविधता; त्रिवेदी, शर्मा; रमेश बुक डिपो
5. पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन; त्रिवेदी, शर्मा; रमेश बुक डिपो
6. बीजी पादपों की विविधता एवं वर्गिकी; त्यागी, सक्सैना; कॉलेज बुक हाऊस
7. आवृतबीजी की आकारिकी एवं आर्थिक वनस्पति विज्ञान; त्यागी, सक्सैना; कॉलेज बुक हाऊस

9.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. प्रकाश संश्लेषण व वाष्पोत्सर्जन पर्ण के कार्य होते हैं ।

2. पत्तियों में अधिचर्म ऊतक तन्त्र, भरण ऊतक तन्त्र व संवहन ऊतक तन्त्र पाये जाते हैं।
3. पृष्ठाधारी पर्ण में अधिक रन्ध्र निचली सतह पर होते हैं ।
4. बाँस की पर्ण में प्रेरक कोशिकायें ऊपरी सतह पर होती है ।

बोध प्रश्न - 2

1. जिआमेज की द्वार कोशिकायें डम्बल आकार की होती है ।
2. निरियम में धँसे हुये रन्ध्र पाये जाते हैं।
3. पार्किन्सोनिया व आस्ट्रेलियन अकेशिया ।
4. पाइनस का पादप कार्यिकीय जलाभाव में रहता है अत: वाष्पोत्सर्जन की दर कम करने के लिए इसकी पर्ण सूई समान हो जाती है ।

9.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. पत्तियों की आंतरिक आकारिकी पर लेख लिखिये ।
2. पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण व वाष्पोत्सर्जन के लिये क्या अनुकूलन पाये जाते हैं सविस्तार लिखिये।
3. पादपों की पत्तियों में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के रन्ध्रों के बारे में लिखिये ।

इकाई 10 : पर्णजीर्णता एवं पर्णविलगन
(Leaf Senescence and abscission)

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 पर्णजीर्णता
10.2.1 आनुवंशिक रूप से नियंत्रित पर्णजीर्णता में कार्यिकी एवं संरचनात्मक परिवर्तन
10.2.2 पर्णजीर्णता में हॉर्मोन की भूमिका
10.3 पर्णविलगन
10.3.1 विलगन पर्त या पृथक्करण पर्त
10.3.2 विलगन प्रक्रिया
10.3.3 विलगन के समय जैविक क्रियायें
10.4 सुरक्षात्मक या रक्षी पर्त
10.5 सारांश
10.6 शब्दावली
10.7 संदर्भ - ग्रन्थ
10.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
10.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने का मुख्य उद्देश्य निम्न है ।

(1) पादपों में पत्तियों के झड़ने का ज्ञान प्राप्त करना ।

(2) पादपों में पर्णजीर्णता का ज्ञान प्राप्त करना ।

(3) पादपों में पर्ण विलगन क्रिया की जानकारी हासिल करना ।

10.1 प्रस्तावना

प्रायः हम देखते हैं कुछ पादपों में एक विशेष समय पत्तियाँ पादपों से झड़ने लगती है । इसी प्रकार से एक निश्चित ऋतु में पादपों पर पुष्प एवं फलों का विकास होता है एवं अन्त में यह संरचनाएँ भी पादपों से अलग हो जाती है । पादपों में इस प्रकार से पर्णो, पुष्पों, फलों एवं कभी - कभी शाखाओं के झड़ने को विलगन (abscission) क्रिया कहते हैं ।

समशीतोष्ण कटिबंधीय बहुवर्षी पादपों में प्रायः पतझड़ ऋतु से पूर्व पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है एवं एक निश्चित समय उपरान्त पादपों से अलग हो जाती हैं । अनेक पादप प्रजातियों में यह एक निश्चित समयबद्ध स्वाभाविक प्रक्रिया होती है ।

10.2 पर्णजीर्णता (Leaf Senescence)

पत्तियों की शनैःशनै मृत्यु होना पत्तियों की जीर्णता (Senescence) है । यह प्रक्रिया पादपों में आनुवंशिक रूप से नियंत्रित होती है । पादपों में पर्णजीर्णता के अन्य कारण भी हो सकते हैं जैसे पत्तियों के रोग ग्रस्त होने पर पर्णों का नष्ट होना । अनेक समय पादपों में जल अभाव की स्थिति पर्णों को समुचित प्रकाश, जल व लवणों का उचित मात्रा प्राप्त न होने पर पादपों में पर्णजीर्णता का कारण होता है ।

10.2.1 आनुवंशिक रूप से नियंत्रित पर्णजीर्णता में कार्यिकी एवं संरचनात्मक परिवर्तन

आनुवंशिक रूप से नियंत्रित पर्णजीर्णता में पत्तियों में अनेक कार्यिकी एवं संरचनात्मक परिवर्तन होते हैं । सर्वप्रथम पर्ण कोशिकाओं में उपस्थित हरितलवक पर्णजीर्णता से प्रभावित होता है । हरितलवक में उपस्थित प्रोटीन एवं एन्जाइम के नष्ट होने से पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है । अनेक पादपों में एन्थोसाइनिन लवक के पर्णो में बाहुल्यता होने के कारण पर्णजीर्णता के समय पत्तियाँ लाल, पीली आभायुक्त हो जाती हैं । पर्णजीर्णता की प्रक्रिया में जल अपघटनीय एन्जाइम भी बनते हैं जो प्रोटीन से खनिज एवं अन्य रसायन पोषवाह द्वारा पादप के अन्य भागों में विस्थापित कर दिये जाते हैं ।

10.2.2 पर्णजीर्णता में हॉर्मोन की भूमिका

पर्णजीर्णता में पादप हॉर्मोन, एबसिसिक अम्ल (abscission zone) एवं इथाइलीन की प्रमुख भूमिका होती है । ये पादप हॉर्मोन जीर्णता को प्रेरित करते है । अनेक पर्यावरणीय कारक जैसे पादपों में जलाभाव की स्थित, इथाइलीन बनने की प्रक्रिया को प्रेरित करते हैं । एबसिसिक अम्ल (ABA) की मात्रा भी पर्यावरण कारकों से प्रभावित होता है जलाभाव की स्थिति में पत्तियों में ABC की मात्रा बढ़ जाती है । पर्णजीर्णता में ABC मुख्य कारक होता है, यह जीर्णता की गति को बढ़ाता है । ऑक्सिन (auxin) पर्णविलगन को रोकते हैं ।

10.3 पर्णविलगन (Leaf Abscission)

काष्ठीय पादपों से पत्तियों के झड़ने की प्रक्रिया को पर्ण विलगन कहते हैं । पर्ण विलगन से पूर्व पर्णों के आधार पर आन्तरिक परिवर्तन होते हैं । पर्णों के आधार पर विलगन (abscission zone) भाग विकसित होता है ।

आन्तरिक रूप से यह भाग आसपास वाली दूसरी कोशिकाओं से संरचनात्मक रूप से भिन्न होता है । बाहरी तौर पर यह भाग हल्की खाँच (goove) की उपस्थिति के द्वारा पहचाना जा सकता है । आन्तरिक रूप से इस भाग में संवहन तन्त्र मध्य भाग में उपस्थित होता है । इस भाग में दृढ़ोतक एवं स्थूल कोणोतक कोशिकाएँ अल्पविकसित या पूर्ण रूप से अनुपस्थित होती है ।

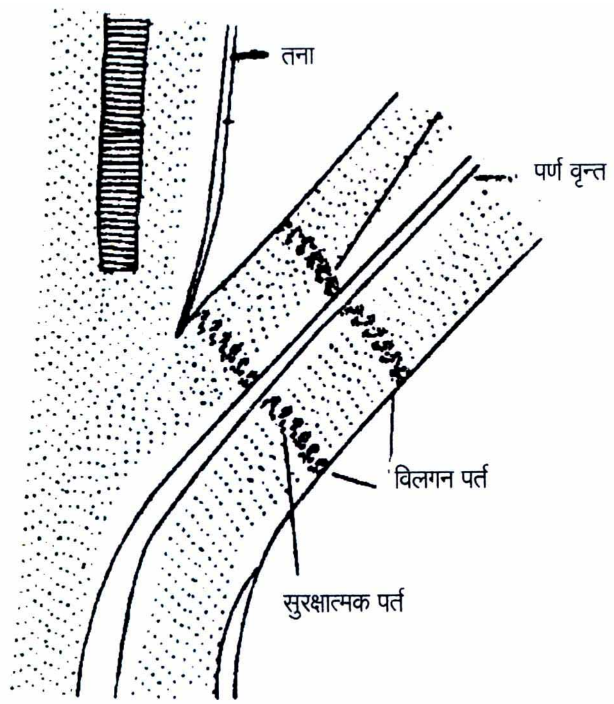

चित्र 10.1 : पर्ण विलगन

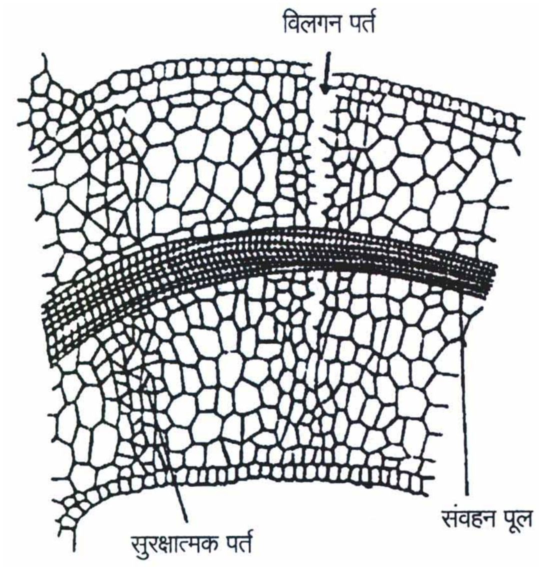

चित्र 10.2 : पर्णवृन्त का अनुदैर्ध्य काट

विलगन क्षेत्र में कोशिका की दो पर्ते विभेदित हो जाती है ।

(1) विलगन पर्त या पृथक्करण पर्त (Abscission layer or separation layer)

(2) सुरक्षात्मकपर्त (Protective layer)

10.3.1 विलगन पर्त या पृथक्करण पर्त

इस पर्त की सक्रियता से पर्ण का विलगन होता है । यह पर्त क्षेत्र में बाहरी ओर विकसित होती है। प्रायः विलगन पर्त का निर्माण सामान्य विभेदन के समय ही हो जाता है किन्तु कुछ पादपों में विलगन पर्त का निर्माण पतझड़ ऋतु में अथवा पत्तियों के गिरने से कुछ समय पूर्व होता है ।

10.3.2 विलगन प्रक्रिया

पर्णों में विलगन बाहर से अंदर कर ओर अग्रसर होता है । विलगन प्रक्रिया के समय वाहिकाओं में टायलोसिस (tyloses) विकसित हो जाते हैं एवं चलनी नलिकाओं में केलोस (callosc) का निक्षेपण होने लगता है । परिणामस्वरूप पर्ण का संपर्क पर्णधार से टूटने लगता है । इस समय जल एवं खनिजों का संवहन मात्र मृदूतक कोशिकाओं द्वारा सम्पादित होता है । विलगन की प्रक्रिया में कोशिका भित्ति एवं मध्य पटलिका का अपघटन होने लगता है । अनेक एन्जाइम इस प्रकार के अपघटन में क्रियाशील होते हैं । इथाइलीन इस प्रकार के एन्जाइम के प्रेरण के लिए उत्तरदायी मानी जाती है ।पत्तियों के झड़ने से पूर्व कोशिकाओं का श्लेष्मीकरण (gelatinisation) हो जाता है । इसके परिणामस्वरूप कोशिकाएँ अलग-अलग होने लगती है । इस समय पर्ण केवल संवहन तंत्र ऊत्तकों द्वारा तने से जुड़ा रहता है जो वायु के हल्के प्रवाह से टूट कर पादप से अलग हो जाता है ।

10.3.3 विलगन के समय जैविक क्रियायें

हैजमेन (Hagemann) ने बताया की पर्ण विलगन के समय विभिन्न पादपों में अलग - अलग जैविक क्रियायें होती है । बेबसटर (wedster) के अनुसार फेसियोलस (Phaseolus) पादप में पर्णविलगन के समय चार जैविक क्रियायें अतिव्यापी क्रम में होती है ।

(a) मज्जाकोशिकाओं का विघटन

(b) वल्कुट कोशिकाओं का विभाजन

(c) कोशिकाओं का सुदीर्घाकरण एवं विभेदन

(d) वल्कुट एवं संवहनी कोशिकाओं का विघटन

पूवीरिया (Pooviria, 1974) के अनुसार पर्णविलगन के समय विलगन क्षेत्र में मृदूतकी कोशिकाओं का लिग्नीकरण (lignification), वाहिकीय तत्वों में टाइलोसस का निर्माण होता है एवं चालनी तत्वों में केलोस निक्षेपण (callose deposition) होता है । रेसिया एवं सहयोगियों (Rascio 1985) के अनुसार पर्णविलगन के अन्तिम समय पर्णधार कोशिकाओं की भित्तियों का एन्जाइमी अपघटन होने लगता है । यह प्रक्रिया मध्य पटलिका से केल्सीयम एवं पेक्टिन के विस्थापन के साथ प्रारम्भ होती है एफ सेल्यूलोज भित्ति की हाइड्रोलिसिस के साथ निरन्तर जारी रहती है । अन्त में स्क्लेरीकृत (sclerified) वाहिकीय तत्व नष्ट होने लगते हैं । फेसी (Facey, 1980) के अनुसार संवहन ऊत्तक की कोशिकाओं के मध्य उपस्थित मध्य पटलिकाएँ भी विघटित हो जाती हैं । सेक्सटन हॉल (Sexton and Hall) के अनुसार पर्णविलगन के उद्दीपन के लिये आवश्यक एन्जाइम का स्राव गोल्जीकाय पुटिकाओं से होता है ।

बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये

(1) पादपों से पर्ण, पुष्पों, फलों एवं शाखाओं के झड़ने को....................कहते हैं ।

(2) पत्तियों की शनै:शनै मृत्यु होना पत्तियों की..................कहलाती है ।

(3) विलगन प्रक्रिया में वाहिकाओं में...................विकसित होते हैं ।

(4) विलगन प्रक्रिया में चालनी नलिकाओं में..................का निक्षेपण होता है ।

(5) विलगन प्रक्रिया में चालनी नलिकाओं में...................का निक्षेपण होता है ।

निम्न वाक्य सही है अथवा गलत

(1) पर्णजीर्णता आनुवंशिक रूप से नियंत्रित होती है । (सही/गलत)

....

(2) इथाइलीन पर्णजीर्णता को प्रेरित करती है । (सही/गलत)

....

(3) पर्ण विलगन के लिए एन्जाइम का स्राव गोल्जीकाय से होता है । (सही/गलत)

....

(4) ऑक्सिन पर्ण विलगन को प्रेरित करता है । (सही/गलत)

....

(5) पर्णजीर्णता में पादप हॉर्मोन की प्रमुख भूमिका होती है । (सही/गलत)

....

निम्न का पूरा नाम लिखिए ।

(1) ABA

....

10.3.3 सुरक्षात्मक या रक्षी पर्त (Protective Layer)

सुरक्षात्मक पर्त विलगन क्षेत्र में अन्दर की ओर पर्ण के गिरने के कुछ समय बाद बनती है । पर्ण के अलग होने के स्थान पर क्षत चिन्ह (scar) रह जाता है । सुरक्षात्मक पर्त पर्ण की विलगन कोशिकाओं को सूखने से बचाती है एवं विलगन क्षेत्र में कवक तथा परजीवी एवं रोगकारी सूक्ष्मजीवों के प्रवेश को रोकने का कार्य करती है ।

सुरक्षात्मक पर्त दो प्रकार की हो सकती है

(a) प्राथमिक सुरक्षात्मक पर्त

(b) द्वितीयक सुरक्षात्मक पर्त

प्राथमिक सुरक्षात्मक पर्त का निर्माण मृदूतकी कोशिकाओं में सुबेरिन अथवा लिग्निन के निक्षेपण के परिणामस्वरूप होता है । द्वितीयक सुरक्षात्मक परिचर्म (periderm) के समतुल्य होती है ।

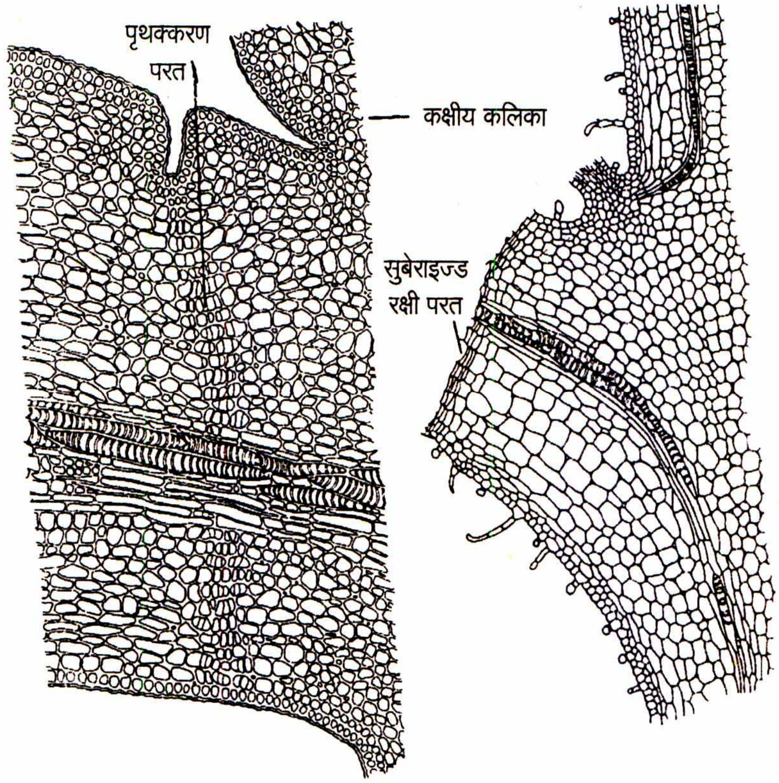

चित्र 10.3 : पर्ण विलगन

10.4 सारांश

अनेक बहुवर्षीय पादपों में वर्ष में एक विशेष समय पत्तियाँ पौधों से झड़ने लगती है । इस क्रिया को विलगन कहते हैं । यह प्रक्रिया अनुवांशिक रूप से नियंत्रित होती है । आरम्भ में पत्तियों में हरितलवक नष्ट होकर पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है इसे पर्णजीर्णता कहते हैं । पर्णजीर्णता की प्रक्रिया में पत्तियों शनै:शनै मृत होने लगती है । इस क्रिया से पादपों को कोई हानि नहीं होती है। कभी-कभी पर्णजीर्णता का कारण, पर्यावरण सम्बन्धी कारक भी हो सकता है । पर्णजीर्णता में पादपों में अनेक कार्यिकी एवं संरचनात्मक परिवर्तन होते हैं । पर्णजीर्णता में पादप हॉर्मोन एबसिसिक अम्ल की प्रमुख भूमिका होती है । यह जीर्णता को प्रेरित करता है किन्तु आक्सिन पर्णविलगन को रोकता है । पर्णविलगन से पूर्व पर्णों के आधार पर विलगन क्षेत्र विकसित होता है। इस में एक विलगन पर्त एवं द्वितीयक सुरक्षात्मक पर्त का निर्माण होता है । विलगन प्रक्रिया बाहर से अंदर की ओर अग्रसर होती है । इस प्रक्रिया में वाहिकाओं में टायलोसिस विकसित होते हैं, चालनी नलिकाओं में केलोस का निक्षेपण होता है, कोशिका भित्ति एवं मध्य पट्टिकाओं का अपघटन होता है, कोशिकाओं का श्लेष्मीकरण होता है । अन्त में पत्तियाँ पादप से अलग होने लगती है । पर्ण झड़ने के बाद सुरक्षात्मक पर्त बनती है जो पादपों को सूक्ष्मजीवों के प्रवेश से रक्षा प्रदान करने का कार्य करती है ।

10.5 शब्दावली

(1) Abscission (विलगन) पादपों से पत्तियों, पुष्पों फल एवं शाखाओं के झड़ने की प्रक्रिया।

(2) Senescence (पर्णजीर्णता) पत्तियों की शनैःशनै पीले पड़ कर मृत्यु होना ।

(3) ABC (एबसिसिक अम्ल) एक पादप हॉर्मोन जो पर्णजीर्णता को प्रेरित करता है ।

(4) Abscission Zone (विलगन क्षेत्र) पर्णों के पादपों से झड़ने से पूर्व पर्ण आधार पर, विशेष क्षेत्र ।

(5) Abscission (विलगन पर्त) विलगन क्षेत्र में विकसित बाहरी पर्त, जींस की सक्रियता से पत्तियाँ पादप से अलग हो जाती है ।

(6) Protective Layer (सुरक्षात्मक पर्त) विलगन क्षेत्र में विकसित आन्तरिक पर्त । यह पर्णों के झड़ने के बाद सूक्ष्मजीवों को पादप शरीर में प्रवेश करने से रक्षा करती है ।

(7) Tyloses (टायलोसिस) वाहिका अथवा वाहिनिकाओं केल्यूमन के गुब्बारे जैसी संरचनायें

10.6 संदर्भ ग्रन्थ

(1) पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन, प्रो.पी.सी. त्रिवेदी, डॉ. निरंजन शर्मा, डॉ. जमनालाल शर्मा, रमेश बुक डिपो, जयपुर

(2) पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन, डॉ. कैलाश अग्रवाल, डॉ. ज्योत्सना शर्मा, कॉलेज बुक हाउस, जयपुर

(3) Plant Anatomy, by Al Fahn, Pergamon Press

10.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

रिक्त स्थानों की पूर्ति

(1) विलगन (2) पर्णजीर्णता (3) टायलोसिस

(4) कैलोज (5) रोकता है

सही अथवा गलत

(1) सही (2) सही (3) सही (4) गलत (5) सही

ABA का पूरा नाम एबसिसिक अम्ल है

10.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) पर्णजीर्णता से आप क्या समझते हैं?

(2) विलगन के समय होने वाली पादपों में जैविक क्रियाओं पर लेख लिखिए ।

(3) विलगन क्षेत्र क्या है? इसका संरचनात्मक विवरण लिखिए ।

(4) पादप हॉर्मोन का पर्णजीर्णता में महत्व लिखिए ।

इकाई 11: मूल :शीर्षस्थ विभज्योतक, संरचना एवं द्वितीयक वृद्धि (Root : Apical meristem, Structure and secondary growth)

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 जड़ों के प्रमुख गुण

11.3 जड़ों के विभिन्न क्षेत्र

11.3.1 मूलगोप

11.3.2 विभज्योतकी क्षेत्र

11.3.3 दीर्घीकरण क्षेत्र

11.3.4 मूलरोम क्षेत्र

11.3.5 परिपक्व क्षेत्र

11.4 मूल शीर्ष विभज्योतक (root apical meristem)

11.4.1 अग्रस्थ कोशिका सिद्धान्त (apical cell theory)

11.4.2 हिस्टोजन सिद्धान्त

11.4.3 हेबरलेट का मत

11.4.4 गट्टनबर्ग का मत

11.4.5 कार्पर-केप सिद्धान्त

11.5 मूलशीर्ष संगठन के प्रकार

11.5.1 सामान्य प्रकार

11.5.2 रेननकुलस प्रकार

11.5.3 केस्युराइना प्रकार

11.5.4 एकबीजपत्री प्रकार

11.6 शान्त -केन्द्र अथवा निष्क्रिय केन्द्र

11.7 जड़ों की प्राथमिक संरचना

11.8 द्विबीजपत्री एवं एकबीजपत्री मूलों में अन्तर

119 मूलों में द्वितीयक वृद्धि

11.9.1 संवहन एधा की उत्पत्ति एवं कार्य

11.9.2 संवहन रश्मियाँ

11.10 सारांश

11.11 शब्दावली

11.12 संदर्भ - ग्रन्थ

11.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.15 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने का मुख्य उद्देश्य निम्न है,

(1) जड़ों की उत्पत्ति, गुण एवं कार्यों का ज्ञान प्राप्त करना ।

(2) जड़ों के विभिन्न क्षेत्रों का ज्ञान प्राप्त करना ।

(3) मूलशीर्ष विभज्योतक के सक-ध में प्रतिपादित सिद्धांतों का ज्ञान प्राप्त करना ।

(4) विभिन्न प्रकार के मूल-शीर्ष संगठनों का ज्ञान प्राप्त करना ।

(5) जड़ों की प्राथमिक संरचना का ज्ञान प्राप्त करना ।

(6) जड़ों में द्वितीयक वृद्धि का ज्ञान प्राप्त करना ।

11.1 प्रस्तावना

संवहनी पादपों का आधारीय भूमिगत भाग जो प्रकाश के विपरीत भूमि के सतह के नीचे अंधकार की ओर वृद्धि करता है जड़ अथवा मूल कहलाता है । जड़ ही प्रथम पादप संरचना है जो बीज के अंकुरण के पश्चात् सर्वप्रथम विकसित होती है । जड़ एक प्रारूपिक पादप का महत्वपूर्ण राव आधारभूत अग होता है, जो पौधे को मृदा में स्थिरता प्रदान करता है, जल और खनिज पदार्थों का अवशोषण करने का कार्य करता है । यह एक शाखित संरचना है जो पर्व एवं पर्वसंधियों में भी विभेदित नहीं होती है ।

जड़ों का विकास भुण में उपस्थित मूलांकुर से होता है । मूलांकुर से विकसित मूलों को प्राथमिक मूल कहते हैं । द्वि-बीजपत्री पादपों में प्राथमिक मूल से, पार्श्वमूल (lateral root) का विकास होता है जिन्हें द्वितीयक मूल कहते हैं । इस प्रकार के मूल तंत्र को मूसला जड़ तन्त्र ((tap root system) कहते हैं ।

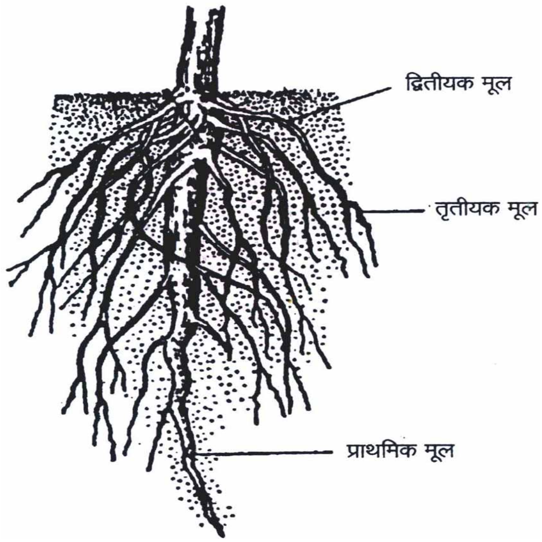

चित्र 11.1 : मूसला जड तंत्र

एक बीजपत्री पादपों में प्राथमिक मूल अधिक समय तक क्रियाशील नहीं रहती है एवं मूल-तंत्र गुच्छे के रूप में विकसित होता है । इस प्रकार के मूल तंत्र को रेशेदार अथवा झगड़ा मूल (fibrous root system) कहते हे ।

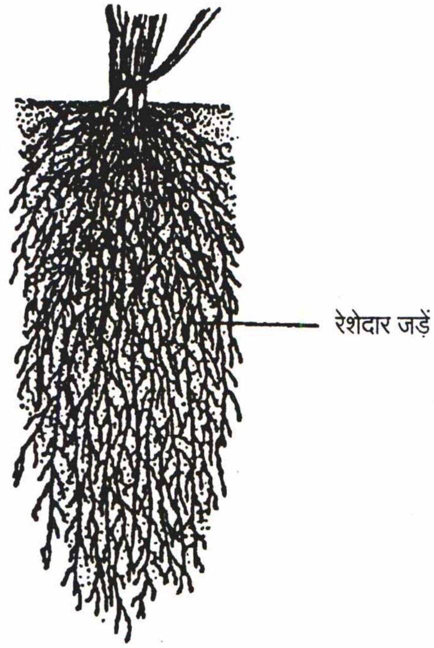

चित्र 11.2 :

मूलांकुर के अतिरिक्त किसी अन्य पादप अंग जैसे पर्व-संधि, पर्ण से विकसित मूल को अपस्थानिक (adventitious) मूल कहते हैं

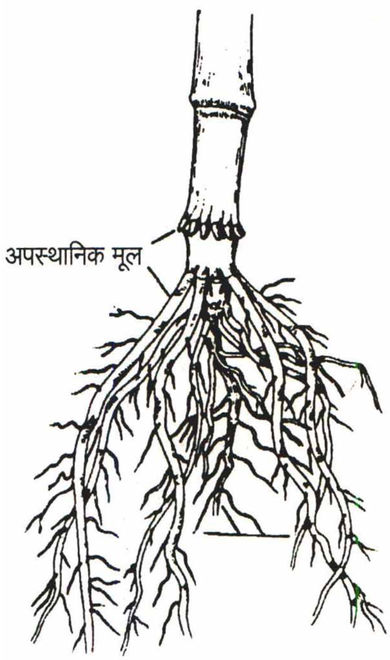

चित्र 11.3 :

अनेक पादप प्रजातियों में जड़ें रूपान्तरित हो अपने साधारण कार्य पादप को स्थिरता प्रदान करना, जल व खनिजों लवणों के अवशोषण करने के अतिरिक्त, भोजन संग्रह, श्वसन, प्रजनन अथवा यांत्रिक आधार प्रदान करने का कार्य भी सम्पादित करने लगती है ।

11.2 जड़ों के प्रमुख गुण

(a) ये घनात्मक गुरुत्वानुवर्ती (positively geotropic) होती है

(b) ये ऋणात्मक प्रकाशनुवर्ती (negatively geotropic) होती है

(c) इन में पर्ण, पर्व एवं पर्वसधियों में विभेदन नहीं होता है ।

(d) इनकी सतह पर एक कोशिकीय मूल रोम पाये जाते हैं ।

(e) इनमें पार्श्वमूल (lateral root) की उत्पत्ति अन्तर्जात (endogenous) प्रकार से होती है, इन का विकास परिरंभ (pericycle) से होता है ।

(f) आन्तरिक संरचना में जायलम एवं फ्लोयम भिन्न -भिन्न त्रिज्या पर उपस्थित होते हैं । संवहन पूल अरीय (radial) प्रकार के होते हैं

(g) जायलम बाह्य - आदिदारुक (exarch) प्रकार का होता है

(h) इनके अग्रस्थ सिर पर एक विशेष संरचना, मूल-गोप या कोटरिकायें (root pockets) पायी जाती है ।

11.3 जड़ों के विभिन्न क्षेत्र

पादप मूल को मूल शीर्ष से ऊपर की ओर निम्न क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है ।

11.3.1 मूल गोप (Root Cap)

ये जड़ के अग्रस्थ सिरे पर उपस्थित एक टोपी सदृश्य संरचना होती है । यह मृदा में वृद्धि करते मूलशीर्ष को सुरक्षा प्रदान करती है । जलीय पादपों में मूलगोप के स्थान पर मूल-कोटरिका पायी जाती है । मूलगोप श्लेष्मीय पदार्थों का स्राव करती है जो जड़ों को मृदा की गहराई को भेदन में सहायक होती है ।

11.3.2 विभज्योतकी क्षेत्र (Mcristematic Zone)

ये क्षेत्र मूलगोप के ठीक पीछे होता है । इस क्षेत्र में कोशिकाएँ सघन रूप से व्यवस्थित रहती है । यह क्षेत्र मृदूतकी कोशिकाओं से बना होता है जो सघन जीवद्रव्य युक्त एवं सक्रिय रूप से विभज्योतिकी होती है । इस क्षेत्र में निरन्तर नई कोशिकाओं का निर्माण होता रहता है ।

11.3.3 दीर्घीकरण क्षेत्र (Elongation Zone)

यह विभज्योतिकी क्षेत्र के ठीक पीछे उपस्थित होता है । इस क्षेत्र में नवनिर्मित कोशिकाओं की लम्बाई में वृद्धि होती है । यह क्षेत्र जड़ की लम्बाई में वृद्धि के लिए उत्तरदायी होता है । इस क्षेत्र की कोशिकायें खनिज लवणों का अवशोषण का कार्य भी करती हैं ।

11.3.4 मूल रोम क्षेत्र (Root Hair Zone)

दीर्घीकरण क्षेत्र के बाद मूलरोम क्षेत्र पाया जाता है । मूलरोम क्षेत्र सघन रूप से मूलरोमों (root hairs) से ढका रहता है । मूलरोम धागे जैसी कोमल नलिकाकार संरचनायें होती है । मूलरोम का विकास मूलीय त्वचा की कोशिकाओं के विस्तार से होता है । मूलरोम से जल एवं लवणों का अवशोषण होता है । जड़ों की वृद्धि एवं आयु के साथ पुराने मूलरोम अकार्यशील एवम निष्क्रिय होने लगते हैं एवं नये मूलरोम का विकास होने लगता है । इस क्षेत्र के आतंरिक संरचना में कोशिकाओं का विभेदन (differentiation) होने लगता है ।

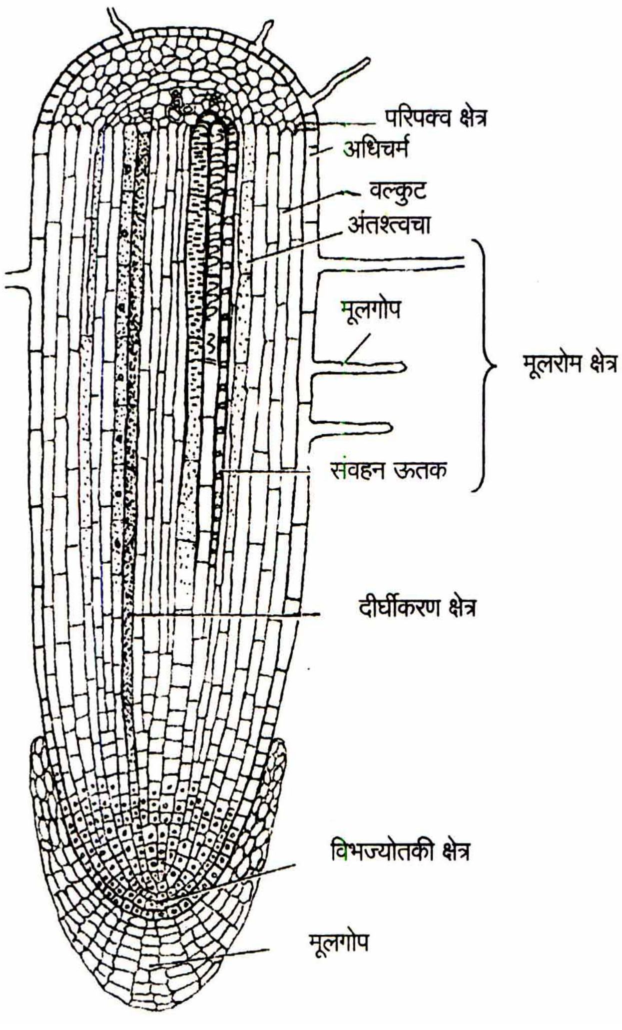

चित्र 11.4 : मूल के विभित्र क्षेत्र

11.3.5 परिपक्व क्षेत्र (Mature Zone)

मूलरोम क्षेत्र के बाद परिपक्व क्षेत्र होता है । इस क्षेत्र की आतंरिक संरचना में सुविभेदित प्राथमिक ऊत्तक, वल्कुट, अन्तश्त्वचा, परिरंभ, जायलम, एवं फ्लोयम उपस्थित होते हैं ।

द्विबीजपत्री जड़ों में द्वितीयक वृद्धि का संचालन इसी क्षेत्र से होता है । यह क्षेत्र जड़ों को मृदा में स्थिरता प्रदान करता है ।

11.4 मूल शीर्ष विभज्योतक

पादपों में प्राथमिक वृद्धि जड़ एवं प्ररोह के शीर्ष भाग में होती है । इन शीर्ष भागों में शीर्ष विभज्योतक पाये जाते हैं । विभज्योतक कोशिकायें, मृदुतकीय अविभेदित होती है जो अनिश्चित समय तक विभाजित होने की क्षमता रखती है । संवहनी पादपों में प्ररोहशीर्ष व मूलशीर्ष की संरचनाओं में आधारभूत अन्तर होता है । मूलशीर्ष, प्ररोहशीर्ष के तुलना में छोटा, सरल एवं सुस्पष्ट होता है । मूलशीर्ष विभज्योतक अंत्यस्थ (terminal) नहीं होता है वरन् यह उप-अंत्यस्थ (sub-terminal) होते हैं क्योंकि मूलशीर्ष पर अग्रस्थ सिरे पर मूलगोप उपस्थित होती है ।
जड़ों में शीर्ष-विभज्योतकों की संरचना एवं गतिविधि को समझाने के लिए विभिन्न सिद्धांत प्रतिपादित किये गये हैं ।

11.4.1 अग्रस्थ कोशिका सिद्धांत

इस सिद्धांत का प्रतिपादन 1858 में नगेली (Nageli) ने किया था । इस सिद्धांत के अनुसार मूलशीर्ष में एक अग्रस्थ कोशिका उपस्थित होती है । इस अग्रस्थ कोशिका के तीन विभाजनशील सतह की क्रियाशीलता से सम्पूर्ण जड़ का विकास होता है । किन्तु यह सिद्धांत आवृत-बीजी पादपों पर लागू नहीं होता है । मूल शीर्ष में विभज्योतकी कोशिकाओं का समूह पाया जाता है ।

11.4.2 हिस्टोजन सिद्धांत (Histogen Theory)

इस सिद्धांत का प्रतिपादन 1868 में हेन्सटीन (hanstein) ने किया । हेन्सटीन के अनुसार मूलशीर्ष में तीन ऊतकजन (histogen) परतें उपस्थित होती है । प्रत्येक ऊतकजन पर्त की कार्य प्रणाली सुनिश्चित होती है ।

(a) **त्वचाजन** (Dermatogen): सबसे बाहरी पर्त होती है । इससे मूल का बाह्यत्वचा तंत्र का विकास होता है ।
(b) **वल्कुटजन** (Periblem): ये मध्य पर्त होती है । इससे वल्कुट का विकास होता है ।
(c) **रंभजन** (Plerome): ये मूलशीर्ष की आन्तरिक पर्त है । इससे संवहन ऊतकों का निर्माण होता है ।

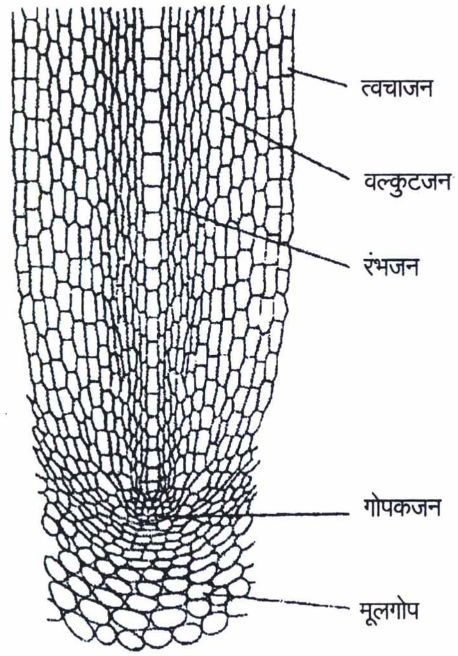

चित्र 11.5 : हिस्ट्रोजन के सिद्धांत के अनुसार मूलशीर्ष

मूलशीर्ष में अग्रस्थ क्षेत्र की ओर एक विशेष विभज्योतिकी क्षेत्र उपस्थित होता है । इसे गोपकजन (calyptrogen) कहते है । इससे मूलगोप का विकास होता है ।

11.4.3 हेबरलेट का मत

में हेबरलेंट ने 1914 हिस्टोजन सिद्धांत के अनुरूप मूलशीर्ष को तीन भागों में विभाजित किया । हेबरलेंट ने त्वचाजन (Dermatogen) को अधित्वक (protoderm) वल्कुटजन (periblem), को वल्कुट विभज्योतक (meristem of cortex) एवं रंभजन (plerome) को संवहन तंत्र विभज्योतक (meristem of vascular cylinder) नाम से सम्बोधित किया ।

11.4.4 गट्टनबर्ग का मत

गट्टनबर्ग के अनुसार बीजधारी पादपों के मूलशीर्ष में एक केन्द्रीय स्थायी आरंभिक एवं कुछ आरंभिक कोशिकायें उपस्थित होती है । इस मत के अनुसार विभिन्न विभज्योतकों की उत्पत्ति केन्द्रीय स्थायी कोशिकाओं से ज्ञात की जा सकती है । कुछ पादप प्रजाति में मूलों में उपस्थित विभिन्न ऊतक तंत्रों के लिए अस्थायी आरंभिक कोशिकायें, केन्द्रीय स्थायी आरंभिक कोशिका के नजदीक उपस्थित होती है । इस प्रकार का मूलशीर्ष संवृत प्रकार (close type) का होता है । इसके विपरीत, विकृत प्रकार (open type) के मूलशीर्ष में विभिन्न ऊतक तंत्रों के अस्थायी विभज्योतक, केन्द्रीय स्थायी आरंभिक कोशिकाओं से कुछ दूरी पर उपस्थित रहते हैं । मूलगोप का विकास विशेष आरंभिक कोशिकाओं से होता है । इन कोशिकाओं को जैनजेन्जीवस्की (Janczewski) ने गोपकजन (Calyptrogon) नाम दिया ।

11.4.5 कार्पर-केप सिद्धांत

इस सिद्धांत का प्रतिपादन 1917 में श्यूप (Schuepp) ने किया । इस सिद्धांत के अनुसार मूलशीर्ष को कोशिकाओं के विभाजन तल के आधार पर दो भागों में विभाजित किया गया । मूलशीर्ष के बाहरी क्षेत्र को "केपे " (kappe) कहते हैं । इस क्षेत्र में कोशिकाओं का प्रथम विभाजन अनुप्रस्थ तल में होता है । इस प्रकार से उत्पन्न दो पुत्री कोशिकाओं में से दूसरा विभाजन निचली पुत्री कोशिका में

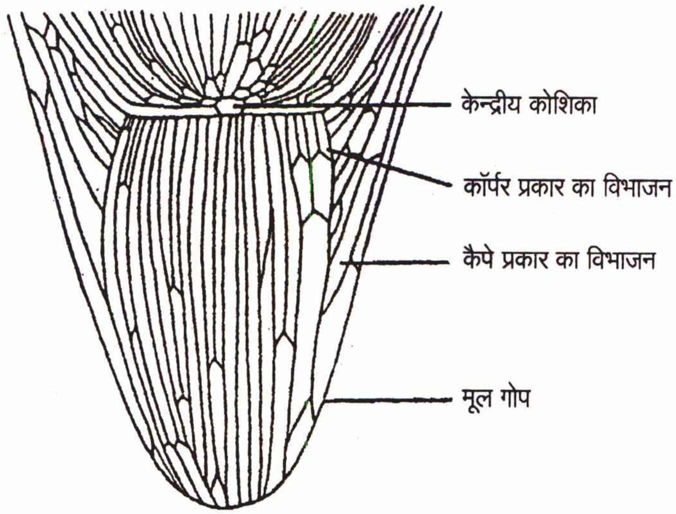

चित्र 11.6 : कॉर्पर-केप अवधारणा के अनुसार मूलशीर्ष

लम्बवत् तल में होता है । अत: कोशिका विभाजन. "T" पैटर्न बनाता है । मूलशीर्ष का मध्य क्षेत्र "कार्पर" (korper) कहलाता है । इस क्षेत्र में कोशिका विभाजन का विपरीत “ " पैटर्न से होता है अर्थात प्रथम विभाजन के परिणामस्वरूप दो पुत्री कोशिकाओं में दूसरा विभाजन ऊपरी पुत्री कोशिका में लम्बवत् तल में होता है । कार्पर-केप सिद्धांत, प्ररोह शीर्ष के लिये प्रतिपादित ट्यूनिका- कार्पस सिद्धांत के समतुल्य है ।

11.5 मूलशीर्ष संगठन के प्रकार

मूलशीर्ष पर उपस्थित विभज्योतकी कोशिकाओं की प्रकृति एवम प्रकार के आधार पर द्विबीजपत्री पादपों में तीन प्रकार के मूलशीर्ष पाये जाते हैं, एवं एक -बीजपत्री पादपों में चार प्रकार के मूलशीर्ष पाये जाते है ।

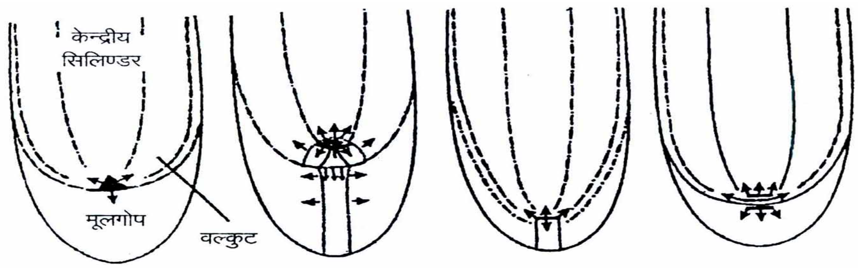

चित्र 11.7 : मूलशीर्ष विभज्योतक संगठन के प्रकार

11.5.1 सामान्य प्रकार (General Type)

इस प्रकार के मूलशीर्ष द्विबीजपत्री एवं एकबीजपत्री दोनो प्रकार के पादपों में पाये जाते हैं । इस प्रकार के मूल शीर्षों में आरंभिक कोशिकायें या विभज्योतकी की तीन पंक्तियों में उपस्थित होती है । बाहरी पंक्ति से बाह्यत्वचा तथा मूलगोप, मध्य पंक्ति से वल्कुट एवं भीतरी पंक्ति से केन्द्रीय सिलेन्डर का निर्माण होता है ।

11.5.2 रेननकुलस प्रकार (Ranunculus Type)

इस प्रकार का मूलशीर्ष द्विबीजपत्री एवं एकबीजपत्री दोनों प्रकार के पादपों में पाई जाती है । इस प्रकार के मूलशीर्ष में आरंभिक कोशिकाओं या विभज्योतकी की एक पंक्ति उपस्थित होती है । इस पंक्ति से जड़ के विभिन्न क्षेत्रों एवं मूलगोप का निर्माण होता है ।

11.5.3 केस्युराइना प्रकार (Casuariana Type)

इस प्रकार के मूलशीर्ष भी द्विबीजपत्री एवं एकबीजपत्री दोनों प्रकार के पादपों में पाया जाता है । इस प्रकार के मूलशीर्ष में विभज्योतकीय कोशिकाओं की दो पंक्तियाँ उपस्थित होती हैं । बाहरी पंक्ति से वल्कुट, बाह्यत्वचा एवं मूलगोप का निर्माण होता है एवं भीतरी पंक्ति से संवहन ऊतक का निर्माण होता है ।

11.5.4 एकबीजपत्री प्रकार

इस प्रकार का मूलशीर्ष प्रायः एक-बीजपत्री पादपों जैसा मक्का एवं घासों में पाया जाता है । मूल के अलग-अलग ऊतक क्षेत्र, मूलीय त्वचा, वल्कुट, संवहन तंत्र एवं मूलगोप का निर्माण अलग-अलग विभज्योतक कोशिकाओं की चार पंक्तियों से होता है । सबसे बाहरी पंक्ति गोपकजन (calyptrogen) कहलाती है जिससे मूलगोप का निर्माण होता है ।

11.6. शान्त केन्द्र अथवा निष्क्रिय केन्द्र

थामसन एवं क्लोव्स (Thomson & Clowes) ने अपने मूलशीर्षों के अध्ययन के आधार पर बताया की मूलशीर्ष में रंभ एवं वल्कुट के अग्रस्थ मध्य छोर पर एक अर्धवृत्ताकार कोशिकाओं का समूह पाया जाता है । इसे शांतक्षेत्र (quiescent centre) कहते हैं । इस क्षेत्र की कोशिकाओं में विभाजन नहीं होता है या अथवा कम विभाजन होता है । शांत क्षेत्र की कोशिकाओं में प्रोटीन, अत :प्रद्रव्यी जालिका, माइटोकेन्ड्रिया कम मात्रा में उपस्थित होते हैं । ये कोशिकायें विकिरण (radiation) के प्रति संवेदनशील नहीं होती है ।

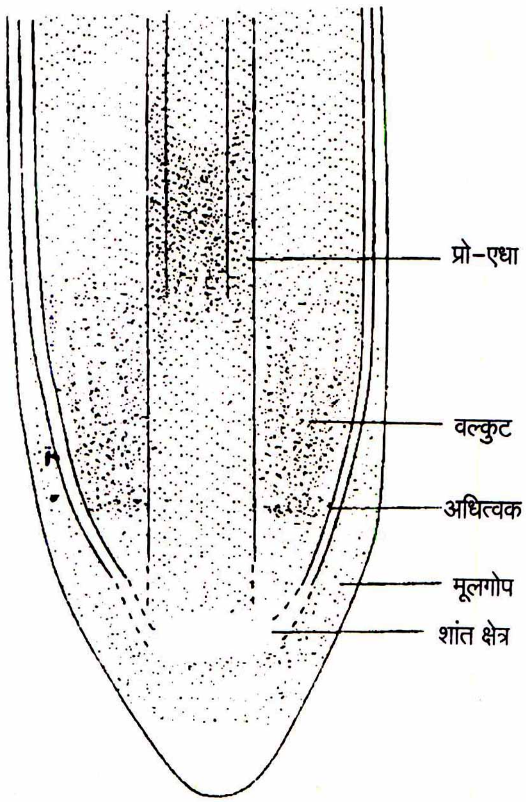

चित्र 11.8 : मूलशीर्ष के शांत क्षेत्र

शांत क्षेत्र के कार्य सम्बन्ध में अलग- अलग मत है ।

(1) ये विभज्योतक कोशिकाओं के भंडारग्रह के रूप में कार्य करता है । मूलशीर्ष के क्षतिग्रस्त होने पर शांत क्षेत्र नई विभज्योतक कोशिकायें प्रदान करती है ।

(2) इस क्षेत्र में हॉर्मोन का निर्माण होता है जो मूल वृद्धि को नियंत्रित करते हैं ।

11.7 जड़ों की प्राथमिक संरचना

जड़ों की आतंरिक संरचना में निम्न तीन ऊतक तंत्र पाये जाते हैं

(1) बाह्यत्वचा या अधिश्चर्म (epiblema)

(2) वल्कुट (cortex)

(3) संवहन तंत्र (vascular system)

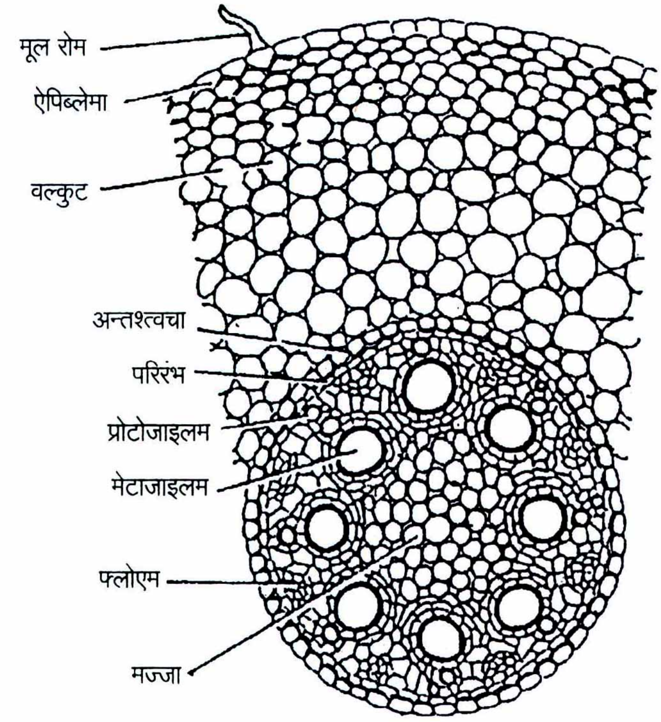

चित्र 11.9 : एकबीजपत्री जड़ की आंतरिक संरचना

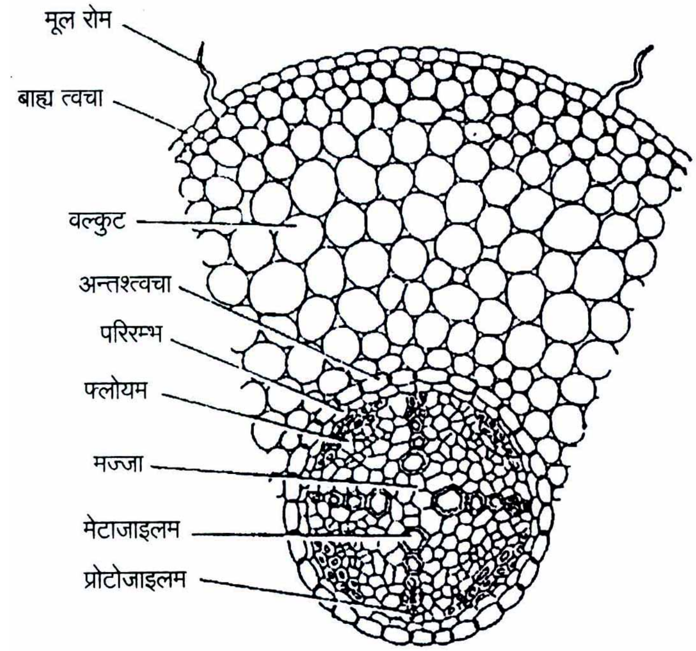

चित्र 11.10 : द्विबीजपत्री मूल की आंतरिक संरचना

बाह्यत्वचा : बाह्यत्वचा की कोशिकायें एक पंक्ति में व्यवस्थित रहती है । कोशिकायें पतली भित्ति युक्त होती है । प्रायः इनमें रंध्र एवं क्यूटिकल का अभाव होता है । बाह्यत्वचा में उपस्थित कुछ कोशिकायें आकार में अन्य कोशिकाओं से छोटी होती है, इन्हें रोमकोरक

(trichoblasts) कोशिकायें कहते हैं । इनसे मूलरोम का विकास होता है । मूलरोम, एक कोशिकीय, धागेनुमा संरचना होती है जो जल एवं खनिजों का अवशोषण का कार्य करते हैं । मूलरोम की भित्ति शीर्ष पर पतली एवं आधार पर मोटी होती है । अधिपादपों (epiphyte) में बाह्यत्वचा की कोशिकायें विभाजित होकर बाहरी ओर मृत कोशिकाओं की बहु पर्तीय संरचना बनाती है जिसे वेलामन (velamen) कहते हैं । वेलामन की कोशिकायें आद्रताग्राही (hygroscopic) होती है । ये वायुमंडल से आर्द्रता ग्रहण करने का कार्य करती है ।

वल्कुट (Cortex) : अधिचर्म के नीचे वल्कुट उपस्थित होता है । ये पतली भित्ति वाली सजीव मृदूतक कोशिकाओं से निर्मित होता है । कुछ द्विबीजपत्री पादपों में वल्कुट में यांत्रिक ऊतक भी विकसित हो जाते हैं । वल्कुट कोशिकायें, मूलरोम द्वारा अवशोषित जल एवं खनिज पदार्थों का स्थानान्तरण संवहन ऊतक तक करते हैं । जलीय पादपों में वल्कुट में वायुतक भी विकसित होते हैं । अनेक पादपों में वल्कुट कोशिकाओं में भोज्य पदार्थों का संचयन भी होता है ।

अंतश्त्वचा (Enododermis) : वल्कुट की सबसे आतंरिक कोशिका पंक्ति अंतश्त्वचा कहलाती है। यह वल्कुट एवं रंभ (stele) के मध्य सीमा निर्धारण का कार्य करती है । अंतश्त्वचा की कोशिकायें ढोलकाकार एवं पतली भित्तियुक्त सजीव होती है । इन कोशिकाओं मैं अरीय एवं अनुप्रस्थ भित्तियाँ स्थूलन पाये जाते हैं । जिन पर सुबेरिन का निक्षेपण पाया जाता है । जिनमें केस्पेरियन पट्टिकाएँ नहीं पाई जाती है ऐसी कोशिकाओं को मार्ग कोशिकायें (passage cell) कहते हैं ।

अंतश्त्वचा, जल एवं खनिज पदार्थों के आवागमन पर नियंत्रण करती है ।

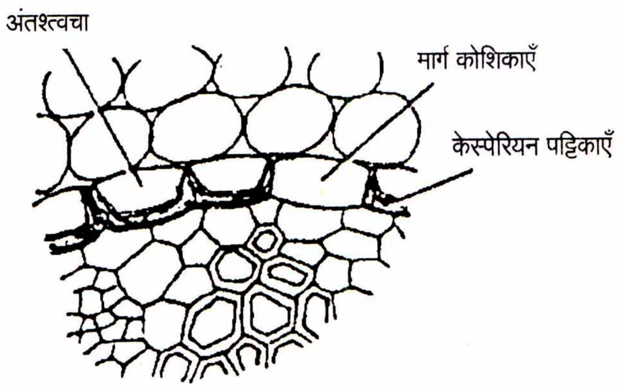

चित्र 11.11 : मूल में अन्तश्त्वचा

परिरंभ (Pericycle) : अंतश्त्वचा के नीचे एक या एक से अधिक कोशिका पंक्तियों से परिरंभ का निर्माण होता है । परिरंभ की कोशिकायें मृदूतकीय सजीव एवं पतली भित्ति वाली होती है । इसका विकास प्राक्भ्रूण (proembryo) की कोशिकाओं से होता है । मूलों में परिरंभ एक महत्वपूर्ण ऊतक है । पार्श्वीय जड़ों का विकास परिरंभ कोशिकाओं द्वारा ही होता है । द्वितीयक वृद्धि के समय संवहन केम्बियम के निर्माण में भी परिरंभ कोशिकाओं का योगदान होता है । परिरंभ कोशिकायें, कार्क एधा के विकास में भी सक्षम होती है ।

संवहन तंत्र (Vascular System): जड़ों में संवहन पूल, अरीय (radial) प्रकार के होते हैं । अर्थात् जायलम एवं फ्लोयम एक दूसरे से एकान्तर क्रम में अलग- अलग त्रिज्याओं पर उपस्थित

रहते हैं । जायलम बाह्य-आदिदारुक (exarch) प्रकार का होता है अर्थात् आदिदारु (protoxylem) बाहर की ओर एवं अनुदारु (mctaxylem) केन्द्र की ओर स्थित रहता है । जायलम का परिवर्धन अभिकेन्द्रकी (centripetal) प्रकार का होता है । आदिदारु तत्वों में वलयाकार अथवा सर्पिल स्थूलन पाया जाता है ।

द्विबीजपत्री मूलों में संवहन पूलों की संख्या 2-6 एवं एक बीजपत्री मूलों में 8-20 तक होती है । जायलम पूलों की संख्या के आधार पर मूल, एकादिदारुक (monarch), द्वि-आदिदारुक (diarch) अथवा बहुआदिदारुक (polyarch) प्रकार की हो सकती है । द्विबीजपत्री मूलों में जायलम एवं फ्लोयम संपूलों के मध्य मृदूतकी कोशिकायें उपस्थित होती है । इनमें एक पर्त परिपक्व होने पर विभज्योतकी क्षमता युक्त होती है । ये पर्त द्वितीयक वृद्धि के समय संवहन एधा के निर्माण में सहायक होती है ।

मज्जा : ये मृदूतकीय कोशिकाओं का बना होता है । कभी-कभी इस में दृढ़ोतक कोशिकायें भी उपस्थित होती है । कुछ एक-बीजपत्री मूलों में मज्जा अनुपस्थित होती है, एवं मध्य में एक खोखली नलिका उपस्थित होती है । द्विबीजपत्री मूलों द्वितीयक वृद्धि के बाद मज्जा नष्ट हो जाती है ।

11.8 द्विबीजपत्री एवं एक बीजपत्री मूलों में अन्तर

<table>
<tr><th>द्विबीजपत्री मूल</th><th>एक-बीजपत्री मूल</th></tr>
<tr><td>
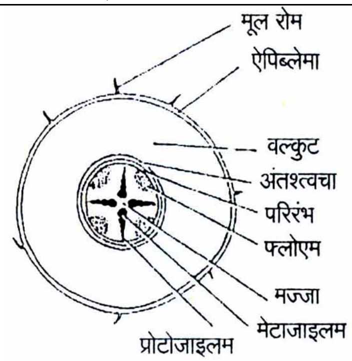

चित्र 11.12 : द्विबीजपत्री मूल

(1) वल्कुट ऊतक कम विकसित होता है ।
</td><td>
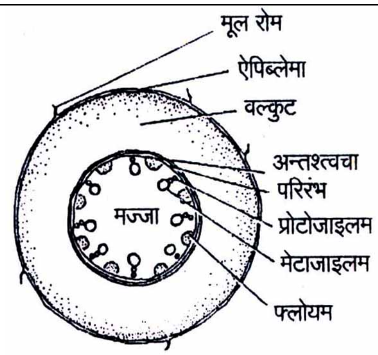

चित्र 11.13 : एकबीजपत्री मूल

वल्कुट ऊतक तुलनात्मक रूप से अधिक विकसित होता है ।
</td></tr>
<tr><td>(2) परिरंभ ऊतक से पार्श्वीय मूल, संवहन एधा एवं काग एधा का विकास होता है ।</td><td>परिरंभ ऊतक से केवल पार्श्वीय मूलों का विकास होता है ।</td></tr>
<tr><td>(3) मूल, द्विदारुक से षटदारुक तक होती है ।</td><td>मूल - बहु -दारुक होती है ।</td></tr>
<tr><td>(4) प्रोटोजाइलम कोशिकायें प्रायः बहुकोशीय होती हे</td><td>प्रोटोजाइलम कोशिकायें गोलाकार होती है ।</td></tr>
<tr><td>(5) मज्जा अल्पविकसित होती है ।</td><td>मज्जा सुविकसित होती है ।</td></tr>
<tr><td>(6) द्वितीयक वृद्धि पाई जाती है ।</td><td>द्वितीयक वृद्धि अनुपस्थित होती है ।</td></tr>
</table>

(7) संवहन रश्मियाँ उपस्थित होती हैं ।	संवहन रश्मियाँ अनुपस्थित होती है ।

11.9 मूलों में द्वितीयक वृद्धि

द्वितीयक वृद्धि, द्विबीजपत्री मूलों में उपस्थित होती है यह एक बीजपत्री मूलों में अनुपस्थित होती है । द्वितीयक वृद्धि की प्रक्रिया में दो प्रकार के विभज्योतक का निर्माण होता है । प्रथम संवहन-एधा का एवं द्वितीयक काग-एधा का । संवहन एधा, अन्दर की ओर द्वितीयक जायलम तथा बाहरी ओर द्वितीयक फ्लोयम का निर्माण करती है । अत्यधिक द्वितीयक वृद्धि के कारण, प्राथमिक फ्लोयम, अंतश्त्वचा वल्कुट इत्यादि नष्ट होकर निर्मोचित (sloughe) होने लगते है । इस समय परिरंभ या वल्कुट में कागएधा का निर्माण होता है । कागएधा से परिचर्म (periderm) का विकास होता है ।

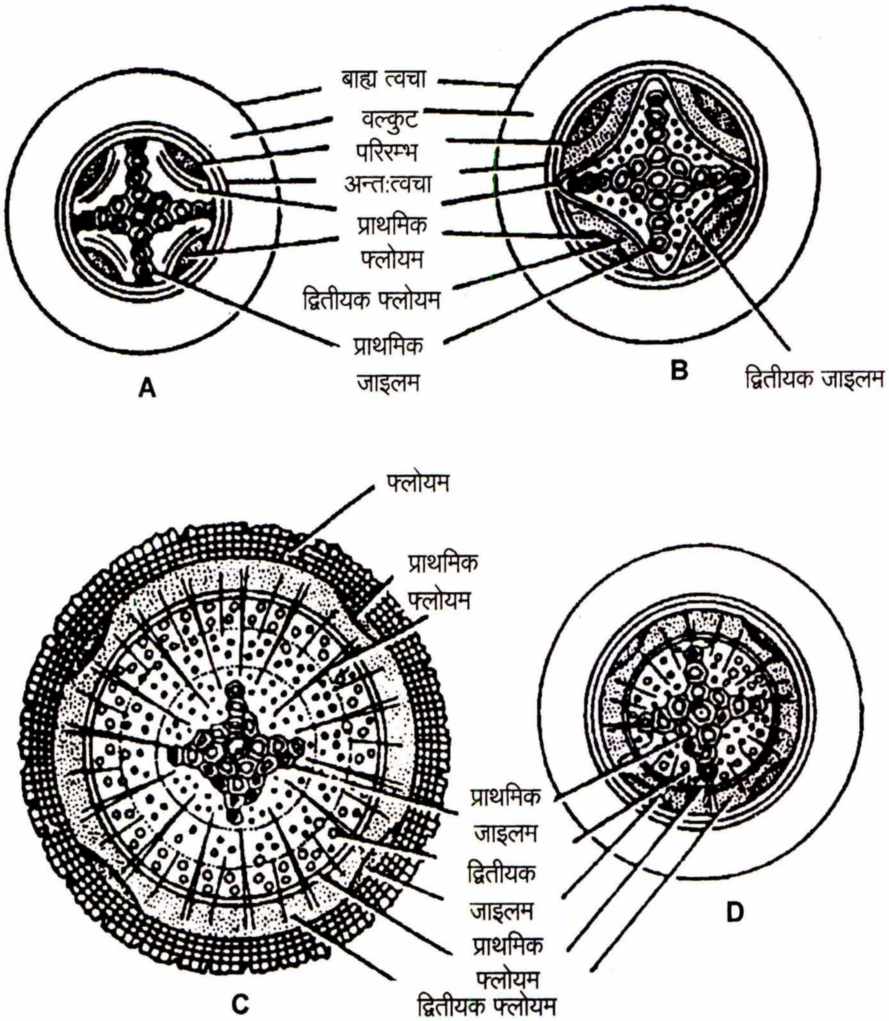

चित्र 11.14 : द्विबीजपत्री जड़ में द्वितीयक वृद्धि : A. प्रारम्भिक अवस्था, B. केम्बियम का निर्माण, C. द्वितीयक संवहन ऊतकों का परिवर्धन, D. पूर्णतया विकसित अवस्था

11.9.1 संवहन एधा की उत्पत्ति एवं कार्य

मूलों में संवहन एधा का विकास प्राक्‌एधा (procambium) के विभाजन से होता है । मूलों में प्राक्‌एधा अरीय स्थिति में पाई जाती है जो आरम्भ में प्राथमिक फ्लोयम एवं प्राथमिक जाइलम के मध्य अविभेदित अवस्था में पाई जाती है ।

आरम्भ में प्रोटोजाइलम के सामने, बाहर की ओर उपस्थित कोशिकायें चापाकार (arched) एधा का निर्माण करती है । इस के उपरान्त प्राथमिक फ्लोयम के नीचे की ओर चापाकार एधा का निर्माण होता है । ये सभी चापाकार एधा के टुकड़े आपस में जुड़ कर एक सम्पूर्ण एधा की वलय बना लेते हैं । आरम्भ में यह एधा का वलय लहरदार रूप से विकसित होता है । किन्तु कुछ समय बाद यह एधा का वलय पूरी तरह गोलाकार हो जाता है । इसे संवहन एधा कहते हैं । संवहन एधा सम्पूर्ण, वलय पर बाहर की ओर द्‌वितीयक फ्लोयम एवं अन्दर की ओर द्‌वितीयक जाइलम का निर्माण करती है । इस प्रकार से मूल का व्यास बढ़ने लगता है । द्‌वितीयक वृद्धि के परिश्रम स्वरूप प्राथमिक जाइलम केन्द्र में आ जाते हैं एवं प्राथमिक फ्लोयम परिधि की ओर धकेल दिये जाते हैं या दबाव के कारण नष्ट होने लगते हैं ।

11.9.2 संवहन रश्मियाँ

द्‌वितीयक वृद्धि के समय कुछ पादप मूलों में संवहन एधा की कुछ कोशिकायें जायलम एवं फ्लोयम का निर्माण न करके अरीय रूप से मृदूतकी कोशिकाओं का निर्माण करती है । यह मृदूतकी कोशिकायें संवहन पूलों के मध्य विकसित होती है । ये रश्मियाँ द्‌वितीयक जाइलम में से होती हुई मूल के केन्द्रीय भाग तक पहुँच जाती है । संवहन रश्मियाँ तने की तुलना में मूलों में अधिक विकसित होती है ।

11.9.3 परित्वक (Periderm)

अत्यधिक द्‌वितीयक वृद्धि के परिश्रम स्वरूप, अंतश्त्वचा के बाहर उपस्थित ऊतक नष्ट होने लगते हैं । ऐसी अवस्था में रक्षात्मक ऊतक परित्वक का विकास होता है । परित्वक के विकास में आरम्भ में प्रायः बाहरी वल्कुट में कागएधा (cork cambium) का निर्माण होता है । कागएधा एक सम्पूर्ण वलय के रूप में विकसित होती है । कागएधा की कोशिकायें परिनतिक विभाजन द्‌वारा बाहर की ओर कार्क कोशिकाओं का निर्माण करती है एवं अन्दर की ओर द्‌वितीयक वल्कुट (secondary cortex) का निर्माण करती है । कार्क कोशिकायें मृत होती है । इनकी भित्तियों पर सुबेरिन का जमाव होता है । कार्क कोशिकायें अरीय पंक्तियों में विन्यासित होती हैं । कार्क हवा, पानी एवं अम्ल के प्रति अपारगम्य होता है । कार्क कोशिकायें वायु की उपस्थिति के कारण लचली होती हैं । व्यवसायिक कार्क स्विरकस सुबर (Quercus suber) पादप से प्राप्त होता है ।

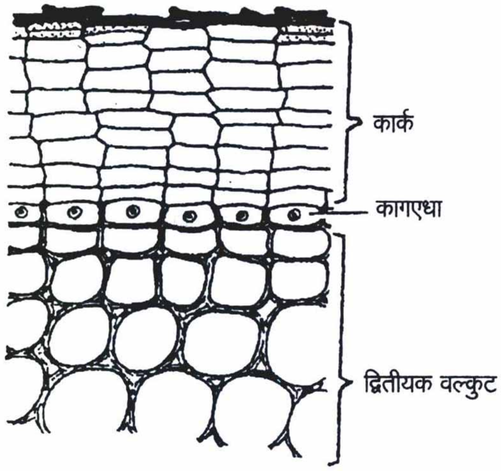

चित्र 11.15 : परित्वक

कागएधा, परिनतिक विभाजन द्वारा भीतर की ओर सजीव मृदूतकीय कोशिकाओं का निर्माण करती है । इन कोशिकाओं से द्वितीयक वल्कुट का विकास होता है । द्वितीयक वल्कुट कोशिकायें भी अरीय पंक्तियों में व्यवस्थित रहती है ।

कार्क, कागएधा, एवं द्वितीयक वल्कुट को संयुक्त रूप से परित्वक कहते हैं ।

वातरन्ध्र (lenticel): कार्क ऊतक में कुछ स्थानों पर छिद्र जैसी संरचनायें उपस्थित होती है । इन छिद्रनुमा संरचनाओं के नीचे पतली भित्तियुक्त, शिथिलतापूर्वक, दूर-दूर व्यवस्थित मृदूतकी कोशिकायें होती है । इन्हें वातरन्ध्र कहते हैं । वातरन्ध्र द्वारा पादप का आंतरिक संरचना का बाहरी वातावरण से सम्पर्क स्थापित होता है । वातरन्ध्र गैसीय आदान प्रदान के लिये उत्तरदायी है । इन के द्वारा गैसीय विनिमय होता है ।

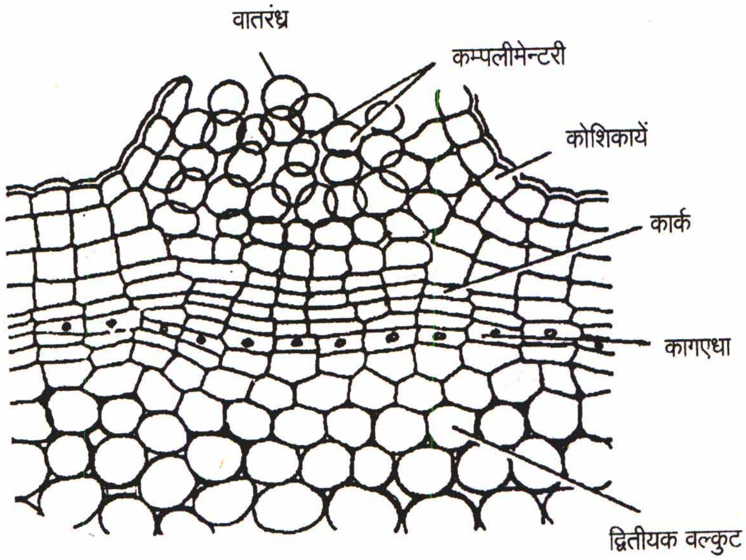

चित्र 11.16 : वातरन्ध्र

बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1. प्राथमिक मूल का विकास............ से होता है ।
2. मूलरोम............. कोशिकीय होते हैं ।
3. पार्श्वमूल की उत्पत्ति................... होती है ।
4. मूलों में संवहन पूल............ होती है ।
5. मूलांकुर के अतिरिक्त किसी अन्य पादप अंग से विकसित मूल को .... मूल कहते हैं ।
6. मूलों में जायलम.......... प्रकार का होता है ।
7. जलीय पादपों में मूलगोप के स्थान पर............. उपस्थित होती है ।
8. हिस्टोजन वाद का प्रतिपादन .... ने किया ।
9. गोपकजन से.......... का विकास होता है ।
10. कार्पर-केप सिद्धांत.............. ने प्रस्तुत किया ।

सत्य / असत्य बताइये

1. पार्श्वीय जड़ों का विकास परिरंभ से होता है । (सत्य / असत्य)
2. मूलगोप का कार्य जड़ों की वृद्धि करना है । (सत्य / असत्य)
3. एक बीजपत्री मूलों में बहुदारुक अवस्था पाई जाती है । (सत्य / असत्य)
4. शान्त केन्द्र सिद्धांत थामसन व क्लोव्स ने प्रस्तुत किया । (सत्या / असत्य)
5. जड़ के दीर्घीकरण क्षेत्र में मूलरोम पाये जाते हैं । (सत्य / असत्य)
6. विभज्योतक कोशिकायें अनिश्चित काल तक विभाजन की क्षमता रखती है । (सत्य / असत्य)
7. मूलशीर्ष विभज्योतक अंत्यस्थ होता है । (सत्य / असत्य)
8. वातरंध्र से गैसीय विनियम होता है । (सत्य / असत्य)
9. मार्ग कोशिकायें परिरंभ में पाई जाती है । (सत्य / असत्य)
10. कागएधा द्वितीयक पार्श्वीय विभाज्योतक है । (सत्य / असत्य)
11. अपस्थानिक मूल का विकास मूलांकुर से होता है । (सत्य / असत्य)
12. कार्क कोशिकायें मृत एवं सुबेरिन युक्त होती है । (सत्य / असत्य)
13. मार्ग कोशिकायें कागएधा में पाई जाती है । (सत्य / असत्य)
14. कार्पर-क्षेत्र में कोशिका विभाजन “T” पैटर्न से होता है । (सत्य / असत्य)
15. कार्क, कार्कएधा एवं द्वितीयक वल्कुट को संयुक्त रूप से परित्वक कहते हैं । (सत्य / असत्य)

11.10 सारांश

संवहनी पादपों में जड़ प्रथम पादप संरचना है जो बीज के अंकुरण के पश्चात् विकसित होती है । जड़ें पादप को मृदा में स्थिरता प्रदान कराती हैं एवं मृदा से जल एवं खनिजों का अवशोषण करती है । जड़ों का विकास मूलांकुर से होता है । इन में पर्ण, पर्व एवं पर्वसन्धियों का विभेदन नही होता है । एक-बीजपत्री पादपों में रेशेदार अथवा झगड़ा मूल तन्त्र का विकास होता है एवं

द्विबीजपत्री पादपों में मूसला जड़ तन्त्र का विकास होता है । जड़ के अग्रस्थ सिरे पर मूलगोप उपस्थित होती है जो मूलशीर्ष को सुरक्षा प्रदान कराती है । मूलों के अग्रिम क्षेत्र के बाद मूलरोम क्षेत्र पाया जाता है । इस क्षेत्र में एक कोशिकीय मूलरोम सघन रूप से उपस्थित होते है । मूलरोमों का विकास अधिचर्म कोशिकाओं से होता है । मूलरोम द्वारा मृदा से जल एवं खनिज लवणों का अवशोषण होता है । मूलों में मूलशीर्ष विभज्योतक, मूलगोप की उपस्थिति के कारण उप-अंत्यस्थ होती हैं । मूलशीर्ष विभज्योतक के क्रियाशीलता के कारण जड़ों की वृद्धि होती है । जड़ों के शीर्ष विभज्योतक की संरचना रख क्रियाशीलता के लिए अनेक मत प्रस्तुत किये गये है । इनमें हेन्सटीन द्वारा प्रतिपादित "हिस्टोजन सिद्धांत " एवं श्यूप द्वारा प्रतिपादित कार्पर-केप सिद्धांत सर्वमान्य है । मूलशीर्ष को विभज्योतक कोशिकाओं की संख्या के आधार पर अलग-अलग संगठनों में विभाजित किया गया है । आन्तरिक संरचना में, मूलशीर्ष में रंभ एवं वल्कुट के अग्रस्थ मध्य छोर पर एक "शांत क्षेत्र " पाया जाता है । शांत क्षेत्र की कोशिकायें प्रायः विभाजित नहीं होती है ये निष्क्रिय रहती हैं । शांतक्षेत्र के कार्य सम्बन्ध में भी अलग- अलग मत है । मान्यता है कि शान्त- क्षेत्र मूल की वृद्धि को नियन्त्रित करता है । आन्तरिक संरचना में मूलों में बाह्यत्वचा, वल्कुट एवं संवहन तंत्र पाये जाते हैं । अधिचर्म में रंध्र एवं क्यूटिकल का अभाव होता है । वल्कुट प्राय मृदूतकी कोशिकाओं का बना होता है । अंतश्त्वचा की कोशिकाओं में केस्पेरिन पट्टिकायें पाई जाती है । अंतश्त्वचा में मार्ग कोशिकायें उपस्थित होती है । पार्श्वमूल का विकास अन्तर्जात, परिरंभ से होता है । संवहन पूल अरीय प्रकार के होते हैं । जायलम बाह्य- आदिदारुक प्रकार का होता है । जायलम पूलों की संख्या के आधार पर मूल एकादि-दारुक से बहुआदिदारुक प्रकार की हो सकती है । द्विबीजपत्री मूलों में द्वितीयक वृद्धि पाई जाती है एवं परित्वक का विकास भी होता है ।

11.11 शब्दावली

(1) **मूलांकुर** (Radicle) : भ्रूण अक्ष का निचला भाग जिससे प्राथमिक मूल विकसित होते हैं।

(2) **पार्श्वमूल** (Later Root) : प्राथमिक मूल के परिरंभ से विकसित अन्तर्जात मूल ।

(3) **अपस्थानिक मूल** (Adventitious Root) : मूलांकुर के अतिरिक्त अन्य पादप से विकसित मूल ।

(4) **धनात्मक गुरुत्यानुवर्तौ** (Positively Geotropic) : जब किसी पादप अंग की वृद्धि गुरुत्वाकर्षण की ओर होती हो ।

(5) **ऋणात्मक प्रकाशनुवर्ती** (Negative Geotropic) : जब किसी पादप अंग की वृद्धि प्रकाश के विपरीत भूमि की ओर है ।

(6) **अन्तर्जात** (Endogenous): जब पादप संरचना का विकास अंतश्त्वचा के भीतरी ओर से होता हो ।

(7) **अरीय संवहन पूल** (Radial Vascular Bundle) : जब जायलम एवं फ्लोयम पूल एक दूसरे से एकान्तर क्रम में अलग-अलग त्रिज्याओं पर उपस्थित हो ।

(8) **बाह्य-आदिदारुक** (Exarch-xylem) : जब आदिदारुक परिधि की ओर एवं अनुदारु केन्द्र की ओर हो ।

(9) **मूलगोप** (Root Cap) : मूलों के अग्रस्थ शीर्ष पर टोपी सदृश्य संरचना ।

(10) **मूल-कोटरिका** (Root Pockets) : जलीय पादपों के मूल में मूलगोप के स्थान पर उपस्थित संरचना ।

(11) **विभाज्योतकी** (Meristematic) : कोशिकाएँ जो अनिश्चित समय तक विभाजित हो सके ।

(12) **त्वचाजन** (Dermatogen) : मूलशीर्ष विभज्योतकी की बाहरी पर्त जो बाह्यत्वचा तंत्र का विकास करती है ।

(13) **वल्कुटजन** (Peribleme) : मूलशीर्ष विभाज्योतकी की मध्य पर्त जिससे वल्कुट का निर्माण होता है ।

(14) **रंभजन** (Plerome) : मूलशीर्ष विभाज्योतकी की आन्तरिक पर्त जिससे संवहन ऊतकों का निर्माण होता है ।

(15) **मूलरोम** (Root Hair) : मूलों के सतह पर उपस्थित एक कोशिकीय, धागेनुमा संरचनायें जो जल एवं खनिजों का अवशोषण करते हैं ।

(16) **केपे** (Kappe) : मूलशीर्ष विभज्योतकी का बाहरी क्षेत्र जिसमें कोशिका विभाजन "T" पैटर्न से होता है ।

(17) **कार्पर** (Korper) : मूलशीर्ष विभाज्योतकी का मध्य क्षेत्र जिसमें कोशिका विभाजन "T" पैटर्न से होता है ।

(18) **शांतक्षेत्र** (Quiescent Center) : मूलशीर्ष विभज्योतकी में रंभ एवं वल्कुट के अग्रस्थ छोर पर अर्धवृत्ताकार क्षेत्र जिसमें कोशिका विभाजन बहुत कम होता है ।

(19) **रोमकोरक** (Trichoblasts) : अधिचर्म में उपस्थित कोशिकायें जिनसे मूलरोम विकसित होते हों।

(20) **अधिपादप** (Epiphyte) : ऐसे पादप जो अन्य पादपों के तनों पर जीवन यापन करते हों ।

(21) **आद्रताग्राही** (Hygroscopic) : जो नमी के प्रति संवेदनशील हो ।

(22) **मार्ग कोशिकायें** (passage Cell) : अंतश्त्वचा में उपस्थित कोशिकायें जिनमें केस्पेरियन पट्टिकायें अनुपस्थित हों।

(23) **केस्वेरियन पट्टिकायें** (Casperian Strip) : अंतश्त्वचा की कोशिकाओं में उपस्थित अरीय एवं अनुत्रस्त सुबेरिन का भित्ति स्थूलन ।

(24) **प्राक्एधा** (Procambium) : शीर्षस्थ विभज्योतक में उपस्थित कोशिकाओं का समूह जो प्राथमिक संवहन पूलों का निर्माण करता है ।

(25) **प्राक्भ्रूण** (Pro-embryo) : दो कोशिकीय अवस्था से लेकर भ्रूण में अंग विभेदन तक की सभी प्रावस्थाएँ प्राक्भ्रूण कहलाती है ।

(26) **कागजन** (Phellogen) **या कागएधा** (Cork Cambium) : ये द्वितीयक पार्श्वीय विभज्योतक है । इससे कार्क एवं द्वितीयक वल्कुट का विकास होता है ।

(27) **काग** (Cork) : कागएधा द्वारा बहार की ओर विकसित सुबेरिन युक्त मृत कोशिकाओं की संरचना ।

(28) **द्वितीयक वल्कुट** (Secondary Cortex) : कार्क कैम्बियम द्वारा भीतर की ओर विकसित पतली भित्तियुक्त सजीव मृदूतकी कोशिकायें ।

(29) **परित्वक** (Periderm) : कार्क, कार्कएधा एवं द्वितीय वल्कुट को संयुक्त रूप से परित्वक कहते हैं

(30) **वातरन्ध्र** (Lenticel) : कार्क में उपस्थित छिद्र जैसी संरचनायें जिनके नीचे पतले भित्तियुक्त शिथिलतापूर्व व्यवस्थित मृदूतकी कोशिकायें पाई जाती है ।

11.12 संदर्भ मन्द

1. पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन प्रो. पी. सी. त्रिवेदी, डॉ. निरजन शर्मा, डॉ. जमना लाल शर्मा रमेश बुक डिपो, जयपुर
2. पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन, डॉ. कैलाश अग्रवाल, डॉ. ज्योत्सना शर्मा कॉलेज बुक हाउस, जयपुर
3. Plant anatomy, by A. Fahn, Pergaman Press

11.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

रिक्त स्थानों की पूर्ति

(1) मूलांकुर	(2) एक	(3) अन्तर्जात	(4) अरिये
(5) अपस्थानिक	(6) बाह्य आदिदारुक	(7) एमूलकोटीरका	(8) हेन्सटीन
(9) मूलगोप	(10) श्यूप		

सत्य / असत्य

(1) सत्य	(2) असत्य	(3) सत्य	(4) सत्य	**(5)** असत्य
(6) सत्य	(7) असत्य	(8) सत्य	(9) असत्य	(10) सत्य
(11) असत्य	(12) सत्य	(13) असत्य	(14) असत्य	(15) सत्य

11.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) मूल की प्राथमिक संरचना सचित्र समझाइये ।

(2) मूलों के विभिन्न क्षेत्रों के बारे में लेख लिखिए ।

(3) मूल में द्वितीयक वृद्धि का सचित्र वर्णन कीजिये ।

(4) एक बीजपत्री रख द्विबीजपत्री मूलों में अन्तर लिखिए ।

(5) मूलशीर्ष विभाज्योतकी के सिद्धांतों को समझाइये ।

(6) परित्वक की संरचना, विकास एवं कार्य लिखिये ।

इकाई 12 : मूल : पार्श्व मूल; मूल के रूपान्तरण (Root : Lateral root ; Modifications of root)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 पार्श्वमूल
12.3 जड़ों का रूपान्तरण
12.3.1 संग्रहण जड़ें
12.3.2 मूसला जड़ों में संग्रहण
12.3.3 जड़ों का आधार प्रदान हेतु रूपान्तरण
12.3.4 मूलों में प्रजनन हेतु रूपान्तरण
12.3.5 प्रकाश संश्लेषी मूल
12.3.6 चूषकांग मूल
12.3.7 आर्द्रताग्राही मूल
12.3.8 श्वसन मूल
12.3.9 पर्ण मूल
12.3.10 प्लावी जड़ें
12.3.11 संकुचनशील जड़ें
12.3.12 कंटिका मूल
12.4 जड़ों की सूक्ष्मजीवों के साथ अन्योन्य क्रियायें
12.4.1 कवक मूल संगठन
12.4.2 मूल ग्रन्थिकाएँ
12.4.3 मूल ग्रन्थि का परिवर्धन
12.5 सारांश
12.6 शब्दावली
12.7 संदर्भ ग्रन्थ
12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने का मुख्य उद्देश्य निम्न है :

(1) पादपों में मूल तंत्र का ज्ञान प्राप्त करना ।

(2) पार्श्व मूलों के विकास का ज्ञान प्राप्त करना ।

(3) मूलों के विविध प्रकार के रूपान्तरणों का ज्ञान प्राप्त करना ।

(4) रूपान्तरित मूलों की संरचनाओं एवं क्रियाओं से अवगत होना ।

12.1 प्रस्तावना

पादपों में प्राथमिक जड़ों का विकास, भ्रूण में उपस्थित मूलांकुर से होता है । प्राथमिक जड़ों से पार्श्व जड़ों का विकास होता है । इस प्रकार से द्विबीजपत्री पादपों में प्राथमिक जड़ चिरस्थायी नहीं होती है एवं अनेक रेशेदार जड़ों का विकास होकर झगड़ा जड़ तंत्र का निर्माण होता है । अनेक पादप समुदायों में मूलांकुर के अतिरिक्त अन्य पादप संरचनाओं से भी जड़ों का विकास होता है, ऐसी जड़ें अपस्थानिक जड़ें कहलाती हैं । जड़ों का मुख्य कार्य पादपों को मृदा में स्थिरीकरण का एवं मृदा से जल एवं खनिज लवणों का अवशोषण करने का है । अनेक पादपों में जड़ें रूपान्तरित होकर अन्य कार्य का सम्पादन करने लगती है जैसे भोज्य पदार्थ का संग्रहण, पादप को अतिरिक्त सहारा प्रदान करना, श्वसन का कार्य करना, कायिक जनन करना, वातावरण से नमी, जलवाष्प का अवशोषण करना, भूमि में नाइट्रोजन स्थरीकरण करना, जलोद्भिद पादपों में प्लावन में सहायक होना एवं परजीवी पादपों में चूषकांगों का निर्माण करना आदि कार्य करने लगती हैं । इन कारणों से जड़ों में संरचनात्मक आकारिकीय परिवर्तन हो जाते हैं । मृदा में अनेक सूक्ष्मजीवी उपस्थित होते हैं जो जड़ों से सघन सम्पर्क रखते हैं एवं कवल मूल (mycorrhiza) तथा मूल ग्रन्थियों (root nodules) जैसी सहजीवी गठबंधन संरचनाओं का निर्माण करते हैं ।

12.2 पार्श्व मूल (Lateral root) का निर्माण

पार्श्व मूल का विकास परिरंभ से होता है अत: इनकी उत्पत्ति अंतर्जात (endogenous) होती है। मूल की विभिन्न प्रकार के रंभ में, जैसे द्वि, त्रि, चतुर्थ अथवा बहुआदिदारुक मूलों में, पार्श्व मूल की उत्पत्ति भिन्न-भिन्न स्थानों से होती है । द्वि-आदिदारुक मूल में पार्श्वमूल जायलम एवं फ्लोयम के मध्य परिरंभ कोशिकाओं से होता है । त्रि-आदिदारुक, चतुर्थादिदारुक एवं पंचादिदारुक मूलों में जायलम के सामने उपस्थित परिरंभ कोशिकाओं से एवं बहुआदिदारुक मूल में फ्लोयम के सम्मुख परिरंभ कोशिकाओं से पार्श्वमूल विकसित होती है ।

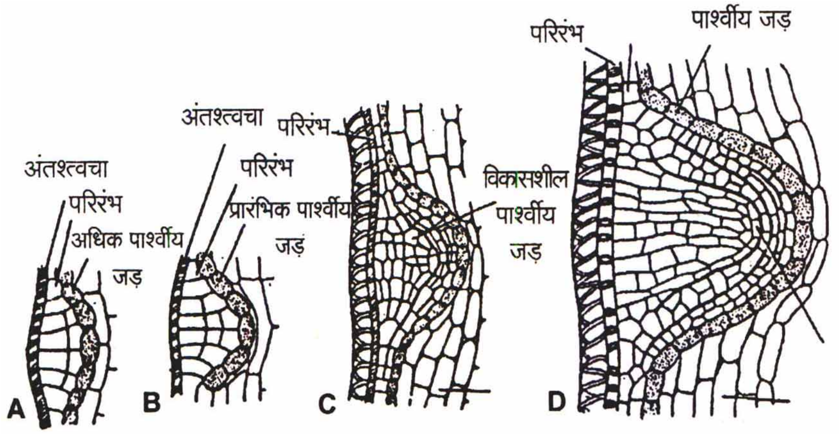

चित्र 12.1 : पार्श्वीय जड़ों की उत्पत्ति की विभिन्न अवस्थाएँ : A. प्रारम्भिक अवस्था, B. परिरंभ का विभाजन, C. पार्श्वीय जड़ का निर्माण, D. विकासशील पार्श्वीय जड़

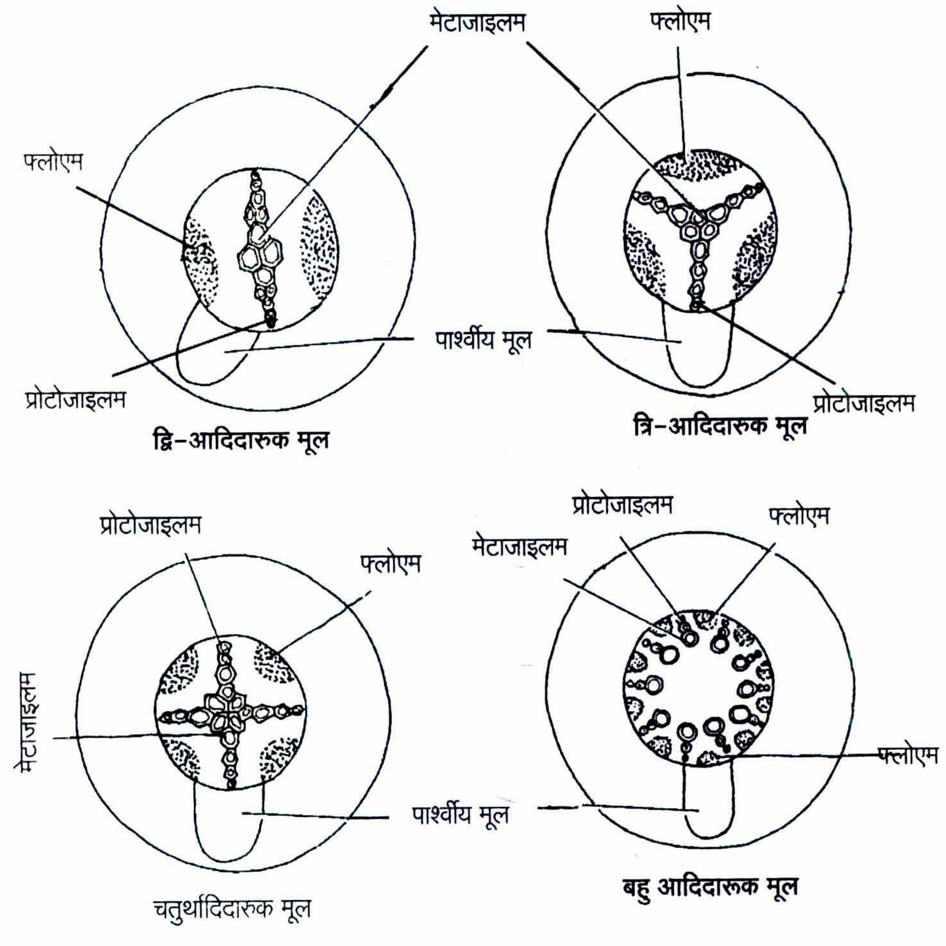

चित्र 12.2 : विभिन्न प्रकार के मूल रंभ में पार्श्वीय जड़ों की उत्पत्ति

पार्श्व मूल का विकास परिरंभ कोशिकाओं में परिनतिक विभाजन (periclinal division) से आरम्भ होता है । इस के उपरान्त ये कोशिकायें परिनतिक एवं अपनतिक (anticlinal) विभाजन

से विभाजित होकर वल्कुट की ओर वृद्धि करने लगती है । लगातार वृद्धि करती हुई पार्श्वमूल अंतश्त्वचा की कोशिकाओं को नष्ट करती हुई वल्कुट कोशिकाओं में वृद्धि करती हुई अन्त में अधिश्चर्म को भेद कर बाहर मृदा में प्रवेश कर जाती है ।

12.3 जड़ों का रूपान्तरण

कुछ पादपों में जड़ें अपने सामान्य कार्य, पादपों को स्थिरीकरण प्रदान करने एवं जल व लवणों के अवशोषण के अतिरिक्त अन्य कार्य सम्पादित करने लगती हैं । जैसे भोज्य पदार्थों का संग्रहण, श्वसन, कायिक जनन, आरोहण, नाइट्रोजन स्थरीकरण, प्लवन, आदि कार्य करने लगती है । इन रूपान्तरित जड़ों में संरचनात्मक परिवर्तन हो जाते हैं ।

12.3.1 संग्रहण जड़ें

अनेक पादपों में प्राथमिक जड़ें एवं अपस्थानिक जड़ें रूपान्तरित होकर मांसल हो जाती है एवं भोजन संग्रहण का कार्य करती है । सामान्यत : प्राथमिक मूलों में वल्कुट में मृदूतक कोशिकाओं में भोजन का संग्रहण होता है । अधिकांश संग्रहण मूलों में द्वितीयक वृद्धि होती है । इस प्रकार से विकसित मृदुतक मृदूतक कोशिकाओं में भोजन का संग्रहण होता है । इस प्रकार की जड़ों में अनेक विभिन्नताएँ पाई जाती हैं जो संग्रहण के लिये अनुकूलित होती है ।

12.3.2 मूसला जड़ों में संग्रहण

इस प्रकार की जड़ें भोज्य पदार्थों के संचयन से मोटी एवं मांसल हो जाती है । इस प्रकार के रूपान्तरण प्राथमिक जड़ों में पाये जाते हैं । इनमें द्वितीयक एवं तृतीयक जड़ें पतली एवं रेशेदार होती है । कुछ पादपों में बीजपत्राधार (hypocotyl) भी भोज्य पदार्थों का संचय कर मांसल हो जाते हैं । मांसल मूसला जड़ें विभिन्न आकृतियाँ बना लेती है । इनकी आकृतिक के आधार पर मांसल मूसला जड़ों को निम्न श्रेणियों में विभाजित किया गया है ।

(a) **शंकुरूप** (Conical)**जड़ें** : इस प्रकार की मूसला जड़ें शंकु की आकृति वाली होती है जैसे गाजर । इनका आधारीय भाग चौड़ा और मोटा होता है एवं अग्र भाग क्रमशः पतला होता है । इनमें आधारीय भाग बीजपत्राधार से व्युत्पन्न होता है एवं मांसल होता है । इनमें द्वितीयक वृद्धि होती है । जायलम एवं फ्लोयम में मृदूतक अधिक मात्रा में बनते हैं जिनके प्रचुरोद्भवन (proliferation) से संग्रहण ऊतक बनते हैं ।

चित्र 12.3 : शंकु रूप मूल (गाजर)

(b) **तर्करूपी** (Fusiform) : जड़ें इस प्रकार की जड़ों की आकृति तर्कु (spindle) के समान होती हैं। ये जड़े मध्म में मोटी एवं ऊपर एवं नीचे क्रमशः पतली होती हैं। जैसे मूली। इनमें आधारीय भाग फूले हुए बीजपत्राधार से व्युत्पन्न होता है । इनमें सामान्य प्रकार की द्वितीयक वृद्धि होती है । मृदूतक अधिक मात्रा में बनते हैं । मृदूतक का प्रचुरोद्भवन होकर संग्रहण ऊतकों का निर्माण होता है ।

चित्र 12.4 : तर्कुरूपी मूल (मूली)

(c) **कुंभ रूप** (Napiform) **जड़ें** : ये मांसल जड़ें गोलाकार या लड्डू की आकृति की होती हे । इनका ऊपरी सिरा मटकी के समान होता है एवं अंतिम सिरा धागे के सदृश होता है जैसा शलजम एवं चुकंदर । शलजम में आधारीय भाग फूला हुआ होता है जो बीजपत्राधार का रूपान्तरण होता है । चुकन्दर में संवहनी पूलों के अनेक वलय पाये जाते हैं । आरम्भ में द्वितीयक वृद्धि में संवहनी एधा, संवहन पूलो का वलय बनाकर निष्क्रिय हो जाती है । इसके बाद एधा का दूसरा वलय फ्लोयम से बाहर एवं तीसरा वलय परिरंभ से बनता है । जायलम एवं फ्लोयम में मृदूतक अधिक मात्रा में बनते हैं । अनुप्रस्थ काट में परिरंभ गहरे लाल रंग के एवं संवहन ऊतक हल्के रंग के दिखाई पड़ते हैं ।

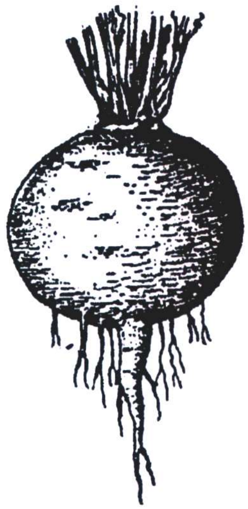

चित्र 12.5 : कुंभीरूपी मूल (शल्जम)

(d) **कंदिल या गाँठदार** (Tuberous) जड़ें : इस प्रकार की मांसल जड़ों की निश्चित आकृति नहीं होती है । जैसे गुलब्बास (Mirabilis jalapa) कभी-कभी ये जड़ें पालिवत (lobed) हो जाती है जैसे इकाईनोसिस्टस लेबेटा (Echinocystis labata)।

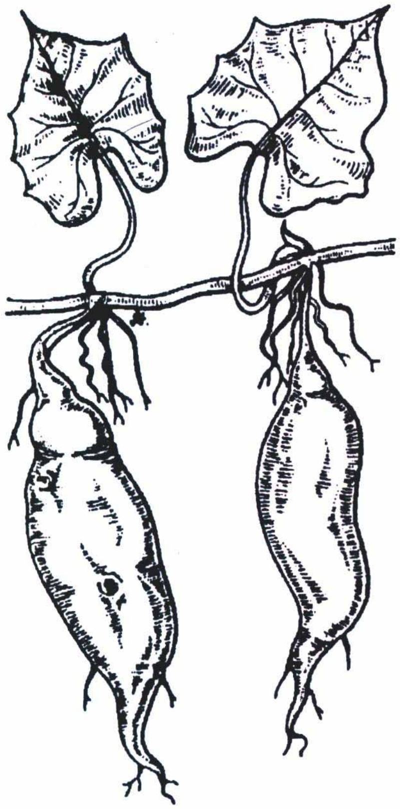

चित्र 12.6 : शंकरकंद की कन्दिल मूल

(e) **हस्ताकार** (Palamate) **जड़ें** : इस प्रकार की जड़ें खाद्य का संचयन करके फूल कर हस्ताकार आकृति ग्रहण कर लेती है जैसे एकोनिटम पादप में ।

12.3.3 जड़ों का आधार प्रदान हेतु रूपान्तरण

जड़ों के आधार प्रदान (support) करने हेतु रूपान्तरण कुछ पादपों में अतिरिक्त सहारा प्रदान करने के लिये अपस्थानिक जड़ों का विकास होता है । ये जड़ें निम्न प्रकार की होती हैं ।

(a) **स्कन्ध मूल** (Pro roots): इस प्रकार की अपस्थानिक जड़ें पादपों की आड़ी या क्षैतिज शाखाओं से विकसित होती है । आरम्भ में ये जड़ें लम्बवत् रूप से नीचे की ओर लटकती रहती हैं । एवं क्रमिक रूप से भूमि की ओर वृद्धि करती रहती हैं । अन्त में ये जड़ें मृदा में प्रवेश कर मोटाई में वृद्धि कर तनों को खंभों के समान आधार प्रदान करती हैं । इस प्रकार की जड़ें बरगद में पाई जाती है । अधिक आयु वाले पादपों में कभी-कभी मुख्य तना मृत होने पर यह जड़ें तने के समान कार्य करने लगती है ।

चित्र 12.7 : बरगद पादप : स्कन्ध मूल युक्त

(b) **अवस्तम्भ या सहायक मूल** (Still root) : कुछ पादप जैसे गन्ने (Saccharum officinarum) एवं केवड़ा (Pandanus odoratissimus) में तना, लम्बा एवं पतला, अशाखित एवं संधित (jointed) होते हैं । इन तनों के आधारीय पर्वसंधियों से रेशेदार अपस्थानिक जड़े विकसित होती हैं । ये जड़ें तिर्यक रूप से नीचे की और वृद्धि करती है एवं मृदा में प्रवेश कर जाती है । इस प्रकार से यह तने को सहारा प्रदान करने का कार्य करती हे।

चित्र 12.8 : केवड़ा में अवस्तम्भ मूल

(c) **अरोही मूल या प्रतानी मूल** (Climbing) : इस प्रकार की जड़ें पान (Piper beetle)पोथोस (Pothos) जैसे पादपों में विकसित होती हैं । इस प्रकार की अपस्थानिक जड़ें पर्व संधियों से विकसित होती है । ये आरोही जड़ें दीवारों या वृक्ष के तनों में दरारों में प्रवेश कर पौधे के तने को ऊपर चढ़ाने में सहायताप्रदान करती हैं । कुछ पादपों की आरोही जड़ों से गोंद जैसा पदार्थ स्रावित होता हैं । जो तने को आधार पर स्थिर रखने में सहायक होता है । पान की आरोही जड़ों में बिम्ब (disc) समान संरचनाओं का निर्माण होता है जो तने को आधार से पकड़ बनाने में सहायक होते हैं ।

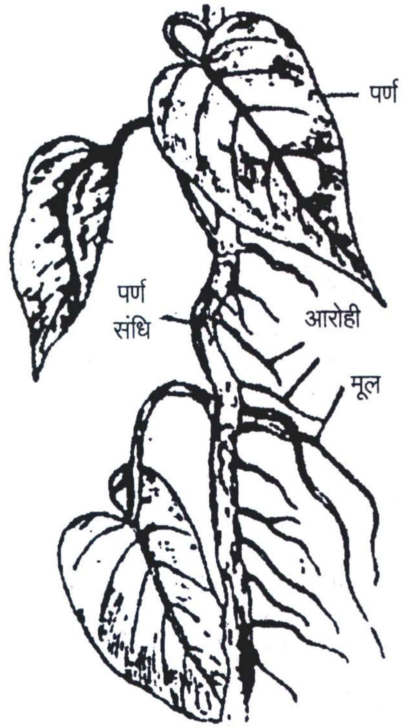

चित्र 12.9 : आरोही मूल

(d) **वत्रमूल** (Butterss Roots) : उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों के सघन सदाबहार वनों में अनेक विशालकाय वृक्ष पाये जाते हैं किन्तु इन पादपों की जड़ें अधिक गहराई तक विकसित नहीं होती है । ऐसे वृक्षों में तनों के निचले हिस्से से तख्ते के समान मोटी जड़ें विकसित हो जाती है । इन जड़ों की सहायता से वृक्ष मजबूती से मृदा में स्थिर रहते हैं । जैसे - सेमल में (Bombax malabarica) I

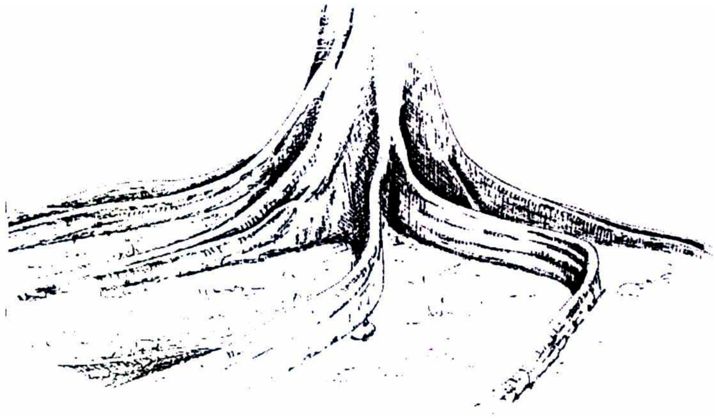

चित्र 12.10 : वत्रमूल

12.3.4 मूलों में प्रजनन हेतु रूपान्तरण

अनेक पादपों में जड़ें रूपान्तरित होकर प्रवर्धन (propagation) का कार्य सम्पादित करती है । इन जड़ों पर के कलिकायें विकसित हो जाती है । अनेक पादपों में भूमि सतह के पास जड़ों से

अपस्थानिक कलिकाएँ (adventitions buds) विकसित हो जाती हैं । ये कलिकाएँ वायवीय स्तम्भ विकसित करते हैं इन्हें अंत : भूस्तारी (suckers) कहते हैं । जड़ संयुक्त अत : भूस्तारी को पादप से अलग करके नवीन पादप का विकास किया जा सकता है । सेब, तथा चैरी में इस प्रकार की अंत : भूस्तारी संरचनायें बनती है । शतावरी (Asparagus) एवं डहेलिया (daheliea) में (चित्र 12.11) मांसल अपस्थानिक जड़ों से अपस्थानिक कलिकाएँ (adventitious buds) उत्पन्न होती है । अनुकूल प्रस्थितियों में ये कलिकाएँ नये पादपों का निर्माण करती है । इसी प्रकार से शकरकन्द में भी अपस्थानिक जड़ें प्रजनन का कार्य करती है । डहेलिया की कन्दीय मूल के समीपस्थ सिरों से कलिकाओं का प्रवर्धन होता है । इन कलिकाओं से नवीन पादप विकसित होते हैं ।

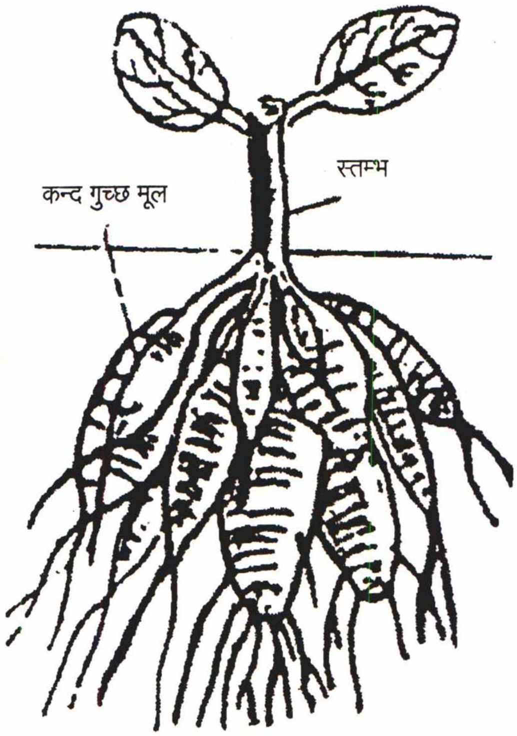

चित्र 12.11 : डहेलिया की कन्द गुच्छ मूल

12.3.5 प्रकाश संश्लेषी या परिपाची मूल (Photosynthetic or Assimilatory Roots)

सामान्यत : जड़ों में हरित लवक उपस्थित नहीं होता है किन्तु टिनोस्पोरा (Tinospora) तथा सिंघाडा (Trapa) की अपस्थानिक जड़ों में हरित लवक पाया जाता है । ये जड़ें प्रकाश में उद्भासित (expose) रहती है । ये जड़ें प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती है । टिनोस्पोरा में यह अपस्थानिक जड़ें पर्व संधियों से विकसित होकर रस्सियों के समान लटकती रहती है ।

टीनीयोफिल्लम (Taeniophyllum) एक पर्णविहीन आर्किड है । इस पादप में वायवीय अपस्थानिक जड़ें (ribben) के समान चपटी होकर हरे रंग की हो जाती है एवं प्रकाश संश्लेषण

का कार्य सम्पादित करने लगती है । सिंघाडा में भी कटी-फटी निमग्न जड़ें प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती है ।

12.3.6 चूषकांग मूल या परजीवी मूल (Haustorial Roots or Parasitic Roots)

इस प्रकार की जड़ें परजीवी पादपों में जैसे अमरबेल (Cuscuta), विस्कम (Viscum) एवं लोरेन्थस (Loranthus) में पाई जाती है । ये जड़ें परपोषी पादप में प्रवेश कर परपोषी पादप के संवहन ऊतकों से सम्पर्क स्थापित कर लेती है एवं परजीवी पादप को परपोषी पादप से भोज्य पदार्थ, जल एवं खनिज लवणों का अवशोषण करती है ।

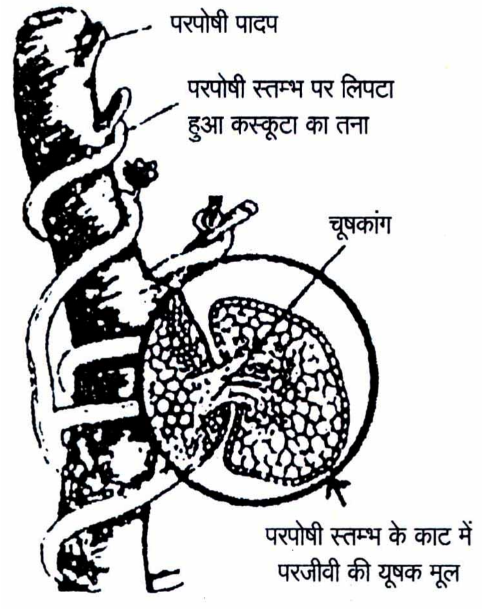

चित्र 12.12 : कस्कूटा की चूषक मूल

12.3.7 आद्रताग्राही या अधिपादपीय मूल (Hygroscopic or Epiphytic Roots)

कुछ अधिपादपीय पादपों में जैसा आर्किड वांडा (Vanda) एवं वनीला (vanilla) में विशेष प्रकार की वायवीय जड़ें गुच्छों के रूप में पादप शरीर से लटकती हुई पाई जाती है । ये जड़ें आर्द्रताग्राही होती है । इनमें मूलगोप एवं मूलरोम भी नहीं पाये जाते हैं । ये हरित लवक युक्त होती है । इनमें विशेष प्रकार का मृत स्पंजी ऊतक वेलामेन (velamen) पाया जाता है । वेलामेन की सहायता से ये जड़ें वातावरण से जलवाष्प का अवशोषण करती है ।

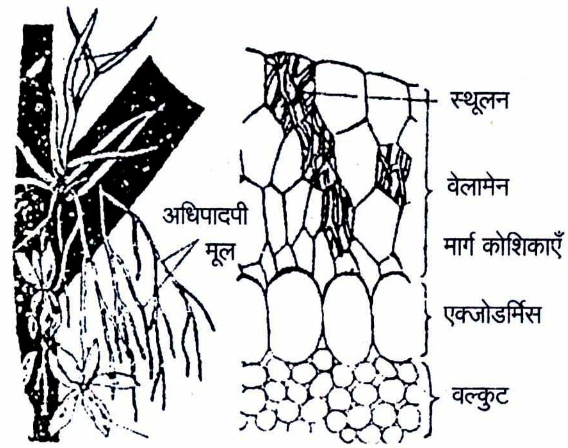

चित्र 12.13 : A. आर्किड में आधिपादपी मूल, B. आधिपादपी मूल का अनुप्रस्थ काट

12.3.8 श्वसन मूल (Respiratory Root)

समुद्र तटों के पास खारी दलदलों, छिछले किनारों एवं छोटे-छोटे टापुओं के कीचड़युक्त स्थानों पर ऊगने वाले पादपों में जड़ों को वृद्धि एवं श्वसन हेतु मृदा में पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं हो पाती । इन लवणोद्भिद् (halophytes) अथवा मेग्रूंव वनस्पति (mangrove vegetation) के पादपों में श्वसन मूल ऋणात्मक गुरुत्वानुवर्ती एवं प्रकाशनुवर्ती होती है । ये जड़ें उर्ध्वाधर वृद्धि कर के भूमि से बाहर निकल आती है । ये जड़ें प्राथमिक जड़ों से विकसित होती है । इनको न्यूमेटोफोर (Pneumatophore) कहते हैं । इनका कुछ भाग कीचड़ में डूबा रहता हैं एवं शेष भाग वायवीय होता है । वायवीय भाग मजबूत काग स्तर (corky layer) से आवरित रहता है । इन पर अनियमित वातरंध्र पाये जाते है । इन जड़ों में वायु, छिद्रों द्वारा जड़ों में प्रविष्ट करती है एवं ऑक्सीजन की कमी को पूरा करती है । ये जड़ें गैसों के विनिमय में सहायक होती हैं । उदाहरण-सोनेरेशिया (Sonneratia), राइजोफोरा (Rhizophora) ।

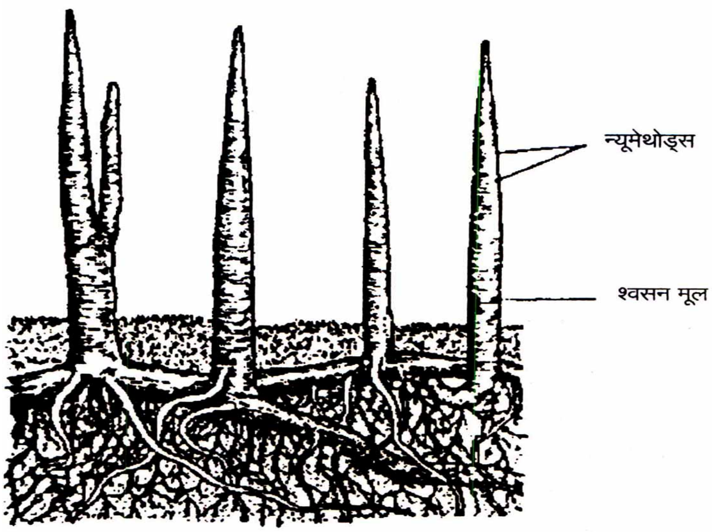

चित्र 12.14 : श्वसन मूल

12.3.9 पर्णभूल (Leaf Root)

कुछ पादपों में पत्तियों के किनारों से कलिकाएँ उत्पन्न होती हैं । इन कलिकाओं से जड़ें विकसित होती है । इन्हें पर्ण मूल कहते हैं जैसे पत्थरचट्टा (Bryophyllum) पादप में । ये जड़ युक्त कलिकाएँ मातृ पादप से अलग होकर वर्धीप्रजनन का कार्य सम्पादित करती है ।

12.3.10 प्लावी जड़ें (Floating Root)

कुछ पादपों में जैसे जूसिया (Jussiaea repens) में पर्व-संधियों में रंगहीन फूली हुई प्लावी संरचनाएँ विकसित होती है । इनमें वायुतक उपस्थित होते हैं । इनकी वायु गुहाओं में हवा की उपस्थिति से ये जड़ें फूली रहती है । ये जड़ें पादपों को जल सतह पर उभरने में सहायक होती है।

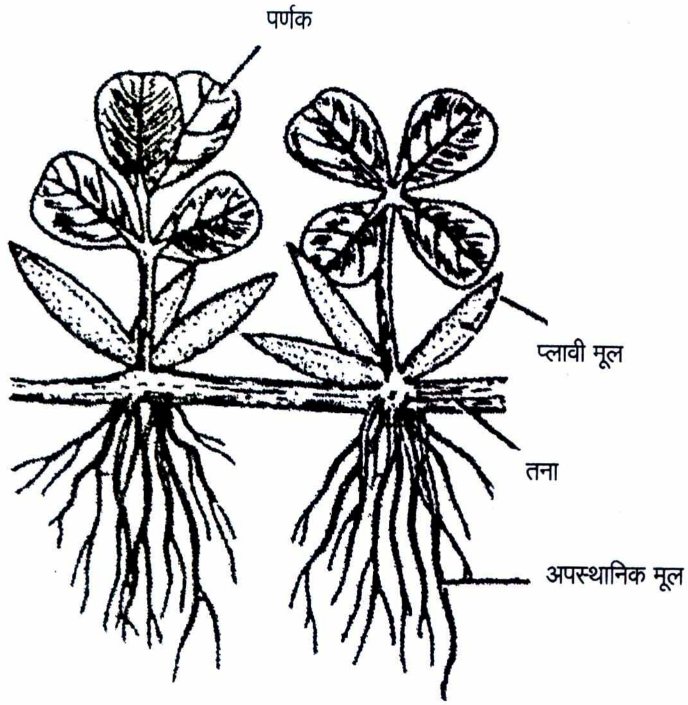

चित्र 12.15 : जूसिया की प्लावी जड़ें

12.3.11 संकुचनशील जड़ें (Contractile Root)

प्रायः इस प्रकार की जड़ें उन पादपों में पाई जाती है जिनमें भूमिगत रूपान्तरित तने धनकन्द (corm) एवं प्रकंद (rhizome) उपस्थित होते हैं । वृद्धि प्रक्रिया में नये धनकन्द एक के ऊपर एक क्रम में विकसित होते हैं । इन धनकन्दों के ऊपर विशेष प्रकार की जड़ें विकसित होती है जिन्हें संकुचनशील जड़े कहते हैं । ये जड़ें धनकन्द को भूमि में अन्दर की ओर खींचने में मदद करती है एवं धनकन्द को भूमि से ऊपर नही आने देती है जैसे केसर में ।

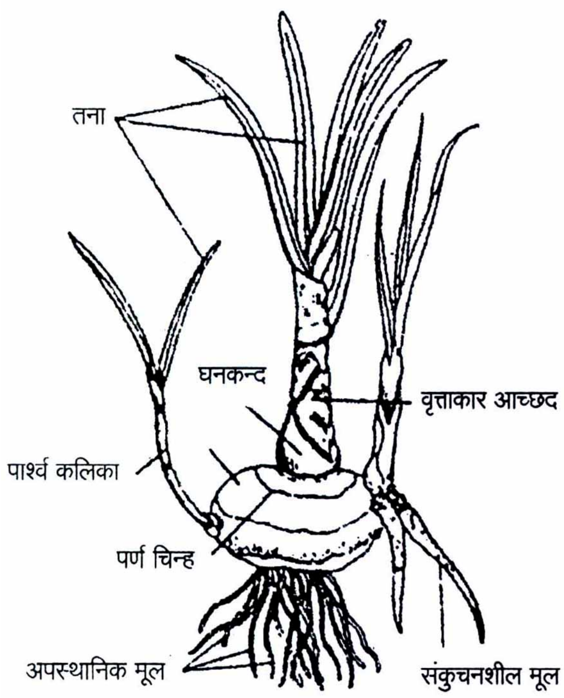

चित्र 12.16 : क्रोकस : संकुचनशील मूल

13.3.12 कंटिका मूल (Root Thorn)

खजूर एवं विभिन्न पाम पादपों में तने के आधारीय भाग से विशेष प्रकार की अपस्थानिक जड़ें उत्पन्न होती हैं । ये जड़ें नुकीली रथ कांटों के सद्दश रूपान्तरित हो जाती हैं इनको मूल कटक (Root Thorm) कहते हैं ।

12.4 जड़ों की सूक्ष्मजीवों के साथ अन्योन्य क्रियायें (Interaction of Root with Microbes)

मृदा में पादपों के जड़ों के आस-पास अनेक प्रकार के सूक्ष्मजीवी उपस्थित होते हैं । ये सूक्ष्मजीवी पादपों के जड़ तंत्र से गठबंधन बना लेते हैं एवं विशेष संरचनाओं का निर्माण करते हैं जैसे कवक मूल गठबंधन (mycorrhiza) एवं मूलग्रन्थियाँ (root nodules) । इस प्रकार के गठबंधन सहजीवी प्रकार के होते हैं ।

12.4.1 कवक मूल संगठन (Mycorrhiza)

मृदा में अनेक कवक प्रजातियाँ, उच्चवर्गीय पादपों के जड़ तंत्र के साथ सहजीवी गठबंधन स्थापित कर लेते हैं । इस प्रकार के अन्र्तसम्बन्ध से कवक एवं पादपों को दोनों को लाभ होता है । जड़ों में कवक जाल की स्थिति के आधार पर कवक मूल संगठन निम्न प्रकार के हो सकते हैं :

(1) **बाह्य कवक मूल** (Ectomycorrhiza) : इस प्रकार के गठबंधन में पादपों के अंतस्थ मूल शाखाओं (terminal root lets) के चारों ओर सघन कवक जाल विकसित हो जाता है । इस कवक जाल को हारटिगनेट (harignet) या आच्छादी कवक मूल (sheathing

mycorrhiza) कहते हैं । हारटिग नेट के कवक तन्तु जड़ों की बाहरी परतों, मूलीय-त्वचा एवं वल्कुट कोशिकाओं के मध्य भी प्रविष्ट हो जाते हैं । बाहृय कवक मूल गठबंधन साधारण त था ऐगीरकेल्स गण के सदस्य जैसे बोलीटस (Boletus), अमानिटा (Amanita) के द्वारा स्थापित किया जाता है । कवक आश्रय एवं पोषण हेतु जड़ों से सम्बन्ध स्थापित करती है एवं बदले में पादपों की लवण अवशोषण क्षमता में वृद्धि करती है ।

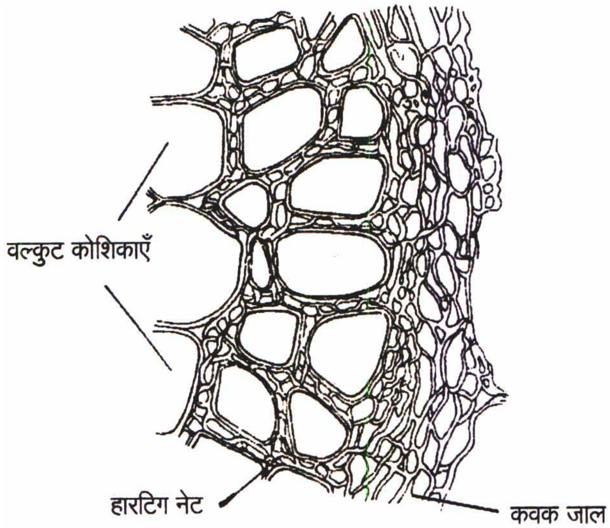

चित्र 12.17 : बाहृय कवक मूल गठबन्धन

लगभग 30 बीजधारी पादपों के सदस्य प्रजातियों में कवक-मूल गठबन्धन पाये जाते हैं । पाइनेसी (Pinaceae), फगसी (Fagacese) एवं टीलियेसी (Tiliaceae) पादप कुलों में इस प्रकार के कवक -मूल गठबन्धन बहु त साधारण हैं ।

(2) **अन्त : कवक -मूल संगठन** (Endomycorrhiza) : इस प्रकार के गठबंधनों में कवक जाल जड़ों के वल्कुट क्षेत्र में गहराई तक प्रविष्ट कर जाते हैं । इस प्रकार का गठबंधन, पटहीन एवं पटयुक्त दोनों प्रकार की कवक प्रजातियों द्वारा स्थापित हो सकता है । कवक प्रजातियों के आधार पर ये कवकमूल दो प्रकार के होते हैं:

(अ) सरल कवक मूल (Simple mycorrhiza) : इस प्रकार के कवक मूल गठबंधन, बेसिडियोमाइसिटीज वर्ग के पटयुक्त कवक जैसे राइजोक्टीनिया द्वारा स्थापित होते हैं । इनमें हरटिग जाल का निर्माण नहीं होता है । जड़ों की सतह पर सामान्य जड़ों के समान मूल रोम पाये जाते हैं । इस प्रकार के सरल कवकमूल आर्किडस एवं शंकुधारी पादपों में पाये जाते हैं ।

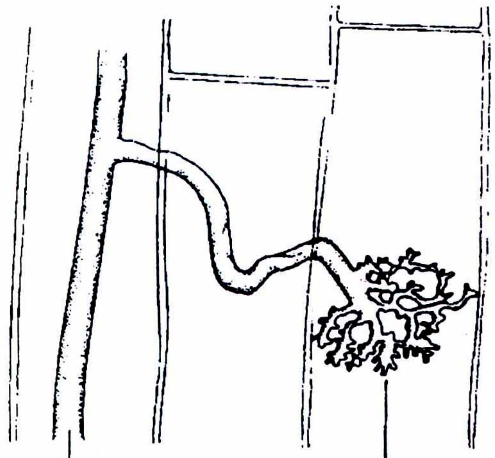

चित्र 12.18 : अन्त कवकमूल संगठन

(ब) पुटिकायुक्त कवकमूल या वाम कवक (Vesicular Arbuscular Mycorrhiza or VAM Fungi) : इस प्रकार के कवक मूल गठबंधन में पादपों की जड़ों में पुटिकाओं (vesicles) एवं कुर्वकों (arbuscles) का निर्माण होता है । इसीलिये इन्हें पुटिकायुक्त कवक मूल अथवा वाम फंजाई भी कहते है । इस प्रकार के कवकमूल गठबन्धन, जाइगोमाइसिटीस वर्ग के गण म्यूकोरेल्स के सदस्य, जैसे एन्डोगोन (Endogone) ग्लोमस (Glomus) आदि द्वारा स्थापित किये जाते हैं । इस गठबन्धन में कवक, पोषी पादप की वल्कुट कोशिकाओं में न्तराकोशिकीय (intracellular) रूप से प्रविष्ट होती है, एवं पुटिकाओं (vesicles) एवं द्विशाखित या बहु शाखित चूषकांगों का निर्माण करती है ।

(स) बाह्य अन्त : कारक (Ecto-endomycorrhiza) : इस प्रकार का कवकमूल गठबन्धन कुल ऐरिकेसी के सदस्यों में पाया जाता है । ऐरिकेसी के सदस्य आरबस्टस (Arbustus) में जड़ें फूली हुई छोटी एक आवरण (sheath) से ढकी होती हैं लेकिन यहाँ हरटिग जाल अनुपस्थित होता है । इसमें बाह्य वल्कुट की कोशिकाओं के बीच अन्तरकोशिकीय कुंडलनों का निर्माण होता है ।

12.4.2 मूल ग्रंथिकाएँ (Root Nodules)

लेग्युमिनोसी कुल के पादपों के जड़ों में एवं कुछ अन्य उच्चवर्गीय पादपों की जड़ों में मूल ग्रंथियों का निर्माण होता है । ये असंख्य छोटी-छोटी गोलाकार या घुंडीदार फूली हुई संरचनाएँ होती हैं जिन्हें नोडयूल या ट्यूबरकल्स कहते है । इन संरचनाओं में नाइट्रोजन स्थिरकारी जीवाणु राइजोबियम (rhizobium) सहजीवी के रूप में रहते है । यह जीवाणु एवं पादप मूल के मध्य एक सहजीवी गठबन्धन है । राइजोबियम एक छड़ाकार, एक कशाभिका युक्त, ग्राम -ऋणात्मक जीवाणु है जो मूल रोगों के माध्यम से जड़ों मे प्रविष्ट होता है । राइजोबियम जीवाणु वातावरण में उपस्थित मुक्त नाइट्रोजन को अकार्बनिक नाइट्रोजीनस यौगिकों जैसे नाइट्रेट्स एवं नाइट्राट्स में परिवर्तन कर देते हैं । इस क्रिया को नाइट्रोजन स्थिरीकरण कहते हैं । इस प्रकार यह गठबन्धन

भूमि के उपजाऊपन बढ़ाने में सहायक होता है । लेग्युम पादप, जीवाणुओं को आवास एवं कार्बोहाइड्रेट का पोषण प्रदान कराते हैं एवं जीवाणु पादपों को नाइट्रोजन यौगिक उपलब्ध कराते हैं।

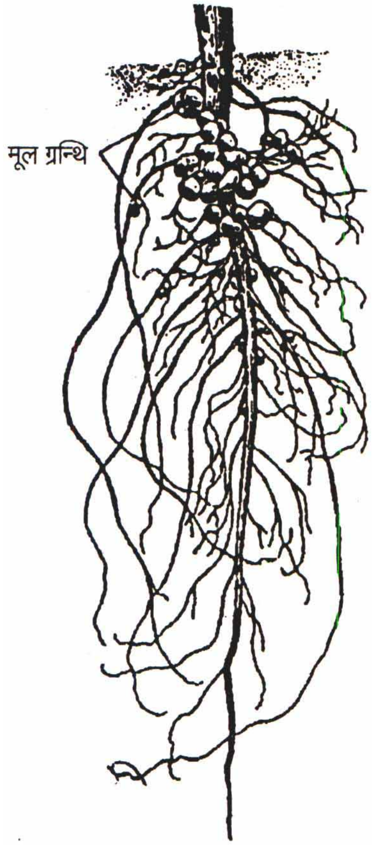

चित्र 12.19 : मूल ग्रंथिकाएँ

12.4.3 मूल ग्रंथि का परिवर्धन (Development of Root Nodule)

सर्वप्रथम पादप मूल लेक्टिन (lectin) को स्रावित करती है । लेक्टिन के उपस्थित होने पर विशेष प्रभेद के राइजोबियम जीवाणु इन जड़ों की ओर आकर्षित होते हैं, एवं इनकी सतह से चिपक जाते हैं । ये जीवाणु मूल रोमों में कुण्डलित (coiling) होने लगते हैं । इन कुंडलित मूलरोम सिरों के माध्यम से जीवाणु, जड़ के भीतर प्रविष्ट हो जाते हैं । मूलरोम भित्ति के अंतर्वलन से ही संक्रमण तन्तु का निर्माण होता है । जड़ की वल्कुट कोशिकाएँ जीवाणु द्वारा स्रावित सायटोकाइनिन (cytokinin) के अभिप्रेरण से उदीप्त होकर विभाजित होने लगती है एवं मूल ग्रन्थि का निर्माण करती हैं । इसके पश्चात् ग्रन्थि शीर्ष के निकट कोशिकायें बारम्बार विभाजन करके मूल ग्रन्थि का आकार बढ़ाने लगती है । इस क्षेत्र में जीवाणु नहीं पाये जाते किन्तु ग्रन्थि कोशिकाएँ बहुगुणित (polypoid) हो जाती है । मूल ग्रन्थि के आकार बढ़ने से मूल की बाह्यत्वचा टूट जाती है । इसके पश्चात् वल्कुट क्षेत्र की कोशिकाएँ विभाजन करके की बाहरी पर्त का निर्माण करती है । जड़ के संवहन क्षेत्र से उत्पन्न संवहन स्ट्रेंड मूल ग्रन्थि के जीवाणुसम क्षेत्र (bacterial region) को चारों ओर से घेर लेता है । प्रत्येक स्ट्रेंड की अन्तश्त्वचा पृथक होती है।

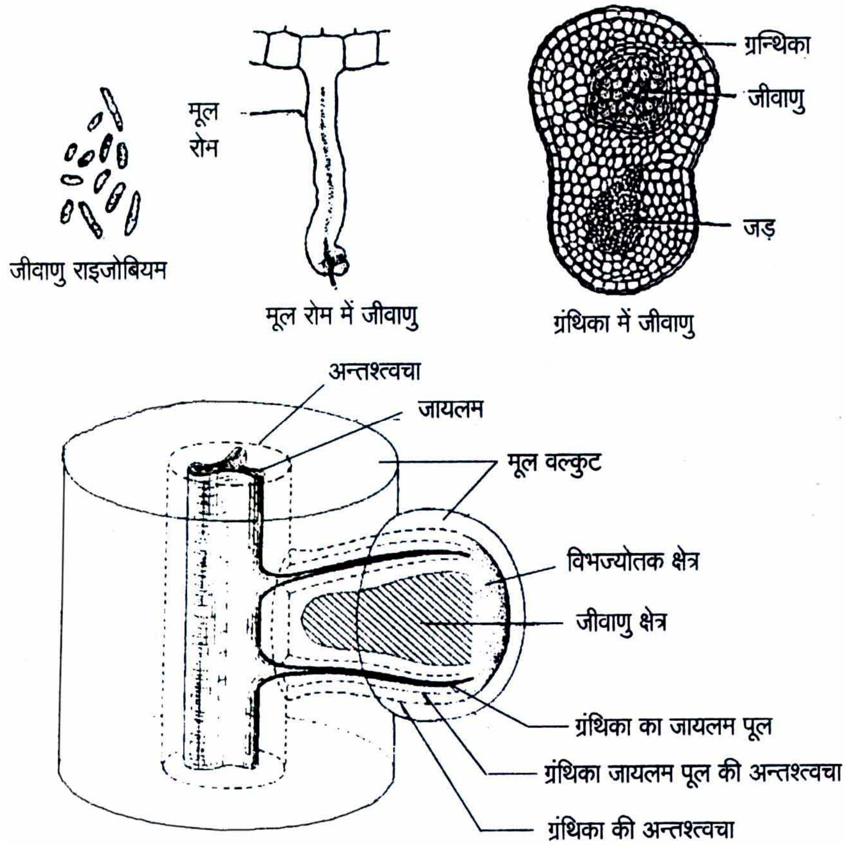

चित्र 12.20 : मूल ग्रंथि का परिवर्धन

बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति करे

1. कवक मूल एक........................... गठबन्धन है ।
2. पार्श्व मूल का विकास.................................... से होता है ।
3. पार्श्व मूल के विकास में आरम्भ में परिरंभ कोशिकाओं में.................. विभाजन होता है ।
4. VAM कवक पादप मूल में............................ बनाते हैं ।
5. मूल ग्रंथिका में .... जीवाणु पाये जाते हैं ।
6. मूल ग्रंथिकर में वल्कुट कोशिकाएँ............................ हो जाती है ।
7. एन्डोगोन कवक................................ बनाती है ।
8. राइजोबियम............................... कशाभिक युक्त जीवाणु है ।
9. राइजोबियम जीवाणु मूलों में........................ के माध्यम से प्रवेश करता है ।
10. सायटोकाइनिन एक पादप .... है ।

सत्य / असत्य

1. मूली एक शंकुरूप जड़ है । (सत्य / असत्य)
2. गाजर एक शंकुरूप जड़ है । (सत्य / असत्य)
3. शलजम एक कुम्भीरूप जड़ है । (सत्य / असत्य)

4.	राइजोफोरा में न्यूमेटोफोर्स पाये जाते हैं ।	(सत्य / असत्य)
5.	तर्कुरूपी जड़ों में आधारीय भाग फूले हुए बीजपत्राधार से व्युत्पन्न होता है ।	(सत्य / असत्य)
6.	ग्रंथिल मूल जड़ का पर जीवी गठबन्धन है ।	(सत्य / असत्य)
7.	सिंघाडे में प्लावी जड़े पाई जाती हैं ।	(सत्य / असत्य)
8.	केवडा पादप में श्वसन मूल पाई जाती है ।	(सत्य / असत्य)
9.	टीनोस्पोरा पादप में वायवीय परिपायी मूल पाई जाती है ।	(सत्य / असत्य)
10.	आर्किड पादपों के जड़ में वेलामेन ऊतक पाया जाता है ।	(सत्य / असत्य)

12.5 सारांश

संवहनी पादपों में जड़ एक आधारभूत एवं महत्वपूर्ण संरचना है । द्विबीजपत्री पादपों में मूसला जड़ विकसित होता है । इस प्रकार के जड़ तंत्र में पार्श्वीय जड़ों का विकास परिरंभ से होता है । अत : इनका निर्माण अन्तर्जात प्रकार का होता है । द्विदारुक जड़ों में पार्श्वीय जड़ों का विकास जायलम एवं फ्लोयम के मध्य उपस्थित परिरंभ कोशिकाओं से, त्रिदारुक, चतुष्दारुक एवं पंचदारुक जड़ों में जाइलम के सम्मुख उपस्थित परिरंभ कोशिकाओं से एवं बहुदारुक जड़ों में फ्लोएम के सम्मुख उपस्थित परिरंभ कोशिकाओं से पार्श्वीय जड़ों का विकास होता है ।

जड़ों का प्रमुख कार्य पादपों का भूमि में स्थिरीकरण करना एवं मृदा से जल एवं खनिज लवणों का अवशोषण करना है । कुछ पादपों में जड़ें रूपान्तरित होकर विशिष्ट कार्य करने लगती हैं । जड़ों के विशिष्ट कार्य निम्न है :

(1) भोज्य पदार्थों का संग्रहण

(2) पादपों में तनों को अतिरिक्त सहारा प्रदान करना

(3) कमजोर तनों वाले पादपों में आरोहण में सहायता करना

(4) परजीवी पादपों में चूषकांगों के समान कार्य करना एवं परपोषी पादपों से भोज्य पदार्थों का अवशोषण करना

(5) जीवाणुओं से सहजीवी गठबन्धन कर, ग्रंथिल मूलों का निर्माण करना । इस प्रकार भूमि की उर्वता बढ़ाने में सहायक होना

(6) जलोद्भिद् पादपों में पादप के प्लावन में सहायता प्रदान करना

(7) ऑक्सीजन की अपर्याप्त मात्रा में श्वसन का कार्य करना

(8) कवकों से मृदा में सहजीवी गठबन्धन स्थापित कर कवक मूल का निर्माण करना

(9) पादपों में कायिक जनन में सहायक होना

इस से जड़ें पादपों के जीवन चक्र को अनेक रूप से प्रभावित करती हैं ।

12.6 शब्दावली

(1) **संवहनी पादप** (Vascular plants): पादप जीव में संवहन ऊतक जायलम एवं फ्लोयम ऊतक पाये जाते हैं ।

(2) **पार्श्वमूल** (Leteral root): प्राथमिक जड़ों के परिरंभ से विकसित जड़ें ।

(3) **द्वि -दारुक मूल** (Diarch root): जब जड़ों में दो जायलम पूल उपस्थित हो । जायलम पूलों की संख्या के आधार पर जड़ें त्रि-दारुक बहुदारुक कहलाती है ।

(4) **परिनतिक विभाजन** (Periclinal division): जब विभाजन सतह के समान्तर हो ।

(5) **मूसला जड़** (Tap root) : मूलांकुर से विकसित द्विबीजपत्री पादपों का जड़ तंत्र ।

(6) **बीजपत्राधार** (Hypocotyl): भ्रूण अक्ष का बीजपत्रों के नीचे का भाग ।

(7) **शंकुरूप** (Conical) : जब आधारीय भाग चौड़ा एवं मोटा हो एवं तथा भाग क्रमशः पतला हो जैसे गाजर ।

(8) **चूषकांग** (Haustoria) : संरचनायें जो परपोषी पादपों से भोज्य सामग्री का अवशोषण करती हैं ।

(9) **प्रकाश संश्लेषी** (Photosynthetic) ऐसी संरचनायें जो प्रकाश संश्लेषण का कार्य करती हो ।

(10) **अंत** : भूस्तारी (Suckers) : अपस्थानिक कलिकाएँ जो जड़ों से विकसित होती हैं ।

(11) **आरोही मूल** (Climbing root) : अपस्थानिक जड़ें जो पर्व संधियों से विकसित होती है एवं पादप के अरोहण में सहायक हों ।

(12) **हरटिग जाल** (Harting net) : कवकों का जाल जो जड़ों के अग्रम सिरों पर विकसित होता है ।

(13) **मूल ग्रंथिकाएँ** (Nodules) : जड़ों में उपस्थित गाढ सदृश संरचनायें ।

(14) **कवक मूल गठबन्धन** (Mycorrhiza) : जड़ों में उपस्थित कवकों का सहजीवी गठबन्धन ।

(15) **प्रचुरोद्भवन** (Proliferaton) : जब कोशिकायें अपने सामान्य आकार से अधिक विस्तृत होने लगे ।

(16) **तर्कुरूपी** (Fusiform) : संरचनायें जो मध्य में मोटी एवं ऊपर नीचे क्रमशः पतली हों जैसे मूली ।

(17) **कुंभीरूप** (Napiform) : गोलाकार लट्टू के सदृश आकृतियाँ जैसे शलजम ।

(18) **श्वसन मूल** (Respiratory root) : जड़ें जो श्वसन का कार्य सम्पादित करती हो ।

(19) **न्यूमेटोफोर** (Pneumatophore) : श्वसन मूल जो ऋणात्मक गुरुत्वानुवर्ती रख प्रकाशनुवर्ती होती है जैसे मेनग्रोल पादपों में

(20) **पर्णमूल** (Leaf root) : अपस्थानिक जड़ें जो पणों से विकसित होती हों ।

(21) **प्लावी जड़ें** (Floating root) : फूली हुई वायु -गुहाओं से युक्त जड़ें जो पादपों के तैरने में सहायक हो ।

(22) **आद्रताग्राही** (Hygroscopic) : संरचनायें जो नमी के प्रति संवेदनशील हों ।

(23) **वेलामेन** (Velamen) : आर्किड के जड़ों में उपस्थित मृत स्पंजी ऊतक जो वातावरण से जलवाष्प का अवशोषण करता है ।

(24) **सहजीवी** (Symbiont) : जब दो जीव एक दूसरे के गठबन्धन में एक दूसरे को लाभ देते हुये जीवन यापन करते हों ।

(25) **वाम** (VAM) : कवक जो मूल कोशिकाओं में पुटिकाएँ (vesicles) एवं कूर्चक (arbuscles) का निर्माण करते हो ।

12.7 संदर्भ ग्रन्थ

(1) पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन रख जनन, प्रो. पी. सी. त्रिवेदी, डॉ. निरंजन शर्मा, डा. जमनालाल शर्मा, रमेश बुक डिपो, जयपुर

(2) पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन, डॉ. कैलाश अग्रवाल, डॉ. ज्योत्सना शर्मा, कॉलेज बुक हाउस, जयपुर

12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

रिक्त स्थान की पूर्ति

(1) सहजीवी	(2) परिरंभ	(3) परिनतिक
(4) कूर्चक एवं पुटिकाएँ	(5) राइजोबियम	(6) बहु गुणित
(7) बाह्य कवक मूल	(8) एक	(9) मूलरोम
(10) हॉर्मोन		

सत्य / असत्य

(1) असत्य	(2) सत्य	(3) सत्य	(4) सत्य	(5) सत्य
(6) असत्य	(7) असत्य	(8) असत्य	(9) सत्य	(10) सत्य

12.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) विभिन्न प्रकार की संग्रहण मूलों के बारे में विस्तृत वर्णन लिखिये ।

(2) सहजीवी मूलों पर विस्तृत निबन्ध लिखिये ।

(3) मूल ग्रंथिकाएँ क्या है? मूल ग्रन्थि का परिवर्धन एवं महत्व समझाइये ।

(4) पार्श्वीय जड़ों को उत्पत्ति एवं विकास का सचित्र वर्णन कीजिए ।

(5) अपस्थानिक मूल से आप क्या समझते हैं । पादपों में अपस्थानिक मूलों के रूपान्तरण बताइये ।

इकाई 13 : बीज का विकास, संरचना तथा निलम्बित संजीवन (Development Structure and Supended Animation in Seed)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना
13.2 बीज का विकास
13.3 बीज की संरचना
13.3.1 बीज चोल
13.3.2 भ्रूण
13.3.3 भ्रूण पोष
13.4 बीजों में निलम्बित संजीवन (प्रसुप्तावस्था)
13.4.1 प्रसुप्ता के प्रकार
13.4.2 प्रसुप्ता के कारण
13.4.3 प्रसुप्ता भंग करने की विधियाँ
13.5 बीज का महत्व
13.6 सारांश
13.7 शब्दावली
13.8 संदर्भ ग्रंथ
13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
13.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है :

1. बीज के विकास के दौरान होने वाले मुख्य परिवर्तनों का अध्ययन करना ।
2. एक बीजपत्री एवं द्विबीजपत्री पादपों के बीज की बाह्य व आंतरिक संरचना का अध्ययन करना ।
3. बीजों की प्रसुप्ता अथवा निलम्बित संजीवन के कारणों एवं निवारणों के बारे में जानकारी प्राप्त करना ।
4. बीज के महत्व पर प्रकाश डालना ।

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

बीजधारी पादपों (Spermatophytes) में बीज निर्माण इनका विशिष्ट लक्षण है । बीज एक अनूठी संरचना है, जो एक साथ तीन पादप पीढ़ियों क्रमशः- जनक पीढ़ी, वर्तमान बीजाणुद्भिद् पीढ़ी एवं आगामी पादप पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती है । एक बीज में माता एवं पिता दोनों जनक पौधों के गुण निहित होते हैं, इसलिए इसे भावी पौधे की लघु एवं निलम्बित अनुकृति कहा जा सकता है ।

निषेचन के पश्चात् बीजाण्ड के विभिन्न घटक मिलकर बीज का निर्माण करते हैं । युग्मनज भ्रूण में विकसित होता है । प्राथमिक भ्रूणपोष केन्द्रक एक त्रिगुणित भ्रूणपोष बनाता है, जबकि बीजाण्ड के अध्यावरण बीज के आवरण (चोल) का निर्माण करते हैं । इस प्रकार प्रारूपिक आवृतबीजी पौधे के बीज में आधारभूत संरचना बीजाण्ड की ही होती है, जिसमें कुछ घटक विलोपित अथवा कुछ

नवीन संरचनायें विकसित हो जाती हैं । प्रत्येक बीज में एक अल्पवर्धित पादप (Rudimentary plant) होता है, जिसे भ्रूण (Embryo) कहते हैं । इसमें एक भ्रूणीय अक्ष होती है, जिससे एक या दो बीजपत्र जुड़े रहते हैं, अक्ष के एक सिरे पर प्रांकुर तथा दूसरे सिरे पर मूलांकुर होता है, जिनसे क्रमशः प्ररोह एवं मूल का विकास होता है । द्विबीजपत्रियों के बीजपत्रों में भोजन संचित रहता है । भ्रूण के चारों ओर एक पोषक ऊतक होता है, जिसे भ्रूणपोष (Endosperm) कहते हैं । इसका कार्य भ्रूण को विकास और परिपक्वता के दौरान पोषण उपलब्ध कराना है । बीज के चारों ओर उपस्थित आवरण बीजचोल (Seed coat) कहलाता है, जो अध्यावरणों से विकसित होता है तथा भ्रूण को सुरक्षा प्रदान करता है ।

विभिन्न पौधों के बीज विभिन्न कारकों के अनुरूप जैसे पादप प्रजाति, बीज की प्रकृति, संग्रहण परिस्थितियों के कारण अलग-अलग अवधि तक जीवनक्षम (Viable) रहते हैं । अधिकांश जीवनक्षम बीजों को परिपक्व होते ही अनुकूल दशायें उपलब्ध कराई जायें तो अंकुरित होकर नव पादप का निर्माण करते हैं । परन्तु अनेक पौधों के बीज अनुकूल परिस्थितियों में अन्य सामान्य बीजों के समान अंकुरित नहीं हो पाते, यद्यपि वे जीवनक्षम होते हैं । इन बीजों को प्रसुप्त अथवा निलम्बित संजीवन (Dormant or suspended animation) की अवस्था में कहा जाता है । इस अवस्था में वृद्धि अस्थाई तौर पर निलम्बित रहती है त था ऐसे बीजों को अंकुरण के लिए कृत्रिम उपचार अथवा विशिष्ट बाह्य दशाओं की आवश्यकता होती है ।

13.2 बीज का विकास (Development of Seed)

निषेचन के तुरन्त पश्चात् बीज निर्माण के लिए बीजाण्ड में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं, जैसे भ्रूण परिवर्धन, भ्रूणपोष परिवर्धन तथा बीजचोल का निर्माण । इन सब परिवर्तनों के फलस्वरूप बीजाण्ड, बीज में परिवर्तित हो जाता है ।

बीज के निर्माण या परिवर्धन के समय बीजाण्ड में होने वाले परिवर्तन निम्न प्रकार हैं :

बीजाण्ड (Ovule)	**बीज (Seed)**
बीजाण्ड वृंत(Funiculus)	बीज वृंत (Stalk)
नाभिका (Hilum)	नाभिका (Hilum)
बीजाण्ड द्वार (Micropile)	बीजाण्डद्वार छिद्र (Micropyle)
अध्यावरण (Integuments)	बीजावरण (Seed Coat)
बीजाण्ड काय (Nucellus)	प्रायः अपहासित कभी-कभी परिभ्रूणपोष(Perisperms) बनाता है
भ्रूणकोष (Embryo Sac)	– अपहासित हो जाती हैं
(i) सहायक कोशिकायें (Synergids)	– विघटित हो जाती हैं
(ii) प्रतिमुखी कोशिकायें (Antipodals)	– भ्रूण(Embryo)
(iii) अण्ड कोशिका (Egg)	– भ्रूणपोष (Endosperm)
(iv) द्वितीयक केन्द्रक (Sec nucles)	– अपहासित हो जाती हैं

भ्रूण (Embryo) एवं **भ्रूणपोष** (Endosperm) का विकास एवं विभेदन एक - दूसरे से सम्बन्धित त था एक निश्चित क्रम में होता है । सामान्यत : निषेचन के बाद ही बीजाण्ड में भ्रूणपोष का विकास एवं विभेदन प्रारम्भ हो जाता है । जैसे-जैसे भ्रूणपोष की कोशिका संख्या में वृद्धि होती है, इसका आयतन भी बढ़ता जाता है । जब भ्रूणपोष पूर्णतया विकसित एवं विभेदित हो जाता है एवं अपना पूरा आकार ग्रहण कर लेता है तो इसके साथ ही भ्रूण की वृद्धि भी बड़ी तेजी से होती है । बीज जब अपने आकार का 50 प्रतिशत ग्रहण कर पाता है, तब तक भ्रूण के विभाजन लगभग पूर्ण हो चुके होते हैं । आगे चलकर भ्रूण के आकार में जो वृद्धि होती है वह मुख्यतः : इसकी कोशिकाओं के सुदीर्घिकरण के द्वारा होती है ।

भ्रूणपोष परिवर्धन के समय ही बीजाण्डकाय (Nucellus) पूर्णतया पोषण हेतु प्रयुक्त हो जाता है। कुछ पौधों के बीजों में यह एक पतली कागज जैसी झिल्ली के रूप में शेष रह जाता है त था इसे **परिभ्रूणपोष** (Perisperm) कहते हैं । अधिकांश द्विबीजपत्रियों के बीजों में भ्रूणपोष का भी परिवर्धनशील भ्रूण द्वारा उपभोग कर लिया जाता है तथा खाद्य बीजपत्रों में संग्रहीत रहता है, इन्हें **अभ्रूणपोषी बीज** (Non endospermic Seed) कहते हैं । इसके विपरीत कुछ बीजों में भ्रूण के परिपक्व होने के पश्चात् भी बीज में पर्याप्त मात्रा में भ्रूणपोष बचा रह जाता है, इन्हें **भ्रूणपोषी बीज** (Endospermic seed) कहते हैं ।

बीजाण्ड में होने वाले उपरोक्त परिवर्तनों के साथ-साथ कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन अध्यावरणों में होते हैं, जिससे बीज चोल का निर्माण होता है । अध्यावरणों में जल की मात्रा कम होने लगती है तथा ये अपेक्षाकृत शुष्क एवं कठोर-होकर बीजचोल या **बीजावरण** (Seed coat) में रूपान्तरित हो जाते हैं । बाह्य अध्यावरण परिपक्व बीज में अपेक्षाकृत मोटा एवं कठोर **बाह्य बीजचोल** या **टेस्टा** (Testa) में परिवर्तित होता है तथा आंतरिक अध्यावरण एक शुष्क एवं झिल्लीनुमा संरचना अन्त : बीजचोल या **टेग्मेन** (Tegmen) में परिवर्तित हो जाता है । बीजाण्ड वृंत (Funiculus), बीजवृंत (Stalk) का निर्माण करता है । नाभिका (Hilum) बीजाण्डद्वार (Micropyle) एवं निभाग (Chalaja) आदि संरचनायें भी बीज में अनुरूप अंगों का निर्माण करती हैं ।

13.3 बीज की संरचना (Structure of Seed)

13.3.1 बीज की बाह्य आकारिकी (External Morphology of seed)

सत्य या वास्तविक बीज एक निषेचित एवं परिपक्व बीजाण्ड होता है, जिसमें भ्रूण रूपी पादप, संचित खाद्य एवं सुरक्षात्मक बीजावरण पाये जाते हैं । विभिन्न पौधों में बीजों की आकृति, आमाप एवं रंग में पर्याप्त विविधताये पाई जाती हैं । इनका आकार अतिसूक्ष्म धूल के कणों के बराबर से लेकर (जैसे कुछ आर्किड्स) कई इंच व्यास के होते हैं (जैसे डबल कोकोनट) । **आर्किड्स** के ताजा बीजों का भार 0.21mg तक होता है, जबकि **डबल कोकोनट** के बीज का भार 6 से 15 किग्रा. तक होता है तथा इसके बीज पादप जगत में सबसे बड़े होते हैं । विभिन्न पौधों में बीजों की सतह चिकनी, रोमिल, खांचदार, रेखीय, सर्पिलाकार अथवा अन्य प्रकार की हो सकती है ।

इसके अतिरिक्त सतह पर विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ या प्रतिरूप, धब्बे या चकते भी पाए जाते हैं ।

प्याजी (Asphodelus) एवं लीची (Litchi) में बीजाण्डवृंत से अतिवृद्धि विकसित होकर ऊपर को वृद्धि करती है तथा सम्पूर्ण बीज को घेर लेती है । इसे **ऐरिल** (Aril) कहते हैं । लीची में यह परत मोटी, मांसल, गुदेदार संरचना का रूप ले लेती है तथा फल का यही भाग खाया जाता है । अरण्ड (Ricinus communis) में बीजाण्डद्वार के पास अध्यावरण से अतिवृद्धि विकसित होकर एक प्लग जैसी संरचना बनाती है, जिसे **बीज चोलक** या **केरंकल** (Caruncle) कहते हैं ।

13.3.2 बीज की आंतरिक संरचना (Internal structure of seed)

लगभग सभी बीजों में तीन प्रमुख संरचनायें पाई जाती हैं : बीजावरण, भ्रूण तथा भ्रूणपोष ।

(1) **बीजावरण (Seed Coat)** : सामान्यत: एक प्रारूपिक बीजावरण में दो चोल या आवरण पाए जाते हैं । बाह्य आवरण को **बाह्यचोल या टेस्टा** (Testa) कहते हैं तथा भीतरी आवरण को **अन्त:चोल या टेग्मन** (Tegmen) कहते हैं । परन्तु कुछ बीजों में केवल एक बीजचोल ही पाया जाता है ।

ग्रेमिनी कुल के सदस्यों में (उदा अनाजों में) बीजचोल फलभित्ती से जुड़ा रहता है । ग्रेमिनी एवं ऐस्ट्रेसी कुल के सदस्यों में निषेचन के बाद बीजाण्ड के अध्यावरण लुप्त हो जाते हैं, अत: इनमें बीजचोल का निर्माण नहीं होता है । ऐसी परिस्थिति में अण्डाशय भित्ति अथवा फलभित्ति भ्रूण व भ्रूणपोष की रक्षा करती है । सेन्टेलेसी एवं लोरेंथेसी कुल के बीजों में भी बीज चोल का अभाव होता है ।

(2) **भ्रूण (Embryo)** : यह बीज में भावी प्रारूपिक पादप को निरूपित करता है । भ्रूण के दो प्रमुख भाग होते हैं, भ्रूण अक्ष तथा बीजपत्र ।

(i) **भ्रूण अक्ष** (Embryo axis) : यह भ्रूण की अक्षीय अथवा प्रमुख संरचना है, जिससे पादप अक्ष का निर्माण होता है । भ्रूण अक्ष के ऊपरी सिरे पर भ्रूण कलिका पाई जाती है, जिसे **प्रांकुर** (Plumule) कहते हैं जिससे प्ररोह का निर्माण होता है । जबकि इसके निचले या आधारी सिरे को मूलांकुर (Radicle) कहते हैं, जिससे जड़ अथवा मूल का विकास होता है । बीज अंकुरण के समय सर्व प्रथम मूलांकुर बाहर आता है तथा प्राथमिक मूल का निर्माण करता है । बीजपत्र संलग्न बिन्दु से मूलांकुर के मध्य का भ्रूण क्षय अक्ष भाग **हाइपोकोटाइल** (Hypocotyle), जबकि बीजपत्र संलग्न बिन्दु से प्रांकुर के मध्य का अक्ष भाग **एपिकोटाइल** (Epicotyle) कहलाता है ।

(ii) **बीजपत्र** (Cotyledons) : भ्रूण अक्ष से एक या दो बीजपत्र पार्श्व उपांग के रूप में संलग्न होते हैं । बीजपत्र से बीज अंकुरण के समय प्रथम पत्ती का निर्माण होता है, जो अल्पकालिक होती है । द्विबीजपत्री पौधों के बीजों में दो तथा एक बीजपत्री पौधों के बीजों में एक बीजपत्र पाया जाता है । द्विबीजपत्रियों में दोनों बीजपत्र भ्रूण अक्ष पर पार्श्व स्थिति में, जबकि एक बीजपत्रियों में केवल एक बीजपत्र अग्रस्थ स्थिति में होता है । ग्रेमिनि कुल के पौधों के बीजों में बीजपत्र ढाल (Shield) के रूप में पाया जाता है, जिसे **स्कुटेलम** (Scutellum) कहते है |

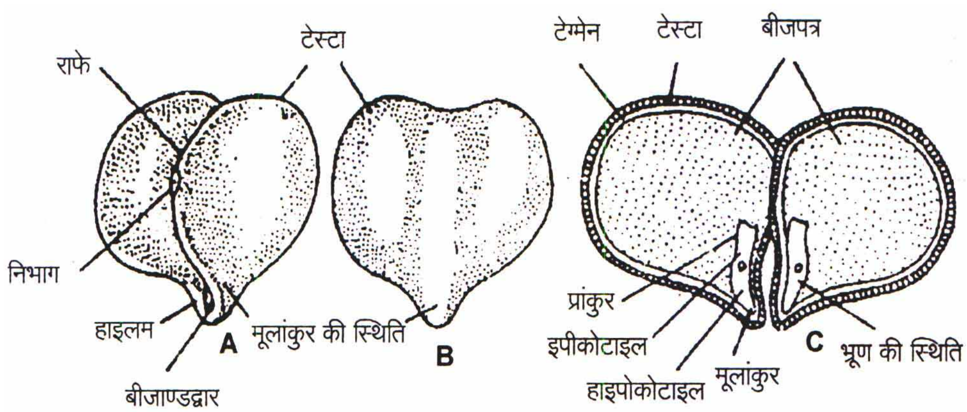

चित्र 131 : द्विबीजपत्री बीज की संरचना (चना)

A.B : बाह्य संरचना; C. आंतरिक संरचना

(3) **भ्रूणपोष (Endosperm)** : बीज में भ्रूण के चारों ओर उपस्थित मृदुतकी पोषक ऊतक भ्रूणपोष कहलाता है, जो भ्रूण को विकास एवं परिपक्वता के दौरान पोषण उपलब्ध कराता है । अधिकांश एकबीजपत्रियों में यह भ्रूण की परिपक्वता के बाद भी बचा रहता है और बीज का अधिकांश भाग बनाता है, ऐसे बीज भ्रूणपोषी (Endospermic) कहलाते हैं । इसके विपरीत अधिकांश द्विबीजपत्रियों में भ्रूणपोष का अधिकांश भाग भ्रूण विकास के दौरान उपभोग में ले लिया जाता है अर्थात्

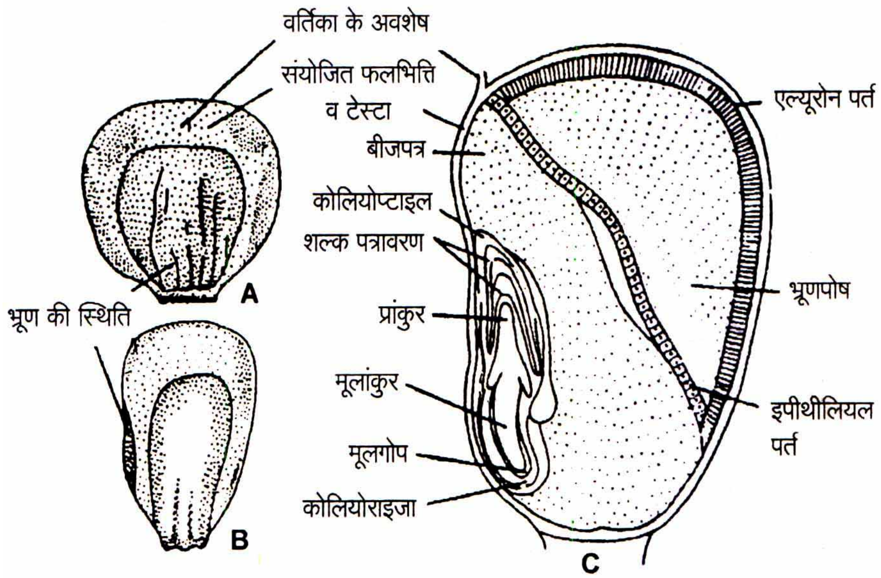

चित्र 13.2 : एकबीजपत्री बीज की संरचना (मक्का)

A-B : बाह्य संरचना; C. आंतरिक संरचना

परिपक्व बीज में भ्रूणपोष अनुपस्थित रहता है ऐसे बीज **अभ्रूणपोषी** (Non-endospermic) कहलाते हैं । भ्रूणपोष तथा बीजपत्रों में कार्बोहाइड्रेट, लिपिड, प्रोटीन एवं खनिज पदार्थों के रूप में भोजन का संचय होता है । पोएसी कुल के पौधों के बीजों में प्रोटीन प्रायः ऐल्यूरोन परत के रूप

में संचित होते है | बीज के संचित पदार्थों का उपयोग भ्रूण द्वारा बीजांकुरण के समय नवोद्भिद को स्थापित करने के लिए किया जाता है |

13.4 बीजों में निलम्बित संजीवन/प्रसुप्ता (Suspended Animation in Seeds/Dormancy)

अधिकतर स्थलीय पादपों के बीज निर्माण से पादप की मृत्यु होने तक वृद्धि प्रक्रिया में कई विराम बिन्दु आते हैं अर्थात् पादप के जीवन में कुछ समय ऐसा आता है, जब इनमें वृद्धि निलम्बित रहती है । निम्नवर्गीय पादपों में यह विश्रामावस्था सुप्त बीजाणुओं के रूप में तथा उच्चवर्गीय पादपों में बीजों व कलिकाओं आदि अंगों की वृद्धि के निलम्बन के रूप में होती है । बीज का पूर्ण विकास हो जाने के पश्चात् उसकी वृद्धि रुक जाती है । कुछ पौधों में अनुकूल वातावरणी परिस्थितियाँ उपलब्ध होने पर भी बीज अंकुरित नहीं हो पाते हैं । इस प्रकार के बीज शरीर क्रियात्मक रूप से निष्क्रिय होते हैं तथा बीजों की यह अवस्था **प्रसुप्तावस्था** (Dormant stage) कहलाती है तथा इस घटना को **प्रसुप्ति** (Dormancy) कहते हैं । एक जीवनक्षम (Viable) बीज के अनुकूल अंकुरणीय पीरस्थितियो में अन्तर्जात (Endogenous) अथवा वातावरणी कारकों (Environmental factors) के प्रभाव से अंकुरण के निरोधन को **बीज प्रसुप्ति** (Seed dormancy) कहते हैं अर्थात् जीवन क्षम बीज की अनुकूल परिस्थितियों में सक्रिय वृद्धि के निलम्बन की अवस्था **निलम्बित संजीवन** या बीज प्रसुप्तता कहलाती है ।

13.4.1 प्रसुप्ता के प्रकार (Type of dormancy)

जब बीज परिपक्व होने के तुरन्त पश्चात् अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त होने पर भी अपने आंतरिक अथवा संरचनात्मक तथा क्रियात्मक कारणों से अंकुरित नहीं होता है तो इसे **प्राथमिक प्रसुप्ति** (Primary dormancy) कहते हैं । इस प्रकार की प्रसुप्ति निम्न में से एक या अधिक कारणों से हो सकती है : (i) जल तथा ऑक्सीजन के लिए बीजावरण का अपारगम्य होना, (ii) भ्रूण का अपरिपक्व होना, (iii) भ्रूण की वृद्धि में बाधा, (iv) विशिष्ट ताप या प्रकाश की आवश्यकता अथवा (v) बीज में अंकुरण निरोधी (Germination inhibitors) पदार्थों की उपस्थिति आदि ।

कुछ पौधों के बीजों में परिपक्वन के पश्चात् संग्रहण के दौरान होने वाले परिवर्तनों से प्रसुप्ति उत्पन्न होती है, इसे द्वितीयक प्रसुप्ति (Secondary dormancy) कहते हैं । उदाहरण के लिए टेक्सस (Taxus) तथा फ्रेक्सिनस (Fraxinus) आदि के बीज परिपक्व होते ही तत्काल अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त होने पर अंकुरित होते हैं, परन्तु किन्हीं कारण वश यदि इनका अंकुरण नहीं होता है तो ये प्रसुप्त बन जाते हैं, जिसे द्वितीयक प्रसुप्तता कहा जाता है । इस प्रकार की प्रसुप्ति वातावरणी कारकों से उत्पन्न होती है ।

13.4.2 बीज प्रसुप्ति के लिए उत्तरदायी कारक (Causes of seed dormancy)

बीजों की प्रसुप्ति निम्न एक या अधिक कारकों के प्रभाव से होती है :

1. **कठोर बीजावरण** (Hard seed coat) : कई बीजों में बीजावरण अत्यधिक कठोर होता है, जो तीन प्रकार से प्रसुप्ति उत्पन्न कर सकता है :

(a) **जल के प्रति अपारगम्य होना** (Impermeable to water) : अनेक पादपों में मुख्य रूप से **लेग्यूमिनोसी** (Leguminosae) कुल के पादपों में बीजावरण अत्यधिक कठोर होता है । इसके अतिरिक्त यह मोमी परत द्वारा ढका रहता है, जो जल के प्रति पूर्ण अपारगम्य (Impermeable) होता है । कुछ बीजों में **स्ट्रोफाइलर क्लेफ्ट** (Strophilar cleft), जिससे जल बीज में प्रवेश करता है, भी सुबेरिन युक्त होकर अपारगम्य हो जाता है । इस प्रकार बीजावरण के जल अवशोषण न कर पाने के कारण भ्रूण के जल उपलब्ध नहीं हो पाता है, जिसके फलस्वरूप वह प्रसुप्ति अवस्था में बना रहता है ।

(b) **ऑक्सीजन के प्रति अपारगम्य होना** (Impermeable to oxygen) : पौधों की कुछ जातियों में बीजावरण जल के प्रति पारगम्य (Permeable), परन्तु ऑक्सीजन के प्रति अपारगम्य होता है । इस प्रकार के बीज तब तक अंकुरित नहीं हो पाते, जब तक कि वे प्रसुप्ति काल को पूरा नहीं कर लेते हैं । इस दौरान बीजावरण की ऑक्सीजन के प्रति पारगम्यता धीरे-धीरे बढ़ जाती है । इस प्रकार की अपारगम्यता जेन्थियम (Xanthium) में पाई जाती है । इस पादप के फल में दो बीज पाये जाते हैं, जिनमें एक ऊपर की ओर तथा दूसरा नीचे की ओर स्थित होता है । सामान्य परिस्थितियों में नीचे वाला बीज अंकुरित हो जाता है, परन्तु ऊपरी बीज अंकुरित नहीं हो पाता है । ऊपरी बीज तभी अंकुरित हो पाते हैं जब उन्हें या तो ऑक्सीजन की अधिक सान्द्रता में रखा जाए अथवा उनका बीजावरण हटा दिया जाए । उपरोक्त तथ्य से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि ऊपरी बीज का बीजावरण ऑक्सीजन के प्रति अपारगम्य होता है । एक मत के अनुसार इस बीज में एक निरोधी (Inhibiter) उपस्थित होता है, जो इसे प्रसुप्ति अवस्था में बनाए रखता है । उच्च ऑक्सीजन सान्द्रता में-यह निरोधी ऑक्सीकृत होकर निष्क्रिय हो जाता है, जिससे बीजांकुरण सम्भव हो पाता है ।

(c) **भ्रूण की वृद्धि के लिए यांत्रिक रूप से प्रतिरोधी होना** (Mechanical resistance to growth of embryo): कुछ पौधों में बीजावरण भ्रूण की वृद्धि को यांत्रिक विधि से रोकते हैं। उदाहरण के लिए एमरेन्थस रेट्रोफ्लेक्सस (Amaranthus retroflexus) के बीजों का बीजावरण जल तथा ऑक्सीजन के प्रति पारगम्य होता है, परन्तु यह भ्रूण के प्रसार पर निरोधी का कार्य करता है । बीजावरण को जब तक क्षीण नहीं किया जाता, तब तक इनका अंकुरण सम्भव नहीं हो पाता है ।

2. **भ्रूण की अपूर्ण परिपक्वता** (Immaturity of embryo) : अनेक कुलों के पादपों, जैसे आर्किडेसी (Orchidaceae), औरोबैंकी (Orobanchaceae) तथा रेननकुलेसी (Ranunlaceae) आदि में बीजों का प्रकीर्णन भ्रूण के पूर्ण विकास होने से पहले ही हो जाता है अत: इन बीजों का अंकुरण तब तक सम्भव नहीं होता है, जब तक कि भ्रूण का परिवर्धन पूरा न हो जाए । इस प्रकार की प्रसुप्तता एक प्राकृतिक घटना है , क्योकि भ्रूण के पूर्ण विकसित होने से पूर्व इनका अंकुरण सम्भव नहीं होता है । अनुकूल परिस्थितियों मे भ्रूण का परिवर्धन पूर्ण होने पर उचित परिस्थितियों मे ये स्वत: ही अंकुरित हो जाते हैं । प्रमुख उदाहरण हैं- गिंगो बाइलोबा

(Ginkgo biloba), नीटम निमोन (Gnetum gnemone), फ्रेक्सिनस एक्सेल्सियोर (Fraxinus excelsior), रेननकुलस फिकेरिया (Ranunculus ficaria) तथा आर्कीडेसी कुल के अनेक सदस्य ।

3. **उत्तर-पक्वन काल की आवश्यकता** (Requirement of after ripening period) : कई पौधों के बीज परिपक्व होने के तुरन्त बाद अंकुरित नहीं हो पाते हैं, अपितु कुछ समय के विश्रामकाल के पश्चात् अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं । विश्राम काल के दौरान ये बीज अंकुरण की क्षमता अर्जित कर लेते हैं तथा इस काल को (विश्राम काल) **उत्तरपक्वन काल** (After ripening period) कहते हैं । कुछ जातियों में उत्तर पक्वन काल की क्रिया कम ताप तथा नमी की उपस्थिति में ही पूरी हो जाती है, जबकि कुछ अन्य जातियों में यह क्रिया शुष्क भण्डारण के समय पूरी होती है । विभिन्न जातियों में उत्तर पक्वन काल की अवधि कुछ सप्ताह से कुछ महीनों की होती है । अनेक सामान्य प्रकार के खाद्यान्न (Cereals) जैसे **जई** (Oat), **जौ** (Barley) तथा **गेहूँ** (Wheat) आदि में इस प्रकार की प्रसुप्ति पाई जाती है । इस प्रकार की प्रसुप्ति को बीजावरण हटाकर अथवा तापमान उपचार (2-4 दिनों तक 30-35^{o}C पर) द्वारा भी दूर किया जा सकता है । उत्तर परिपक्वनकाल के दौरान बीज में अनेक शरीर क्रियात्मक क्रियाएँ होती हैं । इन परिवर्तनों की प्रकृति के बारे में ज्ञात नहीं हूँ, परन्तु इनकी वजह से भ्रूण सक्रिय हो उठता है ।

4. **अंकुरण निरोधकों की उपस्थिति** (Persence of germination inhibitors) : गूदेदार फलों (Fleshy fruits) में स्थित बीज जैसे संतरा, टमाटर आदि तब तक अंकुरित नहीं हो पाते हैं, जब तक इनके फलों में काफी तरल पदार्थ उपस्थित रहता है । फलों के गूदे में निरोधकों की उच्च सान्द्रता उपस्थित होती है, जिसमें प्रमुख रूप से **एब्सिसिक अम्ल** (ABA), **काउमेरिन** (Coumerin), **पार एस्कॉर्बिक अम्ल** (Par ascorbic acid), **फिनोलिक अम्ल** (Phenoilc acid) आदि उपस्थित होते हैं । इसके अलावा भ्रूण, भ्रूणपोष तथा बीज के अन्य ऊतकों में लघु शृंखला वसा अम्ल (Fatty acids) उपस्थित होते हैं, जो प्रसुप्ति का कारण होती है ।

ये पदार्थ अंकुरण सम्बन्धी ऐसी क्रियाओं का संदमन करते हैं, जिनके कारण अंकुरण सम्भव नहीं हो पाता है । इन निरोधकों का अवस्था के अनुसार प्राकृतिक रूप से क्षरण (Degradation) होता रहता है अथवा प्रतिनिरोधकों के संश्लेषण द्वारा इन्हें नष्ट कर दिया जाता है । इसके अतिरिक्त कुछ संदमक/निरोधी पदार्थ स्वत: उपचयित होकर निष्क्रिय हो जाते हैं । इस प्रकार निरोधी पदार्थों के नष्ट हो जाने के पश्चात् ये बीज अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित हो जाते हैं । बीजों के मृदा में पड़े रहने पर निरोधी पदार्थ धीरे-धीरे निक्षालित (Washed away) हो जाते हैं । इसके अतिरिक्त इन पदार्थों के निरोधी प्रभाव को जिब्रेलिक अम्ल के अनुप्रयोग से दूर किया जा सकता है ।

5. **विशिष्ट तापक्रम आवश्यकता** (Specific temperature requirement) : अनेक बीजों को अंकुरण से पूर्व शीतन उपचार की आवश्यकता होती है । ये बीज जब तक आर्दता की उपस्थिति में विशिष्ट शीतन-तापक्रम द्वारा उपचारित नहीं हो जाते, अंकुरित नहीं हो पाते हैं । शीत ऋतु में ऐसे बीज प्राकृतिक रूप से उपचारित हो जाते हैं । इस प्रकार की प्रसुप्ति शीतोष्ण

वृक्षों के बीजों में सामान्यत: पाई जाती है । इनमें शीतन उपचार के लिए अनुकूल तापमान 0-5^{o}C होता है ।

शीतन उपचार की आवश्यकता बीजों के भ्रूण अथवा बीजावरण या दोनों को हो सकती है । कुछ बीज रोचक व्यवहार प्रदर्शित करते हैं । ये पतझड़ (Autumn) में अंकुरित होकर मूल तन्त्र का निर्माण करते हैं, परन्तु इनका एपिकोटाइल (Epicotyle) तब तक वृद्धि नहीं कर पाता है, जब तक कि आगामी शीतकाल में यह शीत ताप से उद्भासित नहीं हो जाता है । इस स्थिति को **एपिकोटाइल प्रसुप्ति** (Epicotyle dormancy) कहा जाता है (उदा. ओक Oak) । कुछ बीजों में एपिकोटाइल प्रसुप्ति के साथ-साथ **मूलांकुर प्रसुप्ति** (Radicle dormancy) भी पाई जाती है, उदा. पोलीगोनेटम (Polygonatum) तथा ट्रिलियम (Trillium) । इस प्रकार की प्रसुप्ति सम्भवत: कुछ वृद्धि संदमकों के कारण होती है तथा शीत उपचार से जिबरेलिन का संश्लेषण होता है, जो इनके प्रभाव को समाप्त करते है|

6. **विशिष्ट प्रकाश की आवश्यकता** (Specific light requirement) : अनेक बीजों का अंकुरण प्रकाश द्वारा प्रभावित होता है, जिन्हें प्रकाश संवेदी (Photoblastic) बीज कहते हैं । कुछ बीजों को प्रकाश की उपस्थिति अंकुरण के लिए आवश्यक होती है अर्थात् प्रकाश कुछ बीजों के अंकुरण को प्रेरित करता है, इन्हें **धनात्मक प्रकाश संवेदी** (Positive photoblastic) कहते हैं। इसके विपरीत कुछ बीजों में प्रकाश की उपस्थिति में अंकुरण सम्भव नहीं होता है, इन्हें **ऋणात्मक प्रकाश संवेदी** (Negative photoblastic) कहते हैं । एमेरेन्थस रिट्रोफलेक्सस (Amaranthus retroflexus), बीटूला (Betula spp.), कैप्सेला बर्सापेस्टोरिस (Capsella bursa-pestoris), डीजीटेलिस परप्यूरिया (Digitalis purpurea), चिनोपोडियम स्पी. (Chenopodium spp), तथा निकोटियाना टोबेकम (Nicotiana tobacum) आदि प्रमुख धनात्मक प्रकाश संवेदी बीजों के उदाहरण हैं । प्रमुख ऋणात्मक प्रकाशसंवेदी बीजों में मुख्यतः नाइजेला दमासिना (Nigella damascena), निमोफिला इन्सिगनिस (Nemophila insiynis) आदि सम्मिलित हैं, जो सफेद प्रकाश में अंकुरित नहीं होते हैं । विभिन्न प्रकार की प्रकाश किरणें भी अंकुरण को प्रभावित करती हैं । सामान्यत: लाल प्रकाश (red; 650 nm) बीजांकुरण पर सर्वाधिक अनुकूल प्रभाव डालता है, जबकि सुदूर लाल प्रकाश (infra-red; 730 nm) अंकुरण पर निरोधी प्रभाव डालता है ।

13.4.3 बीज प्रसुप्ति भंग करने की विधियाँ (Method of breaking seed dormancy)

बीजों की प्रसुप्ति भंग करने के लिए विभिन्न प्रकार की विधियाँ अपनाई जाती हैं । प्रसुप्ति भंग करने की विधि पादप जाति अथवा प्रसुप्ति के कारणों पर निर्भर करती है । यहाँ प्रसुप्ति भंग करने की कुछ सामान्य विधियों का वर्णन किया जा रहा है -

1. **खुरचना** (Scarification) : इस विधि में कठोर बीजावरण को तोड़कर अथवा खुरचकर कमजोर बना दिया जाता है । इस विधि द्वारा उन सभी प्रकार की प्रसुप्ति को भग करने में मदद मिलती है, जो कठोर बीजावरण के कारण होती हैं, जैसे बीजावरण का जल व ऑक्सीजन के प्रति

अपारगम्य होना, यांत्रिक प्रतिरोधिता अथवा अंकुरण निरोधकों की उपस्थिति आदि । यह उपचार यांत्रिक अथवा रासायनिक विधि से दिया जाता है ।

(a) **यांत्रिक विधि** (Mechanical method) : इस विधि में बीजों को परस्पर घिसकर, किसी कठोर सतह पर रगड़कर, चाकू से छीलकर, हथौड़े से पीटकर अथवा मशीनों द्वारा बीजों के निष्तुषण (Threshing) द्वारा बीजावरण को विदरित अथवा कमजोर किया जाता है । इस प्रकार के उपचार में यह सावधानी रखने की आवश्यकता होती है कि बीजावरण के साथ भ्रूण क्षतिग्रस्त न हो अन्यथा बीज के अंकुरण की क्षमता समाप्त हो सकती है।

(b) **रासायनिक विधि** (Chemical method) : इस विधि में कठोर बीजावरण वाले बीजों को खनिज अम्लों (जैसे H_2SO_4) या वसा विलायकों अथवा गर्म जल में भिगोया जाता है, जिससे बीजावरण नरम हो जाता है ।

2. **शीतन उपचार** (Chilling treatment) : ऐसे बीज जिन्हें प्रसुप्ति भंग करने के लिए प्राकृतिक शरद उद्भासन की आवश्यकता होती है, को कृत्रिम रूप से शीत -उपचारित कर इनकी प्रसुप्ति भंग की जा सकती है । इस विधि में बीजों को नम माध्यम में 0-5^oC पर कुछ दिनों से कुछ सप्ताह तक रखा जाता है | शीत उपचार की अवधि भिन्न-भिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न समय (कुछ घंटों से लेकर कुछ सप्ताह) की होती है ।

सामान्यत**:** बीजों को मृदा परतों में शरद ऋतु के निम्न ताप में उद्भासित होने के लिए छोड़ दिया जाता है । इस तकनीक को स्तरण (Stratification) कहते हैं । निम्न ताप पर जिबरेलीन की सान्द्रता में वृद्धि होती है, जो वृद्धि निरोधकों के प्रभाव को समाप्त कर देते हैं । इसके अतिरिक्त कुछ वैज्ञानिकों का विश्वास है कि कम ताप पर खाद्य पदार्थों का परिवहन भ्रूण की ओर बढ़ जाता है ।

3. **एकान्तरित तापक्रमों द्वारा उद्भासन** (Exposure to alternate temperature) : कुछ बीजों को, जैसे रुमेक्स क्रिस्पस (Rumex crispus) व लाइकोपस युरोपियस (Lycopus europeus) आदि को प्रत्यावर्ती उच्च व निम्न ताप से उद्भासित कर प्रसुप्ति को समाप्त किया जा सकता है । उच्च व निम्न ताप का मान जमाव बिन्दु से अधिक होना चाहिए तथा इनका अन्तर 10^oC से अधिक नहीं होना चाहिए, अन्यथा भ्रूण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । इस प्रकार की आवश्यकता अनेक बीजों को हो सकती है तथा प्रकृति में तापमान विभिन्नता प्राकृतिक रूप से इनकी प्रसुप्ति भंग करने में सहायक होती है । एकान्तरित तापमान उपचार से बीजों की गैसों के प्रति पारगम्यता बढ़ जाती है तथा फाइटोक्रोम पुनर्चक्रण (Pr Pfr) होता है ।

4. **दाब** (Pressure) ; कुछ प्रसुप्त बीजों को 18^oC-20^oC तापक्रम पर 5 से 20 मिनट के लिए उच्च द्रवचलित दाब (2000 atm.) पर रखा जाए तो ये अंकुरण योग्य हो जाते हैं । बीजों को उच्च दाब पर उपचारित करने से बीजावरण कमजोर हो जाता है तथा इसकी पारगम्यता में बढ़ोतरी हो जाती है । डेविस ने एल्फाल्फा (Medicago sativa) तथा स्वीट क्लोवर (Melilotus alba) में इस विधि से उपचारित बीजों की अंकुरण क्षमता में 50 से 200 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त की ।

5. **प्रकाश** (Light) : कुछ धनात्मक प्रकाश संवेदी बीजों (Positive photoblastic seeds) को लाल प्रकाश से उद्भासित करने पर इनकी अंकुरण क्षमता में वृद्धि हो जाती है । एक मत के अनुसार लाल प्रकाश फाइटोक्रोम के माध्यम से साइटोकाइनिन संश्लेषण को प्रेरित करता है । साइटोकाइनिन अंकुरण बाधकों को निष्प्रभावी कर अंकुरण को प्रेरित करते हैं ।

6. **ऑक्सीजन की उच्च सान्द्रता** (High concentration of oxygen) : जिन बीजों में बीजावरण ऑक्सीजन के प्रति अपारगम्य होता है, उनकी प्रसुप्ति ऑक्सीजन की अधिक सान्द्रता द्वारा भंग की जा सकती है । **रॉबर्ट्स** (Roberts 1964) के अनुसार ऑक्सीजन की उच्च सान्द्रता बीज में उपस्थित वृद्धि संदमकों का अपघटन कर देती है, जिससे ये शीघ्र अंकुरित हो जाते हैं ।

7. **वृद्धि नियन्त्रकों का उपयोग** (Use of growth regulators) : जिन बीजों की प्रसुप्ति का कारण शीतन उपचार की आवश्यकता, उत्तरपक्वनकाल निरोधकों की उपस्थिति अथवा विशिष्ट प्रकाश आवश्यक होता है, उनकी प्रसुप्ति का भंगीकरण वृद्धि नियन्त्रक पदार्थों के अनुप्रयोग से किया जा सकता है । इस श्रेणी में जिबरेलिन, इथाइलीन क्लोरोहाइड्रीन तथा थायोयूरिया प्रमुख रूप से सम्मिलित हैं । इनके अतिरिक्त साइटोकाइनिन तथा इथाइलीन भी अनेक बीजों में अंकुरण को प्रेरित करने में सहायक होते हैं ।

13.5 बीज का महत्व (Sigificance of Seed)

सम्भवत: पौधे के अन्य भागों की तुलना में बीज सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं मूल्यवान संरचना होती है । पौधे के द्वारा बीजों का निर्माण अपनी अपनी वंश वृद्धि एवं नये-नये स्थानों पर अपनी प्रजाति के प्रसार के साधन के रूप में किया जाता है । अधिकांश वार्षिक (Annual) पौधों में अपने निरन्तर अस्तित्व (Existence) एवं गुणन (Multiplication) हेतु बीज उत्पादन ही एक मात्र साधन होता है । वार्षिक पौधे अपना जीवन चक्र केवल कुछ महीनों में ही पूर्ण कर लेते हैं तथा इसके पश्चात् इनकी मृत्यु हो जाती है, परन्तु अपनी मृत्यु से पूर्व ये असंख्य बीजों का निर्माण कर लेते हैं । ये बीज वर्ष के शेषकाल, जो विषय एवं प्रतिकूल होता है, में प्रसुप्त अवस्था में पड़े रहते हैं । परिस्थितियाँ प्रतिकूल होने पर ये कई वर्षों तक प्रसुप्तावस्था में रह सकते हैं तथा अनुकूल परिस्थितियाँ आने पर ये बीज अंकुरित होकर पुन: नये पादप का निर्माण कर लेते हैं । प्रायः हम देखते हैं कि अनेक कृष्य पौधों (Crop plant) के साथ-साथ कई खरपतवार (Weeds) भी खेतों में उगते पाए जाते हैं । इन खरपतवार बीजों का अंकुरण कृष्य प्रजातियों के बीजों के साथ हो जाता है, क्योंकि विगत वर्ष की फसल कटाई के समय या उससे भी पहले ये खेत में बिखर गए होते हैं तथा अनुकूल वातावरण एवं जल उपलब्ध होने पर अंकुरित हो जाते हैं । इस प्रकार प्रतिवर्ष इनकी उपस्थिति बनी रहती है ।

मनुष्य के दैनिक जीवन के भोजन का प्रमुख भाग अनाजों (Cereals) के द्वारा निर्धारित होता है । विभिन्न खाद्यान, जैसे गेहूँ, चावल, मक्का इत्यादि इन पौधों की बीज ही हैं, जो भोजन का प्रमुख अंश बनाते हैं । इन बीजों के भ्रूणपोष में कार्बोहाइड्रेट, खनिज, विटामिन्स एवं अल्प मात्रा

में वसा पाई जाती है । अनाज के दानों या बीजों की एक विशिष्टता यह भी है कि ये शुष्क एवं सुसंहृत होते हैं, जिससे इन्हें लम्बे समय तक संग्रहित रखा जा सकता है ।

खाद्यान के अतिरिक्त बीज कई अन्य प्रकार की वस्तुओं के भी स्रोत हैं, जैसे रेशे (कपास), तेल (मूँगफली, सरसों आदि), पेय पदार्थ (कॉफी) तथा दालें (सोयाबीन, चना, मूँग आदि) के बीजों से प्राप्त होते हैं । इस प्रकार आवृतबीजी पौधों के बीज मानव जीवन का अविभाज्य अंग हैं ।

बोध प्रश्न :

I. बहु विकल्पी प्रश्न :

1. बीजावरण का निर्माण होता है :
   (अ) अण्डाशय भित्ति से
   (ब) बीजाण्ड अध्यावरण से
   (स) भ्रूणपोष से
   (द) भ्रूणकोष से
2. भ्रूण के किस भाग से तने अथवा प्ररोह का निर्माण होता है,
   (अ) मूलांकुर
   (ब) बीजपत्र
   (स) प्रांकुर
   (द) हाइपोकोटाइल
4. बीज का विकास, संरचना तथा निलम्बित संजीवन
3. प्रसुप्तावस्था में होता है :
   (अ) भोजन संश्लेषण
   (ब) भोजन का ऑक्सीकरण
   (स) उपापचयी क्रियाएँ निलम्बित
   (द) उपरोक्त कोई नहीं
4. बीजों के परिपक्वन के शीघ्र बाद उत्पन्न होने वाली प्रसुप्ता कहलाती है :
   (अ) प्राथमिक प्रसुप्ता
   (ब) द्वितीयक प्रसुप्ता
   (स) शीत निद्रा
   (द) उपरोक्त कोई नहीं

II. अतिलघुरात्मक प्रश्न :

1. भ्रूण के विभिन्न भागों के नाम बताइये ।
   ....
   ....
2. बीज के प्रमुख भागों के नीम बताइये ।
   ....
   ....
3. ऐल्यूरोन परत क्या है?
   ....
   ....

4. बीजों की प्रसुप्ति को प्रेरित करने वाला हार्मोन है :
....
....

13.6 सारांश (Conclusion)

बीजधारी पौधों में बीज बीजाणुद्भिद पीढ़ी को निरूपित करते हैं । बीज का निर्माण पुष्प के बीजाण्ड से निषेचन के फलस्वरूप परिपक्वन से होता है । विभिन्न पौधों में बीज की आकृति, आमाप एवं रंग की पर्याप्त विविधतायें पाई जाती हैं । बीज में भ्रूणरूपी सूक्ष्म पादप सुरक्षित रहता है, जो अंकुरण द्वारा नए पादप को जन्म देता है । सभी बीजों में स्व सुनिश्चित भ्रूण, संग्रहित खाद्य पदार्थ एवं सुरक्षात्मक कवच-बीजावरण पाया जाता है । सामान्यत: प्रारूपिक बीज में दो बीजचोल या आवरण पाये जाते हैं -बाह्य आवरण टेस्टा (Testa) तथा आतंरिक आवरण टेग्मेन (Tegmen) कहलाता है । भ्रूण में एक भ्रूण अक्ष पाया जाता है | जिस पर एक या दो **बीजपत्र** (Cotyledons) संग्लन रहते है | भ्रूण अक्ष के ऊपर सिरे को **प्रांकुर** (Plumule) तथा आधारी सिरे को **मूलांकुर** (Radicle) कहते है | जो क्रमशः प्ररोह व मूल का निर्माण करते हैं । बीजों में भ्रूण के चारों ओर खाद्य संचित ऊतक पाया जाता है, जिसे भ्रूणपोष (Endosperm) कहते हैं ।

बीजों में जल की मात्रा बहुत कम पाई जाती है (5-10%) जिससे इनमें उपापचयी क्रियायें नगण्य या लगभग शून्य हो जाती हैं । इस प्रकार इनमें सक्रिय उपापचयी क्रियाएँ अथवा संजीवन कुछ अवधि के लिए स्थगित या निलम्बित हो जाती हैं । इस अवस्था को **निलम्बित संजीवन** अथवा **प्रसुप्ता** (Suspended animation or Dormancy) कहते हैं । यह अवस्था कुछ दिनों सेर कुछ वर्षों तक की हो सकती है । बीजों में समाहित कुछ आंतरिक कारणों के फलस्वरूप उत्पन्न प्रसुप्ता को **प्राथमिक प्रसुप्ता** (Primary dormancy) कहते हैं । इसके प्रमुख कारण हैं बीजचोल की जल व गैसों के लिए अपारगम्यता, यान्त्रिक प्रतिरोध, अल्प विकसित भ्रूण सदमनकों की उपस्थिति इत्यादि । कुछ बीजों में परिपक्वन के पश्चात् संग्रहण के दौरान वातावरणी कारकों से प्रसुप्ता उत्पन्न हो जाती है, इसे **द्वितीयक प्रसुप्ता** (Secondary dormancy) कहते हैं । बीज प्रसुप्ता को नियन्त्रित करने वाले कारकों को यदि हटा दिया जाए तो प्रसुप्ति को दूर किया जा सकता है ।

बीजों का निर्माण पौधों द्वारा वंशवृद्धि एवं प्रसार के लिए होता है, जिससे इनका अस्तित्व बना रहता है । इसके अतिरिक्त प्रतिकूल परिस्थितियों में बीज सुरक्षित बचे रहते हैं तथा अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरण द्वारा नव पादप का निर्माण कर देते हैं । बीज मनुष्य एवं अन्य प्राणीयों के भोजन का मुख्य स्रोत है । सभी अन्न बीज ही होते हैं, जिन्हें लम्बे समय तक संग्रहित करके रखा जा सकता है । भोजन के अतिरिक्त बीजों से रेशे, तेल, दालें तथा पेय पदार्थ एवं औषधियाँ भी प्राप्त होती हैं । अत: यह कहा जा सकता है कि बीज मानव जीवन का अभिन्न अंग है ।

13.7 शब्दावली (Terminology)

प्रांकुर (Plumule) : भ्रूण अक्ष का ऊपरी सिरा, जो प्ररोह का निर्माण करता है ।

मूलांकुर (Radicle) : भ्रूण अक्ष का आधारी सिरा, जो मूल का निर्माण करता है ।

एपिकोटाइल (Epicotyle) : भ्रूण अक्ष का वह भाग जो बीजपत्र एवं प्राकुर के मध्य स्थित होता है, एपिकोटाइल कहलाता है ।

हाइपोकोटाइल (Hypocotyle) : भ्रूण अक्ष का वह भाग, जो बीजपत्र एवं मूलांकुर के मध्य स्थित होता है, हाइपोकोटाइल कहलाता है ।

टेस्टा (Testa) : बीजावरण की बाह्य कठोर परत टेस्टा कहलाती है ।

टेग्मेन (Tegmen) : बीजावरण की आंतरिक झिल्लीनुमा परत टेग्मेन कहलाती है ।

भ्रूणपोषी बीज (Endospermic seed) : जिन परिपक्व बीजों में भ्रूणपोष (संचयी ऊतक) उपस्थित होता है, उन्हें भ्रूणपोषी बीज कहते हैं ।

अभ्रूणपोषी बीज (Non endospermic seed) : जिन परिपक्व बीजों में भ्रूणपोष अनुपस्थित होता है, अभ्रूणपोषी बीज कहलाते हैं ।

प्रसुप्तावस्था (Dormancy) : वह अवस्था, जिसमें सक्रिय वृद्धि अस्थाई रूप से निलम्बित रहती है, प्रसुप्तावस्था कहलाती है ।बीज का विकास, संरचना तथा निलम्बित संजीवन

13.8 संदर्भ ग्रंथ (References)

1. Anatony of seed plant ; K. Esau, John wiley sons, New York.
2. पुष्पीय पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन : त्रिवेदी, शर्मा, शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर ।
3. आवृतबीजियों की संरचना, विकास एवं जनन : सिंह, पाण्डे, जैन; रस्तोगी प्रकाशन, मेरठ ।
4. युनिफाइड वनस्पति शास्त्र : एस. पी. अग्रवाल; शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर।

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर (Answers)

I बहु विकल्पी प्रश्न :

1. (ब) 2. (स) 3. (स) 4. (अ)

II अतिलघुरात्मक प्रश्न :

1. भ्रूण अक्ष, मूलांकुर, प्रांकुर तथा बीजपत्र ।
2. बीजावरण (बीजचोल) भ्रूण तथा भ्रूणपोष (संचयी खाद्‌य) ।
3. ग्रेमिनी कुल के बीजों के भ्रूणपोष की सबसे बाह्य प्रोटीन युक्त परत ऐल्यूरॉन कहलाती है ।
4. एब्लिसिक अम्ल (ABA) ।

13.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. बीज से क्या तात्पर्य है? बीज के विकास का वर्णन कीजिये ।
2. बीज की संरचना (द्‌विबीजपत्री एवं एकबीजपत्री) का सचित्र वर्णन कीजिये ।
3. बीज की सामान्य संरचना तथा महत्व पर प्रकाश डालिये ।
4. बीजों में निलम्बित संजीवन से क्या तात्पर्य है । इसके विभिन्न कारण एवं निवारण बताइये।
5. निम्न पर टिप्पणी लिखिये :

(अ) प्राथमिक एवं द्‌वितीयक प्रसुप्ता

(ब) मक्का के बीज की संरचना

(स) चने के बीज की संरचना

(द) बीज का महत्व ।

इकाई 14 : बीजों में पारिस्थितिकी अनुकूलन एवं प्रकीर्णन (Ecological adaptations and dispersal of Seeds)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 बीजों में पारिस्थितिकी अनुकूलन

14.2.1 बीजप्रसुप्ता

14.2.2 अंकुरण संदमकों की उपस्थिति

14.2.3 तापक्रम के प्रति अनुकूलन

14.2.4 मरुद्भिदों के बीजों में अनुकूलन

14.2.5 लवणोद्भिदों के बीजों में अनुकूलन

14.2.6 जैविक कारकों के प्रति अनुकूलन

14.3 बीजों व फलों का प्रकीर्णन

14.3.1 वायु द्वारा

14.3.2 जल द्वारा

14.3.3 जन्तुओं द्वारा

14.3.4 विस्फोटन विधि द्वारा

14.4 प्रकीर्णन का महत्व

14.5 बीज एक पुनर्योजन की इकाई

14.6 सारांश

14.7 शब्दावली

14.8 संदर्भ ग्रंथ

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

14.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य है :

1. बीजों में पाए जाने वाले विभिन्न पारिस्थितिकी कारकों के प्रति अनुकूलनों का अध्ययन करना।
2. बीजों व फलों के एक स्थान से दूसरे स्थान तक प्रकीर्णन की विभिन्न विधियों तथा प्रकीर्णन के लिए संरचनात्मक विशेषताओं की जानकारी प्राप्त करना ।

3. प्रकीर्णन से पौधों को होने वाले लाभों की जानकारी प्राप्त करना ।
4. बीज का पौधे की आनुवांशिकी में महत्व पर प्रकाश डालना ।

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

बीजों की लम्बी जीवनक्षमता (Viability) अथवा अंकुरण काल की लम्बी अवधी बीजों को लम्बी उत्तरजीविता प्रदान करती है । यह लक्षण किसी भी जाति को प्रतिकूल परिस्थितियों में उन्मूलन (Eradication) से बचाने का कार्य करता है । यदि किसी क्षेत्र में जाति विशेष के सभी बीज प्रतिकूल परिस्थितियों में अंकुरित हो जाते हैं, तो ये पौधे अपना जीवन चक्र पूर्ण करने में असफल रहते हैं और अन्ततः उस जाति के पौधे उस क्षेत्र में समाप्त हो सकते हैं । अत: अनेक जातियों में किसी वर्ष में बने सभी बीज अगले वर्ष एक साथ अंकुरित नहीं होते, अपितु उनका अंकुरण काल लम्बी अवधी में फैला रहता है तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण असंख्य बीज प्रसुप्तावस्था में पड़े रहते हैं । आने वाले प्रत्येक वर्ष में इनमें से बीज धीरे-धीरे अंकुरित होते रहते हैं तथा इन्हें अंकुरण के लिए विशिष्ट दशाओं की आवश्यकता होती है । बीजों में स्वयं में भी ऐसे अनेक अनुकूलन पाए जाते हैं, जिससे वे विशिष्ट वातावरणी दशाओं में अंकुरित हो सकते हैं ।

चूँकी बीज वंश वृद्धि एवं पादप प्रजाति के नवीन क्षेत्रों में प्रसार का कार्य करते हैं । अत: इस दायित्व के निर्वहन हेतु बीजों में अनेक पारिस्थितिकी अनुकूलन पाए जाते हैं । यही कारण है कि धरती पर बीजधारी पौधों का वितरण एवं फैलाव व्यापक रूप से पाया जाता है । बीजधारी पादप जिस स्थान पर पाये जाते हैं, वस्तुतः ये उस स्थान के मूल निवासी नहीं होते हैं, अपितु उनकी उत्पत्ति ओर कहीं हुई है । तत्पश्चात् विभिन्न माध्यमों एवं प्रक्रियाओं द्वारा इनके बीज एवं फल इस स्थान से दूरस्थ क्षेत्रों में ले जाये गये हैं, जहाँ वे अंकुरित होकर प्राकृतिक रूप से स्थापित हो गए हैं । बीजों व फलों का प्रकीर्णन बाह्य कारकों पर निर्भर करता है, इसलिए विभिन्न जातियों के फलों एवं बीजों में प्रकीर्णन की विधि के अनुसार रूपान्तरण या अनुकूलन पाए जाते हैं ।

14.2 बीजों में पारिस्थितिक अनुकूलन (Ecological Adaptation in Seeds)

बीजधारी पौधों के जीवनचक्र में बीज एक अत्यन्त उपयोगी एवं उत्तरदायित्वपूर्ण संरचना होती है। यह संरचना पौधे के वंश को आगे बढ़ाने एवं पादप प्रजाति के नवीन क्षेत्रों में प्रसार एवं फैलाव का कार्य करती है । अत: उपर्युक्त दायित्वों के निर्वहन हेतु बीजों की बाह्य व आतंरिक संरचना में अनेक पारिस्थितिक अनुकूलन लक्षण पाए जाते हैं, जिनके फलस्वरूप इनमें अपने परिवेश के साथ स्वयं को समायोजित कर लेने की क्षमता होती है ।

विभिन्न पौधों के बीजों के पारिस्थितिक अनुकूलन का यदि अवलोकन किया जाए तो निम्न महत्वपूर्ण बिन्दु उभर कर आते हैं :

14.2.1 बीजप्रसुप्ता (Seed dormancy)

बीजों में पाई जाने वाली प्रसुप्ता एक विशेष प्रकार का पारिस्थितिक अनुकूलन है, जिसमें भ्रूण लम्बी अवधी तक सुषुप्तावस्था में रहकर सुरक्षित बना रहता है । इस अवस्था में बीज प्रतिकूल

परिस्थितियों को सफलतापूर्वक गुजार देता है तथा अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त होने पर अंकुरण द्वारा नवपादप में परिवर्धित हो जाता है ।

14.2.2 अंकुरण संदमकों की उपस्थिति (Presence of inhibitors)

अनेक पौधों के फलों, बीजों या भ्रूण में कुछ विशेष प्रकार के रसायनिक पदार्थ पाए जाते हैं, जो बीजों को फलों के अन्दर अंकुरण से रोकते हैं । इन्हें **अंकुरण संदमक** (germination inhibitors) कहते है । ये संदमक यह सुनिश्चित करते हैं कि बीजों का अंकुरण फल के स्फुटन तथा बीजों के प्रकीर्णन के पश्चात् ही हो सके । विभिन्न बीजों में अलग-अलग प्रकार के अंकुरण संदमक पाए जाते हैं, जैसे साइट्रस (Citrus) फलों में कार्बनिक अम्ल, टमाटर में फेरुलिक अम्ल (Ferulic acid) तथा ट्राइगोनेला अरेबिका (Trigonella arabica) में कोमेरिन (Caumerin) पाया जाता है ।

ऐब्सिसिक अम्ल (ABA) एक सामान्य अंकुरण निरोधी पदार्थ है, जो अनेक पौधों के भ्रूण तथा बीजचोल से पृथक् किया जा चुका है । कुछ बीजों में एब्सिसिक अम्ल की मात्रा व बीजों की अंकुरण क्षमता में सीधा सम्बन्ध पाया गया है । प्रकीर्णन के पश्चात् धीरे-धीरे एब्सिसिक अम्ल की मात्रा कम हो जाती है, जिससे बीजों की अंकुरण क्षमता बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त मृदा में उपस्थित बीजों में वर्षा या सिंचाई के जल से लगातार संदमन पदार्थो का निक्षालन(Leaching) होता रहता है, जिससे बीजों में इनकी सान्द्रता कम हो जाती है एवं इनका सफल अंकुरण हो जाता है । इस प्रकार बीजों में रासायनिक संदमकों की उपस्थिति प्रकृति द्वारा दिया गया अनुपम उपहार है, जिससे विपरीत परिस्थितियों में ये अंकुरण व नवोद्भिद के नष्ट हो जाने से बच जाते हैं ।

14.2.3 तापक्रम के प्रति अनुकूलन (Adaptation for temperature) :

अधिकांश पौधों के बीजों में तापमान के प्रति अनुकूलन बीज प्रसुप्ति को समाप्त कर अंकुरण प्रेरित करने के रूप में परिलक्षित होता है । प्रायः शरद ऋतु में उगने वाले वार्षिक पौधे ग्रीष्म ऋतु के उच्च तापमान को सहन करने में अक्षम होते हैं । अत: इससे पूर्व ही ये अपना जीवन चक्र समाप्त कर बच निकलते (Escape) हैं । कुछ पौधों, जैसे सिडम (Sedum) में बीजों के परिपक्व के पश्चात् उच्च तापमान की आवश्यकता होती है, परन्तु इसकी वृद्धि शीतकाल में ही होती है । इस पादप में शीतकाल के अन्त में बीजों का निर्माण होता है तथा बीज परिपक्व होकर जमीन पर गिर जाते हैं । गर्मियों के उच्च तापमान में सुषुप्तावस्था में रहते है तथा आगामी शरद ऋतु में अंकुरित हो जाते हैं । इस प्रकार ये बीज शीत ऋतु में अंकुरित न होकर नवोद्भिद को ग्रीष्म ऋतु के उच्च तापमान व सूखे से बचा लेते है |

14.2.4 मरुद्भिदों के बीजों में अनुकूलन (Adaptation in seeds of xerophytes)

शुष्क या मरुस्थलीय आवासों में जलाभाव की परिस्थितियों का सामना करने के लिए पौधों में प्रकार के अनुकूलन लक्षण पाए जाते हैं । विभिन्न अल्पजीवी पौधों (Ephemerals) का जीवन चक्र कुछ सप्ताह से लेकर कुछ महीनों का ही होता है । इन अल्पजीवी पौधों में बीज ही एक मात्र

चिरकालिक संरचना (Perenating body) होती है । इन पौधों का जीवनचक्र इनकी आवास स्थली पर वर्षा की अवधि से सम्बन्धित होता है । पहली बरसात होने पर ही इनके बीज अंकुरित हो जाते हैं तथा वर्षा ऋतु की समाप्ति तक इनमें पुष्पन एवं निषेचन होकर बीज निर्माण हो जाता है । इनके बीजों का आवश्यकतानुसार प्रकीर्णन भी हो जाता है तथा अनुकूल वातावरण होने तक उसी स्थान पर पड़े रहते हैं । आगामी वर्षा ऋतु में इनका पुन: अंकुरण हो जाता है । राजस्थान की बालुई मृदा में इस प्रकार के अनेक पौधे जाए जाते हैं, जैसे मोल्यूगो सरवियाना (Mollugo cerviana), टेफ्रोसिया (Tephrosia) एवं ओल्डनलेंडिया कोरिम्बोसा (Oldenlendia corymbosa) आदि ।

अधिकांश मरुस्थलीय प्रजातियों के बीजों का अंकुरण 10-15 मि. मी. वर्षा के बाद प्रारम्भ होता है। इन बीजों में जल में घुलनशील निरोधी पदार्थ होते हैं, जो वर्षा जल से निक्षालित हो जाते हैं एवं इनका अंकुरण सम्भव हो पाता है । कुछ मरुस्थलीय पौधों के बीजों में बीजचोल अत्यन्त दृढ़ होता है । ऐसे बीजों का अंकुरण तब ही हो पाता है, जब ये वर्षा जल के साथ रेत व कंकड़ों के ऊपर कुछ दूरी तक बहते हुए चले जाते हैं । रेत व कंकड़ों से रगड़ खाकर इन बीजों का बीजचोल नरम हो जाता है, जिससे ये जल अवशोषित कर अंकुरण कर पाते हैं ।

14.2.5 लवणोद्भिदों के बीजों में अनुकुलन (Adaptation is seeds of halophytes)

कुछ पौधे अधिक लवण युक्त खारी मृदा में प्रायः वर्षा ऋतु में अथवा मृदा में जल की मात्रा बहुत अधिक हो तभी उगते हैं । ऐसे पौधों को आभाषी लवणोद्भिद कहा जाता है । मृदा में लवणों की उच्च सान्द्रता (परासरणी प्रभाव के कारण) इनके बीजों के अंकुरण को संदमित करती है । वर्षा में जल की पर्याप्त मात्रा होने पर लवणों की सान्द्रता कम हो जाती है, जिससे अंकुरण व वृद्धि होने लगती है ।

अधिकांश मैन्ग्रोव पौधों, जैसे राइजोफोरा (Rhizophora) एवं एवीसीनिया (Avicenia) आदि में बीज व नवोद्भिद पादप अंकुरण के समय जल में उपस्थित उच्च लवण सान्ध्रता के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं । अत: ऐसी परिस्थितियों से बचने के लिए इन पौधों में एक विशेष प्रक्रिया **सजीवप्रजकता** (Vivipary) पाई जाती है, जिसके अन्तर्गत इनमें बीजों का अंकुरण जनक पादप पर फल में ही प्रारम्भ हो जाता है । बीज अंकुरण के पश्चात् इनका बीजपत्राधार 50 से 90 से. मी. तक हो जाता है तथा मूलांकुर नीचे की ओर लटकते रहते हैं । ये नवोद्भिद उर्ध्वाधर अवस्था में सीधे नीचे गिरते हैं तथा मूलांकुर कीचड़ में धँस जाता है ।

14.2.6 जैविक कारकों के प्रति अनुकुलन (Adaptations for biotic factors)

अन्य वातावरणी कारकों के समान ही जैविक कारकों का प्रभाव भी बीजांकुरण पर दृष्टिगोचर होता है । उदाहरण के लिए स्ट्राइगा (Striga) नामक परजीवी पुष्पी पादप के बीजों का अंकुरण इसके परपोषी पादप की उपस्थिति में ही होता है । इसका प्रमुख कारण यह है कि स्ट्राइगा के बीजों में अंकुरण के लिए आवश्यक, उपयोगी पदार्थ इसके परपोषी की जड़ों द्वारा ही स्रावित होते हैं । इसी प्रकार पक्षियों द्वारा भोजन के रूप में प्रयुक्त फलों एवं बीजों में श्लेष्मी पदार्थ पाया जाता है, जिसके द्वारा बीजों को उचित आधार पर संलग्न एवं स्थापित होने में सहायता मिलती है,

उदाहरण के तौर पर विस्कम (viscum) नामक पादप के बीज वृक्ष की शाखाओं पर चिपक जाते हैं तथा अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त होने पर अंकुरित हो जाते हैं । अनेक पक्षियों द्वारा विभिन्न पौधों के फलों का भक्षण किया जाता है तथा इनके बीजों को अपनी विष्ठा के साथ बाहर निकाल देते हैं । इनकी आहार नाल में उपस्थित पाचक रसों द्वारा बीजचोल के नरम पड़ जाने से इनका अंकुरण आसानी से होता है । इसके अतिरिक्त इनका प्रकीर्णन भी दूरस्थ स्थानों तक हो जाता है।

कुछ पौधों में बीजों का वितरण चींटियों द्वारा होता है, जिसके लिए इनमें विशेष अनुकूलन पाए जाते हैं । इन बीजों में तेल युक्त उपांग होते हैं, जिससे चींटियाँ इनकी ओर आकर्षित होती हैं । चींटियाँ उपांगों को खा लेती हैं, परन्तु बीजों का भक्षण नहीं करती हैं । केलेथिया (Calathea) के बीजों में बीजचोल चीटियों को आकर्षित करता है तथा चींटियाँ इनका केवल बीजचोल ही खाती हैं। बीजचोल की अनुपस्थिति में बीजों की अंकुरण दर बढ़ जाती है ।
विभिन्न पौधों की पत्तियाँ, पत्ती की खाद या कर्कट (Litter) अन्य पादप प्रजाति के बीजों के अंकुरण पर निरोधी प्रभाव डालती हैं । यूकेलिप्टस (Eucalyptus) की चर्मिल पत्तियों के अवशेष बीजों के अंकुरण में बाधा पहुँचाते हैं । इनकी परत बीज एवं मृदा के बीच एक प्रकार का यांत्रिक अवरोध उत्पन्न करती है तथा इनके नवोद्भिदों की जड़ें यांत्रिक अवरोध परत को बेंध नहीं पाती है, जिससे वे मर जाते हैं । इसी प्रकार प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा (Prosopic juliflora) व कुछ अन्य पौधों की पत्तियों व जड़ों से कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थ स्रावित होते हैं, जो अन्य पौधों के बीजों के अंकुरण के संदमनक (Inhibitors) का कार्य करते हैं । बीजांकुरण पर पड़ने वाले इस विपरीत प्रभाव को **अलेलोपेथिक प्रभाव** (Allelopathic effect) कहते हैं । इस प्रकृति द्वारा एक ही स्थान पर असंख्य पौधों के एकत्रीकरण की प्रक्रिया पर भी अंकुश लगाया जा सकता है ।

14.3 फलों एवं बीजों का प्रकीर्णन (Dispersal of Fruits & Seeds)

आवृतबीजी पादप अपनी संतति की निरन्तरता बनाए रखने के लिए बीजों का उत्पादन करते हैं । संततियों को अतिसंकुलता (Overcroeding) अर्थात् पोषण, जल, प्रकाश आदि की स्पर्धा से बचाने के लिए फल व बीजों का व्यापक भौगोलिक क्षेत्र में वितरण आवश्यक है, जिससे विभिन्न जातियों के समष्टि आमाप में भी वृद्धि होती है । फल एवं बीजों का अपने निर्मित स्थल से विभिन्न अनुकूल आवासों में वितरण की प्रक्रिया को प्रकीर्णन (Dispersal) कहते हैं । सभी प्रकार के फलों एवं बीजों का एक स्थान से दूसरे स्थान तक स्थानान्तरण बाह्य कारकों पर निर्भर करता है । कारकों के आधार पर फल एवं बीजों के प्रकीर्णन को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है:

(i) वायु द्वारा प्रकीर्णन
(ii) जल द्वारा प्रकीर्णन
(iii) जन्तुओं द्वारा प्रकीर्णन तथा
(iv) विस्फोटी विधि द्वारा प्रकीर्णन

14.3.1 वायु द्‌वारा प्रकीर्णन (Dispersal by wind) :

यह प्रकीर्णन की सबसे सामान्य विधि है । परन्तु ऐसा देखा गया है कि इस विधि में अधिकतर बीज अंकुरण के लिए अनुकूल स्थलों पर नहीं पहुँच पाते हैं । अत: वायु प्रकीर्णन में बीजों का बड़ी संख्या में अपव्यय होता है । इस प्रकार इन पौधों में बीजों का निर्माण अधिक मात्रा में होता है, ताकि कुछ बीज प्रकीर्णन द्‌वारा अनुकूल स्थलों पर पहुँच सकें । वायु द्‌वारा प्रकीर्णन के लिए इनमें अनेक प्रकार की अनुकूलन वियुक्तियाँ पाई जाती हैं, जो उनको जनक पौधे से दूर पहुँचाने में सहायक होती हैं । कुछ अनुकूलनों का विवरण यहाँ दिया गया है :

1. **हल्के व छोटे बीज** (Light weight and minute seed) : कुछ बीज व फल इतने छोटे व हल्के होते हैं कि उनको वायु आसानी से उड़ा ले जाती है । इनमें किसी प्रकार के उपांग नहीं पाये जाते हैं, बल्कि स्वत: ही वायु धाराओं के साथ उड़कर लम्बी दूरी तय करते हैं । आर्किड्स (Orchids) के बीज धूल कणों जैसे छोटे, हल्के व शुष्क होते हैं, जो धीमी बहती हवा में भी उड़ते रहते हैं । इनकी सूक्ष्मता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि इनके एक कैप्सूल (फलों) में 10,000 से भी अधिक बीज पाये जाते हैं । अनेक घासों (Grasses) के बीज भी अत्यन्त छोटे व हल्के होते है ।

2. **सपाक्ष बीज व फल** (Winged seeds and fruits) : अनेक बीजों व फलों में शल्की उपांग या पंख पाये जाते हैं । ऐसे बीज वायु में प्लवन के लिए अनुकूलन दर्शातें हैं तथा वायु में उड़ते हुए लम्बी दूरी तय कर सकते हैं । जैकेरेण्डा (Jacaranda), ओरोजाइलान (Oroxylon), मोरिन्गा (Moringa) तथा पाइनस (Pinus) आदि में पंखदार (Winged) बीज पाए जाते हैं । इसी प्रकार अनेक फल भी पंखदार होते हैं, जैसे मैपल (Acer), होलोप्टेलिया (Holoptelia) साल (Shorea), होपिया (Hoppea) आदि । वास्तव में सभी प्रकार के समारा (Samara) एवं समारा जैसे फल इसी श्रेणी में आते हैं ।

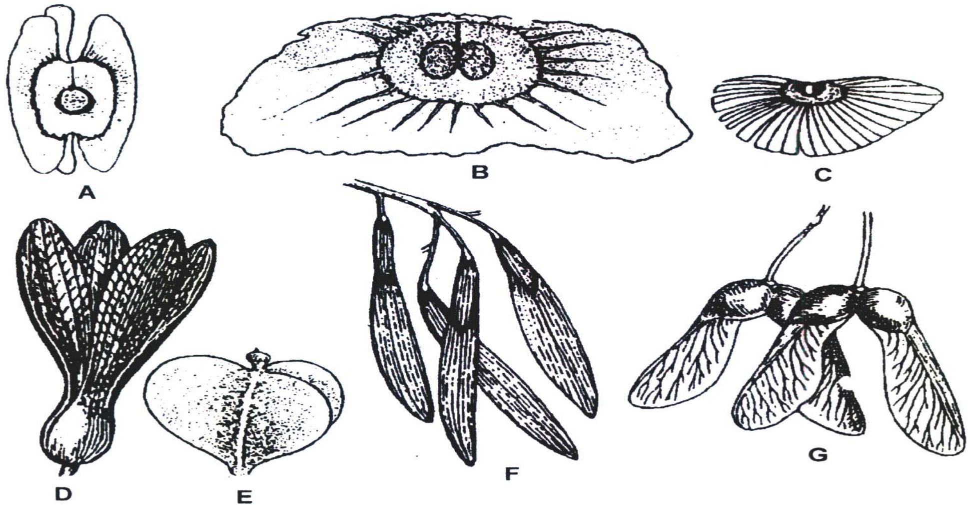

चित्र 14.1 : पंखदार बीज एवं फल : A.मोरिंगा (Moringa sp.), B. ओरोजायलम इण्डिकम, C. लेजरस्ट्रोमिया, D. साल (Shorea), E. डायस्कोरिया, F. एश (Fraxinum sp.), G. मेपिल (Acer)

3. **पैराशूट क्रियाविधि** (Paracute mechanism) : कम्पोजिटी अथवा ऐस्ट्रेसी (Compositeae) कुल के सदस्यों के फलों में बाह्य दल रोमिल संरचना "पैपस" (Pappus) में रूपान्तरित हो जाते हैं । ये चिरस्थायी (Persistant) होते हैं । पैपस युक्त फल मुंडक से पृथक होकर वायु में आते हैं, तो पैपस पैराशूट की भांति खुल जाता है । इस प्रकार ये फल वायु के साथ काफी दूर-दूर तक पहुँच जाते हैं तथा वायु का वेग कम होने पर पैराशूट की भांति जमीन पर आ जाते हैं ।

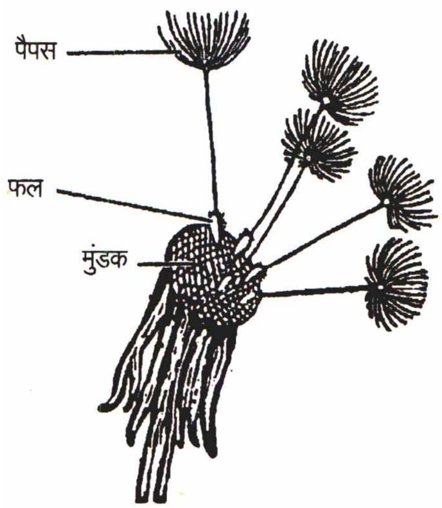

चित्र 14.2 : बीज प्रकीर्णन की पैराशूट विधि (टेरेक्सेकम)

4. **दोलक्षेप क्रियाविधि** (Censor mechanism) : कुछ पौधों में बीजों का निर्माण कैप्सूल अथवा सम्पुट (Capsule) फल में होता है तथा बीजों की विमुक्ति कैप्सूल के शीर्ष के पास स्थित सूक्ष्म छिद्रों से होती है । परन्तु इनमें बीज उस समय तक नहीं निकलते, जब तक कि फल हवा द्वारा या किसी जन्तु द्वारा तेजी से झकझोर नहीं दिये जाते । इस प्रक्रिया से एक ही समय में कम बीज निकलते हैं और प्रकीर्णन लम्बे समय तक चलता रहता है । यह क्रियाविधि 'डाग फ्लावर' (Antrirhinum), 'बतखबेल' (Aristolochia), पीली कटेली (Agremone) एवं पोस्त (Papaver) में पाई जाती है ।

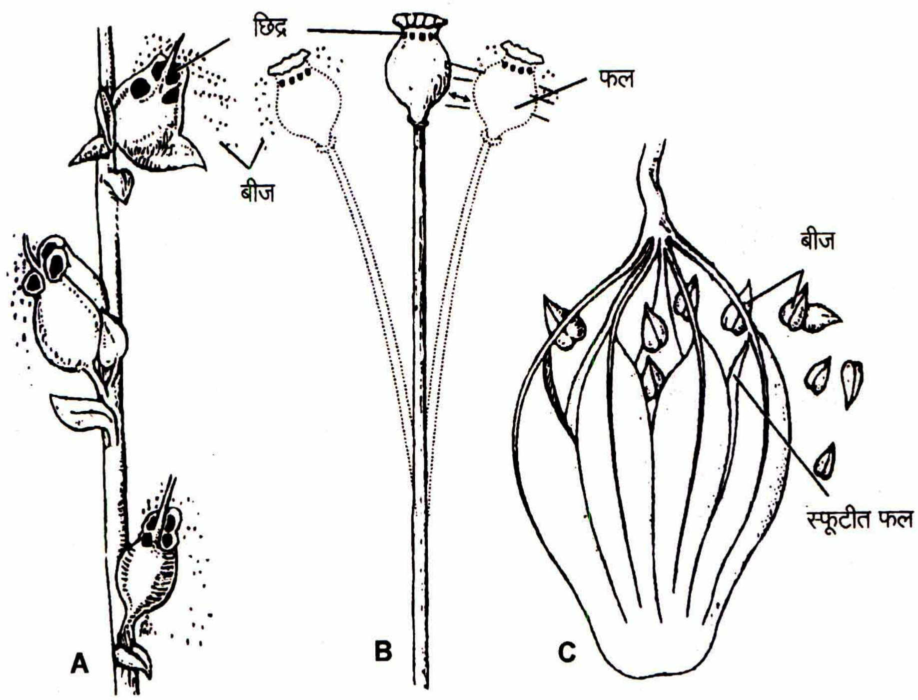

चित्र 14.3 : दोलक्षेप क्रियाविधि द्वारा बीजों का प्रकीर्णन A. डॉग फ्लावर B. पोस्त C. एरिस्टोलोकिया

5. **रोम** (Hairs) : कुछ पौधों के बीजों की सतह पर रोम उपस्थित होते हैं । ये रोम बीजों को हवा में उड़ाने में सहायक होते हैं । रोम बीज पर गुच्छ (Tuft) में अथवा पूर्ण सतह पर उपस्थित होते हैं । आकड़ा (Calotropis) तथा वासंती (Asclepias) में बीज पर रोमों का एक गुच्छ, पाया जाता है, जबकि एल्सटोनिया (Alstonia) में बीज के दोनों सिरों पर रोम गुच्छ उपस्थित होते हैं । इसके अतिरिक्त कपास (Gossypium) में बीज के चारों ओर पूरी सतह पर रोम पाए जाते हैं ।

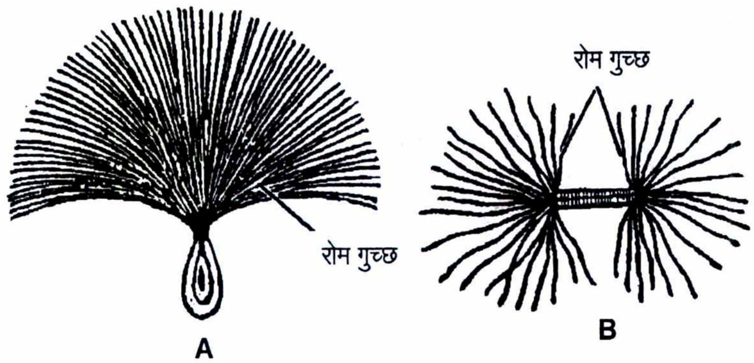

चित्र 14.4 : रोमयुक्त बीज : A. कैलोट्रोपिस, B. एल्सटोनिया

6. **चिरलग्न वर्तिका** (Persistent style) : क्लिमेटिस (Clematis), नारवेलिया (Narvelia) तथा जिरेनियम (Geranium) इत्यादि पौधों में पुष्प की वर्तिका रोमिल (Hairy)

तथा चिरलग्न (Persistent) होती है अर्थात् फलों के साथ लगी रहती है । यह रोमिल वर्तिका फलों को वायु द्वारा आसानी से उड़ा ले जाने में सहायक होती है ।

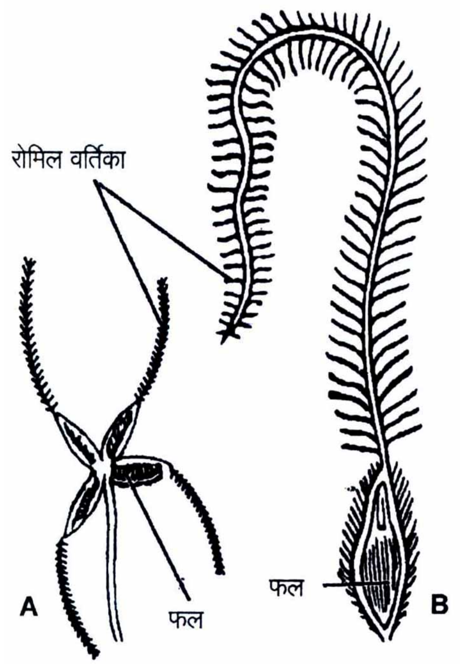

चित्र 14.5 : चिरलग्न वर्तिका : A. क्लीमेटिस, B. नारवेलिया

7. **गुब्बारेनुमा उपांग** (Balloon like appendages) : कुछ पौधों में पुष्प का कोई भाग फूलकर गुब्बारेनुमा संरचना बना देता है । यह युक्ति फल व बीजों को वायु में तैरने में सहायक होती है, जिससे बीज वायु द्वारा दूर-दूर तक चले जाते हैं । रसभरी (Physails peruviana) में बाहयदल आपाती होते हैं तथा फूलकर गुब्बारे जैसी संरचना बनाते हैं । गुब्बारा बेल अथवा बैलून वाइन (Cardiospermum) में सम्पुट फल फूलकर गुब्बारे की तरह हो जाता है । लिन्डेन (Lindenbergia) के फल एक पत्ती समान सहपत्र से जुड़े रहते हैं, जो वायु में तैरते हुए फलों को दूर-दूर तक पहुँचा देते हैं ।

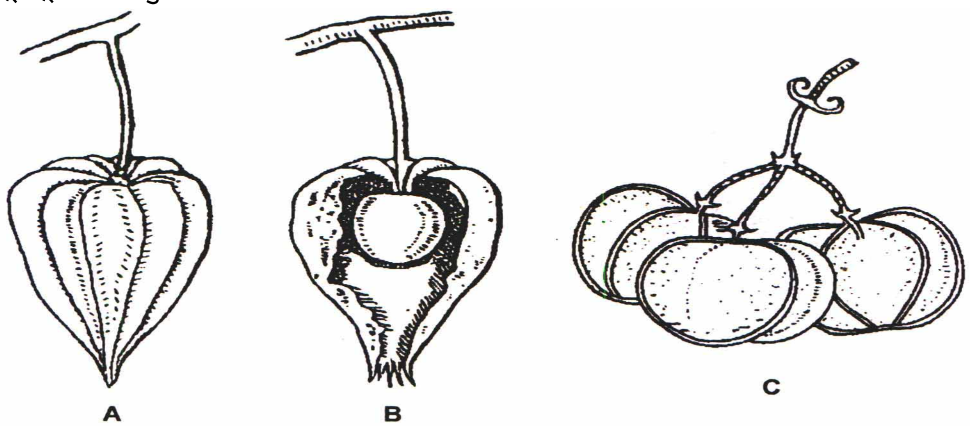

चित्र 14.6 : गुब्बारेनुमा उपांग : A-B. रसभरी (Physalis), C. कार्डियोस्पर्मम (Cardiospermum) के कैप्सूल में फूला हुआ अण्डाशय

8. **बेलनी क्रियाविधि** (Rolling mechanism) : कुछ अल्पजीवी पादप बीज निर्माण के पश्चात् सूख जाते हैं और तेज वायु के कारण जड़ सहित उखड़ जाते हैं तथा तेज हवा या आँधी में लुढ़कते हुए दूस्दूर तक चले जाते हैं । इस प्रक्रिया में इनके बीज बिखरते चले जाते हैं । इस प्रकार के पौधों को जो बेलनी (Rolling) क्रियाविधि दिखाते हैं, 'टम्बल वीड्स' (Tumble weeds) कहते हैं । बेलनी क्रियाविधि दर्शाने वाले प्रमुख पादप हैं, सालसोला (Salsola), चौलाई (Amaranthus), बथुआ (Chenopodium) आदि ।

14.3.2 जल द्वारा प्रकीर्णन (Dispersal by water)

जल द्वारा बीजों व फलों का प्रकीर्णन उन पौधों में पाया जाता, जो या तो जलीय आवास या जल के समीप पाए जाते हैं । इन बीजों व फलों में प्लावन संरचना का विकास पाया जाता है ।

वाटर लिलि अथवा कुमुदनी (Nymphoides) के बीज छोटे व हल्के होते हैं तथा इनकी बीजचोल में हवा भरी रहती है, जिससे ये आसानी से जल में तैर सकते हैं । कमल (Nelumbo) में पुष्पासन (जिसकी सतह पर फल लगे रहते हैं) स्पंजी (Spongy) होता है । स्पंजी पुष्पासन में हवा भरी होती है, जिसके कारण यह जल सतह पर तैरता हुआ जल प्रवाह के साथ दूर तक चला जाता है ।

नारियल (Cocos nucifera) तथा डबल कोकोनट (Lodoicea) में मध्य फलभित्ति रेशेदार एवं हल्की होती है और फल को जल की सतह पर तैरने में सहायक होती है, इसके साथ ही रक्षात्मक आवरण का कार्य भी करती है । इस प्रकार जल की सतह पर तैरते हुए फल समुद्र में दूस्दूर तक बह जाते हैं और समुद्र तट पर पहुँचकर अंकुरण द्वारा नवपादप बनाते हैं । सम्भवत यही कारण है कि नारियल समुद्री तटों पर ही उगता है ।

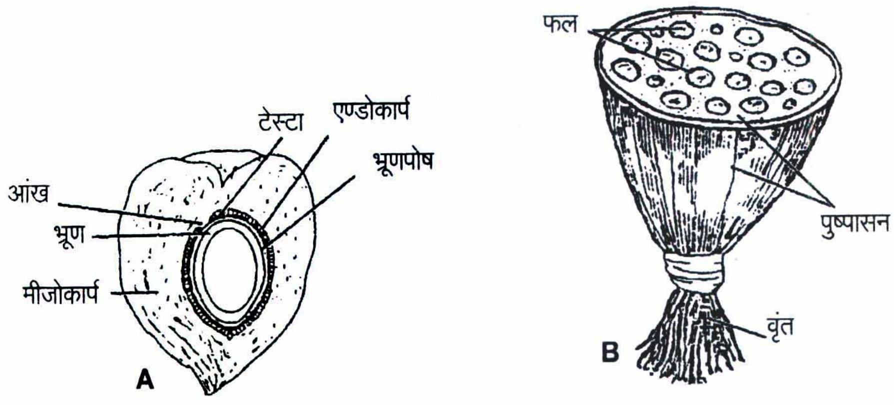

चित्र 14.7 : जल द्वारा प्रकीर्णन : A. नारियल, B. कमल

14.3.3 जन्तुओं द्वारा प्रकीर्णन (Dispersal by animals) :

बीजों का प्रकीर्णन जन्तुओं व मनुष्यों द्वारा उनके अनुकूलनों के आधार पर निम्न श्रेणियों में रखा जाता है

1. **अंकुशी फल व बीज** (Hooked fruits and seeds) : अनेक पौधों के फल व बीज अंकुशों (Hooks), दृढरोम (tiff hairs) या कांटों (Spines) से युक्त होते हैं । ये संरचनायें

इनकी सतह पर होती हैं, जिनकी सहायता से ये जानवरों के शरीर या मनुष्य के कपड़ों से चिपक जाते हैं । इस प्रकार इनका प्रकीर्णन होता है । उदाहरण के लिए 'बेगर टिक्स ' (Bidens) के फल में दो हुक् तथा जैन्थियम (Xamthium) के फल की सतह पर अनेक हुक पाए जाते हैं । बाघनखी (Maritynia) के बीज में दो नुकीले हुक तथा एरिस्टीडा (Aristida) घास के फल पर दृढ़ रोम पाए जाते हैं ।

2. **चिपचिपे फल** (Sticky fruits) अनेक पौधों में चिपचिपे फल व बीज पाए जाते हैं । क्लीओम (Cleome) तथा प्लम्बेगो (Plumbago) के फलों में ग्रंथियाँ पाई जाती हैं, जो चिपचिपा पदार्थ स्रावित करती हैं । इसी प्रकार विस्कम (Viscum), लोरेन्थस (Loranthus) आदि के बीजों पर चिपचिपा गूदा लगा रहता है । इन बीजों व फलों को जब पक्षी खाते हैं तो वे उनके पैर व चोंच पर चिपक जाते हैं । जब ये पक्षी किसी दूसरे वृक्ष की शाखा पर बैठकर चोंच साफ करते हैं तो ये बीज पेड़ की टहनी से चिपक जाते हैं अथवा गिर जाते हैं । अनुकूल परिस्थितियों में ये वृक्ष पर ही अथवा मृदा में अंकुरित हो जाते हैं ।

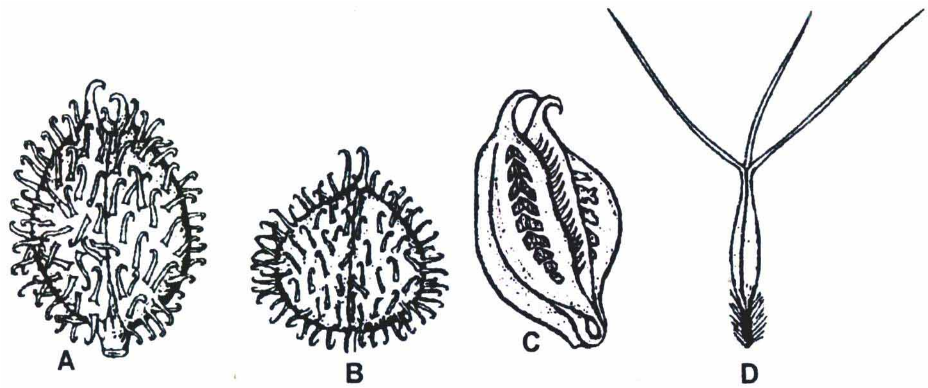

चित्र 14.8 : अंकुशी फल व बीज : A. चिरचिटा (Xamthium strumarium) B. यूरेना लॉबेटा (Urena lobata), C. मारटीनिया एनुआ (Martynia annua), D. एरिस्टिडा (Aristida)

3. **खाने योग्य फल** (Edible Fruits) : खाने योग्य फलों के बीज मुख्यतः पक्षियों, रोडेन्ट्स तथा मनुष्य द्वारा वितरीत होते हैं । पक्षी अनेक फलों को बीज सहित खा जाते हैं, परन्तु इनकी आहारनाल में बीजों का पाचन नहीं होता तथा ये विष्ठा (Excreta) के साथ बाहर आ जाते हैं और अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित हो जाते हैं । बरगद (Ficus benghalensis) पीपल (Ficus religiosa) व गूलर (Ficus racemosa) आदि के बीजों को दीवार की दरारों व वृक्ष के तनों आदि पर उगते देखा जा सकता है । इनके बीज इन स्थानों पर पक्षियों की विष्ठा द्वारा पहुँचते हैं ।

अनेक रोडेन्ट्स (गिलहरी, चूहा आदि) तथा मनुष्य फलों का गूदा खाकर बीजों को फैंक देते हैं । अनेक फलों के बीज मनुष्य एक देश से दूसरे देश में ले जाता है । भारत में रबर, चीकू, कॉफी आदि अनेक पौधों के बीजों को मनुष्य द्वारा दूसरे देशों से लाया गया है ।

14.3.4 विस्फोटी क्रियाविधि द्‌वारा प्रकर्णिन (Dispersal by explosive mechanism)

इस क्रियाविधि में पौधा स्वयं प्रकीर्णन के लिए उत्तरदायी होता है । इसमें फल के तेजी से शक्ति के साथ फटने से बीज छिटक कर दूर-दूर तक फैल जाते हैं । बोहीनिया वाहलिआई (bauhinia vahil)

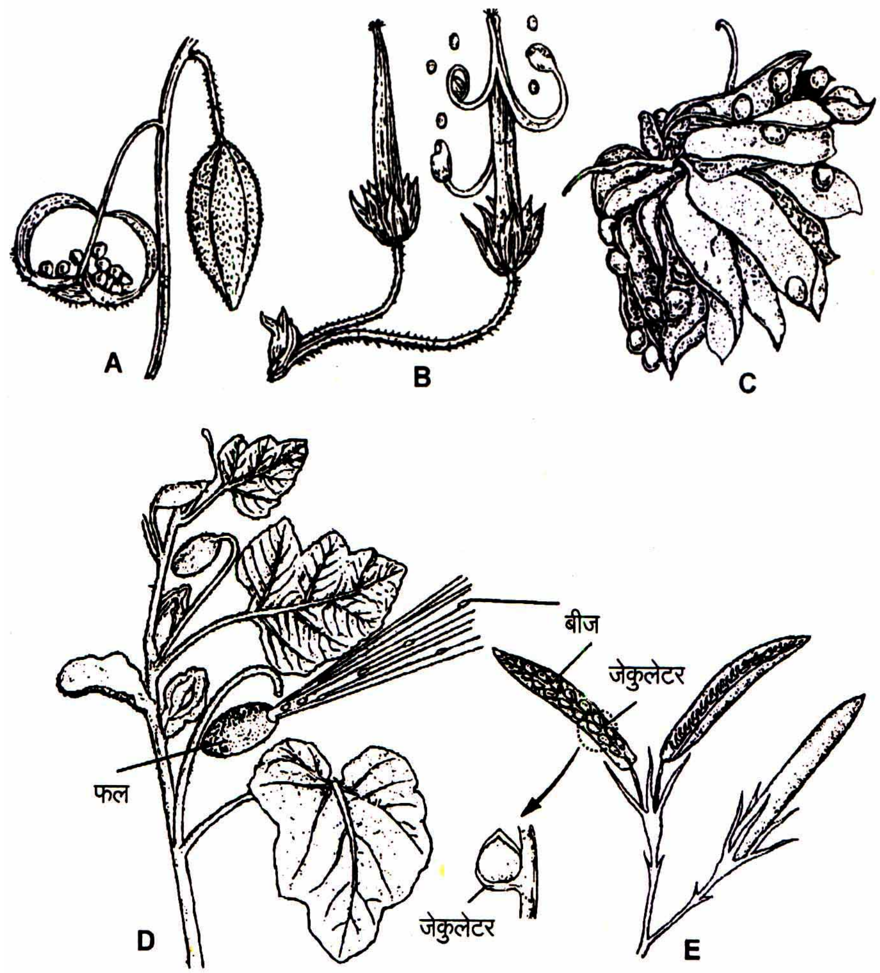

चित्र 14.9 : बीजों का विस्फोट के साथ प्रकर्णिन : (A) इम्पेसेन्स बालसामिया (B). जिरेनियम पेल्युस्टे (Abrus precatorius), C. अबरस प्रीकैटोरियस (Arbus precatorius), D. फुहार खीरा (Ecballium elatrium) E.रुलिया (Ruellia sp.)

में फल लम्बा शिम्ब (Pod) होता है, जो पकने पर जोरदार आवाज से फटते हैं, जिससे बीज दूर तक बिखर जाते हैं । इसी प्रकार फ्लोक्स (Phlox) में भी सम्पुट फल के चटकने से झटके के साथ बीज बाहर निकल आते हैं । रुएलिया (Ruellia) तथा बार्लेरिया (Barlaria) आदि में फल दो कपाटों में विस्फुटित होते हैं । इनके प्रत्येक बीज के नीचे एक मुड़ा हुआ हुक या जेक्यूलेटर

(Curved hook or jaculator) होता है, जो झटके के साथ खुलता है तथा बीज को दूर फैंक देता है ।

गुलमेंहदी अथवा बालसम (Impatiens) में फल पाँच अण्डपी सम्पुट होता है । यह परिपक्वन पर छूने या झटका लगने से नीचे से ऊपर को फटता है । फलभित्ति तुरन्त स्प्रिंग की तरह मुड़ जाती है और बीज झटककर दूर गिर जाते हैं । जिरेनियम (Geranium) के बीजों का प्रकीर्णन भी गुलमेंहदी के समान ही होता है । इकबैलियम इलेटेरियम (Ecballium elatarium) में फल का वृंत फल में डाट (Stopper) की तरह लगा रहता है । फल के परिपक्वन पर बीजों के चारों ओर का ऊतक श्लेष्म में रूपान्तरित हो जाता है, इसके कारण फल के अन्दर उच्च स्फीति दाब उत्पन्न होता है । आंतरिक दाब के कारण वृंत ढीला पड़ जाता है तथा (आंतरिक दाब के कारण) बीज पिचकारी की धार की तरह बाहर निकलकर दूर तक बिखर जाते हैं ।

14.4 प्रकीर्णन का महत्व (Importance of Dispersal)

फलों व बीजों के प्रकीर्णन के महत्व को निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा सकता है ।

1. **जीवन संघर्ष से सुरक्षा** : किसी भी पौधे के व्यक्तिगत विकास के लिए स्थान, जल, वायु, प्रकाश एवं पोषण की पर्याप्त उपलब्धता आवश्यक होती है । यदि एक ही जाति के पौधे किसी सीमित क्षेत्र में सघनता से उगते हैं तो इनमें स्थान, जल, प्रकाश, पोषण आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है, जिसे जीवन संघर्ष कहते हैं । इस संघर्ष के परिणामस्वरूप अधिकांश पौधे नष्ट हो जाते हैं । इससे बचने के लिए बीजों का प्रकीर्णन दूरस्थ स्थानों पर आवश्यक होता है ताकि अंकुरण एवं नवोद्भिद की वृद्धि के लिए सुविधायें प्राप्त हो सकें ।
2. **प्रजाति के वितरण हेतु** : समस्त जातियों में अपनी प्रजाति के प्रसार एवं व्यापक फैलाव का गुण पाया जाता है । किसी भी जाति के प्रसार का उद्देश्य तभी पूर्ण हो सकता है, जब उसके फल एवं बीजों का प्रकीर्णन व्यापक रूप से दूरस्थ स्थानों तक हो । इसी उद्देश्य के लिए बीजों व फलों में विशिष्ट आकारिकीय संरचनायें पाई जाती हैं ।
3. **प्रजाति निरन्तरता** : सजीव इकाइयों में अनन्त काल तक अपनी वंश वृद्धि की प्रवृत्ति विद्यमान होती है तथा इसी उद्देश्य से इनमें अपनी संख्या में वृद्धि का प्रयास रहता है । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इनके फल व बीजों का दूरस्थ स्थानों पर प्रकीर्णन अत्यन्त आवश्यक है तथा यह प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है ।
4. **प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा** : भूमण्डल के विभिन्न भागों में प्राकृतिक आपदाओं, जैसे भूकम्प, ज्वालामुखी, भूस्खलन, आग आदि के कारण वनस्पति का विनाश होता रहता है । यदि कोई प्रजाति वितरण की दृष्टि से सीमित क्षेत्रीय (Endemic) हो और उस स्थान पर किसी प्राकृतिक आपदा से वहाँ उपस्थित सभी पौधे नष्ट हो जाए तो वह प्रजाति विलुप्त हो जायेगी, परन्तु प्रकीर्णन द्वारा प्रजाति विलुप्त होने से बच जाती है ।
5. **नवीन प्रजातियों की उत्पत्ति :** प्रकीर्णन के परिणामस्वरूप पादप प्रजातियाँ दूरस्थ नवीन क्षेत्रों में स्थापित हो जाती हैं । नए क्षेत्रों में स्थापित इन प्रजातियों तथा उस क्षेत्र में उपस्थित आनुवंशिक रूप से लगभग समान अन्य प्रजातियों के मध्य संकरण द्वारा नवीन जीन

पुनर्योग (New recombination) उत्पन्न होते हैं, जो आगे चलकर नई पादप प्रजातियों में विकसित हो जाती हैं ।

14.5 बीज एक पुनर्योजन की इकाई (Seed a unit a recombination)

उच्चवर्गीय पादपों में बीज वह महत्वपूर्ण पादप भाग है, जो कि पौधे के महत्वपूर्ण लक्षणों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचारित करता है । पौधे को बिना किसी प्रकार की क्षति पहुँचाए बीजों के माध्यम से इसके जीनों को सुरक्षित रखा जा सकता है, तथा पौधों में आनुवांशिक विविधताओं को बरकरार रखते हुए इनकी संख्या में वृद्धि की जा सकती है । पौधों में बीजों का निर्माण निषेचन (Fertilization) प्रक्रिया के परिणामस्वरूप होता है, अर्थात् नर एवं मादा युग्मकों के संलयन की अन्तिम परिणिती है । निषेचन क्रिया द्वारा आनुवांशिक पदार्थो का परस्पर सम्मिलन होता है अर्थात्(जीन विनिमय होता है । इस क्रिया के फलस्वरूप बने बीजों से नई पीढ़ी में नवीन गुणों का प्रादुर्भाव होता है । विशेषकर पर निषेचन (Cross fertilization) के परिणामस्वरूप नए गुण परिलक्षित होते हैं । इनमें जीवनक्षमता भी अधिक पाई जाती है । प्रायः यह देखा गया है कि ऐसे बीजों से प्राप्त पौधे अधिक स्वस्थ, मजबूत (Robust) एवं उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं । भ्रूणपोष का विकास भी त्रिसंयोजन के परिणामस्वरूप होता है, जिसमें नर व मादा दोनों पैतृक पादपों का अंश होता है । इस प्रकार यह अधिक प्रभावी प्रकार से भ्रूण का पोषण करने में सक्षम होता है ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि बीज आनुवांशिक लक्षणों को आगामी पढ़ी के संचरण करने का कार्य करता है अर्थात् आनुवांशिक पुनर्योजन इकाई के रूप में परिलक्षित संरचना है ।

बोध प्रश्न

I. बहुविकल्पी प्रश्न :

1. वायु द्वारा प्रकीर्णीत बीज होते हैं :
   (अ) हल्के
   (ब) पंखदार
   (स) रोमयुक्त
   (द) उपरोक्त सभी
2. चौलाई में बीजों का प्रकीर्णन होता है :
   (अ) बेनली विधि द्वारा
   (ब) जल द्वारा
   (स) कीटों द्वारा
   (द) विस्फोटी विधि द्वारा
3. निम्न में अंकुश युक्त फल होते हैं :
   (अ) जेन्थियम में
   (ब) नारियल में
   (स) आक में
   (द) रसभरी में

II. अतिलधघुरात्मक प्रश्न :

1. किन पादपों में सजीव प्रजकता पाई जाती है?
   ....
   ....
2. दो पौधों के नाम बताइये जिनका बीजांकुरण पर एलिलोपेथिक प्रभाव होता है।
   ....
   ....
3. बीजांकुरण निरोधीपदार्थ (रसायन) का नाम बताइये।
   ....
   ....
4. दो पौधों के नाम बताइये, जिनमें विस्फोटी विधि द्वारा बीजों का प्रकीर्णन होता है।
   ....
   ....

14.6 सारांश (Conclusion)

बीजों की लम्बी जीवन क्षमता तथा अंकुरण काल की लम्बी अवधी इनको उच्च उत्तरजीविता (High suruiral rate) प्रदान करते हैं । उपरोक्त दोनों लक्षण किसी भी जाति को प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण उन्मूलन से बचा सकते हैं । अनेक जातियों में किसी वर्ष में बने सभी बीज एक साथ अंकुरित नहीं होते, अपितु उनका अंकुरण लम्बी अवधी में फैला रहता है । बीजों

का अंकुरण आवास की पारिस्थितिक दशाओं द्वारा भी प्रभावित होता है । इनमें जल, तापमान, मिट्टी की दशा तथा अंकुरणरोधी पदार्थ सम्मिलित हैं । बीजों की प्रसुप्तावस्था एक विशेष प्रकार का पारिस्थितिक अनुकूलन है, जिसमें बीज परिस्थितियों को सफलतापूर्वक गुजार देता है । इसी प्रकार अनेक फलों में रसायनिक संदमनक पाए जाते हैं, जो फल में ही अथवा प्रतिकूल परिस्थितियों में बीजों के अंकुरण को रोकते हैं । मरुस्थलीय पौधों में केवल जल की अधिकता (वर्षा) में ही बीजों का अंकुरण सम्भव हो पाता है । लवणोद्भिद पादपों में (मैन्ग्रोव वनस्पति) में एक विशेष प्रक्रिया सजीवप्रजकता (Vivipary) पाई जाती है, जिसके अन्तर्गत बीजों का अंकुरण जनक पादप पर फलों में ही प्रारम्भ हो जाता है । नवोद्भिद 50-90 से.मी. तक होने पर उर्ध्व स्थिति में नीचे गिर जाते हैं तथा कीचड़ में अपने आपको स्थापित कर लेते हैं । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि पादप प्रजातियों के बीजों में अपने परिवेश के साथ स्वयं को समायोजित कर लेने की अद्भुत अनुकूलन क्षमता होती है ।

दूरस्थ स्थानों पर पादप प्रजाति के प्रसार एवं सफलतापूर्वक जीवनयापन करने के लिए इनमें अनेक प्रकार के प्रकीर्णन उपादान (Devices) पाए जाते हैं । इनकी सहायता से इनका सफल प्रकीर्णन दूरस्थ स्थानों तक हो पाता है । कुछ पौधों, जैसे आर्किड्स के बीज अत्यन्त छोटे व हल्के होते हैं, जो हवा के झोकों के साथ दूर-दूर तक फैल जाते हैं । अनेक पौधों के बीजों व फलों में पक्षनुमा अथवा रोमिल संरचनायें पाई जाती हैं, जो इनके प्रकीर्णन में सहायक होती हैं । अनेक पौधों के बीजों के आवरण पर कंटक या शूल जैसे संरचनाएँ पाई जाती हैं, जिनकी सहायता से ये प्राणीयों के शरीर पर चिपककर दूरस्थ स्थानों तक पहुँच जाते हैं । अन्य कुछ पौधों के फल विस्फोटी विधि द्वारा बलपूर्वक स्फूटित होते हैं, जिसकी वजह से बीज छिटक कर दूर गिरते हैं ।

14.7 शब्दावली (Terminology)

1. **अंकुरण संदमनक** (Germination inhibition) : बीजों में उपस्थित रसायनिक पदार्थ, जो बीजांकुरण को रोकते हैं ।
2. **अल्पजीवी** (Ephemeral) : वे पादप प्रजातियाँ, जो अपना जीवन चक्र कुछ सप्ताह से कुछ महीनों में पूरा कर लेते हैं ।
3. **सजीवप्रजकता** (Vivipary) : बीजों का फल में ही अंकुरित हो जाना, सजीवप्रजकता कहलाता है ।
4. **एलेलोपेथी** (Alloepathy) : स्व प्रजाति द्वारा दूसरी प्रजाति के बीजों के अंकुरण पर निरोधी प्रभाव ।
5. **पेपस** (pappus) : बाह्य दलों का रोम में रूपान्तरण, जो फल या बीज के साथ चिरलग्न होते हैं ।

14.8 संदर्भ ग्रन्थ (Referances)

1. Anatomy of Speed plants : K. Esau; John wiley sons, new York.
2. पुष्पी पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन : त्रिवेदी, शर्मा, शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर।
3. आवृतबीजियों की संरचना, विकास व जनन : सिंह, पाण्डे, जैन; रस्तोगी प्रकाशन, मेरठ ।

4. यूनिफाइड वनस्पति विज्ञान : ए पी. अग्रवाल; शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर ।

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

I. **बहु विकल्पी**

1. (द) 2. (अ) 3. (अ)

II. **अतिलघुत्तरात्मक**

1. मैन्ग्रोव वनस्पति
2. प्रोसोपिस, यूकेलिप्टस
3. एब्लिसिक अम्ल (ABA)
4. गुलमेंहदी, बार्लेरिया

14.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. बीजों के विभिन्न पारिस्थितिकी अनुकूलनों का वर्णन कीजिये ।
2. फलों एवं बीजों के प्रकीर्णन पर एक निबन्ध लिखिए ।
3. फलों एवं बीजों के प्रकीर्णन की विभित्र विधियों का संक्षिप्त विवरण दीजिए तथा प्रकीर्णन का महत्व बताइये ।

इकाई 15 : कायिक प्रवर्धन (Vegetative Propagation)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 प्राकृतिक कायिक प्रवर्धन

15.2.1 जडों द्वारा

15.2.2 तनों द्वारा

15.2.3 पत्तियों द्वारा

15.2.4 विशिष्ट संरचनाओं द्वारा

15.3 कृत्रिम कायिक प्रवर्धन

15.3.1 कर्तन द्वारा

15.3.2 स्तरण द्वारा

15.3.3 कलम बाँधना

15.3.4 सूक्ष्म प्रवर्धन

15.4 कायिक प्रवर्धन का महत्व

15.5 इकाई सारांश

15.6 शब्दावली

15.7 संदर्भ ग्रन्थ

15.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.9 अभ्यासार्थ कार्य

15.0 उद्देश्य (Objective)

इकाई का उद्देश्य है :

1. बीजीय पादपों में प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली कायिक प्रवर्धन की विधियों की जानकारी प्राप्त करना ।
2. कायिक प्रवर्धन की कृत्रिम विधियों के बारे में जानकारी लेना ।
3. कायिक प्रवर्धन के महत्व अर्थात् लाभ -हानियों का अवलोकन करना ।

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रत्येक जाति के लिए उत्तरजीविता बनाए रखने के लिए अपने समान जीवों की उत्पत्ति करना आवश्यक है । इस प्रक्रिया को जनन (Reproduction) कहते हैं, जो सभी सजीवों का अभिलाक्षिक गुण है ।जनन द्वारा जीव अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं, जिससे जाति विशेष की निरन्तरता युगों तक बनी रहती है । जनन मुख्यतः लैंगिक (Sexual), अलैंगिक (Asexual) एवं कायिक (Vegetative) विधियों द्वारा होता है ।

लैंगिक जनन में युग्मकों के संलग्न द्वारा नई जीवी संरचना वाली संतति का निर्माण होता है । अलैंगिक जनन में विशिष्ट जनन संरचनाओं का निर्माण होता है, परन्तु इसमें पुनर्योजन क्रिया नहीं पाई जाती है । कायिक प्रवर्धन के अन्तर्गत पौधे के किसी भी भाग अर्थात् कायिक संरचना द्वारा नवपादप का निर्माण होता है । इस प्रकार इस विधि द्वारा प्राप्त पौधों का जीवद्रव्यक मातृ पौधे के जीवद्रव्यक से किसी भी प्रकार भिन्न नहीं होता है । इस प्रकार की जनन प्रक्रिया आवृतबीजी पौधों में बहुतायत से पाई जाती है एवं मनुष्य द्वारा इसका अत्यधिक उपयोग इच्छित किस्मों के पौधों की संख्या में बढ़ोतरी के लिए किया जाता है । कायिक जनन के फलस्वरूप पी धो की संख्या में बढ़ोतरी होती है इसलिए इस प्रक्रिया को कायिक गुणन (Vegetative multiplication) अथवा कायिक प्रवर्धन (Vegetative propagation) भी कहा जाता है ।

कायिक प्रवर्धन की प्रक्रिया को सुविधा के लिए दो वर्गों में बाँटा जा सकता है - प्राकृतिक कायिक प्रवर्धन एवं कृत्रिम कायिक प्रवर्धन । इस अध्याय में इनका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

15.2 प्राकृतिक कायिक प्रवर्धन (Natural Vegetative propagation)

15.2.1 जड़ों द्वारा कायिक प्रवर्धन (By roots)

कुछ पौधों, जैसे शकरकन्द (Ipomoea batatas) एवं शतावरी (Asparagus) इत्यादि की जड़ें कंदिल (Tuberous) होती हैं एवं इनमें प्रचुर मात्रा में खाद्य पदार्थ संचित रहते हैं । इस प्रकार की कंदिल जड़ों से अपस्थानिक कलिकाएँ (Adventituos buds) विकसित होती हैं, जो आगे चलकर पर्णिल प्ररोहों (Leafly shoots) के रूप में परिवर्धित हो जाती हैं । पर्णिल प्ररोहों को स्लिप्स (Slips) कहते हैं । कंदिल जड़ें बड़े आकार की होती हैं त था इनमें प्रचुर मात्रा में खाद्य पदार्थ संग्रहीत रहते हैं । अत : इनके प्रत्येक कैद से बहुसंख्य 'स्लिप्स' (Slips) का विकास होता है । ये तरुण स्लिप्स आगे चलकर कंद की मुख्य संरचना से पृथक हो जाते हैं एवं नये पौधे के रूप में परिवर्धित होते हैं (चित्र 15.1A) ।

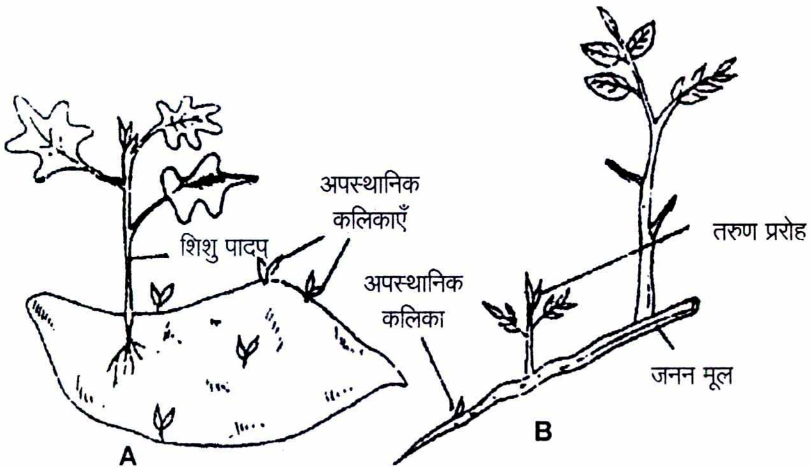

चित्र 15.1 : जड़ों द्वारा वर्धी प्रजनन : A. ऐस्पेरेगस, B. मुराया ।

कुछ अन्य बहुवर्षीय काष्ठीय पौधों, जैसे सिरस (Albizzia lebbeck), कामिनी (Murraya) एवं शीशम (Dalbergia) में भूमि की सतह के ठीक नीचे पाई जाने वाली जड़ों की शाखाओं से थोड़ी-

थोड़ी दूरी या अन्तराल (Short intervals) पर अपस्थानिक कलिकाएँ (Adventituos buds) विकसित होती हैं । इन कलिकाओं से आगे चलकर प्ररोह शाखाएँ परिवर्धित होती हैं, जो कि नये पौधे का निर्माण करती हैं । मुख्य पादप शरीर से अलग होने पर ये स्वतन्त्र रूप से नये पौधे के रूप में जीवनयापन करते हैं (चित्र 15.1B) ।

उद्यानों में उगाये जाने वाले अनेक शोभाकारी पौधों (Garden ornaments), जैसे - फ्लाक्स (Phlox) एवं डहेलिया (Dahlia) इत्यादि में भी जड़ों के द्वारा कायिक प्रवर्धन होता है । इन जड़ों से अपस्थानिक कलिकाएँ विकसित होती हैं, जो प्राकृतिक रूप से मुख्य पादप शरीर से अलग होकर नये स्वतंत्र पौधे के रूप में विकसित होती है ।

15.2.2 तनों द्वारा कायिक प्रवर्धन (By stems)

विभिन्न प्रकार के तने मुख्यतः रूपान्तरित भूमिगत एवं वायवीय तने जैसे प्रकन्द, कन्द, शल्ककन्द, उपरि भूस्तारी, अन्त : भूस्तारी एवं विरोहक कायिक प्रवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं ।

(i) **प्रकन्द** (Rhizome) : यह रूपान्तरित भूमिगत तना है, जो मोटा, माँसल, चपटा तथा क्षैतिज (Horizontal) वृद्धि करता है । इससे स्पष्ट एवं सुविकसित पर्व व पर्व सन्धियों पाई जाती हैं । पर्वसन्धियों पर शल्क पत्र उपस्थित होते हैं तथा इनकी कक्ष में कक्षीय कलिकायें होती हैं (चित्र 15.24A) । ये कलिकायें प्रसुप्तावस्था में रहती हैं तथा अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरण द्वारा वायवीय प्ररोह में विकसित हो जाती हैं । उदाहरण अरबी, अदरक, हल्दी आदि ।

(ii) **कन्द** (Tuber) : यह रूपान्तरित भूमिगत तना है । यह भूमिगत तने की शाखाओं के शीर्ष पर खाद्य पदार्थों के संचयन से बनते हैं । कन्द की पर्व सन्धियों पर कक्षीय कलिकायें होती हैं, जिन्हें आँख (Eye) कहते हैं (चित्र 15.28B) । अनुकूल परिस्थितियों में कलिका वृद्धि कर नव पादप में विकसित हो जाती है । उदाहरण आलू, हाथीचक आदि ।

(iii) **शल्क कन्द** (Bulb) : यह अत्यधिक ह्रासित भूमिगत स्तम्भ होता है । यह प्रायः उत्तल या शंकवाकार या बिम्ब के समान (Disc like) होता है, जिसकी ऊपरी सतह पर मांसल पत्तियाँ तथा निचले भाग पर अपस्थानिक मूलों का गुच्छ उपस्थित होता है । कन्द के मध्य (मांसल पत्तियों द्वारा परिबद्ध) शीर्षस्थ कलिका स्थित होती है, जिसके अंकुरण द्वारा नव पादप विकसित होता है । उदाहरण प्याज, लहसुन आदि । (चित्र 15.2C) ।

(iv) **धनकन्द** (Corm) : यह एक सहंत प्रकन्द है, जो उर्ध्वाधर (Vertical) वृद्धि करता है । यह गोलाकार तथा ह्रासित पर्वो युक्त होता है । पर्व सन्धियों पर भूरे, सूखे शल्क पत्रों की कक्ष में कक्षीय कलिकायें होती हैं । अनुकूल परिस्थितियों में प्रत्येक कलिका से प्ररोह विकसित होता है । उदाहरण क्रोकस (Crocus), ग्लेडियोलस (Gladioulus) आदि (चित्र 15.2D) ।

(v) **ऊपरीभूस्तारी** (Runner) : यह बेलनाकार, पतली, श्यान वायवीय शाखाएँ हैं, जो मृदा सतह पर क्षैतिज रेंगती हुई वृद्धि करती हैं । इनके पर्व लम्बे होते हैं । पर्व सन्धि की निचली सतह पर अपस्थानिक मूल विकसित होती हैं तथा कक्षीय कलिकायें नई शाखाओं का निर्माण करती

है । शाखायें मातृ पादप से पृथक होकर स्वतंत्र पादप में विकसित हो जाती हैं । उदाहरण दबघास (Cynodon dactylon), खट्टी बूटी (Oxalis), फ्रेगेरिया (Fragaria) आदि (चित्र 15.3) ।

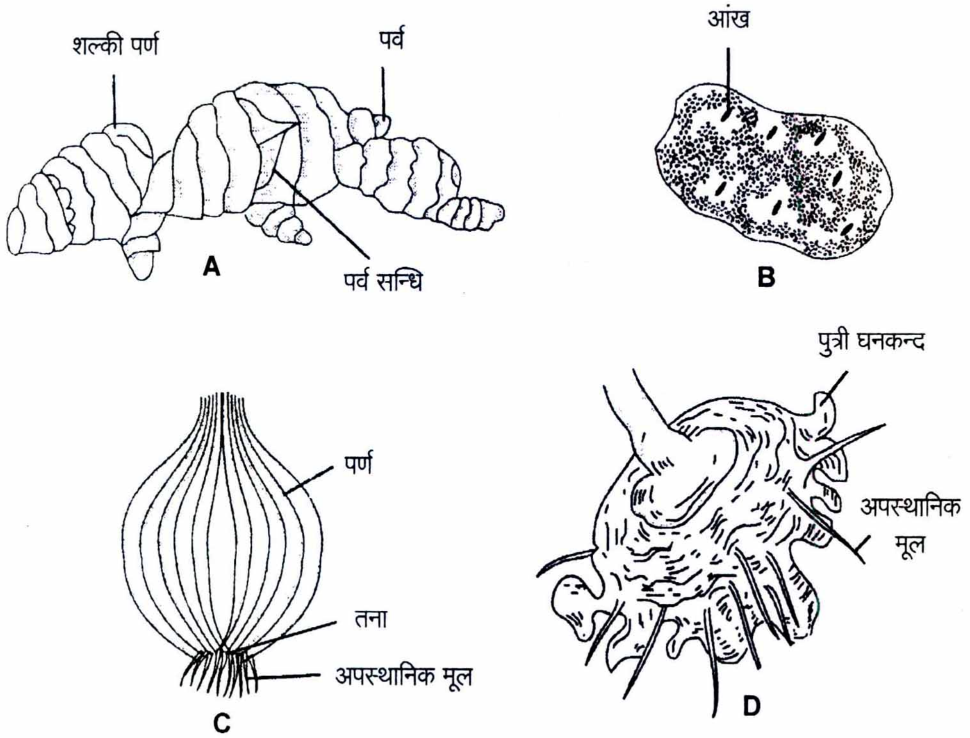

चित्र 15.2 : तनों द्वारा कायिक प्रवर्धन : A. प्रकन्द, B. कन्द, C. शल्ककन्द, D. घनकन्द

(vi) **भूस्तारी** (Stolon) : इसमें तने के भूमिगत भाग से लम्बी पतली शाखायें विकसित होकर भूमी के अन्दर क्षैतिज वृद्धि करती हैं । कुछ दूरी पर इनकी अन्तस्थ कलिका से एक वायवीय प्ररोह तथा अपस्थानिक मूल परिवर्धित हो जाती है और एक नया पादप बन जाता है । इन शाखाओं को भूस्तारी कहते हैं । उदाहरण इक्जोरा (Ixora), कचालू (Colocasia) आदि (चित्र 15.4) ।

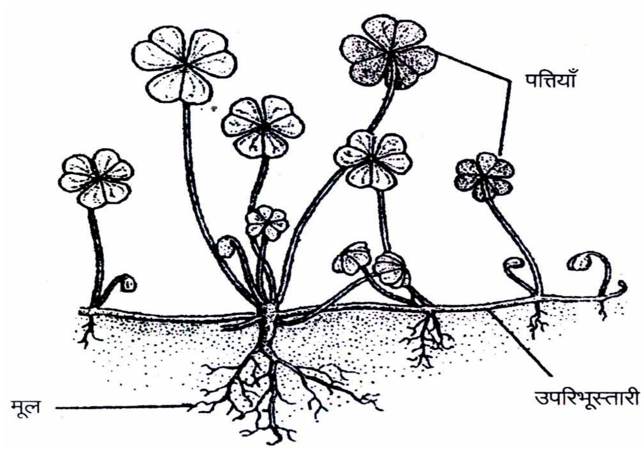

चित्र 15.3 : उपरिभूस्तारी द्वारा कायिक प्रवर्धन

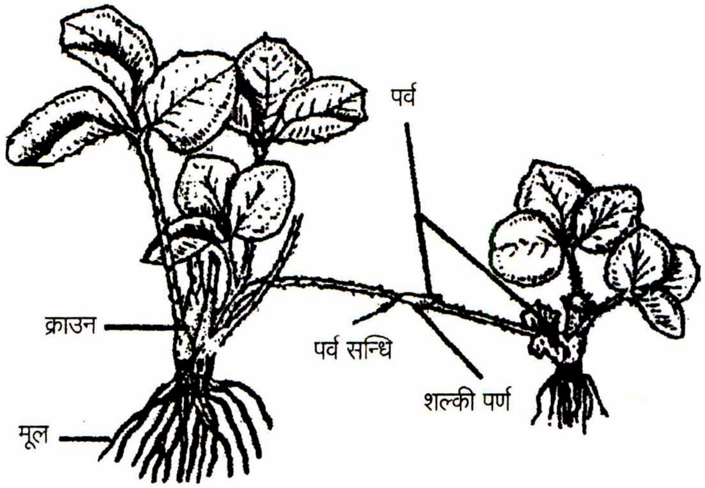

चित्र 15.4 : भूस्तारी द्वारा कायिक प्रवर्धन

(vii) **अन्तः भूस्तारी** (Sucker) : तने के भूमिगत आधारी भाग की कक्षस्थ कलिकाओं से बनने वाली शाखाएँ तिरछी वृद्धि करते हुए भूमि से बाहर निकलकर वायवीय प्ररोह बनाती हैं । इन शाखाओं को अन्त: भूस्तारी कहते हैं । ये मातृ पादप से अलग होकर नव पादप में विकसित हो जाती है, क्योंकि इनकी आधारी पर्व सन्धियों पर अपस्थानिक मूल विकसित हो जाती हैं। उदाहरण: गुलदाउदी (Chrysanthemum), पुदीना (Mentha arvensis) आदि (चित्र 15.5) ।

इसी प्रकार गन्ने, अंगूर एवं केक्टस के वायवीय तनों द्वारा भी कायिक प्रवर्धन होता है ।

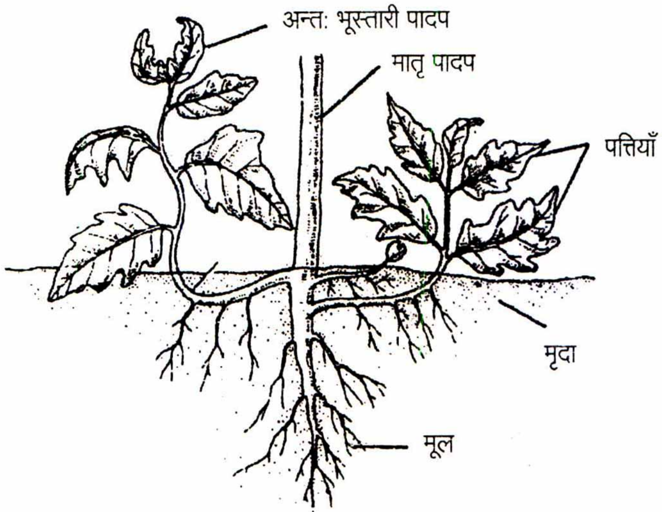

चित्र 15.5 : अन्त : भूस्तारी द्वारा कायिक प्रवर्धन

15.2.3 पत्तियों द्वारा कायिक प्रवर्धन (By leaves)

पत्तियों के द्वारा सामान्यतया कायिक प्रवर्धन में बहुत अधिक नहीं देखा गया है । फिर भी कुछ पौधों, जैसे पत्थरचिटा (Bryophyllum) की विभिन्न प्रजातियों में पत्तियों के द्वारा कायिक रूप से प्रवर्धित होने की अभूतपूर्व क्षमता होती है । इन पौधों में पत्तियों के उपान्तों अथवा किनारों

(Margins) की नुकीली सतह पर पादपक या छोटे पादप (Plantlets) उत्पन्न हो जाते हैं । जब पत्तियाँ मुख्य पादप शरीर पर लगी होती हैं, तभी इन पादपकों (Plantlets) की उत्पत्ति हो जाती है । अन्ततः ये पादपक जनक पत्ती या पौधे से टूटकर अलग हो जाते हैं तथा स्वतंत्र रूप से नये पौधे का निर्माण करते हैं । ब्रायोफिल्लम की कुछ अन्य प्रजातियों में पत्ती के मुख्य पादप शरीर से अलग होने के बाद ही पादपक (Plantlets) विकसित होते हैं । व्यावसायिक स्तर पर पत्तियों के द्वारा कायिक प्रवर्धन विभिन्न आर्थिक महत्व के पौधों, जैसे बिगोनिया (begonia), स्ट्रप्टोकार्पस (Streptocarpus) एवं सेंटपालिया (Saintpaulia) में किया जाता है । इन पौधों की पत्तियों को टुकड़ों में काट लिया जाता है (leaf cuttings) तथा इनको मिट्टी में रोपकर नये पौधे तैयार कर लिये जाते हैं । कई बार कुछ अन्य पौधों में पत्तियों के टुकड़ों की अपेक्षा पूरी पत्ती को ही कायिक प्रवर्धन के लिए मिट्टी में रोपा जाता है (चित्र 15.6) ।

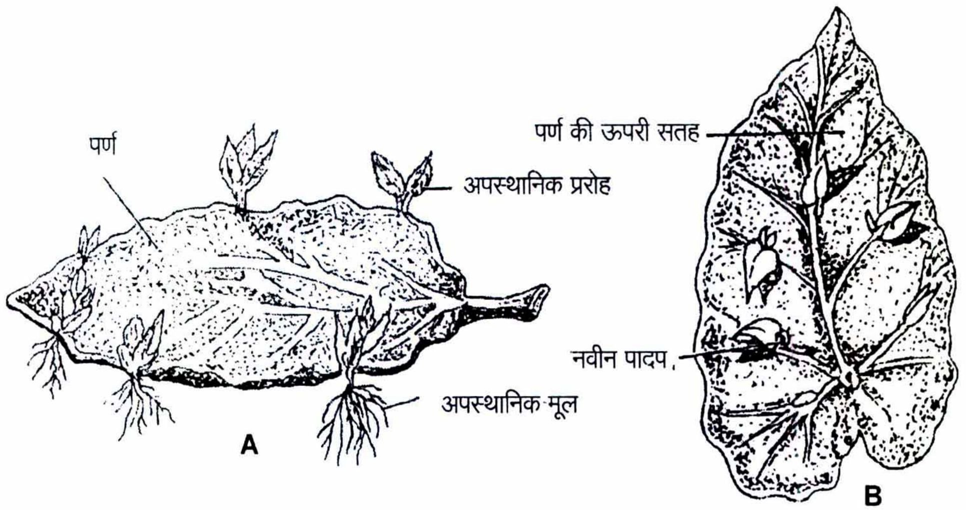

चित्र 15.6 : पत्तियों द्वारा कायिक प्रवर्धन : A. ब्रायोफिल्लम, B. बिगोनिया

15.2.4 पत्रकलिकाओं द्वारा कायिक प्रवर्धन (By bulbils)

आवृतबीजी पौधों में पुष्प मुख्यतः लैंगिक जनन से सम्बन्धित होते हैं । फिर भी कुछ पौधों, जैसे (Agave sp.) की कुछ प्रजातियों में पुष्प एक विशेष प्रकार की संरचना पत्र कलिका (Bulbil) में रूपान्तरित हो जाते हैं । ये पत्र कलिकाएँ अपनी पत्तियों में प्रचुर मात्रा में खाद्य पदार्थों के संचय के कारण अत्यन्त माँसल (Fleshy) हो जाती हैं । परिपक्व हो जाने पर ये पत्र कलिकाएँ जनक पौधे से अलग होकर जमीन पर गिर जाती हैं व इनसे अपस्थानिक जड़ें उत्पन्न होती हैं, जो भूमि में धँसकर

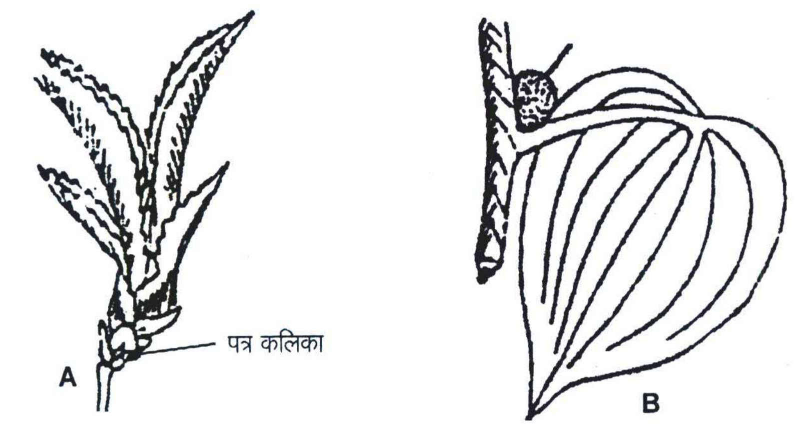

चित्र 15.7 : पत्रकलिकाओं द्वारा कायिक प्रवर्धन : A. अगेव, B. डायोस्कोरिया

इनको जमीन पर स्थिर कर देती हैं । कुछ समय बाद ये पत्र कलिकाएँ विकसित होकर नये पौधे का निर्माण करती हैं । पत्र कलिकाओं द्वारा कायिक प्रजनन की यह प्रक्रिया अनुकूल परिस्थितियों में काफी तेजी से होती है । पत्र कलिकाओं का निर्माण एक अन्य पौधे जटाशंकरी (Dioscorea bulbifera) में भी देखा गया है (चित्र 15.7) ।

15.3 कृत्रिम कायिक प्रवर्धन (Artificial Vegetative Propagation)

कायिक प्रवर्धन की प्राकृतिक विधियों के अतिरिक्त किसानों एवं उद्यानविज्ञानियों के द्वारा कायिक प्रवर्धन की अनेक कृत्रिम विधियों (Artificial methods) का विकास किया गया है, जिनके द्वारा आर्थिक महत्व के फल उत्पादक पौधों (Garden ornaments) की श्रेष्ठ एवं उन्नत किस्में प्राप्त की गई हैं । इसी प्रकार की कुछ सर्वप्रचलित कृत्रिम विधियों में कटिंग (Cutting), प्रत्यारोपण (Grafting) एवं स्तरण (Layering) के नाम उल्लेखनीय हैं । इनके अतिरिक्त आजकल उद्यानविज्ञानियों द्वारा अन्य परिष्कृत विधियों, जैसे सूक्ष्म प्रवर्धन (Micro propagation) या ऊतक संवर्धन तकनीक (Tissue culture technique) का उपयोग भी कृत्रिम कायिक प्रवर्धन के लिए बहुतायत से किया जा रहा है । इनमें से कुछ प्रमुख एवं बहुप्रचलित विधियों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है :

15.3.1 कर्तन (Cutting)

समूचे विश्व में किसानों, नर्सरी प्रबन्धकों एवं बागवानों (Gardeners) के द्वारा इस प्रक्रिया का उपयोग कृत्रिम कायिक प्रवर्धन के लिए बहुतायत से किया जाता है । इस प्रक्रिया में पौधे या इसकी शाखा के किसी कायिक भाग (Vegetative portion) विशेषकर तने के कटे हुए टुकड़े को जमीन में रोपकर, इससे नया पौधा विकसित किया जाता है । वैसे कायिक प्रवर्धन की इस प्रक्रिया में आवश्यकतानुसार पौधे की किसी भी कायिक संरचना (Vegetative structure), जैसे जड़, तना या पत्ती का उपयोग किया जा सकता है । इस विधि के द्वारा कायिक प्रवर्धन के लिए अनेक पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक है, जैसे प्रवर्धक की उपयुक्त लम्बाई, व्यास, आयु तथा रोपाई के लिए उपयुक्त मौसम इत्यादि महत्वपूर्ण बिन्दु हैं, जो कि इस विधि द्वारा कृत्रिम प्रवर्धन की सफलता को प्रभावित करते हैं । अत: किसी भी पौधे में कर्तन द्वारा कायिक प्रवर्धन करवाते

समय उपर्युक्त सभी कारको (Factors) को ध्यान में रखना चाहिए । स्तम्भ कटिंग या कर्तन द्वारा कायिक प्रवर्धन के प्रमुख उदाहरणों में गन्ना (Sugar cane), अंगूर (Grape vine), गुलाब (Rose) एवं बोगेनविलिया (Bougainvillea) का उल्लेख किया जा सकता है । लेकिन कर्तन (Cutting) विधि के अन्तर्गत सभी पौधों में स्तम्भ कर्तनों को जमीन में रोपने पर उनमें अपस्थानिक जड़ें (Adventitous roots) उत्पन्न नहीं होती । अत : इनका कायिक प्रवर्धन भी कर्तन विधि (Cutting method) के द्वारा सम्भव नहीं होता । कुछ अन्य पौधों में कायिक भागों, विशेषकर तने के टुकड़ों को जमीन में रोपने पर शुरू में तो जड़ें उत्पन्न नहीं होती, परन्तु यदि इनके आधारीय सिरों को कुछ हारमोन्स जैसे IAA (Indole Acetic Acid), IBA (Indole Butyric Acid) या NAA (Naphthlene Acetic Acid)के द्वारा उपचारित किया जावे तो इनसे अपस्थानिक जड़ें उत्पन्न हो जाती हैं । इस प्रकार कर्तन द्वारा इनका कायिक प्रवर्धन सफल होता है ।

15.3.2 स्तरण (Lyering)

कृत्रिम कायिक प्रवर्धन की इस प्रक्रिया में मुख्य पादप शरीर से कायिक भाग या तने के हिस्से को अलग करने से पहले ही, इस कायिक भाग या तने में अपस्थानिक जड़ों (Adventitous roots) की उत्पत्ति को अभिप्रेरित (Induce) किया जाता है, यह प्रक्रिया अनेक विधियों के द्वारा संचालित की जाती है, जिनमें से प्रमुख विधियाँ निम्न हैं.

(i) **दाब लगाना** (Mound layering) : कृत्रिम प्रवर्धन की इस प्रक्रिया को अनेक पौधों, जैसे चमेली (Jasmine) एवं कामिनी (Murraya) में इस्तेमाल किया जाता है । इस प्रक्रिया में पौधे के तने की किसी निचली या आधारीय शाखा को आंशिक रूप से पर्णविहीन (Defoliated) कर दिया जाता है । इसके बाद इस पर्णरहित शाखा को झुकाकर जमीन के समीप ले आते हैं । शाखा को मुख्य तने पर ही बने रहने देते हैं व इसके बीच वाले हिस्से को भूमि में गाड़ा जाता है । इस प्रकार गीली मिट्टी लपेट कर निचली टहनी को गाड़ने की प्रक्रिया को दाब लगाना (दाब; Layer) कहते हैं । कुछ समय के बाद शाखा या तने के इस दबे हुए हिस्से से जमीन के भीतर ही अपस्थानिक जड़ें फूटने लगती हैं । परन्तु दाब लगाते समय यदि टहनी की छाल क्षतिग्रस्त हो जावे तो इससे अपस्थानिक जड़ें जल्दी फूटती हैं, कई बार यह भी होता है कि उद्यानविज्ञानी या बागवान, अपस्थानिक जडें के निर्माण को जल्दी करने या जड़ों की बढ़वार में जान बूझकर शीघ्रता करवाने के लिए टहनी में तिरछा चीरा (Oblique upward cut; tonguing) ऊपर की ओर लगाते हैं या ऊपरी छाल को एवं वलय या छल्ले के रूप में अलग कर देते हैं (Ringing), अथवा टहनी की मोटाई के आधे भाग में "V" आकार का कट लगा देते हैं (Notching) । उपर्युक्त तीनों प्रक्रियाएँ दब्बे में अपस्थानिक जड़ों के विकास को त्वरित कर देती हैं ।

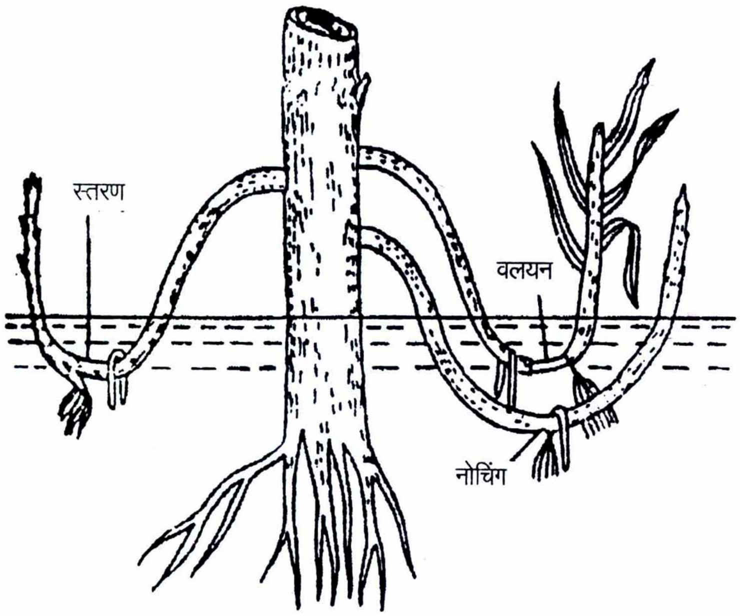

चित्र 15.8 : स्तरण द्वारा वर्धी जनन

(ii) गुट्टी या मुकुलन (Air layering) : यह कृत्रिम कायिक प्रवर्धन की प्रक्रिया उन पौधों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है, जिनकी शाखाएँ नीचे जमीन के पास नहीं होतीं या बहुत ऊपर होती हैं या जिनको जमीन के पास लाना सम्भव नहीं होता । अनार (Pomegranate), नारंगी (Orange), अमरूद (Guava) एवं लीची (Litchi) ऐसे ही कुछ पौधों के उदाहरण हैं । इस प्रक्रिया में कृत्रिम प्रवर्धन के लिए, शाखा या तने में छाल की बाहरी पर्त या वलय (Ring) को हटा देते हैं (Girdling) या ऊपरी किनारे की तरफ एक तिरछा चीरा लगा देते हैं । अब इस कटे हुए हिस्से के चारों तरफ गीली रुई या गीली मिट्टी या गीली माँस पादप संहति को लपेट देते हैं व इसके चारों तरफ गीला कपड़ा बाँध देते हैं । इस हिस्से को निरन्तर नमी व ठण्डक प्राप्त होती रहे, इसके लिए मिट्टी या रुई के गीलेपन को लगाकर बनाये रखा जाता है। अब कुछ सप्ताहों के पश्चात् इस कटे हुए क्षतिग्रस्त भाग से अपस्थानिक जड़ें फूटने लगती हैं। इसके बाद जड़युक्त शाखा को मुख्य पौधे से अलग करके मिट्टी में रोप दिया जाता है एवं उचित सार सम्भाल की जाती है, जिससे यह नये पौधे के रूप में विकसित हो जाता है (चित्र 15.9)

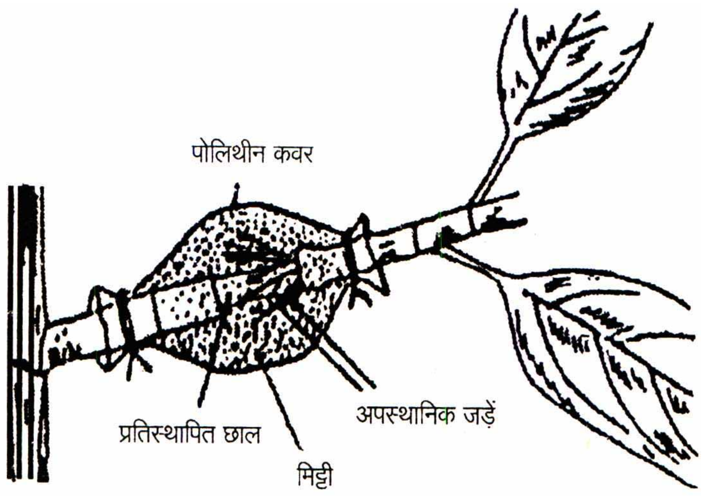

चित्र 15.9 : गुट्टी लगाना

15.3.3 अध्यारोपण या कलम बाँधना (Grafting)

वह प्रक्रिया जिसके अन्तर्गत दो पौधों के दो अलग-अलग हिस्सों को इस प्रकार जोड़ा जावे कि ये समरस (Homogenous) होकर एक ही पौधे के रूप में जीवनयापन करे अध्यारोपण (Grafting) कहा जाता है ।

उपर्युक्त दोनों पौधों में जिनके अलग-अलग भाग आपस में जोड़े जाते हैं, एक पौधा तो भूमि जड़ सहित स्थापित रहता है । कभी -कभी यह केवल जड़ या ठूँठ (Stump) के रूप में भी हो सकता है इसे मूठ (Stock) कहते हैं । दूसरे पौधे के जोड़े जाने बाला भाग छोटे प्ररोह के रूप में (Shoot) में होता है, जिसमें एक या एक से अधिक प्ररोह कलिकाएँ (Shoot buds) मौजूद रहती हैं । इसे **सांकुर टहनी** या **वंशज** (scion) कहते हैं । इन दोनों पौधों के मूठ एवं सांकुर टहनी का जुड़ाव इनके एधाक्षेत्रों (Cambial zones) वाले स्थानों पर किया जाता है । एक भाग के केम्बियम को दूसरे भाग के केम्बियम पर इस तरह से जोड़ा जाता है, कि कटे हुए दोनों हिस्से समरस होकर एक ही पौधे के तौर पर निरूपित होने लगते हैं । इस प्रकार अध्यारोपण या कलम बांधने की प्रक्रिया में मूठ (Stock) नये पौधे या कलम (Graft) का आधारीय भाग निर्मित करता है तथा भूमि में जड़ों के द्वारा अवशोषित जल एवं खनिज पदार्थ, ऊपरी भाग अर्थात् सांकुर टहनी या वंशज (Scion) को उपलब्ध करवाता है । वहीं दूसरी ओर कलम का ऊपरी हिस्सा अर्थात् सांकुर टहनी (Scion) नवनिर्मित पौधे के ऊपरी भाग को निरूपित करता है तथा यह कलम के आधारीय भाग (Stock) को कार्बनिक खाद्य पदार्थों की आपूर्ति करता है

इस विधि का उपयोग करके बागवान एवं उद्यानविज्ञानी प्रायः आर्थिक रूप से उपयोगी अनेक पौधों की उन्नत किस्में विकसित करते हैं । इस प्रक्रिया के द्वारा उनको दो अलग-अलग पौधों के उत्तम लक्षणों को एक पौधे में समाहित करने में आसानी रहती है, अर्थात् यदि एक पौधे में रोग प्रतिरोधी क्षमता एवं दूसरे पौधे में अधिक उपज एवं उत्तम गुणवत्ता वाले गुण हैं तो अध्यारोपण

या कलम बाँधकर इन दोनों पौधों के उत्तम लक्षणों को एक ही पौधे में प्राप्त किया जा सकता है । इस प्रकार एक पौधे की बेहतर या उन्नत किस्म प्राप्त की जा सकती है ।

प्रायः कलम बाँधने की इस विधि में ऊपरी सांकुर टहनी (Scion) ऐसे पौधे से प्राप्त करते हैं, जिसकी गुणवत्ता बेहतर हो, जैसे फलों का आकार बड़ा होना, स्वाद का अच्छा होना, उपज अधिक होना इत्यादि । जबकि कलम के आधारीय भाग या मूठ (Stock) को ऐसे पौधे में चयनित किया जाता है, जिसमें रोग प्रतिरोधी क्षमता एवं जल अवशोषण क्षमता अधिक होती है । इस तथ्य को आम के पेड़ में कलम बाँधने के उदाहरण द्वारा आसानी से समझा जा सकता है । इसमें दशहरी नस्ल की ऊपरी टहनी (Scion; फलों का अधिक मीठापन) को देशी आम की मूठ (Stock; रोग एवं कटि प्रतिरोधी क्षमता) पर अध्यारोपित करके या कलम बाँध कर (Grafting) दोनों इच्छित लक्षण एक ही पौधे में प्राप्त किये जाते हैं । ऐसे पौधों की जड़ें भी काफी गहरी होती हैं । अत : इनमें एक कार्यकुशल मूलतंत्र विकसित होता है । जल एवं खनिज पदार्थों का अवशोषण भी अधिक मात्रा में होता है ।

कलम बाँधने (Grafting) की तकनीक का उपयोग बागवानों एवं उद्यानविज्ञानियों के द्वारा प्रायः द्विबीजपत्री (Dicots) पौधों में ही किया जाता है तथा इनमें भी विशेषकर फल उत्पादक (Fruit yielding trees) पौधों में इच्छित लक्षण प्राप्त करने के लिए यह प्रक्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण है । सामान्यत: एक-दूसरे से घनिष्ठ बन्धुता प्रदर्शित करने वाली पादप किस्मों (Varities) एवं प्रजातियों (Species) के बीच कलम बाँधने का काम किया जाता है ।

बागवानों एवं उद्यानविज्ञानियों के द्वारा आजकल अध्यारोपण या कलम बाँधने के लिए अनेक अलग-अलग विधियों का उपयोग किया जाता है, जैसे जीभिका अध्यारोपण (Tounge grafting) या चाबुक छड़ी अध्यारोपण (Whip grafting) एवं कलिका अध्यारोपण आदि । पौधों में कलम बाँधने के लिए कौनसी विधि का उपयोग किया जावे, इसके लिए पौधे की आयु, उसकी बाहय आकृति एवं अन्य विशेषताओं को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाता है ।

कलम रोपण की सामान्य विधियाँ निम्न प्रकार हैं :

(i) **चाबुक छड़ी अध्यारोपण** (Whip grafting) : इस विधि में मूठ (Stock) एवं संकुर टहनी (Scion) को तिर्यक रूप या तिरछे किनारों से लगभग 5 से 7 सेमी. तक काटते हैं इसके बाद संकुर टहनी (Scion) को अपने मुख्य पौधे से अलग करके मूठ (Stock) के साथ मजबूती से जोड़ दिया जाता है । इन दोनों हिस्सों में कटे हुए सिरों को एक-दूसरे में समायोजित (Fitted) करके टेप की सहायता से मजबूती से बाँध देते हैं तथा इनके जोड़ के चारों तरफ गीली मिट्टी (Moist clay) का लेप कर दिया जाता है, जिससे जुडे हुए हिस्सों के बीच वायु प्रवेश नहीं कर सके। कुछ दिनों के बाद ये दोनों हिस्से आपस में जुड़ जाते हैं तथा एक ही पौधे के तने या शाखा के तौर पर निरूपित होते हैं (चित्र 15.10) ।

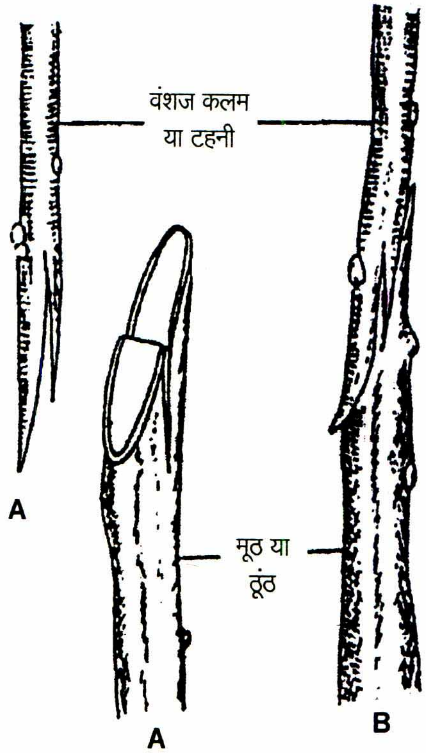

चित्र 15.10 : चाबुक छड़ी अध्यारोपण

(ii) **फच्चर अध्यारोपण** (wedge grafting) : इसमें जिस पौधे के तने या शाखा को संकुर टहनी (Scion) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, उसके निचले सिरे को फच्चर (Wedge) के आकार में नुकीला काटा जाता है । अब जिस पौधे की शाखा या तने को मूठ (Stock) के रूप में प्रयुक्त करते हैं, उसकी लम्बाई में एक खाँच या दरारनुमा (Slit) चीरा लगा देते हैं । अगले चरण में संकुर टहनी (Scion) को इस दरार या खाँच में, जो कि मूठ (Stock) में मौजूद होती है, मजबूती से जमा (Fitted) देते हैं । इस प्रकार समायोजित दोनों सिरों को दृढ़ता से बाँधकर टेप लपेट देते हैं एवं इसके आसपास गीली मिट्टी (Moist clay) का लेप कर दिया जाता है । कुछ दिनों के बाद एक-दूसरे में समायोजित दोनों पौधों की अलग-अलग टहनियों के ये टुकड़े समरसता (Homogenity) प्रदर्शित करते हुए एक ही शाखा के रूप में आपस में जुड़ जाते हैं (चित्र 15.11)

(iii) **कलिकारोपण** (Bud grafting) : उपर्युक्त दोनों विधियों के अतिरिक्त अध्यारोपण या कलम बाँधने की एक ओर सर्वप्रचलित विधि कलिका अध्यारोपण (Bud grafting) भी लोकप्रिय है । इस प्रक्रिया में जिस पौधे के कायिक प्रवर्धन इच्छित लक्षणों के लिए करवाना होता है, उसकी प्ररोह कलिका (Shoot bud) को संकुर टहनी (Scion) या वंशज के रूप में प्रयुक्त करते हैं, उसकी छाल या बल्क (Bark) में "T" के आकार का एक चीरा लगाया जाता है तथा इस कटी हुई छाल को धीरे से किनारों पर से ऊँचा कर देते हैं । तत्पश्चात् संकुर या वंशज (Scion) कलिका को सावधानी के साथ इस "T"

आकृति के चिरे हुए हिस्से में स्थापित (Insert) कर देते हैं । यह प्रक्रिया पूरी होने के बाद संकुर या स्थापित कलिका को

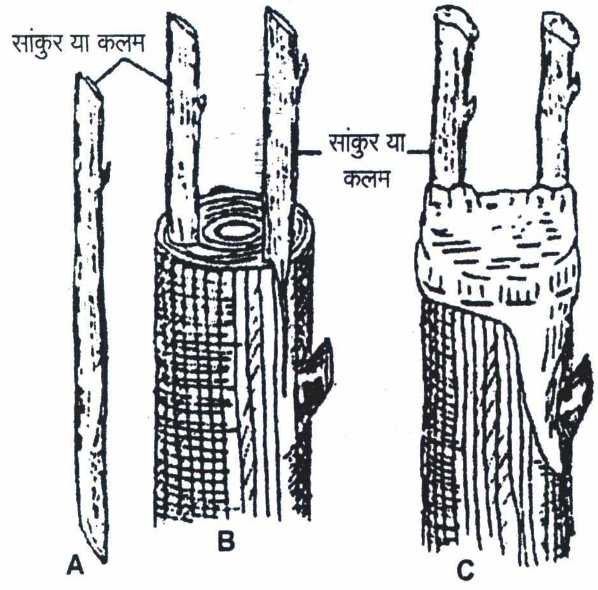

चित्र 15.11 : फच्चर अध्यारोपण

आसपास से डोरियों के द्‌वारा मजबूती से बाँध दिया जाता है, जिससे कि यह चिरी हुई जगह में ही बनी रहे, बाहर नहीं निकल जावे । लगभग तीन सप्ताह पश्चात् चीरे में रोपी गई यह संकुर कलिका मूठ वाले पौधे (Stock) से एकरूपता स्थापित कर लेती है एवं इसी मुख्य पादप के एक हिस्से के रूप में अंकुरित हो, वृद्धि करने लगता है । इस कलिका के अंकुरण के साथ ही, इसमें जनक पौधे के इच्छित लक्षण भी प्रकट होने लगते हैं (चित्र 15.12) । कलिका अध्यारोपण (Bud grafting) सामान्यतया अनेक पौधों, जैसे गुलाब (Rose), आड़ू खूबानी (Peach), नाशपाती (Pear) एवं सेब (Apple) में कायिक प्रवर्धन की एक सर्वमान्य विधि है । इसके अतिरिक्त अन्य फलोत्पादक पौधों में भी इस विधि का प्रयोग बहुतायत से किया जाता है ।

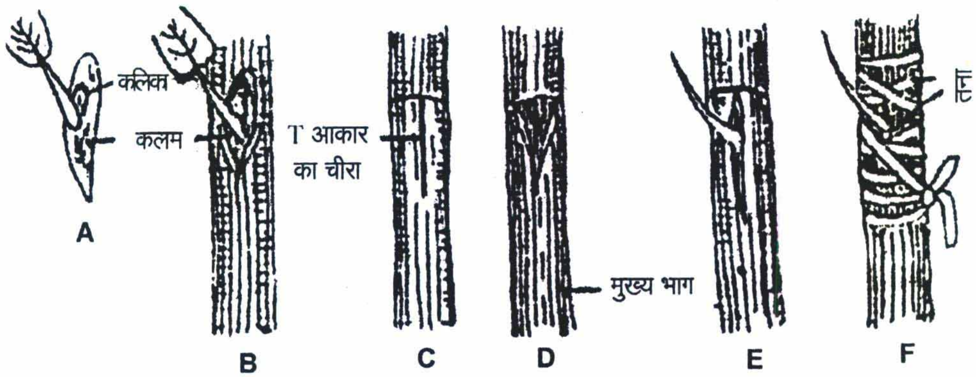

चित्र 15.12 : कलिका अध्यारोपण

15.3.4 सूक्ष्म प्रवर्धन (Micro propagation)

पादप, ऊतक संवर्धन तकनीक के अन्तर्गत किये गये आधुनिक प्रयोगों के द्वारा वैज्ञानिकों ने पौधे के ऊतकों द्वारा अनेक पादप (Plantlets) तैयार करने में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। इन प्रयोगों की सफलता से यह भी सिद्ध हो चुका है कि प्ररोह शीर्ष (Shoot tips) से प्राप्त ऊतक संहति (Tissue mass) का कृत्रिम संवर्धन माध्यम (Artificial culture medium) में आसानी एवं बहुतायत से संवर्ध (Callus) के रूप में प्रवर्धन हो सकता है । विभिन्न पौधों में कृत्रिम संवर्धन करवाकर, इनके संवर्धों (Callus) से पादपक (Plantlets) प्राप्त किये गये हैं । कायिक प्रवर्धन की इस प्रक्रिया को सूक्ष्म प्रवर्धन (Micro propagation) कहते हैं ।

वस्तुतः यह प्रक्रिया ऊतक संवर्धन तकनीक (Tissue culture technique) का एक व्यावहारिक अनुप्रयोग (Applied aspect) कही जा-सकती है । इस विधि में जनक पौधे के उपयुक्त भाग से छोटा टुकड़ा या ऊतक संहति (Tissue mass) काटकर अलग कर ली जाती है । संवर्धन माध्यम पर यह ऊतक वृद्धि करके असंख्य कोशिका ओं की एक अविभेदित संरचना में (undifferentiated mass of cells) में परिवर्धित हो जाता है, इसे संवर्ध या कैलस (Callus) कहते हैं । यह कैलस संरचना असीमित काल तक वृद्धि करने में सक्षम होती है । जब इस कैलस ऊतक के छोटे-छोटे टुकड़ों को दूसरे उपयुक्त पोषण माध्यम में स्थान्तरित किया जाता है तो ये कैलस संरचनाएँ विभेदित होकर छोटे पादपकों (Plantlets) के रूप में विकसित हो जाती हैं । प्रायः इन पोषण संवर्धन माध्यम में वृद्धि हारमोन्स (Growth harmones) विशेषकर आक्सिन्स (Auxins) एवं साइटोकाइनिन्स (Cytokinins) की उपयुक्त मात्रा भी एक अनुपूरक पोषक के रूप में मिलाई जाती है, जिससे कैलस संरचना का पादपक (Plantlet) में विभेदन एवं विकास शीघ्रता से होने लगता है ।

उपर्युक्त प्रक्रिया द्वारा विकसित पादप को कुछ समय के पश्चात् मिट्टी के गमलों या क्यारियों में स्थानान्तरित (Transplant) कर दिया जाता है, जहाँ ये एक परिपक्व एवं इच्छित लक्षणों वाले वयस्क पादप के रूप में विकसित हो जाते हैं । इस प्रकार इस विधि के द्वारा किसी भी पौधे के थोड़े से ऊतकों की सहायता से ही असंख्य पादपकों (Plantlets) बाद में वयस्क पौधे को विकसित किया जा सकता है । आजकल इस तकनीक के अनुप्रयोग (Application) के द्वारा विभिन्न शोभाकारी पौधों, जैसे आर्किड्स (Orchids), ग्लेडियोलाई (Gladiolii), कारनेशन (Carnation) एवं गुलदाऊदी (Chrysanthemum) का कायिक प्रवर्धन किया जा रहा है । यही नहीं वनस्पति शास्त्रियों एवं औषध विज्ञानियों के अनुसार यह सूक्ष्म प्रवर्धन विधि (Micropropagation) वानस्पतिक विविधता, औषधीय पौधों (Medicinal plant) तथा दुर्लभ एवं संकटग्रस्त पौधों (Rare and threatened plants) के सर क्षण एवं गुणन के लिए भी अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती है ।

इसके अतिरिक्त ऊतक संवर्धन या सूक्ष्म प्रवर्धन विधि को प्रयुक्त करके अनेक आर्थिक रूप से उपयोगी कृष्य पौधों, जैसे आलू (Potatoes), टेपियोका (Manihot) एवं गन्ना (Sugar cane) इत्यादि में वाइरस मुक्त (Vires free) स्वस्थ पौधे तैयार किये जा सकते हैं। प्रमुख तथ्य यह है कि विभिन्न पौधों में ऊतक संवर्धन की प्रक्रिया के अन्तर्गत प्ररोह शीर्ष (Shoot tip) की ऊतक संहति का उपयोग किया जाता है तथा प्रायः ये प्ररोह शीर्ष विभाज्योतकी कोशिकायें वाइरसों से पूर्णतया मुक्त होती हैं

15.4 कायिक प्रवर्धन का महत्व (Significance of Vegetative Propagation)

A लाभ (Advantages)

इस प्रक्रिया के अनेक लाभ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख लाभों का उल्लेख निम्न प्रकार से है :

(1) कायिक प्रवर्धन विधि का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसके द्वारा कुछ ऐसे पौधों का प्रवर्धन भी करवाया जा सकता है, जिनकी लैंगिक जनन क्षमता समाप्त हो चुकी है। इन पौधों में निषेचन के द्वारा बीज निर्माण का गुण नहीं होता। केला (Banana), बीज रहित अंगूर (Seedless grapes), संतरा (Orange), चमेली (Jasmine) एवं गुलाब (Rose) एसे पौधों के कुछ प्रमुख उदाहरण हैं। अत: इन पौधों की वंशवृद्धि केवल कायिक प्रवर्धन के माध्यम से ही सम्भव है।

(2) कुछ पौधों, जैसे : बरमूडा घास या दूब (Cynodon dactylon) में बीज बहुत ही कम मात्रा में बनते हैं। अत: इनमें भी कायिक प्रवर्धन के द्वारा ही पौधे की वंशवृद्धि सम्भव है।

(3) ऐसे पौधों में, जिनमें बीज प्रसुप्ति (Seed dormacy) की अवधि बहुत अधिक होती है अथवा जिनके बीजों में अत्यल्प जीवन क्षमता (Poor seed viability) दृष्टिगोचर होती है, उनमें पौधों की वंशवृद्धि एवं प्रसार (Multiplication) के लिये कायिक प्रवर्धन एक अपेक्षाकृत सस्ती एवं शीघ्र परिणाम देने वाली प्रक्रिया है। उदाहरण के तौर पर लिलि (Lily) की अनेक किस्मों में पौधे के अंकुरण से लेकर पुष्पन (Flowering) के बीच 4 से 7 वर्ष तक का समय लगता है, परन्तु यदि इनका कायिक प्रवर्धन करवाया जावे तो पौधे से 1 या 2 वर्ष में ही पुष्प प्राप्त किये जा सकते हैं। अत: इस प्रक्रिया के द्वारा बीजों के अंकुरण के बाद पुष्प आने तक की विलम्बित अवधि को कम किया जा सकता है।

(4) ऐसे नये क्षेत्रों या प्रदेशों में, जहाँ वातावरण सम्बन्धी परिवर्तन के कारण बीजों के अंकुरण द्वारा वयस्क पौधों का विकास सम्भव नहीं हो पाता है, वहाँ भी कायिक प्रवर्धन विधि के द्वारा ऐसे पौधों को स्थापित किया जा सकता है। मृदा एवं वातावरण की बदली हुई परिस्थितियों में भी ये पौधे सफलतापूर्वक जीवन यापन कर सकते हैं।

(5) कायिक प्रवर्धन प्रक्रिया का सबसे बड़ा फायदा यह है कि इस विधि द्वारा विकसित सभी पौधों में एक समान लक्षण पाये जाते हैं। अनुवांशिकी रूप से ये जनक पौधे (Parent plant) के समान ही होते हैं। दूसरे शब्दों में किसी भी पादप किस्म (Variety) की उत्तम गुणवत्ता को इस विधि का उपयोग करके असीमित काल तक बनाये रखा जा सकता है। आनुवंशिक

रूप से समान ऐसी पादप समष्टि (Population) जिसे एक ही पादप द्वारा विकसित किया जाता है, उसे क्लोन (Clone) कहते हैं । आनुवंशिक रूप से एक समान संतति प्राप्त करना बीजों के द्वारा सम्भव नहीं है, क्योंकि इन बीजों में नर व मादा दोनों जनक पौधों के मिश्रित गुण पाये जाते हैं ।

(6) कायिक प्रवर्धन द्वारा प्राप्त पौधों के फल एवं अन्य पादप भाग (जैसे, आलू में कंद;) की आकृति एवं परिमाप में लगभग एकरूपता (Uniformity) पाई जाती है । अत: ये मानव समाज के लिए इच्छित लक्षणों से युक्त एवं आवश्यकतानुसार उपयोगी होते हैं ।

(7) अधिकांश शोभाकारी पौधों (Ornamental Plants) को उद्यानों में कायिक जनन के द्वारा ही प्रवर्धित किया जाता है, जैसे गुलाब, कारनेशन, गुलदाऊदी, डहेलिया एवं ट्यूलिप आदि ।

(8) अधिरोपण या कलम बाँधना (Grafting) एक ऐसी विधि है, जिसके द्वारा आर्थिक रूप से उपयोगी दो उत्तम गुणवत्ता वाले पौधों को भौतिक एवं कार्यिकी रूप से एकीकृत करके एक पौधे में अधिकाधिक उपयोगी एवं लाभदायक लक्षण प्राप्त किये जा सकते हैं ।अत : उपर्युक्त विशेषता ओं के कारण आज कायिक प्रवर्धन व्यावसायिक पौधशाला प्रबन्धकों (Nurserymen) एवं बागवानों के लिए अत्यन्त उपयोगी एवं त्वरित परिणाम देने वाली प्रक्रिया सिद्ध हो चुकी है । इसके उपयोग से अनेक शोभाकारी एवं फल उत्पादक पौधों की उन्नत किस्में विकसित की गई हैं, विशेषकर अधिरोपण (Grafting) विधि इस दिशा में अत्यन्त प्रभावकारी प्रक्रिया के रूप में उभर कर सामने आई है ।

B हानिकारक प्रभाव (Disadvantages)

(1) इस विधि के माध्यम से जनक पौधों के अतिरिक्त किसी और पौधे के अच्छे लक्षणों को न तो आने वाली पीढ़ी में समविष्ट (Introduce) किया जा सकता है और न ही अनुपयोगी या हानिकारक लक्षणों को हटाया जा सकता है ।

(2) स्पर्श या सम्पर्क के द्वारा जनक पौधों में उत्पन्न रोग, कायिक प्रवर्धन द्वारा आगामी पीढ़ी के पौधों में भी संचरित हो जाते हैं ।

(3) कायिक प्रवर्धन की प्रक्रिया को लम्बे समय तक जारी रखने पर आने वाली पीढ़ियों के पौधों में ओज (Vigour) एवं जीवन क्षमता (Viability) में क्रमिक ह्रास होता जाता है, क्योंकि इनमें लैंगिक उद्दीपन (Sexual stimulus) अनुपस्थित होता है ।

(4) कायिक प्रवर्धन द्वारा विकसित पौधों में विविधताओं की अनुपस्थिति के कारण बदलते हुए वातावरण के अनुसार अपने आपको समायोजित या अनुकूल बनाने की क्षमता (Adaptability) कम होती है ।

(5) इन पौधों की कायिक संरचनाओं, जो प्रवर्धन के लिए उपयोगी होती हैं, जैसे जड़ें, तना, पत्ती एवं पत्रकलिकाओं (Bulbils) इत्यादि को लम्बे समय के लिए परिरक्षित (Preserved) रखना कठिन कार्य होता है । इनका शीघ्र ही क्षरण (Decay) या अपघटन हो जाता है । अत: ये बीजों के समान संग्रहीत नहीं किये जा सकते ।

(6) प्रवर्धन में प्रयुक्त कायिक संरचनाओं में प्रकीर्णन (Dispersal) के लिए कोई विशेष व्यवस्था या क्रियाविधि नहीं होती । अत : कायिक प्रवर्धन द्वारा प्राप्त पौधों की व्यष्टि

के सदस्यों के पास-पास उगने से पौधों को वृद्धि के लिए पर्याप्त मात्रा में स्थान प्राप्त नहीं होता तथा इन पौधों में स्थान के अतिरिक्त, प्रकाश पोषण एवं जल इत्यादि के लिए भी कठिन स्पर्द्धा रहती है । परिणामस्वरूप इनकी गुणवत्ता एवं उत्पादन दोनों ही प्रभावित होते हैं ।

बोध प्रश्न :

I. बहुविकल्पी प्रश्न :

1. कर्तन में जड़ों का निर्माण प्रेरित किया जाता है :
   (अ) साइटोकाइनिन द्वारा
   (ब) जिबरेलिन द्वारा
   (स) आक्सीन द्वारा
   (द) उपरोक्त कोई नहीं
2. जिन पौधों की शाखाएँ जमीन स्तह के पास होती हैं, उनमें कायिक प्रवर्धन किया जाता है :
   (अ) दाब लगाना
   (ब) गुट्टी
   (स) सूक्ष्म प्रवर्धन
   (द) उपरोक्त कोई नहीं
3. पत्र कलिकाओं द्वारा कायिक जनन होता है :
   (अ) शलजम
   (ब) अगेव
   (स) अनानास
   (द) चुकन्दर
4. निम्न में कलम द्वारा कायिक जनन होता है :
   (अ) बरगद
   (ब) शकरकन्द
   (स) ब्रायोफित्सम
   (द) गुलाब

II. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न :

1. कायिक प्रवर्धन की इकाई कहलाती है:
   ....
   ....
2. पादप का वह भाग, जिसको प्रवर्धन के लिए प्रत्यारोपित करते हैं, कहलाता है
   ....
   ....
3. पत्तियों द्वारा कायिक प्रवर्धन के दो उदाहरण दें।
   ....
   ....
4. दो उदाहरण दें, जिनमें जड़ों द्वारा कायिक प्रवर्धन होता है।
   ....
   ....

15.5 सारांश (Summary)

पादप के कायिक भागों अथवा कायिक संरचनाओं द्वारा नए स्वतन्त्र पादप के निर्माण की प्रक्रिया को कायिक जनन अथवा कायिक प्रवर्धन कहते हैं । प्राकृतिक रूप से जड़, तना, पत्तियाँ एवं कलिकाएँ अनेक पौधों में कायिक प्रवर्धन में भाग लेती हैं । अनेक पौधों की जड़ें खाद्य संचय के कारण मांसल या कन्दिल होती हैं । इनसे अपस्थानिक कलिकायें विकसित होती हैं, जो पर्णिल प्ररोह में परिवर्धित हो जाती हैं । विभिन्न प्रकार के रूपान्तरित भूमिगत तने, जैसे कन्द, प्रकन्द, घनकंद, भूस्तारी, अन्त: भूस्तारी एवं विरोही आदि कायिक प्रवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संधित तनों की पर्वसन्धियों पर उपस्थित कलिकायें भी प्ररोह में विकसित होकर स्वतंत्र पादप का निर्माण करती हैं । कुछ पौधों की पत्तियों में भी कायिक प्रवर्धन की क्षमता पाई जाती है । पत्तियों के उपान्तों तथा कटे भागों से भी पादपक उत्पन्न होते हैं, जो अन्तत: स्वतंत्र पादप में विकसित हो जाते हैं । कुछ पौधों में पुष्प एक विशेष प्रकार की संरचना पत्र कलिका में रूपान्तरित हो जाते हैं । ये कलिकायें पादप से पृथक होकर जमीन पर गिर जाती हैं तथा अंकुरित होकर नवपादप बनाती हैं ।

किसानों एवं उद्यानवैज्ञानिकों द्वारा कायिक प्रवर्धन की अनेक कृत्रिम विधियों का विकास किया गया है । इन विधियों द्वारा आर्थिक महत्व के फल उत्पादक पौधों की अनेक उन्नत किस्में प्राप्त की गई हैं । इन विधियों में कर्तन (Cuttings), प्रत्यारोपण (Grafting) एवं स्तरण (Layering) प्रमुख हैं । इन विधियों में उन्नत किस्म के पौधों का बहुगुणन आसानी से किया जा सकता है । इनके अतिरिक्त सूक्ष्म प्रवर्धन (Micropropagation) तकनीक द्वारा उन्नत व रोग निरोधी पौधे प्रयोगशाला में तैयार किए जाते हैं । इस तकनीक में स्वस्थ पौधों के ऊतकों द्वारा ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा पादप तैयार किए जाते हैं । कायिक प्रवर्धन की कृत्रिम तकनीकें व्यावसायिक पौधशाला प्रबन्धकों एवं बागवानों के लिए अत्यन्त उपयोगी एवं त्वरित परिणाम देने वाली प्रक्रिया सिद्ध हो चुकी है ।

15.6 शब्दावली (Terminology)

1. **कर्तन (Cutting)** : मूल या स्तम्भ का खण्ड, जिसे कायिक प्रवर्धन हेतु प्रवर्ध्य के रूप में प्रयुक्त किया जाता है ।
2. **स्तरण (Layering)** : स्तम्भ भाग को कायिक प्रवर्धन हेतु काटने से पूर्व अपस्थानिक जड़ें प्रेरित करने की प्रक्रिया स्तरण कहलाती है ।
3. **अध्यारोपण (Grafting)** : एक पादप के भाग को दूसरे पादप पर प्रत्यारोपित करने की क्रिया अध्यारोपण कहलाती है ।
4. **स्कन्ध (Stock)** : जड़ सहित स्थापित पौधे का प्ररोह जिस पर प्रत्यारोपण किया जाता है, स्कंध कहलाता है ।
5. **कलम (Scion)** : स्कन्ध पर प्रत्यारोपित की जाने वाली प्ररोह या कलिका को कलम कहते हैं।

6. **सूक्ष्म प्रवर्धन (Micropropagation)** : ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा प्ररोह विभाज्योतक से पादप प्राप्त करने की विधि सूक्ष्म प्रवर्धन कहलाती है ।

15.7 संदर्भ ग्रन्थ (Bibliography)

1. Anatomy of speed plants : K. Esau john wiley sons, New York.
2. पुष्पी पादपों की संरचना, परिवर्धन एवं जनन : त्रिवेदी, शर्मा, शर्मा; रमेश बुक डिपो, जयपुर ।
3. आवृतबीजियों की संरचना, विकास व जनन सिंह, पाण्डे, जैन; रस्तोगी प्रकाशन, मेरठ ।
4. यूनिफाइड वनस्पति विज्ञान. एस.पी. अग्रवाल; शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर ।

15.8 बोध प्रश्न के उत्तर (Answers)

I. बहु विकल्पी प्रश्न :

1. (स) 2. (अ) 3. (ब) 4. (द)

II. अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :

1. प्रवर्ध्य 2. कलम 3. बिगोनिया एवं पत्थरचट्टा
4. डहैलिया तथा शतावरी

15.9 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. कायिक जनन को परिभाषित करतें हुए कृत्रिम कायिक प्रवर्धन की किन्हीं तीन विधियों का वर्णन कीजिए।
2. प्राकृतिक कायिक जनन की विभिन्न विधियों का विस्तृत विवरण दीजिए एवं उद्यान विज्ञान में इसकी महत्ता का उल्लेख कीजिए ।
3. कृत्रिम कायिक प्रवर्धन से क्या तात्पर्य है? कलम बो घने की विभिन्न विधियों का विस्तृत वर्णन दीजिए।
4. निम्न पर टिप्पणी लिखिये

   (अ) सूक्ष्म प्रवर्धन

   (ब) गुट्टी एवं दाब लगाना

   (स) चाबुक छड़ी अध्यारोपण

   (द) कलिका रोपण ।